Text Dark And Light Within The Book Only

UNIVERSAL LIBRARY

OU_182665

UNIVERSAL LIBRARY

OUP—23—4-4-69—5,000.

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H784·40954 P13A Accession No. P.G. H2786

Author पाण्डेय, इन्दुप्रकाश. संपा.

Title अवधी लोकगीत और परम्परा. 1958

This book should be returned on or before the date last marked below

अवधी
लोक-गीत
और
परम्परा

संग्रहकर्त्ता एवं सम्पादक
प्रो० इन्दुप्रकाश पाण्डेय, एम० ए०

प्रकाशक
रामनारायण लाल
प्रकाशक तथा पुस्तक-विक्रेता

प्रकाशक : रामनारायण लाल, प्रयाग

सर्वाधिकार : लेखक के आधीन

संस्करण : प्रथम १६५७

संस्करण : द्वितीय १६५८

मूल्य : पाँच रुपये

मुद्रक : नेशनल प्रेस, प्रयाग

आवरण पृष्ठ : नेशनल प्रेस, प्रयाग

चित्रकार : श्री चेतन

ममतामयी माँ और पूज्य पिता को

जिनसे कभी उऋण नहीं हो सकता

इन्दु प्रकाश

विषय-सूची

भूमिका

पृष्ठ-संख्या

१—कर्मानुसार पुनर्जन्म	१-४
२—वर्णाश्रम व्यवस्था	४-११
३—प्रजोत्पत्ति	११-२२
४—परिवार और ग्राम-समाज	२२-४४
५—शिक्षा	४४-४६
६—विवाह	४६-६२
७—भोजन संबंधी विशेषताएँ	६२-६५
८—वस्त्राभूषण तथा अन्य शृंगार प्रसाधन	६५-६८
९—धार्मिक भावना	६८-७७
१०—मेरा अनुभव	७७-८५

प्रथम प्रकरण

पुत्र-जन्म संबंधी गीत :	१-८८
१—दोहद	२-१७
२—सरिया	१८-२७
३—सोहर	२८-६७
४—रोचना	६८-७०
५—पलंग	७१-७४
६—पालना	७५-७६
७—झुंझुना	७७-७८
८—कठुला	७९-८३
९—बधाई	८४-८७
१०—आशीष	८८

द्वितीय प्रकरण
छठी ८६-१०२
तृतीय प्रकरण
अन्न-प्राशन (पसनी) १०३-१०५
चतुर्थ प्रकरण
मुण्डन-छेदन १०६-११३
पंचम प्रकरण
जनेऊ ११४-१५२
१—देवी के गीत ११७-१२२
२—उबटन १२३
३—तेल १२४-१२५
४—मिलपोहनी का गीत १२६-१२७
५—माँड़व के गीत १२८-१३०
६—जनेऊ गीत १३१-१४६
७—पद-प्रक्षालन १४७
८—भिक्षा १४८
९—स्नान १४९
१०—वस्त्र-धारण १५०-१५२
छठा प्रकरण
पेरी १५३-१६१
सातवाँ प्रकरण
नाखुर १६२-१६७
माँझ मनाना १६८-१६९
आठवाँ प्रकरण
विवाह (अ) १७०-१७८
विवाह (ब) नेलु १७९-१८०
विवाह कन्या पत्र १८१-२०३
विवाह (स) २०४-२१८
१—गौर्याही नेवताने के गीत (सोहाग) २०४-२१२

२—टोना २१३-२१४

३—द्वारचार २१४-२१७

४—देवी-वन्दना २१७-२१८

विवाह (द) २१९-२३०

१—भाँवर २१९-२२०

२—बाती २२०-२२१

३—जूता-पूजन २२२-२२३

४—कंगन छुड़ाना २२३-२२४

५—गाली २२४-२२६

६—विदा २२६-२३०

विवाह (इ) वरपक्ष २३१-२४६

१—तिलक के अवसर पर २३१-२३२

२—वर-यात्रा के गीत २३२-२३४

३—विवाह मे गाये जाने वाले गीत २३४-२४४

४—चढ़ाव २४४-२४६

विवाह (फ) परछन और बनरा २४७-२६७

१—परछन २४८

२—बनरा २४९-२५८

३—नकटा २५८-२६१

४—घोड़ी २६१-२६६

५—सेहुरा २६६-२६७

नवाँ प्रकरण

लाचारी २६८-२८४

१—देवी का गीत २६८-२८३

२—देवी का झूला २८३-२८४

दसवाँ प्रकरण

ऋतु सम्बन्धी गीत २८५-३००

१—सावन २८६-२९६

२—चौमासा २९६

३—बारहमासा २९७-३००

भूमिका

[१]

कर्मानुसार पुनर्जन्म

हिन्दू-समाज में सभी संस्थाएँ एवं व्यापार धर्मसंचय के माध्यम मात्र हैं। मानवीय शरीर तथा मनुष्य जीवन भी कर्मानुसार पुनर्जन्म तथा मरण के अनन्त शृङ्खला की एक कड़ी है। इसी जन्म तथा मरण के क्रम में मुक्ति प्राप्त करना प्रत्येक हिन्दू का परम धर्म है। मनुष्य का यह "क्षणभंगुर जीवन" अविनाशी परम ब्रह्म को प्राप्त करने का एक साधन है। इसीलिए मानव जन्म का विशेष महत्त्व है। पुनर्जन्म में पूर्ण आस्था रखने वाली हिन्दू जाति की समस्त चिन्ता-धाराएँ अगले जन्म के सुधारने वाले कर्मों पर आधारित हैं।

मनुष्य जन्म ही एक ऐसा संयोग है जिसके द्वारा जन्म-मरण के क्रम में मुक्ति प्राप्त की जा सकती है अन्यथा वही लम्बा क्रम चलेगा जो कर्मों के अनुसार अनेक जन्मों में भटकाता रहेगा। हिन्दू-समाज की संस्थाओं को ठीक-ठीक समझने के लिए हिन्दुओं के कर्मानुसार पुनर्जन्म के सिद्धान्त को स्वीकार करना पड़ेगा। आश्रम-व्यवस्था, वर्णगत कार्य विभाजन, विवाह, परिवार तथा व्यक्तिगत एवं समाजगत आचरण का लक्ष्य मानव-जीवन का परम पुरुषार्थ 'मोक्ष' प्राप्त करना ही है। धर्म और मोक्ष हिन्दू-विचारधारा के प्रमुख तत्व हैं जो समस्त जीवन पर व्याप्त हैं। यहाँ पर यह बात विशेष ध्यान देने योग्य है कि हिन्दू-विचारधारा मोक्ष को परम पुरुषार्थ मानते हुए भी लौकिक समृद्धि तथा शारीरिक सुख से विमुख नहीं है। अर्थ और काम भी मानवीय परम पुरुषार्थ हैं जिनको धर्मानुकूल आचरण से ही प्राप्त किया जा सकता है जो अन्ततोगत्वा मोक्ष प्राप्त करने में सहायक होते हैं। इस प्रकार मनुष्य अनेक आश्रमों में प्रवेश कर धर्माचरण करता हुआ मोक्ष को प्राप्त होता है। विवाह और गृहस्थ-जीवन भी इसी धर्माचरण का अंग है और इसीलिए हिन्दू समाज में धर्म के अनेक रूप प्राप्त हैं जैसे :—नित्य-धर्म, नैमित्तिक-धर्म, कुल-धर्म, पुरुष-धर्म, स्त्री-धर्म, आचार-धर्म, व्यवहार-धर्म, आपद्-धर्म इत्यादि। इसी-

लिए धर्म के अर्थ में भी पर्याप्त विस्तार हो गया है और धर्म का अर्थ स्थिति अनुकूल कर्तव्य-पालन हो गया है। कर्मों को धर्म के अनुसार इस प्रकार नियंत्रित तथा नियोजित करना कि जिससे मोक्ष प्राप्त हो सके जिसके लिए मनुष्य-जन्म मिला है। प्रत्येक जीवधारी का भविष्य उसके कर्मों से निर्धारित होता है। कर्म का फल अनिवार्य है। वर्ण-व्यवस्था के अन्तर्गत शूद्रों की स्थिति हीन है; परन्तु अपने वर्णानुकूल कर्म करने से शूद्र को भी मोक्ष प्राप्त हो सकता है। इस प्रकार मोक्ष की दृष्टि से सभी वर्ण समान हैं, कोई छोटा बड़ा नहीं है। महाभारत में इस प्रकार के अनेक आख्यान हैं जिनमें ब्राह्मणों तथा तपस्वियों को भी शूद्रों से मोक्ष प्राप्ति की शिक्षा मिली है। सारांश यह है कि धर्मानुकूल कर्म ही मुख्य है।

"कर्म प्रधान विश्व रचि राखा।"
"करम गति टारे नाहिं टरी।"
"करम गति जानि सका न कोई।"

उपरोक्त पदों तथा अन्य गीतों में भी कर्म की प्रधानता व्यक्त की गई है। अतएव हिन्दू-चिन्तकों तथा शास्त्रकारों ने कर्मों की ऐसी व्यवस्था की है जिससे धर्म और मोक्ष की प्राप्ति हो। उस कर्म को अधर्म माना गया है जो जन्म-मरण के बन्धन से छुड़ाने की अपेक्षा और जकड़े। अतएव गर्भाधान से लेकर अन्त्येष्टि तक प्रत्येक व्यापार को जीवन की सभावनाओं के साथ नियोजित करते हुए धर्माचरण से संयुक्त किया गया है। मन की शुचिता तथा शरीर के परिमार्जन के लिए ही अनेक प्रकार के संस्कारों की व्यवस्था की गई है।

इन संस्कारों की संख्या, अनेक शास्त्रकारों के अनुसार, भिन्न है। गृह्य-सूत्र में लगभग ४० संस्कारों की परिगणना की गई है; गौतम के धर्म-सूत्र में ४८ संस्कारों के नाम दिये गये हैं। इन संस्कारों के अन्तर्गत समस्त मानवीय क्रियाओं को समन्वित कर लिया गया है। इस प्रकार हिन्दू-शास्त्रकारों ने मनुष्य की प्रत्येक गतिविधि को प्रभु की पूजा के रूप में परिवर्तित कर दिया है और प्रत्येक हिन्दू का जीवन धर्म के प्रति सम्पूर्ण आत्मसमर्पण के रूप में परिणत हो गया है।

ये संस्कार वर्ण-धर्म के अनुसार हिन्दू-समाज के आवश्यक अंग हैं। विभिन्न वर्णों के लिए विभिन्न अनुज्ञाएँ प्रदान करके वर्णों के मध्य सामाजिक संबंध की व्यवस्था की गई है। संस्कारों की 'व्याख्या' सामाजिक व्यवस्था तथा सुचारुता की दृष्टि से वर्णानुसार की गई है। और आश्रम-गत संस्कारों की

व्यवस्था व्यक्ति से सीधा संबंध रखती है। इस प्रकार हिन्दू शास्त्रकारों ने व्यक्ति और समाज पर एक साथ और पृथक-पृथक व्यवस्थाएँ दी हैं। एक सामाजिक प्राणी के रूप में मनुष्य के क्या कर्तव्य होने चाहिए और एक आदर्श व्यक्ति के रूप में उसका आचरण कैसा होना चाहिए। इन दोनों दृष्टिकोणों से मनुष्य के धर्म की व्याख्या प्रस्तुत कर एक पूर्ण मनुष्य के विकास की सुन्दर कल्पना ही भारतीय समाज-शास्त्र की सर्वश्रेष्ठ सफलता है। इस व्यवस्था के द्वारा जहाँ एक ओर लौकिक सफलता एवं समृद्धि प्राप्त होगी वहाँ दूसरी ओर साथ ही परम पुरुषार्थ मोक्ष भी प्राप्त हो सकेगा। यह व्यवस्था सामाजिक सुचारुता, सुसम्पन्नता तथा व्यक्तिगत अलौकिक सफलता के मार्ग की विस्तृत समीक्षा है। यहाँ तक कि विवाह, पुत्रोत्पत्ति भी व्यक्तिगत सुख का साधन नहीं वरन् समाज के हित में धर्म-पालन है, अर्थ और काम की प्राप्ति के लिए नहीं बल्कि धर्म और मोक्ष के लिए है और केवल इस लोक में शान्ति और सन्तोष के लिए ही नहीं अपितु परलोक में परम तुष्टि के लिए भी है। यही विचारधारा हिन्दू-समाज की पृष्ठ-भूमि में है जो जीवन को धर्म-पूर्ण बनाते हुए गतिशील बनाती है। इस विचारधारा के समझने पर ही यह स्पष्ट होगा कि हिन्दू-धर्म जीवन के अभावात्मक गुणों काम, क्रोध, मोह, लोभ अहंकार, द्वेष तथा जीवन के प्रति वैराग्य एवं तिरस्कार की भावना पर आधारित नहीं है प्रत्युत प्रत्येक हिन्दू जीवन-कर्म के सिद्धान्त से अनुप्राणित है। कर्म-विहीनता सामाजिक गुण नहीं सन्यासाश्रम की एक मानसिक स्थिति है जिस पर मध्यकाल में अधिक बल दिया गया। कर्म योग का सब से महत्त्वपूर्ण पाठ श्री कृष्ण ने अर्जुन को कुरुक्षेत्र के रणस्थल में दिया था जिसके अनुसार कर्म विहीनता एक अभिशाप है, गुण या वरदान नहीं। कर्म की अनिवार्यता और साथ ही उसके प्रति निस्पृहता ऐसा दृष्टिकोण है जो मानसिक क्लेश और निराशा और उत्फुल्लता दोनों का निराकरण कर एक ऐसी स्वस्थ मानसिक स्थिति का निर्माण करता है जो परम सत्य की अधिकारिणी है।

"युद्धस्व विगत ज्वरः" तथा

"कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन" इसी प्रकार की मनोस्थिति की ओर संकेत करते हैं। धर्म समझ कर, "धर्म संस्थापनार्थाय" बिना क्रोध और किसी प्रकार के मानसिक उद्वेग और उत्तेजना के युद्ध अथवा संघर्ष करना गीता की परम शिक्षा है और बिना फल की इच्छा के कर्म करना ही सबसे बड़ा धर्म है। इसी भाव से प्रत्येक हिन्दू-संस्था, संस्कार एवं व्यापार ओत-प्रोत

है। मानव-जीवन एक धर्माचरण है जिसका उद्देश्य यदि कोई हो सकता है तो केवल मोक्ष। अन्यथा मनुष्य अपने पूर्वजन्म के कर्मानुसार वर्तमान जन्म में अनिवार्यतः जीवन यापन करता है और अपने वर्ण-धर्म तथा आश्रम-धर्म के अनुसार आचरण करता हुआ जीवन-लीला समाप्त कर देता है। उसके जीवन में पूर्वजन्म के कर्मों के अनुसार भोग की अनिवार्यता तथा ईश्वर की इच्छा पर समर्पण की भावना ही मुख्य होती है। ईश्वर के प्रति आत्मसमर्पित हिन्दू-जीवन के कर्म मोक्ष-प्राप्ति का एक लघु प्रकरण है।

मौलिक सामाजिक मान्यताएँ रक्त की भाँति समाज के समस्त शरीर में प्रवाहित होती रहती हैं प्रकट रूप में जीवन के कार्यों में उनकी घोषणा नहीं होती। जन्म-जन्मान्तर के कर्मों के भोग की मान्यता के कारण कर्म, प्रारब्ध अथवा भाग्य के अर्थ में भी विस्तृत रूप से प्रयुक्त होता है। निम्नलिखित विवाह के गीत में कर्म शब्द का प्रयोग द्रष्टव्य है:—

"काहे मरिहौ नउआ काहे मरिहौ बरिया, काहे बम्हन जी के पूतरे।
हमरे करम दादुलि यहै लिखा है मेटा न मिटै तुम्हार।"

कर्म के प्रति यह हिन्दू-आस्था है जो जीवन के समस्त कार्य-कलापों में अनस्यूत है। इस प्रकार (करम) कर्म का अनेक गीतों में उल्लेख हुआ है।

[२]

वर्णाश्रम-व्यवस्था

हिन्दू सामाजिक व्यवस्थाओं में सबसे अधिक महत्वपूर्ण वर्ण-व्यवस्था है। परन्तु अवधी-लोक-गीत काल वर्ण-व्यवस्था के युग से सबंध नहीं रखता। इन गीतों का काल तो स्वाभाविक ही अवधी भाषा के अस्तित्व में आने के उपरान्त ही प्रारम्भ हुआ; अथवा जिस प्रकार भाषा, भाव, सामाजिक स्थितियाँ परिवर्तित होती गईं गीतों की रचना होती गई। लोक-गीतों की धारा निर्बाध गति से बहती रहती है और जिस प्रकार हिन्दू-जीवन काल की घड़ियाँ गिनने के लिए नहीं रुकता उसी प्रकार कर्मरत मानवीय हृदय अपनी अनुभूतियाँ, आशाएँ, आकांक्षाएँ तथा निराशाएँ गीतों में व्यक्त कर अपने कर्म के भोग को, चाहे अच्छा हो या बुरा, भुला देता है।

वर्ण-धर्म की व्यवस्था व्यक्ति के सामाजिक स्तर तथा सामाजिक संबंधों को निर्धारित करने के लिए की गई थी। मनुष्य की स्वाभाविक विशेषताओं,

गुणों तथा प्रवृत्तियों के आधार पर चार विशेष समुदायों की कल्पना की गई थी। इन्हीं चार समुदायों में वैदिक समाज को विभाजित किया गया था। वर्ण-व्यवस्था का प्रथम उल्लेख ऋगवेद के पुरुष-सूक्त में मिलता है:—

"ब्राह्मणोस्य मुखम् आसीत् बाहू राजन्यः कृतः।
ऊरु तदऽस्य यद् वैश्यः पद्भ्याम् शूद्रो अजायत॥"

इस ऋचा के अनुसार ब्राह्मण पुरुष के मुख, क्षत्रिय बाहु, वैश्य जंघा तथा शूद्र पाँव का प्रतिनिधित्व करते हैं। ऋगवेद के अनुसार ही ब्राह्मण को सर्वश्रेष्ठ माना गया है। क्षत्रिय को शक्ति एवं वैभव-सम्पन्न माना गया है और वैश्य लाभ के लिए कार्य करने वाला समुदाय तथा शूद्र सेवा के लिए परिश्रम करने वाला समुदाय है। ऐतिहासिक दृष्टि से शूद्र वे लोग थे, जिन पर आर्यों ने आक्रमण कर भारत वर्ष में प्रवेश किया था और अपना विस्तार किया था। इन्हीं अनार्यों, दासों अथवा दस्युओं को अपनी सामाजिक व्यवस्था में सम्मिलित कर सेवा का कार्य सौंपा। परन्तु उस समय ये समुदाय Cooley के ग्रंथ "Social Organisation" के अनुसार "Open Classes"—खुले हुए समुदाय थे जिनमें प्रवेश व्यक्तिगत गुणों तथा प्रवृत्तियों के आधार पर था, जन्मगत न था जैसा कि Cooley ने इन शब्दों में कहा है: "More based on individual traits and less upon descent." वर्ण-भेद, विशेष रूप से प्रथम तीन वर्णों में, कठोर नहीं था। वर्ण परिवर्तन के अनेक उदाहरण हैं और रोटी-बेटी के संबंध में कोई कट्टरता नहीं थी। क्षत्रिय राजा ययाति देवयानी एक ब्राह्मण कन्या से विवाह करता है। इस प्रकार के अनुलोम तथा प्रतिलोम विवाह वैध माने जाते थे। परन्तु बहुत शीघ्र ही वैदिक काल में ही प्रतिलोम विवाह को सम्मान की दृष्टि से नहीं देखते जो आगे चल कर धीरे-धीरे बिलकुल बन्द हो गया। यद्यपि अनुलोम विवाह बहुत बाद तक होते रहे। काम के संबंध में भी वर्ण-गत कट्टरता नहीं बरती जाती थी। वर्णानुकूल कर्म के अतिरिक्त कर्म करने से उसका सामाजिक स्तर नहीं गिरता था। ब्रह्म ऋषि भृगु के उत्तराधिकारी रथ बनाने में निपुण बताए गये हैं। अस्तु।

ब्रह्मर्षि भृगु भरद्वाज को समझाते हुए वर्ण-व्यवस्था पर प्रकाश डालते हैं। भृगु की इस व्याख्या से वर्ण (रंग) के आधार पर विभाजन स्पष्ट हो जाता है। उनके अनुसार ब्राह्मणों का वर्ण 'सित' गोरा रंग, क्षत्रियों का 'लोहितः' लाल रंग वैश्य का वर्ण "पीतकः" पीला रंग और शूद्रों का वर्ण 'असित' काला रंग है। भरद्वाज मुनि इस व्याख्या पर शंका प्रकट करते हुए भृगु

ऋषि से पूछते हैं कि विविध वर्णों को केवल चार वर्णों में विभाजन तथा वर्ण के आधार पर उनका पहचानना कैसे संभव हो सकता है। तब भृगु ऋषि कुछ विस्तार से अपने सिद्धान्त को प्रस्तुत करते हैं। संक्षेप में भृगु ऋषि के कथन को इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है :—

(१) परब्रह्म के द्वारा केवल ब्राह्मणों की उत्पत्ति हुई थी। इन्हीं द्विजों के कर्म भ्रष्ट होने पर अनेक वर्णों की रचना हुई।

(२) वे द्विज जो लौकिक सुख में आनन्द मानने लगे, जो कठोरता और क्रोध के शिकार हो गये, अपने धर्म के प्रति लापरवाह तथा साहसिक हो गये ऐसे "त्यक्त स्वधर्मः" 'रक्तांग' हो गये अर्थात क्षत्रिय हो गये।

(३) और जो द्विज 'त्यक्त स्वधर्मः' खेती करने लगे, पशु पालन में व्यस्त हो गये और अपने धर्मगत कर्तव्यों की अवज्ञा करने लगे, वे वैश्य हो गये और इस प्रकार रक्त वर्ण तथा कृष्ण वर्ण के मिश्रण से 'पीतवर्णी' हो गये।

(४) वे द्विज जो असत्य भाषण, परपीड़न तथा लोभी हो गये और उचित तथा अनुचित सभी कार्य करने लगे वे 'कृष्ण वर्ण', शूद्र हो गये।

इस प्रकार ब्राह्मण स्वयं अपनी कर्म भ्रष्टता के कारण कालान्तर में अनेक वर्णों में विभक्त हो गये।

इन चार वर्णों अथवा रंगों का मनुष्य के गुणों से संबंध है। 'सित वर्ण' सात्विक गुण का प्रतिनिधित्व करता है। 'लोहित वर्ण' रजो गुण का द्योतक है और 'असित वर्ण' तमो गुण को व्यक्त करता है और पीत वर्ण, लोहित और असित वर्ण के मिश्रण से बनता है अर्थात रजो और तमो के मिश्रण में जो गुण बनता है वह वैश्य में प्राप्त होता है। ब्राह्मण सात्विक गुण का अधिष्ठाता है। क्षत्रिय रजो गुण का प्रतिनिधित्व करता है और तमो गुण शूद्र की विशेषता है। इन विशिष्ट वर्णों के विशिष्ट गुणों के अभाव में तथा मिश्रण के कारण कालान्तर में जाति-विस्तार की विस्तृत व्यवस्था उपलब्ध होती है।

जाति-विस्तार के संबंध में राजा जनक और पाराशर ऋषि का शास्त्रार्थ विशेष महत्त्वपूर्ण है। राजा जनक पाराशर ऋषि से प्रश्न करते हैं: "समस्त मानव जाति जब एक ही ब्रह्म से उत्पन्न हुई है तो सभी मनुष्यों को एक वर्ण का होना चाहिए; उनमें भेद "कहाँ से आया !" पराशर ने उत्तर देते हुए कहा कि सन्तान पिता से भिन्न नहीं है परन्तु यदि धरती और बीज बीज होगा तो

ब्रह्म, सन्तति भी हीन होगी और क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र, ब्राह्मण एक के अंग से सभी वर्ण उत्पन्न नहीं हुए। इसीलिए उनमें अन्तर है। इन चार वर्णों के अतिरिक्त अन्य जातियाँ इन वर्णों के मिश्रण से उत्पन्न हुई हैं। इसी प्रकार चारों वर्णों से अनेक उपवर्ण अथवा जातियाँ पैदा हुईं।

भीष्म के अनुसार अपने वर्ण की पत्नी से उत्पन्न संतति उसी वर्ण की होगी परन्तु इतर वर्ण की पत्नी से उत्पन्न संतति माता के वर्ण की मानी जायेगी। ब्राह्मण पुरुष और ब्राह्मण तथा क्षत्रिय कन्या से उत्पन्न संतति ब्राह्मण वर्ण की ही होगी। परन्तु ब्राह्मण पुरुष तथा वैश्य और शूद्र कन्या से उत्पन्न संतति क्रमशः वैश्य तथा शूद्र होगी। परन्तु जब सन्तान उच्च-वर्ण की पत्नी और निम्न वर्ग के पुरुष से प्राप्त होती है तब वह सन्तान इन चारों वर्णों से पृथक होती है और यही पृथकता भीष्म के अनुसार जाति विस्तार के मूल में है।

महाभारत काल की रोटी-बेटी से संबंधित स्वतंत्रता, स्मृति-काल में कुछ कम हो गई थी। जाति-विस्तार के संबंध में मनु की व्यवस्था विशेष रूप से द्रष्टव्य है। मनु के अनुसार ब्राह्मण पुरुष तथा क्षत्रिय कन्या से उत्पन्न संतति यद्यपि ब्राह्मण वर्ण में ही सम्मिलित मानी जाती थी परन्तु सामाजिक सम्मान उन्हें प्राप्त नहीं होता था। इसका कारण मनु ने "मातृ-दोष" बताया है। परन्तु मनु के अनुसार मिश्रण सचमुच तब होता है जब एक से अधिक वर्णों में मनुष्य नीचे उतर जाता है। अर्थात यदि ब्राह्मण वैश्य अथवा शूद्र की कन्या से सन्तानोत्पत्ति करता है तो वह सन्तान वास्तविक वर्ण-संकर मानी जाती है। इसी प्रकार यदि निम्न वर्ण का पुरुष उच्चवर्ण की कन्याओं से सन्तानोत्पत्ति करता है तो वह सन्तान भी वर्ण-संकर मानी जाती है। और इन वर्ण-संकर सन्तानों में परस्पर जब रोटी-बेटी का संबंध होता है तो अन्य जातियों का विकास होता है। मनु ने स्वयं ५७ जातियों के नाम अपनी स्मृति में दिये हैं।

परन्तु वर्ण-व्यवस्था तथा जाति-व्यवस्था में एक महत्त्वपूर्ण मौलिक अन्तर है जिसके न समझने के कारण प्रायः विद्वान अनेक विवादों में उलझ जाते हैं। वर्ण-व्यवस्था व्यक्ति के गुण, प्रवृत्तियों तथा कर्म पर आधारित है जब कि जाति-व्यवस्था वंशानुक्रम जन्मगत उत्तराधिकार पर आधारित है और यह जाति-वि तार भेद-प्रभेद के कारण जटिल होता गया और लोगों ने उनका कठोरता से पालन करना शुरू कर दिया। अपने वर्णगत विभ्रम तथा

अनिश्चितता के कारण विशिष्ट सामाजिक स्थिति निर्माण करने के लिए जाति का सहारा ही अनिवार्य हो गया और इस प्रकार अपने मुख्य वर्ण को स्वीकार करते हुए लोग अपनी जाति को अधिक महत्त्व देने लगे। एतदर्थ ब्राह्मण या क्षत्रिय कहकर अपनी सामाजिक स्थिति का परिचय अपर्याप्त हो गया और जाति कुल अथवा गोत्र का उल्लेख आवश्यक और महत्त्वपूर्ण हो गया। इसीलिए वर्ण-धर्म पालन में शिथिलता आ गई और धीरे धीरे समय के साथ उसकी अनिवार्यता लुप्त हो गई। यद्यपि आज भी चारों वर्ण हैं और अन्य जातियाँ उन्हीं के अन्तर्गत आती हैं परन्तु वर्ण-धर्म-पालन आवश्यक नहीं रहा और कर्मानुसार तथा गुणों के अनुकूल वर्ण परिवर्तन की संभावना भी समाप्त हो गई। अब तो केवल जन्म के आधार पर ही जाति-निर्णय होने लगा।

इस जाति-व्यवस्था को अधिक महत्त्व प्राप्त होने पर गुणों और धर्म-पालन के आधार पर विशिष्टता तथा महत्त्व प्रदान करने की बात भी समाप्त हो गई और इस विकास का स्वाभाविक परिणाम वर्णगत उच्च नीच की भावना का विनाश ही होना चाहिए था। ब्राह्मण अथवा किसी अन्य वर्ण में उत्पन्न बालक वर्णानुकूल धर्म तथा संस्कार के अभाव में एक समान है परन्तु जाति व्यवस्था वर्णव्यवस्था का ही एक विकसित रूप है जिसमें वर्ण-व्यवस्था की विशेषताओं को समन्वित कर लिया गया है। अर्थात् आज हिन्दू-समाज वर्ण-व्यवस्था के ऊपरी रूपों को (व्यापारों को नहीं) स्वीकार करता हुआ जाति-व्यवस्था का पालन करता है। अतएव वर्ण-व्यवस्था के अनेक महत्वपूर्ण संस्कारों अथवा धार्मिक रूपों को बाह्य एवं औपचारिक रूप से ग्रहण कर लिया है जिससे जाति विशेष को वर्ण विशेष के विशेषाधिकार प्राप्त हो सकें और सुविधानुसार अथवा भौतिक आवश्यकताओं के आधार पर आचरण का विकास भी हो सके। आज का ब्राह्मण अपने वर्णानुकूल एक भी आचरण किये बिना भी ब्राह्मण है और उस दिन तक वह अपने को ब्राह्मण मानता तथा मनवाता रहेगा जब तक उसको ब्राह्मण रूप में व्यक्त अथवा अव्यक्त सम्मान तथा महत्व मिलता रहेगा।

आज भी जनेऊ एवं विवाह के संस्कारों में वैदिक सूत्रों का उच्चारण होता है। विद्याध्ययन, यज्ञ, वेदों के नाम लिये जाते हैं। प्रत्येक ब्राह्मण-कुल का कम से कम एक वेद माना जाता है और प्रत्येक ब्राह्मण अपने वेद ग्रंथ का नाम बड़े गर्व से लेता है। परन्तु वास्तविक परिस्थिति यह है कि अधिकांश

ब्राह्मणों ने अपने वेदों को देखा भी नहीं, उसकी एक भी पंक्ति सुनी नहीं परन्तु फिर भी इस अभावपूर्ण ब्राह्मणत्व का इतना गर्व है कि समस्त संसार को अपने समक्ष तुच्छ समझते हैं। इस अहंकारपूर्ण मिथ्या महत्त्व पर ही एक दूसरे वर्ण में परस्पर विद्वेष व्याप्त हो गया है। जो वर्ण-व्यवस्था कभी समाज में मानवीय पारस्परिक सम्बन्ध को निश्चित कर व्यक्तिगत तथा समाजगत सुचारुता स्थापित करने वाली थी और जो परम पुरुषार्थ 'मोक्ष' प्राप्ति में सहायक थी वही आज सबसे बड़े सामाजिक मिथ्याचरण का पोषण कर रही है।

इस आलोचना से एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न सम्मुख आता है और वह है परम्परा का। परम्परा में मौलिक प्रेरणा का अभाव अस्वाभाविक नहीं है; बल्कि अधिकांश परम्पराएँ सामाजिक स्वीकृति पर चलती रहती हैं जिनमें व्यक्तिगत मानसिक चेतना, क्रियाशीलता तथा प्रेरणा का अभाव होता है। अधिक प्राचीन समाज में अधिक सामाजिक परम्पराएँ एकत्र हो जाती हैं और जितनी ही प्राचीन परम्परा होती है वह उतनी ही अधिक महत्त्वपूर्ण होती है और साथ ही प्रेरणा-विहीन एवं निष्प्राण भी होती है। परन्तु सामाजिक क्षेत्र में जो सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण हैं वे व्यक्तिगत इच्छा अनिच्छा, स्वीकृति तथा अस्वीकृति पर निर्भर नहीं करती। परम्परा पालन की पृष्ठभूमि में विशेष रूप से दो मनोवैज्ञानिक तथ्य कार्य किया करते हैं। एक तो परम्परा उल्लंघन में अदृष्ट का भय और दूसरा अपनी विशिष्ट सामाजिक स्थिति का संरक्षण तथा विस्तार।

इस परम्परा के प्रश्न से लोक-गीतों के अस्तित्व तथा उनकी प्रचुरता का सीधा सम्बन्ध है। उपनयन संस्कार पर गाये जाने वाले अनेक गीतों में वर्ण तथा ब्राह्मण शब्दों का प्रयोग हुआ है। यही पहला संस्कार है जिसके द्वारा वर्ण-विभेद की विभाजक रेखा खींची जाती है। उपनयन संस्कार के पूर्व सभी शूद्र की अवस्था में रहते हैं और उपनयन के उपरान्त अपने वर्ण के अनुसार विद्याध्ययन करते हुए समावर्तन के पूर्व तक ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करते हैं। उपनयन संस्कार में वर्ण के अनुसार कुछ अन्तर है विशेष रूप से उसके विस्तारों में परन्तु अब ये संस्कार, वैदिक परम्परा की मौलिक प्रेरणा से वंचित हो गये हैं। इन्हें संस्कार न कह कर यदि परम्परागत लोकाचार कहा जाय तो अधिक उचित होगा क्योंकि इन संस्कारों के पालन का हम केवल स्वाँग करते हैं। आज का समाज जाति-व्यवस्था के अन्तर्गत चल रहा है,

वर्णों का केवल नाम मात्र रह गया है अतएव इन संस्कारों का परम्परागत ऐतिहासिक महत्व होने के अतिरिक्त यथार्थ नहीं है जिनकी निरर्थकता शनैःशनैः विदित होती जा रही है। आधुनिक काल में जबकि हमारे देश में एक 'रेनेसाँ' चल रहा है। कुछ लोग प्राचीन वैदिक परम्पराओं का पुनरुत्थान कर प्राचीन भारत के गौरव को प्रस्थापित करने के सपने देखते हैं, वहीं दूसरे लोग उद्योगवाद, नवीन शिक्षा तथा पाश्चात्य सभ्यता के प्रभाव के अन्तर्गत नवीन सामाजिक मूल्यों पर बल दे रहे हैं और प्राचीन मानदण्डों को बदल देना चाहते हैं। आज हमारी सामाजिक स्थिति बहुत विषम हो गई है। ग्रामों में जहाँ वैदिक संस्कारों का परम्परागत पालन हो भी रहा है वहाँ उन संस्कारों के प्रति कोई भी चेतना नहीं है और नगरों में जिनके आचरण प्राश्चात्य सभ्यता के प्रभाव में चल रहे हैं वहाँ देश के अतीत गौरव के सपनों के आधारों पर प्राचीन मूल्यों के पुनरुत्थापन के सपने देखे जा रहे हैं। हमारा ग्रामीण समाज बैलगाड़ी में बैठ कर हवाई जहाजों के सपने देख रहा है और नागरिक समाज हवाई जहाज में सफर करते हुए कभी मन बहलाव के लिए बैलगाड़ी की सवारी का मजा लेना चाहता है। यथार्थ सामाजिक दृष्टिकोण हमें कहीं नहीं दिखाई देता।

प्रस्तुत पुस्तक में मैंने केवल स्त्रियों द्वारा गाये जाने वाले गीतों का संकलन किया है। और उनमें से अधिकांश गीत परम्परागत प्रमुख सामाजिक अवसरों पर गाये जाते हैं। आज हमारे समाज में परम्पराओं का परिपालन स्त्रियों द्वारा ही विशेष हो रहा है जिसको शिक्षित वर्ग पिछड़ापन ही मानता है और उन परम्पराओं के पालन में सक्रिय भाग नहीं लेता। नागरिक सभ्यता और नारी-शिक्षण के प्रस्तार के साथ इन परम्पराओं के प्रति निश्छल श्रद्धा एवं निष्ठा में अभाव आता जा रहा है। इन संस्कारों के पूरा करने के साथ-साथ उनकी निरर्थकता का भी उन्हें आभास है परन्तु बापदादों से चली आने वाली पद्धतियाँ अनुकूल न होते हुए भी तोड़ी नहीं जा सकतीं; इसलिए अधिकांश संस्कारों का पालन केवल रूप मात्र में हो रहा है। शीत काल में जिस प्रकार मेरे पिता जी ऊनी पाजामे के नीचे भी धोती समेट कर बाँधे लेते हैं और जिस प्रकार चिली, त्रिनीदाद के हिन्दू विवाह के समय पतलून के ऊपर धोती लपेट लेते हैं उसी प्रकार आज हमारा समाज भी संस्कारों तथा अन्य परम्पराओं के आवरण में एक दूसरे ही समाज और सामाजिक रूप का निर्माण कर रहा है। खुले हुए रूप में न तो नागरिक और न ग्रामीण वास्तविक एवं

यथार्थ रूप को ग्रहण करने का साहस रखता है और न उस परिवर्तित रूप को सामाजिक मान्यता देने के लिए तैयार है। यही कारण है कि हमारा आज का हिन्दू-समाज स्फूर्तिवान, शक्तिशाली मानव को जन्म न देकर काष्ठ लक्कड़ों (Blocks) का निर्माण कर रहा है न तो पूर्ण विश्वास के साथ हम किसी रूप को स्वीकार ही कर पा रहे हैं और न पूर्ण अविश्वास के साथ किसी रूप अथवा व्यापार को त्याग ही पा रहे हैं।

[३]

प्रजोत्पत्ति

मैंने पिछले पृष्ठों में हिन्दू-समाज-संगठन के प्रमुख तत्वों पर विचार प्रकट किये हैं जो कि आधुनिक समाज-व्यवस्था की आधार शिला है। वर्ण-व्यवस्था, आश्रम धर्म, कर्मानुसार पुनर्जन्म, मोक्ष के लिए धर्माचरण इत्यादि के अतिरिक्त प्रत्येक 'सवर्ण' हिन्दू तीन ऋणों के भार से भी दबा होता है। ब्रह्मचर्य पालन और ऋषियों द्वारा बनाये ग्रंथों का अध्ययन कर ऋषि ऋण से और यज्ञ करके देव ऋण से उऋण होने के लिए यद्यपि उत्साह नहीं मिलेगा परन्तु प्रत्येक व्यक्ति पितृऋण से उऋण होना अवश्य अनिवार्य समझता है और इसी उद्देश्य से लोग एक नहीं अनेक सन्तानें उत्पन्न करने में संलग्न हैं। ऋग्वेद में भौतिक सामर्थ्य तथा सम्पन्नता की दृष्टि से अनेक हृष्ट पुष्ट सन्तानों के लिए प्रार्थना की गई है, जिस प्रकार भूमि, बैल, रथ, मकान की माँग की गई है। इसी भौतिक उद्देश्य की पूर्ति के लिए सन्तानोत्पत्ति के कार्य को न केवल धार्मिक स्वीकृति ही प्रदान की गई प्रत्युत यह धर्माचरण की अनिवार्यता बन गई। कोई भी विकासोन्मुख अथवा विस्तार की आकांक्षा रखने वाली जाति सभी प्रकार के प्रयत्नों से अपने अत्यधिक विस्तार को प्राप्त करती है। ऐसी जाति के सभी सम्बन्धों एवं कार्यों की व्याख्या विस्तार की आकांक्षा के आधार पर भी की जा सकती है। एक ही (Clan) कुल अथवा गोत्र में विवाह की अस्वीकृति के पीछे भी यही कारण छिपा है क्योंकि इसकी स्वीकृति जाति-संकुचन का कारण बनती है। दूसरे गाँवों में तथा दूसरे कुल में विवाह-सम्बन्ध, एक और कुल को अपने में बाँध लेता है जो युद्धकाल में आवश्यकता पड़ने पर उसके कुल का साथ दे सके। महाभारत में यह बात दृष्टव्य है कि महाभारत-युद्ध में पाण्डवों का साथ देने वाले इनके सम्बन्धी ही थे। इस प्रकार प्रत्येक अपनी शक्ति के विस्तार के प्रयत्न में तल्लीन थी।

जितने ही पुत्र होंगे, विवाह के माध्यम से उतने ही कुलों की शक्ति को अपने कुल से संलग्न किया जा सकेगा; और इसके अतिरिक्त पुत्र और पुत्रों की संख्या स्वयं में आधारभूत शक्ति तो है ही। आर्थिक उद्देश्यों के सम्पादन के लिए राजनैतिक साधनों की आवश्यकता होती है और राजनैतिक साधन को प्राप्त करने के लिये सैन्य-योजना अनिवार्य है। अस्तु सन्तानोत्पत्ति के अन्य कारणों के साथ-साथ, सैन्य-योजना (military strategy) भी एक प्रमुख कारण था। इस तथ्य को समझने के लिए द्रविड़ समाज-रचना तथा विवाह-परम्परा पर दृष्टि डालनी होगी। द्रविड़ समाज-रचना के अनुसार उसी कुल तथा एक ही गाँव में विवाह सम्बन्ध को आदर्श माना जाता है। इस परम्परा का मूल राजनीति अथवा राजनैतिक आवश्यकता नहीं प्रत्युत (mutual social obligations) पारस्परिक सामाजिक आदान-प्रदान तथा सहयोग की भावना है। यदि किसी ने विवाह में पुरस्कार स्वरूप किसी की कन्या स्वीकार की है तो उस उपकार का बदला भी उसी रूप में देना आवश्यक है अन्यथा प्रतिदान के बिना एकतरफा उपकार सामाजिक रूप को एकांगी बना देगा। परन्तु आर्यों की समाज-व्यवस्था में न केवल एक कुल में परस्पर विवाह असंभव है बल्कि जिस कुल में हम बेटा ब्याहते हैं उसमें अपनी बेटी नहीं दे सकते।

सन्तानोत्पत्ति करके पितृ-ऋण से उऋण होने की बात को इतना महत्त्व दिया जाना हमारे सामने एक प्रश्न उपस्थित करता है कि क्या इस ऋण-भार के अभाव में आर्य सन्तानोत्पत्ति न करते? क्या प्रकृति ने सृष्टि के विकास और प्रस्तार के लिए पर्याप्त प्रसाधन और प्रेरणा नहीं प्रदान की कि इस प्रकार से हमारे देश में सन्तानोत्पत्ति भी एक महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व माना जाये जिसके अभाव में शायद सन्तानोत्पत्ति न होती! अन्य समाजों अथवा देशों में क्या सन्तानोत्पत्ति नहीं होती जहाँ इस ऋण का अभाव है? इन प्रश्नों का यदि कोई उत्तर हो सकता है तो यही कि सन्तानोत्पत्ति को सामाजिक आवश्यकता की दृष्टि से अत्यधिक महत्त्वपूर्ण समझा जाये जो किसी भी परिस्थिति में अनिवार्य है। इसको ऋण के रूप में मानने का उद्देश्य तत्कालीन सामाजिक मूल्यों की स्वीकृति है और यह सचेतन बौद्धिक स्वीकृति तथा अभिव्यक्ति एक सभ्य समाज की द्योतक है जिसमें मनुष्य न केवल जैसे तैसे जीवन-यापन करता है प्रत्युत अपने अस्तित्व तथा सामाजिक उद्देश्यों के प्रति जागरूक है। उस समय की सबसे बड़ी आवश्यकता थी जाति या कुल-विस्तार जिसका मूल पुत्र ही हो सकता है। मैं तो संतानोत्पत्ति के कार्य की इस स्वीकृति को हिन्दू-समाज

की उत्कृष्ट सभ्यता का मूल मानता हूँ। इस स्वीकृत के द्वारा यौन-संबंध के प्राकृतिक रूप को उदात्तीकरण किया गया है और जिसके द्वारा यौन व्यवहार शारीरिक आनन्द का साधन न होकर एक उच्च एवं महत्वपूर्ण उद्देश्य की प्राप्ति का एक प्रयत्न मात्र है। यौन भावना और यौन-आकर्षण के तीव्र उद्वेग को संयत और नियंत्रित करके एक महान सुव्यवस्थित समाज की रचना के लिए इस प्रकार के सामाजिक मूल्यों को प्रस्थापित करना नितान्त आवश्यक था और इस प्रकार की स्वीकृति ने उस आदि, अतिप्राकृतिक एवं स्वाभाविक प्रक्रिया को भी उच्चादर्श से समन्वित कर उसको भी महानता प्रदान कर दी है। इस प्रकार विवाह द्वारा स्त्री पुरुष के यौन संबंध का नियमन कर उसे एक महान सामाजिक तथा धार्मिक उद्देश्य की पूर्ति का साधन बना दिया जो संभव था कि व्यभिचार और यौन-प्रमाद में परिणत हो जाता और इसीलिए हिन्दू-समाज में विवाह न केवल एक पवित्र सामाजिक बन्धन है प्रत्युत एक धार्मिक कृत्य है जिसके द्वारा गृहस्थाश्रम में प्रवेश कर अनेक सामाजिक तथा धार्मिक कर्तव्यों की पूर्ति करनी आवश्यक है। पुत्र एक ओर भौतिक सुख-समृद्धि की उपलब्धि का अनिवार्य साधन है तो दूसरी ओर वह अपने पितरों की संतप्त आत्माओं का एक मात्र शीतल उपचार है। बाप की चिता में पुत्र द्वारा लगाई अग्नि, पुत्र द्वारा की गई अन्त्येष्टि क्रिया तथा पिंडदान के बिना पिता की आत्मा शान्ति नहीं पा सकती। अखंड वंशक्रम की आकांक्षा का मूलभूत कारण यद्यपि इस विचारधारा से प्राप्त हो जाता है यथापि निर्वंशी अथवा बंध्या होना एक सामाजिक कलंक है जो स्त्री और पुरुष की मौलिक हीनता का द्योतक है। संतान के अभाव में एक मनुष्य नपुंसक है और स्त्री बंध्या जो नर और नारी के जीवन की चरम निरर्थकता है। न कोई मनुष्य नामर्द कहलाना स्वीकार करेगा और न कोई स्त्री बंध्या। मनुस्मृति के अनुसार

"प्रजनार्थं स्त्रियाः सृष्टाः सन्तानार्थं च मानवाः"

स्त्रियाँ जनने के लिए और पुरुष सन्तान उत्पन्न करने के लिए पैदा किये गये हैं। प्रजोत्पत्ति के कार्य को करने वाली स्त्रियों की तुलना श्री से की गयी है; उन्हें महाभाग्यशालिनी और पूजा के योग्य बताया है। यथाः—

"प्रजनार्थं महाभागाः पूजार्हा गृह दीप्तयः।
स्त्रियाः श्रीयश्चगेहेषु न विशेषोऽस्ति कश्चन ॥"

पितृऋण के द्वारा इसी प्रजोत्पत्ति के महत्त्वपूर्ण कार्य की अनिवार्यता पर बल दिया गया है। प्रजोत्पत्ति के प्रश्न को प्रमुखता प्रदान करने के लिए ही धर्म

शास्त्रों ने पति के अतिरिक्त सपिण्डी अथवा देवर से नियोग कर सन्तानोत्पत्ति की व्यवस्था दी है। मनु के अनुसार:

"देवराद्वा सपिण्डाद्वा स्त्रिया: सम्यङ्नियुक्तया।
प्रजेप्सिताधिगन्तव्या सन्तानस्य परिक्षये ॥"

अर्थात् सन्तान न होने पर सन्तान की इच्छा रखने वाली स्त्री पति अथवा गुरुजनों की आज्ञा से देवर (पति का छोटा भाई) अथवा सपिण्डी (कुटुम्बी) से नियुक्त होकर सन्तान उत्पन्न करा ले। मनुस्मृति के अनुसार ही इस प्रकार के पुत्र को क्षेत्रज कहते हैं।

पराशर स्मृति के अनुसार कोई विवाहित स्त्री पाँच अवस्थाओं में पति को त्याग कर अन्य पुरुष से पुनर्लग्न कर सकती है। परन्तु ये व्यवस्थाएँ केवल पुत्रोत्पत्ति की भावना से ही प्रस्तुत की गई हैं।

"नष्टे मृते प्रव्रजिते क्लीबे च पतिते पतौ।
पञ्चस्वापत्सु नारीणां पतिरन्य विधीयते ॥"

मनु ने परदेश वासी पति की पत्नी के लिए निम्नलिखित अनुज्ञा प्रदान की है:

"प्रेषितो धर्म कार्यार्थं प्रतीक्ष्योऽष्टौ नर: समा:।
विद्यार्थी षड् यशोर्थं त्रीस्तु वा कामार्थं वत्सरान ॥"

अर्थात—जो पति धर्म के पालन के लिए परदेश गया हो तो आठ वर्ष, विद्या के लिये तो छ: वर्ष और धन और यश प्राप्ति के लिए गया हो तो तीन वर्ष तक पत्नी को प्रतीक्षा करनी चाहिए।' पश्चात् वह अपने देवर या सपिण्डी से पुत्रोत्पत्ति के लिए नियोग कर ले। परन्तु विवाहित पति के आने पर नियुक्त पति छूट जायेगा।

अनेक लोकगीतों में इस भावना का विस्तृत चित्रण प्राप्त होता है। संतान-विहीन पति-पत्नी को सदैव लांछित जीवन व्यतीत करना पड़ता है। प्रात:काल कोई उनका मुँह नहीं देखना चाहता और शुभ कार्यों में उनको अपशकुन समझा जाता है।[1] हेलिनिया (मेहतरानी) भी निर्वंशी राजा दशरथ का प्रात: काल मुँह देख लेने के कारण चिन्तित है कि सारा दिन कैसे बीतेगा। बन्ध्या

१—"बैठ जगावै हेलिनिया उठो न सिरी साहब हो।
साहब देख्यों निरबंसिया का मुँह दिन कैसन बीते हो ॥

स्त्री के साथ सासु, ससुर का अपमानपूर्ण व्यवहार होता है और पति भी उसका विपक्षी हो जाता है। ऐसी हालत में स्त्री के सामने आत्महत्या करने के सिवाय और कोई दूसरा उपाय नहीं है। एक सोहर गीत की कुछ पंक्तियों में बन्ध्या स्त्री की मनोव्यथा को देखिए :—

"गंगा किनारे एकु गोरिया गंगा मनावै।
"गंगा एकु लहरि तुम लेउ डूबन हम आइन।"
"को तुम सासु ससुर दुख नैहर दूरि बसै।
गोरिया कि तोरे हरि परदेस कउने गुनु डुबिहऊ।"
"न हम सासु, ससुर दुख नैहर दूरि बसै।
गंगा न मोरे हरि परदेस, कोखिया बिनु डुबिहऊँ
बलकु बिनु डुबिहऊँ।"

[1]एक अन्य गीत में बन्ध्या स्त्री की मनोव्यथा की पराकाष्ठा दिखाई

१—सासु मोहि कहै बंझिनिया ननद ब्रजबासिनि हो।"
रामा जिनकी मैं बारी बियाही उइ घर ते निकारिनि हो ॥१॥
घर ते निकरि बंझनियाँ जंगल बिच ठाढ़ी हों।
रामा बन ते निकरी बघिनियाँ तो दुखु सुखु पूँछै हो ॥२॥
रनिया! कौन बिपति की मारी जंगल बिच ठाढ़ी हो।
सासु मोरी कहै बंझिनिया ननद ब्रजबासिनि हो ॥३॥
बाघिन जिनकी मैं बारी बियाही उइ घर ते निकारिनि हो।
बाघिन! हमका जो तुम खातिउ बिपतिया ते छूटित हो ॥४॥
जहँना ते तुम आइउ उलटि हुएँ जाओ तुम्हैं नाहीं खइबै।
बाँझिनि! तुमका जो खाय लेबै हमहूँ बाँझिनि होइबै हो ॥५॥
हुआ ते चलि भै बंझिनिया बिबौरी लगे ठाढ़ी हो।
बिबौरी ते निकरी नगनियाँ तो दुखु सुखु पूँछै हो ॥६॥
रनिया! कौनो बिपति की मारी बिबौरी लगे ठाढ़ी हो।
सासु मोरी कहै बंझिनिया, ननद ब्रजबासिनि हो ॥७॥
नागिनि! जिनकी मैं बारी बियाही उइ घर ते निकारेनि हो।
नागिनि! हमका जो तुम डसि लेतिउ बिपति ते हम छूटित हो ॥८॥
जहँना ते तुम आइउ लौटि तहाँ जाओ; तुम्हैं नाहीं डसिबै हो।
बाँझिनि! तुम का जो हम डसि लेबै हमहूँ बाँझिनि होइबै हो ॥९॥
हुअना ते चलि भै बंझिनिया माया के द्वारे ठाढ़ी हो।
भितरा ते निकरी हैं माया तौ दुखु सुख पूँछै हो ॥१०॥

देग । उसे सासु बाँझिनि और ननद [1]ब्रजबासिनि कहती है और पति ने उसे घर से निकाल दिया है । वह जंगल में जाकर आत्महत्या के लिए शेरनी को समर्पित करती है परन्तु शेरनी उसे बाँझ जान कर नहीं खाती क्योंकि उसके खाने से वह भी बाँझिनि हो जायेगी । इसी प्रकार नागिन भी उसे डसने से इन्कार कर देती है । अन्त में जगत-जननी धरती माता भी उस बाँझिनि को आश्रय नहीं देती क्योंकि उसे भी डर है कि वह भी ऊसर हो जायेगी । सन्तान-हीनता के प्रति इतनी कठोर सामाजिक भावना के कारण ही कोई भी अविवाहित तथा पुत्रहीन रहने की कल्पना भी नहीं कर सकता । अस्तु विवाह तथा पुत्रोत्पत्ति हिन्दू-समाज का अपरिहार्य नियम है ।

धर्मशास्त्रों में प्रजोत्पत्ति के लिए इतना बल दिया गया है और साथ ही उन सभी सभावनाओं के निराकरण का प्रयत्न किया गया है जिनके कारण प्रजोत्पत्ति में बाधा न पड़े । नियोग की व्यवस्था धर्मशास्त्रों की सबसे महत्त्वपूर्ण अनुज्ञा है जिससे हर संभव प्रकार की सन्तानहीनता को समाप्त किया जा सके । पीछे अनेक परिस्थितियों के अन्तर्गत नियोग की व्यवस्था की चर्चा की जा चुकी है । लोकगीतों में भी इस प्रकार की कुछ परिस्थितियों का चित्रण हुआ है जिनमें देवर से उत्पन्न पुत्र अथवा गर्भाधान, पति के द्वारा अनुचित नहीं माना जाता । नीचे दिये गये एक सोहर गीत पर विचार आवश्यक है ।

"अम्बिली के चिकने पात, रसैरस डोलिये; भो राजा मोरे ।
बगिया माँ निम्बुला लगाइयो, निम्बुला तर टाटी रहै । टेक ।

बिटिया कौनि बिपति तुम्हरे ऊपर हियाँ लौं चली आउउ ।
सासु मोरी कहति बँझिनिया ननद ब्रजबासिनि हो ।।११।।
मैया ! जिनकी मैं बारी बियाही उइ घर ते निकारिनि हो ।
मैया ! हमका जो तुम राखि लेतिउ बिपति ते हम छूटित हो ।।१२।।
जहँना ते तुम आइउ लौटि हुँए जाओ, तुम्हैं नाही राखिबै ।
बिटिया तुमका जो हम राखि लेबै बहुरिया बाँझिनि होइहैं ।।१३।।
हुँअनौ ते चलि भै बँझिनिया जंगल बिच आई हो ।
धरती तुमहीं सरन अब देतिउ बाँझिनि नाँव छूटै हो ।।१४।।
जईना ते तुम आइउ लौटि हुँऐं जाओ, तुम्हैं हम ना राखब हो ।
बाँझिनि ! तुमका जो हम राखि लेबै हमहूँ ऊसर होइबै हो ।।१५।।

[1]नाच गाकर भीख माँगने का व्यवसाय करने वाली कुछ विशेष स्त्रियों को ब्रजबासिन कहते हैं ।

बगिया माँ महला उठाइयो, खिड़की लगे ठाढ़ी रहौं। टेक
महला में सेजा बिछाइयो, दून्हो जने सोइये। टेक
क्या परी तकसीर पीठि दै सोइ रहे ! टेक
पाँच महीने का पेट, कहाँ ते लाई हौ रानी मोगी। टेक
लहुरा देवर बड़ा ढीठ, कहा न मानिये। टेक
क्या करे मेरा भैया, नयनु तोरे लागने। टेक
एक कोखि दून्हो भैया, नाँव तुम्हरा चलै। टेक

इस गीत में छोटे देवर से गर्भाधान की बात कही गई है। और पति को भी, यह जानकर कि उसकी पत्नी के अपने छोटे भाई का ही गर्भ है, कोई आपत्ति नहीं होती। यहाँ यह बात ध्यान देने की है कि पति रुष्ट है, नाराज है, परन्तु अपने भाई की बात सुनकर वह सन्तुष्ट हो जाता है जिससे यह बात मालूम होती है कि पति की अनुपस्थिति में पत्नी के अपने देवर के साथ नियोग कर पुत्रोत्पत्ति करने में किसी सामाजिक नियम का उल्लंघन नहीं होता। संभव है कि यहाँ पर मेरे इस निष्कर्ष के विपक्ष में यह तर्क प्रस्तुत किया जाये कि इस गीत में यह बात विनोद तथा परिहास में कही गई है और मजाक के सिवाय इसका कोई अन्य अर्थ अनर्थ है। यदि इस तर्क को मैं स्वीकार कर भी लूँ तो भी एक प्रश्न का उत्तर आवश्यक है: देवर और भाभी में ही इस प्रकार के हास-परिहास का क्या कारण है ? सभी प्रकार का श्लील तथा अश्लील और सभ्य अथवा असभ्य मजाक करने का अधिकार देवर को कहाँ से प्राप्त हुआ ? और किसी अन्य व्यक्ति को क्यों नहीं ? इस लोकोक्ति "निबरे कै मेहरिया जवाँरि भर कै भौजी" का क्या संकेत है !

इस संदर्भ में विचार करने के लिये मैं एक दूसरा सोहर का गीत प्रस्तुत करता हूँ :

"जँभिरिया के चिकने पात, बिरहुली।
मोरे पिछवारे निम्बुला का बिरवा, डुलै लगी जुड़ली बयार। टेक
छोट देवरवा बहुतै रसीले, तोड़ि लाओ निम्बुला अनार। टेक
जो भौजी हम निम्बुला लै अइबे, आयो हमरी सेज। टेक
जो देवरा हम सेज तोरी अइबे, तुरत पेटु रहि जाय। टेक
आठ मास नौ लागन लागे, लालन रोय सुनाय। टेक
बरहीं बरस जब मोरे पिय आये, बड़ तरे कीन्हेनि बसेर। टेक
क्यारा बिनत एक बुढ़िया जो मिलिगै, मौरे घर कहेहु सन्देसु। टेक

उठो उठो कुलतारन रनियाँ, तोरे हरि लागी पियास।
सासु, ननद, देवर, जेठनियाँ, हमहूँ का मति बुधि देओ।
एक हाथे गेडुआ दूसरे हाथे बिरिया, चलो मधुरिया चाल।
पानी पियैं औ मुँह तन चितवैं, ललना केहिका रोवै महल मा।
पानी के पियासे हो पानी पिओ राजा, पीछे से पूछयो बात।
चाहे राजा मारौ चाहे गरियाओ, लहुरे देवर का पेट।
काहे का मरिबे काहे का गरियैबे, दुई मा कोहु का होय।
केहि की है अनुहारि मोरा ललना, नाँव धरायो काह?
देवरा की अनुहारि मोरा ललना, धर्यो सदाशिव नाँव।
भले कियौ कुलतारनि रनियाँ दून्हो कुल रोप्यो बंसु।
बिरहुली ॥

इतना सीधा और स्पष्ट उत्तर जैसा कि स्त्री ने अपने पति को दिया है कि चाहे मारो चाहे गाली दो—पेट (गर्भ) छोटे देवर का है बिना किसी सामाजिक औचित्य के असंभव है। अपने ऊपर अपने पति के अधिकार को वह जानती है और इस बात से भी वह अपरिचित नहीं है कि पति ही उसका देवता है जिसकी सेवा उसका महाभाग है। परन्तु बारह वर्ष तक परदेश में रहने वाले मनुष्य की स्त्री को नियोग की पूर्ण अनुमति है। इसीलिये जब उसका पति १२ वर्षों तक परदेश में रहता है वह अपने देवर के साथ नियोग करती है और जब वह वापिस आता है तो पति के रूप में उसका स्वागत करती है और अपने पुत्र के कारण को छिपाने की आवश्यकता नहीं समझती।

परन्तु जब तक नियोग-व्यवस्था का पालन होता था तब तक देवर का अर्थ वास्तविक तथा यथार्थ था परन्तु इस अनुज्ञा के परिणाम स्वरूप अनेक सामाजिक जटिलताओं के पैदा हो जाने के कारण सवर्णों ने इस नियोग की प्रथा को त्याग दिया। नियोग तो समाप्त हो गया परन्तु देवर की परम्परागत संज्ञा आज भी चली आ रही है। नियोग के अन्त के कारण देवर की अयथार्थता के कारण केवल उसका ऊपरी वाचिक रूप मात्र रह गया। अतएव देवर के रूप में जो अधिकार उसे प्राप्त थे वे केवल विनोद के रूप में रह गये। वह उन बातों को कह कर अपनी भाभी से मज़ाक तो कर सकता है परन्तु इससे अधिक और कुछ नहीं।

देवर संज्ञा के अर्थ चाहे पति का छोटा भाई लिया जाये और चाहे नियुक्तपति—विवाहित पति का स्थानापन्न या दूसरा पति, परन्तु यह निश्चित

है कि नियोग-व्यवस्था के अन्तर्गत उसे वह अधिकार अवश्य प्राप्त थे जिनके आधार पर नियोग के अभाव में अपने अधिकार का शाब्दिक अथवा मौलिक प्रयोग कर सके। और आज भी समाज का एक बड़ा भाग नियोग का प्रयोग करता है जिसके अन्तर्गत छोटा भाई अपने बड़े भाई की पत्नी के साथ आवश्यकता पड़ने पर विवाह कर सकता है। ऋग्वेद् के दशम मण्डल के यमसूक्त में मृत पति की चिता पर चढ़ती हुई स्त्री का हाथ पकड़ कर वह नीचे उतार लेता है और उसे पत्नी रूप में स्वीकार करता है।

कुछ विद्वानों का मत है कि देवर-भाभी में मज़ाक और विनोद की प्रथा बहुपतित्व प्रथा (Polyandry) का अवशिष्ट रूप है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि इस प्रकार की प्रथा भविष्य में देवर-भाभी के हँसी-मज़ाक वाले संबंध को जन्म दे सकती हैं परन्तु अधिकांश विद्वानों का यह मान्य मत है कि महाभारत काल में भी आर्यों में बहुपतित्व की प्रथा प्रचलित नहीं थी। द्रौपदी का पाँच पाण्डवों के साथ विवाह एक अपवाद है जो परिस्थितियों के कारण संघटित हो गया था। इस प्रकार के यदि अनेक उदाहरण प्राप्त होते तो कदाचित् मुझे यह मानने में संकोच न होता। परन्तु बहुपतित्व की प्रथा (Polyandry) जिसका प्रचलन केवल जौनसार भाबर में मिलता है परन्तु शताब्दियों के लम्बे इतिहास में Polyandry के प्रचार का प्रमाण नहीं मिलता। अस्तु मैं समझता हूँ कि नियोग-व्यवस्था के अन्तर्गत नियुक्त पति को देवर कहा जाता था। "देवरः कस्माद् द्वितीयो वर उच्यते।" निरुक्त, अध्याय ३। ख० १५। देवर शब्द का अर्थ और संबंध नियुक्ता स्त्री के कारण ही महत्वपूर्ण है।

इन पृष्ठों में मैंने यह प्रदर्शित करने का प्रयत्न किया है कि किस प्रकार पुत्रेच्छा तथा पुत्रोत्पत्ति हमारे समाज में न केवल एक प्राकृतिक इच्छा तथा उसका स्वाभाविक परिणाम रहा है प्रत्युत एक महत्वपूर्ण पवित्र धार्मिक कृत्य माना जाता रहा है जिसे सामाजिक प्राथमिकता प्रदान की गई थी। परन्तु यह मान लेना कि पुत्रेच्छा एक सामाजिक आवश्यकता तथा तदनुकूल सामाजिक वातावरण के ही कारण किसी पुरुष अथवा स्त्री में होती आई है तो वह सृष्टि के प्रमुखतम अनिवार्य नियम की भ्रान्तिपूर्ण अस्वीकृति होगी। प्रत्येक स्त्री तथा पुरुष में सन्तान-कामना स्वाभाविक तथा तीव्र होती है जो कि सृष्टि के विकास का निर्भ्रान्त रहस्य है। प्रत्येक स्त्री और पुरुष अपनी सन्तान में अपने जीवन की चरम सार्थकता ढूँढ़ती हैं। सन्तानाभाव और सन्तानोत्पत्ति की असमर्थता नर और नारी के जीवन की सम्पूर्ण विफलता है। अपनी परम्पराओं तथा अपने

समस्त का एक रूप सँवार कर पुरुष मरने के समय भी अपने पुत्र में अपनी अमरता का आभास पाता है और सन्तोष के साथ शरीर त्याग कर देता है। पुत्र पिता के जीवन का अमरत्व है और अपनी माँ की पूर्णता, जिसने पुत्र में अपने पति की प्रतिकृति प्रस्तुत की है। तात्विक दृष्टि से जीव के विस्तार में सफलतापूर्ण योग प्रत्येक जीव तथा प्रकृति,—नर तथा नारी के जीवन की सबसे बड़ी सिद्धि है।

एक [1]सोहर गीत में देखिए कि पुत्र उत्पन्न होने पर माँ किस प्रकार खुश होकर धन दौलत लुटा रही है। परन्तु पति के पूछने पर कि तुमने सबको तो बहुत कुछ दिया परन्तु मुझे क्या दिया, तब वह कहती है कि तुमको तो मैंने सब कुछ दिया है; वंश को प्रकाशवान तथा कीर्तिवान करने वाला पुत्र दिया है, तुम्हारे पिता को नाम दिया है (बढ़ाया है)। सन्तान के अभाव में एक देवी के पिछवारे एक बन्ध्या विनती कर रही है और बिलख-बिलख कर रो रही है।[2] और देवी के आशीर्वाद से नौ महीने के बाद जब उसके पुत्र होता है तो वह धूमधाम से खुशी से नाचती हुई देवी की पूजा करने आती है।[3] पुत्रेच्छा की तीव्रता और पुत्र-प्राप्ति पर खुशी के प्रसंग के गीतों का इन पन्नों में उल्लेख किया गया है।

इसी सन्तानोत्पत्ति के प्रसग में एक बात विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है कि पुत्रोत्पत्ति ही खुशी और उत्सवों का कारण है। पुत्री-जन्म पर न तो माँ बाप को खुशी होती है और न पास-पड़ोसियों को। पुत्री के जन्म पर न तो सोहर-सरिया गाये जाते हैं और न ढोल-मँजीरे बजते हैं। पुत्री के जन्म पर न तो किसी में उत्साह दिखाई देता है और न कोई उत्सव ही मनाया जाता है। घर परिवार में पुत्री के आगमन का स्वागत नहीं होता। सोहर-सरिया गाने के लिये आई हुई पड़ोस की स्त्रियाँ बिना गाये ही एक-एक कर खिसक जाती हैं। और यदि कन्या उस स्त्री की पहली हुई तो परिवार के क्षोभ का पारावार नहीं। घाघ की लोकोक्ति सबके मुँह पर सुनाई देती है,—

१—"सबका तो तुम सब कुछ दीन्ह्यो हमका बेकार।
परदे भीतर जच्चा बोली सुनु राजा मोरी बात।
तुम का तो मैं सब कुछ दीन्ह्यों, बंस उजागर दीन्ह्यो।
बाबा जी को नाम दीन्ह्यों, दीन्ह्यों हों लाल॥"

२—"देवी पिछवारे बँझिनि एकु बिनवै औ बिलखाय हो माँय।"

३—"बाजत आवै मैया ढोल मंजीरा नाचत आवै बह बाँझ हो माय।"

नसकट खटिया, बतकट जोय।
जो पहिलौठी बिटिया होय
पातर कृषी बौरहा भाय,
घाघ कहैं दुख कहाँ समाय।

और कन्या की माता अकारण ही अपने को अपराधिनी मानने लगती है। एक गीत में देवी से जिस प्रकार विनती की गई है उससे स्पष्ट प्रकट होता है कि सामाजिक मनोवृत्ति कन्या के पक्ष में नहीं है। देखिये :

"माँग्यों बड़ा दानु देवी के मंडिलवा भीतर।
अरी माँग्यों मैं हरी हरी चुरियाँ सेंदुरा भार माँग। देवी के०।
अरी माँग्यों मैं सात पाँच भैया, बहिनि अकेलि। देवी के०
अरी माँग्यों मैं सात पाँच देवरा तो ननदि अकेलि। देवी के०।
अरी माँग्यों मैं सात पाँच लरिका, तो कन्या अकेलि। देवी ०।

इस गीत में स्पष्ट है कि एक से अधिक कन्या वांछनीय नहीं है जबकि पुत्र पाँच से कम नहीं चाहिए। कन्या की अवमानना और पालन पोषण में उसकी सामान्य अवहेलना का उत्तरदायित्व हमारे सामाजिक संगठन पर है जिसमें पुरुष ही कर्त्ता है और नारी केवल उसकी सहायिका, वह भी परोक्ष रूप से। हमारे समाज की मूलभूत व्यवस्था पितृसत्तात्मक (Patriarchy) है जिसमें पिता अथवा पुरुष को अपने कुल के सर्वाधिकार प्राप्त हैं। इस व्यवस्था के अन्तर्गत कन्या विवाहोपरांत अपने पिता के घर को छोड़ कर पति के घर जाती है और अपनी समस्त निष्ठा उसी कुल के लिये समर्पित कर देती है जिस घर में वह जाती है; और अपने पितृगृह के लिए उस पर कोई उत्तरदायित्व शेष नहीं रहता है। इस प्रकार कन्या पराई धरोहर के रूप में विवाह के पूर्व तक पाली जाती है। जब तक वह पितृगृह में रहती है तब तक एक ऋण या भार (liability) के रूप में रहती है जिससे पितृगृह या कुल को किसी प्रकार की सहायता नहीं मिलती और न किसी सामाजिक, आर्थिक और धार्मिक उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक होती है। विवाह में दहेज की प्रथा कन्या-जन्म को और भी अवांछनीय बना देता है। यद्यपि विवाह कन्या और वर का होता है परन्तु विवाह का सारा दायित्व केवल कन्या पक्ष वालों पर होता है, विवाह के अनुच्छेद में मैंने इस प्रकार की अन्य सामाजिक रूढ़ियों पर विचार किया है जो कन्या के परिवार को कठिनाई में डाल देती हैं। कन्या के प्रति यह भावना केवल

सामाजिक परिस्थितियों के कारण है अन्यथा माता-पिता को कन्या भी उतनी ही प्यारी है जितना पुत्र। सामाजिक प्रथाओं के कारण और विवाह के अवसर पर और उसके बाद कन्या के पिता की स्थिति सदैव ही नीची मानी जाती है और वर पक्ष के लोग बात-बात पर उसका अपमान करने से नहीं चूकते। अस्तु स्वाभिमान रखने वाला मनुष्य निश्चित ही इस प्रकार की स्थिति से घृणा करेगा और उसके कारण को पैदा ही न होने देना चाहेगा। इसी अपमानजनक परिस्थिति के कारण भी कन्या-वध जैसी कुरीतियाँ भी इसी हिन्दू समाज में प्रचलित हो गई थीं।

मुझे एक भी ऐसा गीत नहीं मिला जिसमें कन्या के जन्म पर स्वागतपूर्ण शब्दों का प्रयोग किया गया हो। नीचे दिये गये गीत में माता अवश्य अपनी सद्यजाता कन्या का स्वागत करती है परन्तु एक प्रकार से समाज का प्रतिनिधित्व करते हुए पिता अपनी अप्रसन्नता प्रकट कर ही देता है। यह गीत यद्यपि अवधी प्रदेश में गाया जाता है परन्तु इसकी भाषा का बाना कुछ पश्चिमी अधिक है और अपनी शैली के कारण अपेक्षाकृत नवीन मालूम देता है। फिर भी कन्या के पक्ष में अकेला होने के कारण विशेष महत्वपूर्ण है। गीत है :—

"मेरो मन लाग्यो हरी घरी। मेरो०
बाहेर से आये रानी के राजा काहे धना तुम लटी पटी। मेरो०
हँसि के बोली राजा की रनियाँ आजुइ होंगे लले लले। मेरो०
बाहेर बाजे आनन्द बधैया भीतर रोवें लली लली। मेरो०
तुम तौ कह्यो रानी लालन होइहैं करि बैठीं तुम लली लली।
अपनी लली का नाम धरैबे सूरजमुखी की कली कली। मेरो०

[४]

परिवार और ग्राम-समाज

भारतीय समाज-व्यवस्था की सर्वप्रथम इकाई है परिवार और वह भी संयुक्त परिवार। यद्यपि ऐसा शायद ही कोई परिवार मिलेगा जिसमें आगे पीछे अलग्योझा न हुआ हो परन्तु सभी अलग्योझे को बुरा मानते हैं। अलग्योझे की बात बुरी और बदनामी की मानी जाती है और जब तक संयुक्त परिवार का निर्वाह हो सकता है, प्रत्येक व्यक्ति पूर्ण कोशिश करता है। स्त्रियों

को संयुक्त परिवार के लिये विशेष रूप से शिक्षा-दीक्षा मिलती रहती है। माँ-बाप के घर में कन्या के व्यवहार में जब कभी शील-भंग दिखाई देता है तो सभी उसे डाँटते हैं और ताने में कहते हैं "ससुरारि जात्यै चूल्हु अलग धरै हो।" किसी भी स्त्री का ऐसा प्रयत्न या व्यवहार उसकी शीलहीनता तथा दुष्टता का परिचायक होता है। उसी बहू को आदर्श माना जाता है जो भरे-पुरे घर में जाकर अपनी शालीनता से सबको अपना ले और अपने कार्यों तथा बात-चीत से सबको बाँधे रखे। नीचे दिये गये एक सोहर गीत में देखिये कि किस प्रकार एक बहू अपने परिवार के लोगों से शीलपूर्ण आचरण न करने के कारण बंध्या हो जाती है और अपने परिवार के लोगों की सेवा करने से आशीर्वाद रूप में पुत्र प्राप्त करती है :—

"राजा हो मोरे राजा तुमही मोरे राजा हो।
राजा बिन रे सम्पत्ति कुलहीन, मैं जोगिन होइबे हो॥
रानी हो मोरी रानी तुमहिं मोरी रानी हो।
तुम धना बैठो महलिया जोगु हम लेबे॥
तुम राजा होइहो जोगिया तो हमहूँ जोगिन होइबे।
राजा ओहिरे बिन्दाबन बीच में कुटिया रमैहों॥
राजा जोरे आवैं राबा राम, मैं ओरहन देहौं।
अब कोहू का दीन्ह्यो दुई चार कोहू सात पाँच हे।
रामा मोरे घर फेरवौ न कीन्ह्यो, तौ हमरी कौन गति!
सासू का दीन्ह्यो दुइ चार ननद का सात पाँच रे।
रानी तुम्हरे घर फेरवौ न कीन्ह्यो, तौ तुम्हरे करम गुनु।
सासु के सेवा न कीन्ह्यो, ननद गरियायौ रे।
रानी जेठवा का बोली ठोली मार्यो, वोही ते राम रूठे।
सासु के सेवा मैं करिहौं, ननद दुलरैहौं रे।
रामा जेठवा का खैंचौं रसोइयाँ, मैं दादा कह बुलइहौं।
सब देउता मिल मतु करैं और सुमति करैं।
ब्रह्मा तिरिया बहुत अकुलानी, बलकु एकु देत्यौ।
जाऊ न रनिया घरे तुम अपने रजन घरै हो।
रानी आज के नवैं महीना, लाल तोरे होइहैं।
आठ मास नौ लागत लालन उरु धरै रे।
एहो बाजन लगी आनन्द बधइया भीतर सोहर रे।
एहो सबद सहनैया ससुर द्वारे बाजत, बहुत नीका लागइरे

इस गीत में बहू को सद्भावनापूर्ण व्यवहार के लिये सीख दी गई है और यह प्रदर्शित किया गया है कि अपने सासु, ससुर, ननद, जेठ इत्यादि से अच्छा व्यवहार न करने से बंध्यापन की कठोर सजा भी मिल सकती है। अतएव कोई भी बंध्या होने की आशंका से अपने परिवार के प्रति कोई दुर्व्यवहार नहीं करना चाहेगी। एक अन्य सोहर गीत में एक बहू का आदर्श रूप द्रष्टव्य है :-

"अब केहि के दुआरे नीबिया, अब केहि के दुआरे अम्बे केरी डार
सहेलरि अम्बा बउरे।
ससुर बड़े घर नींबिया, राजन घर अम्बे केरी डार; सहेलरि अम्बा बउरे।
मोरे ससुर बड़े दिलदारिया, सासुरानी खांडे केरी धार। सहेलरि०
मोरे जेठ हाथन के काँकना, जिठनिया हिअरे बिच हार। सहेलरि०
मोरे देवर हमारे दिलआँगिया, देवरनिया सलुए बीच कोर। सहेलरि०
अब ननद जड़ाऊ आरसी, ननदोइया मुँदरी बिच लाल। सहेलरि०
धनि धनि सासु तुम्हरी कोखि का जिन जायो देवर अरु जेठ।"
धनि धनि बहू तेरी जीभ का, बखान्यौ हमरा परिवार। सहेलरि०

इस गीत में बहू अपने पति के परिवार के लोगों की भूरि-भूरि प्रशंसा करती है और सासु अपनी बहू के इस व्यवहार की सराहना करती हुई साधुवाद देती है। इसी प्रकार के प्रेम-पूर्ण व्यवहार के आधार पर संयुक्त परिवार से आनन्द और समाज की दृढ़ता का परिचय प्राप्त होता है जो कि सुन्दर लोकजीवन का एक आदर्श है। परन्तु पारस्परिक सौहार्द के अभाव में यही संयुक्त परिवार हमारी सामाजिक व्यवस्था को बिलकुल खोखला बना देता है। निम्नलिखित गीत में बहू के अशिष्ट और दुष्ट भावों को देखिये:—

"गंग जमुन के रेत मा मछली बहि आई। हो लाल० टेक
महला के ऊपर माहला हमे रजवा बोलावै;—हो लाल
कैसे क आवैं राजवा! अम्मा मोरी जागे, सासु मोरी जागे।"
जागि लेओ अम्मा जागि लेओ, कबहूँ मरि जैहो।"
महला के ऊपर माहला राजवा बोलावै।"
कैसे क आवैं राजवा! जिठानी मोरी जागै।"
जागि लेओ जीजी जागि लेओ कबहूँ बुढ़ी होइहौ।"
महला के ऊपर माहला हमें राजवा बोलावै।"
कैसे क आवैं राजवा! ननदी मोरी जागै।"

जागि लेओ बीबी जागि लेओ कबहूँ बहि जैहो ।"
मेरे पिछवारे सोनरा पायल गढ़ि लावे।"
कैसे का आवैं राजवा ! पायल मोरी बाजे ।"
जो तुम्हे होवे राजवा, आपै चले आवौ ।"

इस गीत में अपने पति से मिलन-कामना के मार्ग में आने वाली बाधाओं के प्रति बहू के मन की कटुता का प्रदर्शन हुआ है जिसे एक चेतावनी के रूप में मान कर सुसराल में बहू के जीवन को सुन्दर तथा सुखकर बनाने का प्रयत्न करना चाहिए अन्यथा बहू के मन की कटुता संयुक्त परिवार को छिन्न-भिन्न कर देगी। गीत के माध्यम से सासु, जेठानी तथा ननद को एक प्रकार से चेतावनी दी गई है। इस गीत में संयुक्त परिवार में सन्निहित दुर्बलता पर हँसने की कोशिश की गई है जो एक प्रकार से पारिवारिक दुर्बलता की स्पष्ट स्वीकृति है। परन्तु संयुक्त परिवार में झगड़े भी बहुत होते हैं विशेष रूप से ननद-भौजाई, देवरानी-जेठानी तथा सासु-बहू में। इन झगड़ों के विस्तृत वर्णन लोक गीतों में उपलब्ध हैं। ननद-भौजाई के झगड़े तो जिस प्रकार से हमारे घरों की नित्य प्रति की घटना है उसी प्रकार लोक-गीतों में ननद-भौजाई के झगड़ों का वर्णन भी प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। एक प्रकार से ननद और भौजाई का झगड़ा परम्परागत बन गया है कि कुछ अवसरों पर ननद को झगड़ना ही चाहिए—[1] ननद का झगड़ा अच्छा लगता है।[2] एक अन्य गीत में बहू अपने पुत्र की छठी के अवसर पर ननद को न बुलाने के लिये अपने पति से आग्रह करती है और कहती है यदि ननद बुलाओगे तो मैं छठी ही उठा डालूँगी[3] एक अन्य गीत में बहू अपनी ननद को तुरन्त विदा करने के लिये अपने गहने तथा वस्त्र तक दे देने के लिये तैयार है।[4] एक अन्य गीत में देवरानी-जेठानी में झगड़ा हो जाता है। परन्तु समझौता करते समय सारा दोष ननद पर मढ़

१—रासि तो नीकी गौहन केरा। और पवन केरा।
एहो झगरा तो नीका ननद केरा बँसुरी देवर केरा ॥

२—तो राजा हो मोरे राजा तुमहिं मोरे राजा हो।
राजा छठिया मै डरिहौं उठाय, ननद न बुलइहौं ॥

३—कँकना तो उनके गढ़न गये तिलरी भरन गई।
चुनरी तो उनकी रँगन गई कैसे विदा करौं ॥
कँकना तो देहौं हाथन केरे तिलरी गरे केरा।
मरे चुनरी तो देहौं बकस केरी, अबहीं विदा करौ ॥

४—दुलहिन बड़ घर घलना ननदिया दन्हो घर घालै।

दिया जाता है और स्वयं झगड़े के दोष से मुक्त हो जाती हैं। परन्तु इस आक्रोश और झगड़े की भावना का शमन बहू का पति स्वयं करता है।[1] जब बहू अपनी ननद को इस द्वेष की भावना से विदा कर देती है तो पति अपनी पत्नी से कहता है कि वह परदेश चला जायेगा, जोगी हो जायेगा केवल बहन के कारण। इस पर उनकी पत्नी तुरन्त कहारों को बुला कर पालकी सजवा कर अपने पति को बुलवाने की तैयारी करती है। इस प्रकार जहाँ कहीं भी झगड़ा होता है नायक उसका शमन करने के लिये अपना सर्वस्व त्यागने पर तुल जाता है और अन्ततोगत्वा घर में शान्ति स्थापित करने में समर्थ होता है।

[2]एक गीत में देवरानी और जेठानी में झगड़े का विस्तृत वर्णन किया गया है। जेठानी ने देवरानी के यहाँ त्योहार का 'बायन' भेजा और दो चार रोज में ही वापिस माँगने लगी। परन्तु देवरानी का पति परदेश में था और उसकी अनुपस्थिति में वह बायन नहीं दे पाती। बारह वर्ष के बाद पति के आने पर वह बायन लौटाती है परन्तु जेठानी उससे सन्तुष्ट नहीं होती और बायन में अनेक ऐब निकालने लगती है और बायन लेने से इन्कार कर देती है। परन्तु दोनों, अन्त में ननद के ऊपर दोष टाल कर, देवरानी के कसम खाने पर, समझौता कर लेती हैं जिसकी चर्चा मैं पिछले पन्नों में कर चुका हूँ।

सासु और बहू के बीच झगड़े और मनमुटाव तो हमारे घरों की साधारण घटना है। सासु के झगड़े प्रायः बहू के माता-पिता की लेनी देनी के संबंध

१—द्वारे ते आये रजवा तो अँगना मा ठाढ़े भे हैं।
रनिया लाओ न ढाल तलवरिया, विदेस हम जैबै॥
रनिया लाओ न कपड़े हमारि जोगिया होइ जैबै, बहिनिया के कारण।
हँकरों मैं नगर के महरा मैं हँकारि बोलावों; मैं पकरि बोलावों॥
महरा पाँच रंग डोलिया सजाओ मैं ननद बोलैहौं।
ऐसी दुलारी बहिनियां मैं अबहीं बोलैहौं॥

२—"देवरनियां ने बायुन बहोरा, जेठनियां तुम्हारे घरै।
छप्पर ऐसी मोरि पुरियां, बदरु ऐस लेड़ुआ रे॥
दुलहिन भैंस के सींग ऐस गुनवा, बायन मैं न लेहौं।
पत्ता ऐसी तोरी पुरिया, निम्बू ऐस लेड़ुआ रे।
दुलहिन अँगुरी ऐसे तोरे गुनवा, बायन मैं न लेहौं॥
गुरधनियां वाला सोहर गीत ननद-भाभी के झगड़े को बहुत ही स्पष्ट रूप से प्रस्तुत करता है।

में होते हैं और यदि बहू किसी चीज को अपनी सासु से माँगती है तो सासु तुरन्त उत्तर देती है "क्या तेरे बाप ने लाकर रख दी है?"[1] पुत्र को जन्म देने वाली बहू जब पलँग के लिये इच्छा प्रकट करती है तो उसकी सासु तुरन्त कहती है कि यदि इतना ही अभिमान है तो अपने बाप के यहाँ से पलँग मँगा लो। बहू के पिता के घर से पलँग के आने पर सन्तुष्ट हो जाती है और बहू के प्रति बहुत ही अनुकूल हो जाती है। परन्तु इसी प्रकार अनेक अन्य अवसरों पर अपनी बहू तथा उसके मैके से अधिक से अधिक पाने के लिये सासु बहू को कष्ट देती रहती है और डाटती डपटती रहती है जो सासु-बहू के झगड़े में परिणत हो जाता है। सासु-बहू के झगड़े का मूल है सासु का लोभ और बहू के मैके की बुराई।

परन्तु बहू के गर्भवती होने पर सारे घर में खुशी और उत्साह छा जाता है।[2] ननद अपनी माँ को बहू के गर्भवती होने की सूचना देती है और बहू की सास अपने पति अथवा घर के पुरखा से कहती है और इस खुशी की बात को सुनकर वह आवश्यक चीजें खरीदने के लिये बाजार पहुँच जाते हैं और पुत्र के होने पर मोहरें अशर्फियाँ लुटाते हैं। साध के अन्य गीतों में सारे परिवार के लोग गर्भवती बहू को साधें खिलाने के लिये विस्तृत आयोजना करते हैं। इन गीतों के विस्तारपूर्ण वर्णनों से परिवार के उत्साह और सौहार्द्र

१—पलँगु तौ आवा बिकाय पलँगु बड़ा सुन्दर रे।
मोरी सासु करहु पलँगु का मोलु ललन लै पौढ़ऊँ॥
तौ अस गरबोली बहुरिया, गरब जनि बोलहु रे।
मेरी बहुआ मैके ते पलँगु मँगावहु ललन लै पौढ़ौ॥

पलंग के आने पर—
तो बौहर हो मोरी बौहर तुमहिं मोरी बौहर रे।
मोरी बौहर कमरा मां पलँगु बिछाव ललन लै पौढ़ौ॥

२—ननदी अस चलि बांकी, जाय अम्मा बतलानी।
मै तो अच्छा सगुन लै आयूँ हाँ रे लालना॥
सासू अस चलि बाँकी जाय पुरिख बतलानी।
मै तो अच्छा सगुन लै आयूँ हो रे लालना॥
तोरी बौहा गरुए गरभ से हो रे लालना।
पुरिख असचल बांके बजरिया मा ठाढ़े॥
पाँवरियै दीन्ह असीस बहुरिया के भये नन्दलाल
क्या मोहरें क्या असर्फी हाँ रे लालना।
क्या साल। क्या दुसाला हाँ रे लालना॥

का परिचय मिलता है। गर्भवती बहू के लिये दुनिया की सभी चीजों को प्रस्तुत कर दौहद की समस्त इच्छाओं को पूरा करने का उत्साहपूर्ण प्रयत्न किया जाता है।

सुसराल के नये अनजाने वातावरण में बहू के आने पर उसके सबसे निकट देवर ही होता है। और जितना धीरज, आश्वासन सहारा तथा अपनत्व उसे देवर से मिलता है उतना और किसी से नहीं। बहू की अपनी सुसराल में सभी से ताने डाँट डपट मिलती है परन्तु देवर से उसे निश्छल प्यार ही मिलता है।' इसीलिये जब कभी उसे अपने पुत्रहीन होने के कारण ताने सुनने पड़ते हैं और पति के भी व्यंग्य सहने पड़ते हैं तो वह देवर से ही कहती है कि तुम्हारे भाई के बोल मेरे कलेजे को सालते हैं जो जन्म भर नहीं बिसरेंगे। देवर भी उसकी सहायता करता है और ढाँढ़स बँधाते हुए उसे उगते हुए सूर्य की पूजा करने के लिये कहता है जिससे उसे पुत्र प्राप्त होगा। देवर के संबंध में पिछले पन्नों में विस्तार से विचार किया गया है।

अभी पिछले पन्नों में उस व्यक्ति की दृष्टि से परिवार के लोगों के संबंध में चर्चा की गई है जिससे खून का रिश्ता नहीं होता और जो दूसरे के परिवार से विवाह के बन्धन में बँध कर आता है। तात्पर्य यह कि परिवार के अन्य लोगों का घर में आई बहू के प्रति कैसा व्यवहार होता है और उस परिवार में बहू का क्या रूप है। बहू की दृष्टि से परिवार के ऊपर मैंने इसीलिये विचार प्रस्तुत किये कि वही भविष्य की सूत्रधारिणी है कुल को उजागर करने वाली है, वंश-वृक्ष को पुष्पित और पल्लवित करने वाली है।

प्रत्येक पिता अपनी पुत्री का विवाह भरे-पूरे घर में करना चाहता है और संभव हर अवसर पर पुत्री के मस्तिष्क में ऐसे संस्कार डाले जाते हैं जो संयुक्त परिवार का भलीभाँति पोषण कर सकें। ' एक विवाह के गीत में लड़की

१—"महल से उतरी बहुरिया, आँगन बिच ठाढ़ी है रे।
दुआरे से आये देवर राजा, कस भौजी मनमन रे।
देवर हो मोरे देवर तुमहिं मोरे देवर हो।
देवर भैया तोरे बोले हैं बोल करेजे मोरे साले जनम नहिं बिसरै रे॥
भौजी हो मोरी भौजी तुमहिं मोरी भौजी हो।
भौजी उगत के सुरिज मनाओ ललन तुम्हरे होइहैं,
होरिल तुम्हरे होइहैं॥

२—"समधी देखि बेटी आसनु मारयों घर देख कीन्यो ब्योहार।
लरिका देखि बेटी तुमका बियाहौं न जान्यों करम तुम्हार।"

अपने बाप से पूछती है कि उन्होंने क्या देखकर उस व्यक्ति के साथ विवाह किया था तो पिता जवाब देता है कि मैंने समधी देखा, और अच्छा घर देख कर ब्यौहार किया था और अच्छा लड़का जान कर उससे तुम्हारा विवाह किया था। एक अन्य गीत में विवाह के समय सीता जो कुछ माँगती हैं उसमें सबसे महत्वपूर्ण हैं कौशल्या ऐसी सासु और राजा दशरथ ऐसे ससुर तथा लक्ष्मण ऐसे देवर। इस गीत के माध्यम से सासु-ससुर और देवर के महत्व को प्रकट किया गया है।

लोकगीतों से परिवार का जो रूप प्राप्त होता है वह काफी विस्तृत है। प्रत्येक परिवार का प्रमुख व्यक्ति बाबा (Grand father) होता है; वही घर का पुरखा होता है जिसे अपने दायित्वों के प्रति सतत जागरूक रहना पड़ता है। बाबा वृद्धावस्था के कारण अधिक परिश्रम नहीं कर सकते और चौपाल में सो रहे होते हैं तो उनकी पत्नी आजी (Grand mother) जगाने जाती है और उनके दायित्व के प्रति उन्हें सचेत करती है। प्रत्येक गीत में जिसमें परिवार के लोगों के नाम लिये जाते हैं बाबा का उल्लेख सर्वप्रथम किया जाता है और स्त्रियों में आजी का; तदुपरान्त पिता, माता, चाचा, चाची, फूफा, बुआ, भैया, भाभी, नाना नानी, मामा मामी, मौसा, मौसी इत्यादि का उल्लेख होता है। जिन गीतों में इस प्रकार का उल्लेख होता है उनमें दो सम्बद्ध परिवारों के सभी लोगों का उल्लेख होता है और इन दोनों परिवारों के भिन्न-भिन्न लोगों के भिन्न-भिन्न कर्तव्य होते हैं और उनके प्रति आचरण में भी अन्तर होता है। यद्यपि एक सयुक्त परिवार में बाबा, आजी, पिता, माता, चाचा, चाची, भैया, भाभी, छोटा भाई और लहुरी ही विशेष होते हैं परन्तु क्योंकि गीत उत्सवों से संबन्ध रखते हैं और उत्सवों में सम्बन्धी परिवार के लोग भी शामिल होते हैं अतएव गीतों में इन सभी का एक साथ उल्लेख प्राप्त होता है। परिवार के लोगों का उल्लेख करने वाले सैकड़ों सांस्कारिक गीत हैं तथा साध के गीतों में सभी के पृथक् पृथक् सधौरी देने का उल्लेख मिलेगा। पुत्र की

१—'साता मांगै अजोध्या के राज, सरजू जी के दरसन।
दूसर माँगन साता माँगै, जो सीता माँगै पावै।
साता माँगै कौसिल्ला ऐसी सासु, ससुर राजा दसरथ।
तीसर माँगन सीता माँगै, जे सीता माँगै पावैं।
बर माँगै भगवान, देवर राजा लछिमन।"

२—बाबा सोवैं लाली चौपरिया आजी जगावन जायँ।
ऐसे बाबन का नींदा भलि आवै, जेहि घर नातिन कुँआरि।

छुठी के अवसर पर आये हुए लोगों का विस्तृत एवं मनोरंजक वर्णन नीचे के गीत में देखिये :—

"हाँ हाँ रे मुनुआ चाँदनी।
जब आवै लालु का बाबा। हाँ हाँ रे मुनुआ चाँदनी।
हाथी पै चढ़ि कै आवै। टेक
कलकत्ते का सहर का राजा
दरवाजे पै नौबत घुरावे।
जब आवै लालु का चाचा।
वह तौ घोड़ा चढ़ि कै आवै।
बम्बई सहर का राजा।
द्वारे पै रुपिया लुटावै।
जब आवै लालु का बप्पा।
मोटर पै चढ़िकै आवै।
वह तो दिल्ली सहर का राजा।
दरवाजे पै पतुरै नचावै।
जब आवै लालु का भैया।
सइकल पै चढ़ि कै आवै।
वह तो कानपुर सहर का राजा।
वह तो मोहरें खूब लुटावे।
जब आवै लालु का फूफा।
वह तो बग्घी चढ़ि कै आवै।
लखनऊ सहर का राजा।
वह तो मोतिन झालरि लावे।
जब आवै लालु का नाना।
वह तो गदहा चढ़ि कै आवै।
सांपों सीपों करता आवै।
वह तो पैसा खूब लुटावै।
जब आवै लालु का मामा। टेक
वह तौ रौछ पै चढ़ि कै आवै।
वह तौ चिलुअनि झालरि लावे।
जब आवै लालु का मौसा।
वह तो चलनी बेंचत आवै।

वह तो बाँदर नचावत आवै ।
वह तो डमडम डमरू बजावै ।
जब आवै लालु कै नानी ।
वोहि नानी कै सब मेहमानी ।
वोहि नानी कै ऐंचातानी ।
जब आवै लालु कै माई ।
वह तो बेड़िन बनि कै आवै ।
दरवाजे पै बाँसु गड़ावै ।
वह तो बेड़िनि बनि कै नाचै ॥
वह कौड़ी पैसा पावै ।
लालु कटुला गढ़ावै ।
जब आवै लालु कै मौसी ।
गुरु खायें कठौता ऐसी ।
वह मौसी के लागै चौसी ।
कुँअना पे परी उतानी ।

इस गीत में हमारे पारिवारिक संबंधों तथा आचरण का विस्तृत रूप प्राप्त होता है। मामा-मामी, नाना-नानी, मौसा-मौसी के संबंध में जो हास्यपूर्ण वर्णन दिये गये हैं वे सामाजिक दृष्टि से बड़े ही सार्थक और यथार्थ हैं। पुत्र की दृष्टि से नाना-नानी का सबंध अत्यधिक प्रेमपूर्ण तथा सम्मान का होता है परन्तु बाबा-आजी के वे समधी हैं जिनमें आपस में मजाक और विनोद की प्रथा है। यही बात मामा-मामी के संबंध में भी ठीक है क्योंकि वे पुत्र के पिता के साले और सरहज हैं जिनके साथ मजाक तथा विनोद जीजा अथवा बहनोई का विशेषाधिकार है। पुत्र का पिता साले की पत्नी अथवा सरहज का ननदोई होता है जिससे मजाक की प्रथा है। और मौसा पुत्र की माँ का बहनोई होता है और वह स्वयं उनकी साली होती है जिनमें आपस में मजाक की प्रथा है। और मौसी पुत्र के पिता की साली होती है जिस पर जीजा का आधा अधिकार सा ही होता है। इसी परम्परागत विनोद के अधिकार के आधार पर इस गीत में नाना-नानी, मामा-मामी तथा मौसा-मौसी पर विनोद-पूर्ण व्यंग्य किये गये हैं।

इस गीत में अपने परिवार के सभी संबंधों की चर्चा नहीं की गई है परन्तु अन्य सैकड़ों गीतों में उनका उल्लेख हुआ है और विशेष अवसरों पर उनके

विशेष कर्त्तव्यों तथा नेगों का भी उल्लेख हुआ है। इस प्रसंग में छठी का एक गीत दृष्टव्य है जिसमें नन्दोई के विशेषाधिकार का भी उल्लेख है :

"को मोरे जोते को मोरे बोवै को मोरे डारे बीज; धतूरा मस्ताना
देवर जोते देवर बोवै नन्दोइया ने डारा बीज; धतूरा मस्ताना।
लाईं लाईं नन्दरानी तोरि धतूरा मस्ताना ।
जच्चारानी वा एकै घूँट धतूरा मस्ताना ।
उइ तौ राती डोलैं माती डोलैं चीन्है न देवर जेठ । टेक
गईं गईं अमुक रामा सेज। टेक
उनके भये धतुरिया लाल । टेक
सासुरानी ने माँगा नेग, बहू चरुआ चढ़ाई मेरा नेग।
ससुइया के हाथ कटैहौं । टेक
जेठानी ने माँगा नेग, बहू पिपरी पिसाई मेरा नेग।
जेठानी के पाँव कटैहौं । टेक
ननदिया ने माँगा नेग, भाभी छुठिया धराई मेरा नेग
ननदिया की नाक कटैहौं । टेक
देवर ने माँगा नेग, भाभी बंसी बजाई मेरा नेग ।
देवरा का हिजरा करैहौं । टेक
गौनाहरिन ने माँगा नेग । बजनाहरिन ने माँगा नेग
बहू मंगल गवाई मेरा नेग, बहू ढोलक बजाई मेरा नेग
गौनाहरिन कै जीभि कटैहौं, बजनाहरिन के हाथ कटैहौं।

इस गीत में परिवार की स्त्रियों के कामों और उनके नेगों का चित्र मिलता है। स्वाभाविक ही है कि इस गीत में बुआ का उल्लेख नहीं किया गया है। परन्तु अन्य अनेक गीतों में विशेष रूप से उल्लेख किया गया है। पुत्र-जन्म पर बधाई लेकर बुआ आती है जिसका विस्तृत वर्णन बधाई के दूसरे गीत में हुआ है। मुण्डन के गीत में भी बुआ का उल्लेख है और छेदन में भी । वास्तव में पुत्र की झालर को [1] बुआ आँटे की लोंई में समेटती जाती है और छेदन में बुआ बच्चे को पूड़ी बताशे खिलाती जाती है।

ससुराल के रिश्तों में सासु सासुर के अतिरिक्त साली, सरहज के रिश्ते भी

१—गाँउब का नौआ तब सोहै जब बुआ लडुरिया लेय।
बुआ लडुरिया जब सोहै जब दुसरे के डाली होय ॥

बहुत ही महत्त्वपूर्ण हैं। साली और सरहज से मजाक करने की प्रथा है। यहाँ तक कि विवाह के कलेवे में सरहजें एक ही मजाक बार-बार करती हुई दिखाई देती हैं—"कि मुझे भी अपने साथ ले चलो। एक गीत में विदा होते समय राम राजा जनक की देनी से रुष्ट हो जाते हैं जिनके मनाने के लिये जनक जी सभी प्रकार की चीज़ें देना चाहते हैं परन्तु राम साली और सरहजें ही चाहते हैं।[1] एक अन्य गीत में माँ ब्याह कर आये पुत्र से पूछती है कि सुसराल कैसी है तो पुत्र उत्तर देता है कि साली, सरहजें बहुत सुन्दर हैं और सासु गंगाजल के समान है।[2]

साले का रिश्ता तो सबसे अधिक जोरदार है और तभी तो यह लोकोक्ति प्रचलित है कि "खुदा की खुदाई एक तरफ जोरू का भाई एक तरफ।" उसे लोक वाक्यावली में "अँगन-भवन" की संज्ञा प्राप्त है जो अपनी बहन की सुसराल में बाहर-भीतर सर्वत्र स्वतंत्रता से आ जा सकता है।[3] एक विवाह-गीत में माँ ब्याह कर आये हुए अपने बेटे से सुसराल के समाचार पूछती है तो पुत्र कहता है कि मेरे साले ने हमारी अगवानी में (स्वागत में) बड़े कलात्मक ढंग से घोड़ा दौड़ाया। तात्पर्य यह कि साले ने अच्छा स्वागत किया। इस प्रकार के अनेक अन्य गीत हैं जिनमें साले का उल्लेख हुआ है परन्तु साले का वह लोकमान्य रूप लोकगीतों में विस्तार के साथ प्रस्तुत नहीं हो सका है। जिस प्रकार मैंने देवर-भाभी के सम्बन्ध पर कुछ विस्तार से विचार प्रस्तुत किये हैं उस प्रकार यहाँ साले, साली और सरहज के सम्बन्ध पर विचार प्रस्तुत करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि सरहज के साथ अपनी पत्नी के मजाक करने के अधिकार के कारण उन्हें भी वही अधिकार प्राप्त हो जाता है इसके अतिरिक्त सरहज भाभी के समान है इसलिये देवर के रूप में भी उसको मज़ाक तथा विनोद के अधिकार प्राप्त हो जाते हैं। अपनी

१—राम रिसाने जनक जी की देनी मा।
राम जवाहर लेओ, जो चाहो सो लेव लदाय।
कंकर पत्थर हम का करिबे सारी सरहजें देव लगाय।

२—अब हँस पूछे मातु कोसिल्ला कैसी ललन ससुरारी जी ?
सारी सरहजें बहुते सुन्दर सासु गंगाजल पानी जी।"

३—मां तो सारेन घोड़वा सुँदाया तो बहुत जुगुति से।
मां तो सारेन कीन्ह अगवानी तो बहुत जुगुति से॥

पत्नी, जिसपर सम्पत्ति सदृश अधिकार होता है, उसकी बहन पर यद्यपि पूरा अधिकार बिना ब्याहे तो नहीं प्राप्त हो सकता परन्तु वह मौखिक विनोद का रूप अवश्य ग्रहण कर लेता है। जिसकी बहन को किसी ने ब्याहा है उसकी स्थिति अधिक महत्त्वपूर्ण होती है और उस व्यक्ति की कुछ हेटी सी हो जाती है जो साला है और जिसकी बहन ब्याही गई है।[1] एक विवाह-गीत में देखिये कि किस प्रकार साले को अपने बहनोई की अनुचित माँग पर भी झुकना पड़ता है। और साथ ही इस गीत में उसी मज़ाक का सूत्रपात किया गया है जो साले-बहनोई में प्रायः होता है। दुलहा अपनी दुलहिन से कहता है कि तुम्हारे पिता के घर एक सोने का कटोरा है जिसे मैं दहेज में सम्मिलित कर लूँगा। इस पर दुलहिन कहती है कि मेरे घर सोने का कटोरा है जिसमें भैया कच्चा दूध पीते हैं और कच्चा दूध पीते हुए वे आपकी बहन माँगते हैं। इतनी बात सुनकर वे रुष्ट होकर घोड़े की पीठ पर पहुँच जाते हैं और क्रोध में कहते हैं कि जिनकी बहन से ब्याह के लिये बारात (सेना इत्यादि सजाकर) सजाकर आया हूँ उनकी यह हिम्मत कि वे हमारी बहन माँगें। घोड़े के पैर पकड़े हुए साले साहेब प्रार्थना करते हैं कि हे बहनोई मेरी बात सुनो, जब तुम्हें चाँद सूरज ऐसी बहन दे दी तो कटोरे की क्या हैसियत है? इस गीत से यह बात बिलकुल स्पष्ट है कि किसी की बहन ब्याह कर कोई व्यक्ति अपना बड़प्पन स्थापित कर लेता है। और साला अपने बहनोई के इस यथार्थ बड़प्पन को सामाजिक परिस्थितियों के कारण स्वीकार करने के लिये विवश है। यद्यपि वह व्यक्तिगत रूप से उसे स्वीकार नहीं कर पाता, एतदर्थ वह अपने बहनोई की बहन को पाने की बात कह कर अपनी हेटी या पराभव के भाव को विलीन कर देना चाहता है। परिस्थितियों की यथार्थता के कारण साले की यह गम्भीर घोषणा कि वह अपने बहनोई की बहन को

1—दुलहे दुलहिन अस मनु कीन्हा सुनौ दुलहिन मोरी बात।
तुम्हारे ददुलि घर सोने का कटोरवा हम लेबै दहजे लगाय॥
इतना बचनु सुनि दुलहिन बोली सुनु दुलहे मोरी बात।
हमरे ददुलि घर सोने का कटोरवा भैया पियहि कच्चा दूधु॥
दूधवा पियात भैया लेल्हरी करात है माँगै प्रभु बहिन तुम्हारि
इतना बचनु सुनि दुलहे रामा घोड़ पीठि भये असवार।
जिनके बहिनि चढ़ि ब्याहन आये, उइ माँगै बहिनि हमारि।
घोड़वा के पग धरे बिनवै कवन राम सुनु बहनोइया मोरी बात
चन्द सुरुजु ऐसी बहिनि जो दीन्ही खोरवै कौनि बिसात॥

ब्याहेगा और उसे अपना साला बनायेगा मज़ाक में परिणत हो जाता है और यही मज़ाक साले और बहनोई के सम्बन्ध की विशेषता है। लगभग इसी प्रकार का एक और विवाह-गीत कन्या-पक्ष में दिया गया है।

मामा-भांजे का रिश्ता भी एक अजब रिश्ता है जिसमें भांजा अपने मामा को कोसता है और मरने तक की गालियाँ देता है। एक गीत को समझाते हुए मैंने पुस्तक में मामा-भांजे के रिश्ते और विचित्र व्यवहार पर विस्तृत टिप्पणी लिखी है। फिर भी यहाँ मैं एक बात जोड़ना चाहूँगा कि भांजे का ऐसा व्यवहार एक प्रकार से अपनी माँ का बदला लेने के लिये मालूम देता है। अपने भाई के विवाह के पूर्व तक अपने माँ-बाप के घर में कन्या सभी प्रकार के अधिकारों का स्वतंत्रता के साथ उपभोग करती है। परन्तु भाभी के आने पर ऐसे अवसर उत्पन्न होने लगते हैं जब वह विवशतः यह अनुभव करने लगती है कि अपने माँ-बाप के घर में दूसरे परिवार से आई हुई कन्या से कम है और जो भाई अपना सारा प्रेम बहन तथा माँ-बाप पर उड़ेलता था विवाह के बाद पराये घर की लड़की के वश में हो जाता है। और इस प्रकार अनेक अवसरों पर ननद-भाभी में झगड़े होते रहते हैं, जो भावना विवाह के बाद भी ननद में बनी रहती है जिसका प्रभाव उसके पुत्र पर भी पड़ता है और वह भी मामा-मामी का मौखिक दुश्मन हो जाता है।

पवित्र प्रेम का सर्वोत्कृष्ट उदाहरण भाई-बहन में ही प्राप्त होता है। भाई और बहन के प्रेम के उस आदर्श प्रेम को प्रदर्शित करने वाले हजारों गीत हैं। पेरी के गीत भाई-बहिन के प्रेम के खजाने हैं। बिना भाई के आये और पेरी के लाये बहन का कोई भी पवित्र अनुष्ठान प्रारम्भ नहीं हो सकता। [1]एक पेरी के गीत में भाई आता तो है परन्तु गरीब होने के कारण कुछ भी नहीं लाता और बहन से पूछता है कि मण्डप में किन-किन चीजों की जरूरत

१—"बहिनी ते भैया पूछन लागे, क्या क्या चाहिए बहिनी मांडये।
सासु का रे भैया! लहँगा औ लुगरा ननदी कुसुम रंग चूनरी।
तुम्हरे बहनोइया, भैया! पांचौ कपड़े हमका हरद रंग पीयरी।
जेहि केरे बहिनी मोरी एतना न होय कैसे आवे तुम्हारे मांडये।
जेहि केरे भैया मोरे एतना न होय, हाथ पियार के आवे;
हरदी गांठि लैके आवे।
कपड़ा खोलि भैया मँडये मा बैठे मानो बजाज जी के पूत है।
मुहरन की थैली लै के भैया जी बैठे मानो सराफ जी के पूत है।
सासु की चोरी, ससुर जी की चोरी खरचा चलावै अपने बीर का।

होगी तब बहन बताती है कि सासु के लिये लहँगा-लुगरा, ननदी के लिये कुसुम रंग की चुनरी और बहनोई के लिये पाँचों कपड़े और मेरे लिये एक पेरी। इस पर भाई पूछता है कि यदि किसी के इतना न हो तो तुम्हारे मण्डप कैसे आवे ! इस पर बहन कहती है कि यदि इतना न हो तो केवल हाथ पीले करके या हल्दी की एक गाँठ लेकर चला आये। और बहन अपनी सास-ससुर से चुरा कर अपने भाई की प्रतिष्ठा को सुरक्षित रखने के लिये अपने पास से खर्च चलाती है। सावन के गीतों में मायके की वेदनापूर्ण याद और भाई के आगमन का विस्तृत चित्रण किया गया है। सावन के सैकड़ों गीतों में बहन के हृदय में अपने भाई के प्रति बहती हुई निश्छल प्रेम की धारा लोक-गीतों का एक अनुपम रूप है।

परिवार के संबंध में पिछले पन्नों में कुछ विस्तार दिये गये हैं और उनके परस्पर संबंधों की विशेषताओं पर भी संक्षेप में विचार व्यक्त किये गये हैं। साधारणतया एक संयुक्त परिवार में बाबा, आजी, माता, पिता, चाची, भैया, भाभी, बहन, छोटा भाई तथा उसकी पत्नी और कभी-कभी बुआ आवश्यक अंग हैं। परन्तु काम-काज में परिवार का रूप तिगुना बढ़ जाता है। [1]विवाह के एक गीत में लड़की काम और खर्च की अधिकता के कारण व्यस्त होकर अपने से ही खीझ कर पूछती है कि कैसे क्या होगा तीनों दल घिर आये। एक दल मायके का है, दूसरा ससुराल का और तीसरा दल ननिहाल का है। हाथ-पाँव काँपते हैं जैसे कुसुम की डाल काँपती है। धर्म की बेला (विवाह का समय) आ गई है अब कैसे क्या होगा ? इस प्रकार परिवार विस्तार के कारण घर वालों की व्यस्तता और भी बढ़ जाती है और खर्च भी बहुत बढ़ जाता है। कभी-कभी तो बरातियों से अधिक संख्या घरातियों की हो जाती है।

परिवार के लोगों के पश्चात उन लोगों पर विचार करना आवश्यक होगा जो गाँव में रहकर एक दूसरे की सेवा करते हुए प्रत्येक कार्य के सम्पादन में

१—आई बरात श्री प्रभु जी की द्वारे मा बाजी।
अब कैसे करिहौं तीनिउ दल ओनये।
एक दलु ओनवा मैके दूसर दल ससुरे ;
तीसर दल ओनये निनाउर तीनिऊ दल ओनये।
हाथ जो कम्पै पाँव जो कम्पै जैसे कुसुम केरी डार।
अब कस करिहौ बाबुल मोरे आई धरम केरी बेर ?”

सहयोग प्रदान करते हैं जिन्हें "परजा" (प्रजा) कहते हैं। लोक-गीतों में प्रत्येक पुरुष राजा है और प्रत्येक स्त्री रानी। राजा-रानी की संज्ञा प्रजा की दृष्टि से सचमुच यथार्थ है क्योंकि ये प्रजाजन गाँव के सभी लोगों की सेवा करते हैं जिसके बदले में इन्हें अन्न-वस्त्र मिलता है या बदले में वैसी ही कोई सेवा। प्रजाजनों में नाई, बारी, कहार, कुम्हार, धोबी, चमार, डोम, दर्जी, पटुआ, तम्बोली, बढ़ई, लोहार, सोनार, माली विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। अनेक लोक-गीतों में इन प्रजाजनों का उल्लेख हुआ है। इन प्रजाजनों की स्त्रियाँ भी काम-काजों में सेवा करती हैं। इस सब सेवा के बदले में इन्हें अन्न-वस्त्र तथा कभी-कभी आभूषण भी मिलते हैं। कुछ नक़द रुपये भी मिलते हैं। इन प्रजाजनों को पारिश्रमिक देने के दो रूप हैं: एक तो इन्हें नियमित रूप से फ़सल पर वर्ष में दो बार अनाज दिया जाता है जिसे "जेउरा" कहते हैं। परम्परा के रूप में हरेक घर से निश्चित रूप में उन्हें अनाज मिलता रहता है और दूसरे कामकाजों में इनके विशेष कार्यों के लिए उचित पारिश्रमिक, पुरस्कार के रूप में दिया जाता है। इनके अतिरिक्त तीज-त्योहार पर भी इन्हें त्योहारी मिलती है। इस प्रकार परम्परा से इन लोगों का काम बँधा हुआ है और पारिश्रमिक भी। नाई वर्ष भर बाल बनायेगा, धोबी कपड़े धोयेगा परन्तु पारिश्रमिक उसी ढंग से मिलेगा, हर बार बाल बनाने या कपड़े धोने का अलग-अलग पैसा नहीं दिया जाता।

काम-काजों में जो भी सेवाएँ करते हैं उनका नेग बँधा हुआ है उसी अनुसार दिया जाता है। छठी, पसनी, मुण्डन, छेदन, जनेऊ तथा विवाह इत्यादि काम-काजों में सभी एकत्र हो जाते हैं और किसी काज में यदि किसी परजा का काम नहीं भी हुआ तो भी वे पाने की कोशिश करते हैं और कम से कम निछावर में दिये गये कुछ पैसे तो पा ही जाते हैं। पुत्र-जन्म पर प्रजाजन, राजारानी को अपनी माँगों से बहुत तंग कर देते हैं। इस प्रकार प्रजा की भाँति ही गरीब गाँवों के राजारानी सुख के अवसरों पर प्रजाजनों के कारण दुखी हो जाते हैं। अपने नेगों में अधिक से अधिक प्राप्त करने के लिए राजारानी से झगड़ना तो प्रजा का विशेषाधिकार हो गया है। और इसीलिये यह सामान्य विश्वास हो गया है कि प्रजा को कोई, कभी सन्तुष्ट

नहीं कर सकता ।[1] और एक सोहर गीत में इन्हीं नेगियों से बचने के लिए राजा, पुत्र को जन्म देने वाली रानी को बाजार में बेंच आता है परन्तु बिना जच्चा बच्चा के घर अच्छा नहीं लगता इसलिए वापिस ले आता है। एक दूसरे सोहर गीत में रानी को समझाया जाता है कि पुत्र-जन्म जैसे महान् अवसर रोज़-रोज़ नहीं आते :——

सदा न बेटा जाइये रानी ! सदा न सोहर होय ।
सदा न नेगी नेगु माँगैं सदा न अवसरु होय ॥
भितर संदुकिया खोलो जच्चा रानी ! यह धनु देहु
लुटाय ॥"

सासु, ननद, जेठानी और देवर इत्यादि परिवार के लोगों के नेगों की चर्चा मैं पीछे कर चुका हूँ। इस प्रकार एक पुत्र-जन्म में ही रानी को इतना खर्च करना पड़ता है कि प्रायः वह लुट ही जाती है और यदि गरीब हुई तो सुख का अवसर दुखपूर्ण हो जाता है। एक नहीं बल्कि अनेक ऐसे गीत हैं जिनमें इन प्रजाजनों का उल्लेख किया गया है और उनके नेगों की बातें कही गयी हैं। विवाह में बतोनी के दिन मण्डप में प्रजाजनों के लेन-देन में प्रायः वर पक्ष तथा कन्या-पक्ष में झगड़ा हो जाता है क्योंकि कन्या-पक्ष के यहाँ पर सेवा करने वाले प्रजाजनों को उनका पारिश्रमिक वर-पक्ष की ओर से मिलता है। दहेज इत्यादि के रूप में पर्याप्त धन-वस्तु प्राप्त कर लेने के बाद भी जब वर-पक्ष, उनकी सेवा करनेवालों, प्रजाजनों को, उचित तथा मर्यादोपयुक्त

१—जच्चा तो बैठीं पलँगु चढ़ि मेरे लाल अहो मोरे लालना ।
जच्चा ने पुत जनमिये ॥
सब झगड़ें अरे सब झगड़ें ससुर जी के नेग । मेरे लाल०
द्वारे मे आये रजवा मेरे लाल अहो मोरे लालना ।
मिठ बोलनी और बसोपनि से मनु नाहि अहो मोरे लालना ।
इमका तो बेंचहु बजार मेरे लाल अहो मोरे लालना ॥
+ + + +
बिक जाने पर—अब रोवै अरे अब रोवें देउ रुमाल अहो मोरे लालना ।
जच्चा रहैं सो बिक गईं मेरे लाल अहो मोरे लालना ॥
+ + +
लाओ न माया मोरी छुरिया कटरिया मेरे लाल०
हान मारौं अरे हान मारौं महाजन लोग अहो मोरे लालना
और वह जच्चा-बच्चा को वापस ले आता है।

पुरस्कार नहीं देते तो प्रायः कहा-सुनी हो जाती है। प्रत्येक अवसर के रूढ़िगत नेग हैं जिन पर निश्चित मात्रा में पुरस्कार दिया जाता है परन्तु वर-पक्ष वाले प्रायः कन्या-पक्ष वालों के रीति-रिवाजों को ऐसे अवसरों पर अस्वीकार कर देते हैं अन्यथा लेन-देन के सभी मौके रूढ़ि सम्मत हैं।

नाई तथा उसका सारा परिवार अपने "किसान" (जजमान) की सभी सेवा करता है। एक स्थान से दूसरे स्थान तक समाचार ले जाने तथा निमंत्रण बाँटने का भी काम नाई ही करता है।

बारी तथा उसका सारा परिवार अपने किसान की सेवा, 'चौका बर्तन' के द्वारा करता है और दोने-पत्तलों का पूरा प्रबन्ध करता है। बारातों तथा अन्य अवसरों पर बारी ही मशालधारी बनता है।

धोबी का काम केवल कपड़े धोने का है। परन्तु सुहागन धोबिन से ही कन्या को सर्वप्रथम सोहाग दिलाने का सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण कार्य कराया जाता है।

कहार पानी भरने का काम करता है।

कुम्हार मिट्टी के बर्तन बनाकर लाता है और जनेऊ, विवाह इत्यादि पर बहुत अधिक मिट्टी के बर्तनों की आवश्यकता होती है। पूजा के लिए मिट्टी का कलश, दिये, करवा चौथ के लिए करवा इत्यादि कुम्हार ही देता है।

डोम सफाई तथा बाजे बजाने का काम करता है।

बढ़ई हल, गाड़ी, बहल, दरवाजे, किवाड़ इत्यादि बनाते हैं। जनेऊ तथा विवाह में बढ़ई ही लकड़ी का पाटा तथा दीवट बनाकर लाता है जिनका नेग उसे मिलता है।

लोहार खेती में काम आने वाले सभी लोहे के औजार बनाता है। विवाह में वह कंकन लाता है जो लगन लगने पर युवक के दाहिने हाथ में बाँधा जाता है और जिसे चौथी (चतुर्थी) के दिन नवविवाहिता पत्नी खोलती है। पुत्र-जन्म पर लोहार लोहे के छोटे-छोटे छल्ले और चूड़ा बना कर लाता है जिन्हें जच्चा और बच्चा को पहनाया जाता है जिससे नजर न लगे। वास्तव में बढ़ई और लोहार गाँव के मिस्त्री हैं जो ग्राम-जीवन के लिए बहुत ही उपयोगी हैं।

सोनार सोने-चाँदी के गहने बनाता है। छेदन में विशेषरूप से 'सुजिया' (बाली) बनवाई जाती है और सोनार ही स्वयं कान और नाक छेदता है।

इसी प्रकार अन्य अवसरों पर भी जो आभूषण आवश्यक होते हैं वह बनाता है।

माली काम-काजों में बन्दनवार बना कर लाता है। पुष्प बेलपत्र लाता है। हार और मालाएँ गूँथता है। जनेऊ और विवाह में माली ही मौर तथा मौरी बनाकर लाता है।

तम्बोली पान का प्रबन्ध करता है। जितने दिन तक काम-काज चलता रहता है वह पान लगा लगा कर खिलाता है। पूजा और मण्डप में पान की आवश्यकता होती है जिसकी वह पूर्ति करता है।

पटुआ गुहने का काम करता है जो गुहे जाने योग्य आभूषणों को गुहता है तथा विवाह में थैली-बटुओं में तनी तथा घुण्डी लगाता है। बधाई के गीत में पटुवाइन के बन्दनवार गूँथ कर लाने का उल्लेख है।

चमार अधिकांश रूप से चमड़े का काम करता है जो जूते और चप्पलें भी बनाता है। मुख्यतया वह खेतों को सींचने के लिए कुएँ से पानी खींचने वाला चमड़े का पुर बनाता है। जनेऊ, विवाह तथा गौने में वह अन्य चमारों के साथ पालकी उठाने का काम करता है। यह काम कुछ स्थानों में कहार भी करता है। चमारिन गाँव की दाई होती है और सन्तानोत्पत्ति में सहायता देती है और वही नाल काटती है। सरिया में चमारिन का विस्तृत वर्णन हुआ है।

दर्जी भी एक महत्त्वपूर्ण परजा है जो जनेऊ तथा विवाह में जामा बनाता है इसके अतिरिक्त वह गाँव के लोगों के कपड़े सीता है। गाँवों में यह पेशा जातिगत है।

पीछे दी गई सूची में मैंने भाट, अहीर तथा चौकीदार का उल्लेख नहीं किया। भाट का उल्लेख इसलिए नहीं किया कि ब्राह्मण होने के कारण वह सामान्य प्रजाजनों में सम्मिलित नहीं होता परन्तु काम-काजों में उपस्थित होकर वह प्रशस्ति-गीत गाता है। हमारे क्षेत्र में उपनयन संस्कार में पलाश दण्ड लाने का काम उसी का है। अहीर प्रजा की किसी विशेष कोटि में नहीं आता परन्तु गौपालन करने के कारण दूध की आवश्यकता पड़ने पर उसकी पूर्ति करता है। और देवोत्थानी एकादशी, होली तथा नवान्न के समय खेती से बाली, ईख तथा नया अन्न देता है। परन्तु पारिश्रमिक देने की दृष्टि से अहीर प्रजा की कोटि से पृथक् है फिर भी गाँव के सहकारी जीवन का वह

महत्त्वपूर्ण अंग है। चौकीदार सरकारी नौकर होता है परन्तु उसे भी काम-काज तथा तीज-त्योहार पर कुछ नेग प्राप्त होते हैं।

इस वर्णन में गाँव के उन व्यक्तियों का उल्लेख किया गया है जिनके सम्बन्ध में जाने बिना भारतीय लोक-जीवन के सम्बन्ध में केवल आंशिक जानकारी ही प्राप्त हो सकती है। सच तो यह है कि इन्हीं प्रजाजनों के सम्बन्ध में लोकगीतों में वर्णित लोग राजारानी के रूप में यथार्थ हो उठते हैं अन्यथा लोकगीतों के राजारानी आर्थिक दृष्टि से प्रजाजनों से बहुत भिन्न नहीं होते। लोकगीतों के राजारानी, उन्हीं 'नेगियों', प्रजाजनों के कारण सार्थक हो जाते हैं और लोक-जीवन का सम्पूर्ण चित्र प्रस्तुत करते हैं। राजा और रानी की भावना सामन्त युग की विशेषता है जो लोक संस्कृति का अपरिहार्य अंग था और प्रजा उस समाज-व्यवस्था का अनिवार्य अंग थी। वास्तव में गाँवों में आज भी वही सामन्ती सभ्यता परिव्याप्त है जिसमें राजा के अभाव में सुव्यवस्थित समाज की कल्पना भी नहीं की जा सकती। इसीलिए आज के इस प्रजासत्तात्मक राज्यव्यवस्था के सम्बन्ध में प्रायः यह आलोचना सुनने को मिलती है कि राजा के अभाव में सारी प्रजा के राजा होने से देश में सुख शान्ति कैसे स्थापित हो सकती है ? और आजकल पूँजीवादी व्यवस्था के प्रभाव के पूर्व ही समाजवादी व्यवस्था की स्थापना के प्रयत्न हो रहे हैं जिसके महत्त्व को हमारे गाँव में कोई भी समझ नहीं पा रहा है। दूसरी बात इस संदर्भ में यह विचारणीय है कि देश की खेतिहर अथवा कृषि प्रधान अर्थ-व्यवस्था की अनिवार्य सामाजिक उपलब्धि, संयुक्त परिवार पर इस युग में गहरे आघात हुए।

अंग्रेजों के आगमन के पूर्व, अनेक राजनैतिक उथल-पुथल तथा परिवर्तनों के बावजूद, हमारी ग्रामीण अर्थ व्यवस्था मूलरूप से अप्रभावित ही रही क्योंकि किसी भी सामन्ती शासक ने नवीन अर्थ-प्रणाली को जन्म नहीं दिया। गाँव शासन का एक आत्म-निर्भर घटक बना रहा जो आर्थिक दृष्टि से बिलकुल स्वावलम्बी था। 'भारत में धरती पूरे कुनबे (Tribe) की अथवा गाँव की होती थी जिस पर पूरे गाँव का अधिकार होता था, जिस पर राजा का अधिकार कभी नहीं माना जाता था।'[1] परन्तु अंग्रेजों ने जमीन्दारी की स्थापना करके

1"The Soil in India belonged to the tribe of its Sub-division the village community, the clan or the brotherhood settled in the village and never was considered the property of the king."
—Radha Kamal Mukerji

अपने नवीन बन्दोबस्तों से देश के सामाजिक संगठन पर गहरा आघात किया।[1] इस प्रणाली के अन्तर्गत जमीन पर व्यक्तिगत अधिकार प्रदान किये गये और नाप के आधार पर कर निश्चित कर दिया गया।[2] पैदावार के आधार पर नहीं। अभी तक किसान पैदावार का छठा भाग कर के रूप में देता था परन्तु अब पैदावार का प्रश्न ही नहीं उठता था, वृष्टि अथवा अनावृष्टि के कारण अकाल में भी कर देना आवश्यक था जिसका स्वाभाविक परिणाम था महाजनी-प्रथा का उद्भव और ग्रामीणों का कर्जदार होकर दरिद्र हो जाना। और जमीन पर व्यक्तिगत अधिकार होने के कारण, जो जमीन पूरे गाँव की होती थी, बिक कर बँटने लगी। इसके परिणामस्वरूप संयुक्त परिवार में भी केन्द्रीकरण की प्रवृत्तियाँ उभरने लगीं, जब कि पूर्व में पूरा परिवार मिल कर जमीन के एक भाग पर कार्य करता था, उसी पर एक व्यक्ति को विशेषाधिकार प्राप्त हो गया। इसके फलस्वरूप जमीन बँटती गई और प्राचीन अर्थ-व्यवस्था नष्ट होने लगी।[3] ऐसी नष्ट-भ्रष्ट अर्थ-व्यवस्था के अन्तर्गत संयुक्त परिवार भी टूटने लगा जो कभी तत्कालीन अर्थ-व्यवस्था को सफल बनाने के लिये स्वाभाविक एवं अनिवार्य रूप से एक ही साधन था। पूरा ग्राम समाज सहयोग के साथ कृषि के आधार पर सुखमय जीवन व्यतीत करता था और अपनी आवश्यकता की अन्य चीजें भी प्रचुरता से उत्पन्न कर लेता था। इस व्यवस्था के लिये सहयोग, निष्ठा, ईमानदारी अनिवार्य रूप से आवश्यक थी क्योंकि गाँव के प्रत्येक व्यक्ति का जीवन एक दूसरे पर निर्भर करता था। किसी के साथ धोखा या अविश्वास करके कोई भी मनुष्य सुखमय जीवन नहीं व्यतीत कर सकता था। अस्तु, संयुक्त परिवार स्वाभाविक रूप से सब से अधिक

---

1. "It was Lord Cornwallis, who during his term of office, created the first group of landlords in India by introducing the Permanent Setllement"……. ………1793.

2. Under the terms of settlement, they had hence forth to make to the Government of the East India Company a fixed payment",

३. With the establishment of private property in the land and the individuals right to the free disposal of land there appeared centrifugal tendencies within the joint family the members o' which formerly jointly held and cultivated land assigned to it by the village. This led to the division of family land among various claimants resulting in increasing subdivision of land."—Wadia & Merchant.

सशक्त एवं संगठित रूप था जिसके कारण ही गाँवों की समृद्धि थी परन्तु उपर्युक्त व्यवस्था के प्रवेश से संयुक्त परिवार को गहरा आघात लगा और फलस्वरूप गाँव की व्यवस्था बिगड़ गई।[1] सहयोग के आधार पर जो अन्य छोटे उद्योग-धन्धे गाँवों में विकसित थे उन पर भी गहरी चोट लगी क्योंकि अंग्रेजों ने अपने देश से माल मँगा कर भारतवर्ष के बाजारों में ठूँस दिया जो कि सस्ता भी था। इस विदेशी पूँजीवाद ने न तो देश में यंत्र उद्योगवाद को प्रोत्साहन दिया और न यहाँ के उद्योग-धन्धे को चलने दिया और अपने माल को बेचने के लिये भारत को लंज पुंज बना दिया। देश की मौलिक अर्थ-व्यवस्था तथा समाज-व्यवस्था को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। इसलिये आज इन परिवर्तित परिस्थितियों में तथा पश्चिमी समाज व्यवस्था के झोंकों से आन्दोलित और यांत्रिक उद्योगवाद के विकास के साथ समाजवादी अर्थ-व्यवस्था द्वारा निर्मित देश के ऊपरी भवन के नीचे की पुरानी समाज-रचना की नींव इन लोक गीतों में आज भी सिसक रही है। इन गीतों में एकत्र कुछ ही वर्ष पूर्व का यथार्थ कुछ ही वर्षों में भारत का भव्य इतिहास बनने जा रहा है। इन परिवर्तनों के कारण न केवल गाँवों का संगठन विशृंखल हो गया है बल्कि सुसंगठित संयुक्त परिवार की व्यवस्था टूट रही है। आज गाँव का निवासी भोजन के अतिरिक्त अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये अपने ग्रामवासी भाइयों पर निर्भर नहीं करता बल्कि केन्द्रीभूत यांत्रिक उत्पादक केन्द्रों से उसकी आवश्यकता की पूर्ति हो जाती है। यदि उसके पास धन है तो किसी प्रकार का अभाव उसे नहीं खटक सकता और गाँव में भी किसी अन्य के सौजन्यपूर्ण सहयोग के बिना भी वह अपना कार्य कर सकता है। इस प्रकार पूँजीवादी समाज तथा अर्थ-व्यवस्था के अन्तर्गत बिजली तथा भाप से चलने वाले बड़े-बड़े कल-कारखानों ने ग्राम तथा कृषि अर्थ-व्यवस्था की कमर तोड़ दी और आज गाँव के रहने वाले गाँव के प्रति अपने कर्तव्य से विमुख हैं। आज की संस्कृति नगरवादी हो रही है और प्रत्येक ग्रामीण का आदर्श बड़े-बड़े नगरों में रह कर धनवान बनना है। खेती के स्थान पर कारखानों में मजदूरी

1, "In India the decline & decay of native handicrafts was not accomplished by any rise of indegenous manufacture or machine industry. The political pressure of a foreign government together with the influx of cheap products of foreign machine industry were the principal causes of this decline and decay."

तथा व्यापार-व्यवसाय अधिक वांछनीय हो गये हैं और राजा-रानी की कल्पनाओं के स्थान पर अब सेठ-सेठानी बनने के सपने देखे जा रहे हैं परन्तु ग्रामीण जनता को यह नहीं मालूम है कि सेठ बनने के सपने भी पुराने हो गये हैं। और इस प्रकार लोक-गीतों के राजारानी सामाजिक व्यवस्था के शीघ्र परिवर्तनों की भूल-भुलैयों में अपना रास्ता खो बैठे हैं और कोई मार्ग नहीं सूझ रहा है। आस्था, अनास्था, उपयोगिता तथा अनुपयोगिता के अनिश्चित वातावरण में लोग अपने आपको समझने में असमर्थ हैं।

[५]

शिक्षा

मैं पिछले पृष्ठों में तीन ऋणों की चर्चा कर चुका हूँ और पितृ-ऋण के आधार पर कुछ विचार भी व्यक्त कर चुका हूँ। यहाँ पर ऋषि-ऋण तथा देव-ऋण के आधार पर लोक-गीतों में शिक्षा संबन्धी संदर्भों पर विचार किया जायेगा। ऐसे गीतों का अभाव है जिनमें समसामयिक शिक्षा-व्यवस्था का उल्लेख हो। केवल कुछ गीतों में परम्परागत शिक्षा के कुछ उल्लेख प्राप्त होते हैं। ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करते हुए ऋषियों द्वारा रचे ग्रन्थों का अध्ययन करके ब्राह्मण-क्षत्रिय एवं वैश्य पुत्र ऋषि-ऋण से मुक्त हो सकता है। ऋषि-ऋण से मुक्त होने के लिये प्राचीन काल में आश्रम-व्यवस्था को प्रमुख स्थान दिया जाता था। प्रत्येक सवर्ण उपनयन संस्कार में यज्ञोपवीत धारण कर किसी आचार्य या गुरु के आश्रम में निवास करके स्वाध्याय करता था और ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करता था। इस प्रकार प्रत्येक सवर्ण 'जन्मना जायते शूद्रः' के रूप को समाप्त करने के लिये उपनयन संस्कार के दिन से ब्रह्मचर्याश्रम का पालन करता था और स्वाध्याय करता था। यज्ञोपवीत के तीन धागों में, तीन आश्रमों को व्यवस्थित रूप से पालन की प्रतिज्ञा भी परिलक्षित होती है। इस प्रकार प्रत्येक यज्ञोपवीत धारण करने वाला ब्रह्मचर्य, गृहस्थ तथा वानप्रस्थ तीनों आश्रमों के नियमों तथा कर्तव्यों को स्वीकार करता था। प्रत्येक ब्रह्मचारी के लिये २५ वर्ष तक ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करना तथा स्वाध्याय अनिवार्य था। इस आश्रम के उपरान्त ही गुरु अथवा आचार्य की आज्ञा से समावर्तन संस्कार होता था तब ब्रह्मचारी घर वापिस लौटता था और गृहस्थाश्रम में प्रवेश का अधिकार प्राप्त करता था। यही २५ वर्ष का समय प्रत्येक बालक की शिक्षा का समय होता था जब कि प्रत्येक

ब्रह्मचारी परम्परागत शिक्षा प्राप्त करता था जिसमें धार्मिक ग्रंथों के अध्ययन को विशेष प्रमुखता दी जाती थी। स्त्रियों और शूद्रों को यह शिक्षा का अधिकार प्राप्त नहीं था। मनु के अनुसार स्त्रियों का विवाह ही उनका यज्ञोपवीत है, पति-सेवा ही गुरुकुल-निवास और गृह-कार्य ही उनका यज्ञ है। और शूद्रों का कर्तव्य एक मात्र सेवा थी और 'द्विजोच्छिष्टं च भोजनं' उनका एक मात्र प्राप्य था। इस प्रकार हमारे समाज के दो महत्त्वपूर्ण वर्गों को शिक्षा की सुविधाएँ अप्राप्य ही रहीं। परन्तु अब सौभाग्य से ये निषेध समाप्त हो रहे हैं और अस्वाभाविक अस्वस्थ सीमाएँ टूट रहीं हैं।

परन्तु प्राचीन आश्रम-व्यवस्था विशृंखल हो गई और केवल गृहस्थाश्रम ही एक यथार्थ आश्रम शेष रह गया। इसीलिये उपनयन संस्कार के साथ ही समावर्तन संस्कार भी पूरा कर दिया जाता है और अध्ययन के लिये काशी जाने वाले बरुआ (ब्रह्मचारी) को प्रलोभन देकर साग्रह रोक लिया जाता है। जनेऊ के गीत में बालक अपनी माँ से कहता है कि मेरे लिये पाथेय का प्रबन्ध कर दो मैं काशी-बनारस वेद पढ़ने के लिये जाऊँगा। परन्तु माँ उसको समझाती है कि तुम काशी-बनारस क्यों जाओगे तुम्हारे बाबा वेद पाठी हैं उन्हीं से पढ़ लेना।[1]

उपनयन संस्कार जो कभी ब्रह्मचर्याश्रम का सूत्रपात करता था वह केवल ब्राह्मण बनाने का एक औपचारिक साधन मात्र रह गया है। केवल ब्रह्मचारी का रूप धारण कर सन्तोष कर लिया जाता है और यज्ञोपवीत पहनकर ब्राह्मण हो जाता है।[2] ढिग और पाटवाली पीली रंग की धोती पहना दी जाती है और अमुकरामा ब्राह्मण हो जाते हैं।[3] और साधारण सूत के जनेऊ के

१—करौ न माया मोरी सतुआ औ करौ लड़ुआ।
कासी बनारस जाब, वेदु पढ़ि आउब।।
काहे का पूत जैहौ कासी और बनारस।
घरहीं मा बाबा तोरे वेदिया वेदु पढ़ि लीन्हेऊ।।

२—ढिग और पाट लगाय कै बोहि कै पेरी रँगाव हो।
सो पेरी पहिरै अमुक रामा बाँभन होइ जैहैं।,

३—बाबा झारेनि पोंछिनि जाँघ बैठारिन।
देहौ पोता सोने का जनेऊ, जनेऊ बड़ा उत्तिम।।

स्थान पर सोने का जनेऊ उत्तम हो गया है।[1] जब बालक मुँज के खेत में मूँज के जनेऊ के लिए मचलता है तो बाबा अपने पोते को समझाता है कि मुँज का जनेऊ क्या करोगे मैं तुम्हें सोने का जनेऊ दूँगा। उपनयन संस्कार के वास्तविक महत्त्व को इतना भुला दिया गया है कि मुंजी मेखला को जनेऊ समझ लिया गया है। जनेऊ भी वैभव प्रदर्शन के एक महत्त्वपूर्ण लोकाचार के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है।[2] जनेऊ के लिए बेसन की बूँदी छटवा कर लड्डू बनवाऊँगी, बड़े-बड़े लड्डू बनवा कर सात सूप सजाऊँगी, सातों सूप सजाकर भिक्षा डालूँगी, पाँच प्रकार के रत्नों से थाल सजा कर भिक्षा डालूँगी। पीली पीली (सुवर्ण) मोहरों को भुना कर दस वरण कराऊँगी और मान्यों के पाद प्रक्षालन करके उनको अच्छी दक्षिणा दूँगी। वैभव के विस्तार का रूप एक अन्य जनेऊ के गीत में द्रष्टव्य है।[3] आजी अपने पति (बाबा) से कहती हैं कि अमृत-फल नारियल चाहिए। नौगवाँ के बने हुए आठ घड़े (पीतल के) चाहिए; मैं दसवरण दिलाऊँगी। सोने और चाँदी से जनेऊ मढ़ाकर ब्राह्मणों को दूँगी और कटोरों में खिचड़ी भर-भर कर भिक्षा डालूँगी।

परिवर्तित परिस्थितियों के अन्तर्गत और भिन्न प्रकार की शिक्षा-पद्धति के प्रचार के कारण जनेऊ का महत्त्व शिक्षा की दृष्टि से शून्य हो गया है।

१—मुँजवा के खेतवा अमुक रामा मचला करते हैं।
लेबै बाबा का मूँज का जनेऊ, मूँज भल हरि हरि॥
सांझयों मा बैठे बाबा उनके नाती समुझावैं।
देवैं नाती का सोने का जनेऊ मूँज का करि हो॥

२—बेसने की बूँदी छटाइ कै वोहि कै लेड़ुआ बनवाउब हो।
बड़-बड़ लेड़ुआ बनवाइ कै सातों सूप सजाउब हो॥
सातो सूप सजाइ कै भिच्छा लै डारब हो।
पंच रतनन थारु सजाइ कै दस-भिच्छा लै डारब हो।
पेरी पेरी मोहरै भंजाय कै, दस बरन कराउब हो।
मान्यनि पाँव पखारि कै, अच्छे दच्छिना देवाउब हो॥

३—चाहिय पिय चाहिय अमृतु फल नारियलु हो।
आठ कुम्भ न गैयाँ दसवरन देवउतिउँ हो॥
सोने रूपे जनेऊ मढ़ाइ कै बाँभनन दै देतिउँ हो।
बेलन खिचरी भराइ कै भिच्छा लै डारितिउँ हो॥

[1] केवल वेद के अध्ययन के लिये काशी बनारस जाने का अभिनय मात्र होता है और सम्पन्न माँ-बाप के होते हुए बालक को अध्ययन के लिए काशी जाना अनुचित है क्योंकि उसके पिता रुपया खर्च करके उसे ब्राह्मण बना लेंगे और अपना वेद पढ़ाकर पंडित बना लेंगे और 'वेदपाठी सो पंडितः' की उक्ति को सार्थक सिद्ध कर देंगे।

उपनयन संस्कार के प्रारम्भ होने के पूर्व बालक के बाल उस्तरे से बना दिये जाते हैं केवल चोटी छोड़ दी जाती है और ब्रह्मचारी के निशानी के रूप में चोटी के चतुर्दिक 'फरवा' अथवा चूड़ा बना दी जाती है। [२] वस्त्रों के स्थान पर मृगछाला पहना दी जाती है और पलाश दण्ड हाथ में दे दिया जाता है। मुंजी मेखला की चर्चा पिछले पृष्ठों में हो चुकी। उपनयन संस्कार के समय ब्रह्मचारी का यही रूप होता है और इसी रूप में वह भिक्षा माँगता है। [3] मडप में खड़े होकर भिक्षा डालने वाली आजी की प्रतीक्षा करता है। आजी कहती है एक क्षण ठहरो, पलक मारो, सोलहो शृङ्गार कर लो मैं भिक्षा डालूँगी। यह शृंगार का आदेश अथवा आग्रह ब्रह्मचारी के रूप को परिवर्तित कर देता है और ब्रह्मचारी के घुटे सिर का 'फरवा' उस्तरे से साफ कर दिया जाता है, नाखुर होता है अर्थात् नाखून काटे जाते हैं और नाखुर, स्नान तथा वस्त्र पहनाने के समय के पृथक्-पृथक् गीत जनेऊ के प्रकरण में दिये गये हैं। शृंगार के विस्तार के संबन्ध में वस्त्र धारण वाला गीत द्रष्टव्य है। सिर पर

१—भिक्षा द माता असीस दे मैं तो बरुआ बाँभन हो।
येहि भिक्षा के रे कारण हम चलेन बनारस हो॥
तुम कस जैहौ बनारस जोह के दादुल 'अमुक' रामा।
आपन लाख मॅजाय के बाँभन कार लेह हो।
आपन वेदु पढ़ाइ के पंडित करि लेह हो॥

२—को मोरे जैहै बिन्दावन लैहैं फरस दण्डु।
को मोरे खेलै अहेरवा, मृगछाला चाहिअ॥
बाबा मोरे जेहै बिन्दावन लैहैं फरस दण्डु औ मृगछाला।
आज मोरे नाती का जनेऊ फरस दण्ड चाहिअ॥

३—मँडये मे ठाढ़ कवन रामा फिर फिर चितवै, पलक नहिं भाँजे।
कहाँ गई है आजी हमारि, भिक्षा लइ डारौ।
छिनु एक बेलमौ पलक तुम भाँजो,
कइ लोआ सोरहों सिंगार भिक्षा मे डारौं॥

मौर पहनाया जाता है, जो विवाह में विशेष रूप से पहना जाता है, मोतियों की माला पहनाई जाती है। आँखों में सुरमा लगाया जाता है, पान खिलाया जाता है, नया जामा पहनाया जाता है और उस पर पटुका बाँधा जाता है। और जूते पहन कर पालकी में सवारी करायी जाती है।

यह रूप ब्रह्मचारी के समावर्तन का है और जो लगभग २० वर्ष का समय विद्याध्ययन में लगता था अब केवल घंटे भर में पूरा हो जाता है। बरुआ के शृङ्गार के उपरान्त बनरा के गीत गाये जाते हैं जो विवाह में ही विशेष रूप से गाये जाते हैं। इस प्रकार बनारस के गुरुकुल में अध्ययन के लिए जाने वाले ब्रह्मचारी को सजा बजाकर आकर्षक चीजें देकर, उसे उसके पवित्र इरादों से विमुख कर दिया जाता है और प्रतीक रूप में गायत्री मंत्र से ही संतोष कर लिया जाता है और अधिकांश ब्रह्मचारियों को गायत्री मंत्र का अर्थ भी ज्ञात नहीं होता। उपनयन संस्कार में यज्ञोपवीत धारण करने के उपरान्त ब्रह्मचारी से कुछ प्रतिज्ञायें कराई जाती है। [१] दिन में न सोना; [२] आचार्य के अधीन रहकर वेदों का अध्ययन करना; [३] क्रोध नहीं करना चाहिए [४] मैथुन नहीं करना चाहिए; [५] पलंग इत्यादि ऊँची शैया पर नहीं सोना चाहिए; [६] गाना, बजाना, नृत्य इत्र तथा काजल से दूर रहना चाहिए; [७] मांस रूखा सूखा भोजन तथा नशीली चीजों का सेवन नहीं करना चाहिए; [८] गाँव के बीच में नहीं बसना चाहिए, और जूते तथा छाते का प्रयोग नहीं करना चाहिए; [९] लघुशंका के समय अतिरिक्त इन्द्रिय का स्पर्श नहीं करना चाहिए, और न वीर्य स्खलित करना चाहिए; [१०] सुशील, कम बोलने वाला तथा सभा के योग्य बनने का यत्न करना चाहिए। इन प्रतिज्ञाओं के अतिरिक्त अनेक अन्य विधि-निषेधों के आरोपित करने का भी यत्न किया जाता है। कुआँ न झाँकना, वृक्ष पर न चढ़ना, आवश्यकता से अधिक फल न तोड़ना, दूसरों के खेतों में चरती हुई गाय को न हाँकना जैसे अनेक निषेध ब्रह्मचारी को सिखाये जाते हैं। 'गुरु, मातृ पिता का पालन, नियमित स्नान करना तथा अन्य प्रकार

१—दिवा मा स्वाप्सीः; २—आचार्याधीनो वेदमधीष्व; ३—क्रोधानृते वर्ज्य; ४—मैथुनं वर्ज्य; ५—उपरि शैयां वर्ज्य, ६—कौशीलव गंधाञ्जनानि वर्ज्य ७—मांस रूक्षाहारं मद्यादिपानं च वर्ज्यं; ८ अन्तर्ग्राम निवासोपान छत्रधारणं वर्ज्य; ९ अकामतः स्वयमिन्द्रियस्पर्शेन वीर्यस्खलनं विहाय वीर्यं शरीरे संरक्ष्योर्ध्वरेता सततं भव, १० सुशीलो मितभाषी सभ्यो भव।

से शुचिता पर ध्यान देना, गायत्री मंत्र जाप करना इत्यादि अनेक प्रकार के आदेश ब्रह्मचारी को दिये जाते हैं। परन्तु इन विधि निषेधों का शायद ही कोई ब्रह्मचारी पालन करता हो। और सच तो यह है कि "बारह बरस के दुलहू दुलरुआ" के आदर्श श्रीवर की कल्पना ने ब्रह्मचारी रूप की आवश्यकता को ही समाप्त कर दिया है। तात्पर्य यह कि उच्च और पवित्र संस्कारों तथा गुणों का उन्नयन करने वाला सबमें महत्वपूर्ण उपनयन संस्कार बच्चों का खेल और एक लोकाचार मात्र रह गया है जिसका महत्व सामाजिक शिष्टाचार से अधिक नहीं रह गया है। विद्याध्ययन के निमित्त उपनयन संस्कार का समस्त अनुष्ठान तथा उसकी प्रतिज्ञाएँ प्राचीन भव्य भवन के खंडहरों के सदृश अवशिष्ट हैं। प्राचीन शिक्षा-व्यवस्था की मौलिक प्रेरणाओं के अभाव में उपनयन संस्कार परम्परा पालन मात्र रह गया और व्यावहारिक दृष्टि से अन्य शिक्षा-पद्धति को ग्रहण करते हुए भी उसको जीवन का सामाजिक आदर्श रूप न प्राप्त हुआ। इसलिये शिक्षा के संबंध में जो संकेत प्राप्त भी होते हैं, यथार्थ रूप के अभाव में वे केवल ऐतिहासिक दृष्टि से ही महत्वपूर्ण हैं। परन्तु अधिकांश अशिक्षित स्त्रियों द्वारा रचे तथा गाये जाने वाले गीतों में यदि शिक्षा-पद्धति तथा शिक्षा-रूप पर आवश्यक सूचनाएँ प्राप्त न हों तो आश्चर्य की क्या बात है? उन्हें तो जीवन को सामाजिक रीति से बाँध रखने वाले व्यापार ही विशेष रुचिकर थे और समाज के उन रूपों तथा व्यापारों से जिनसे उनका सम्बन्ध न था उनके गीतों में कैसे उतर सकते थे। शिक्षा के लिये घर छोड़ कर जाने वाले बटुकों को काशी न जाने देने के लिये कठिन आग्रह इन गीतों में अवश्य दिखाई देता है। आखिर कैसे अपने नन्हें-नन्हें बच्चों को कठिन तपस्या तथा साधना के लिये परदेश भेज दें? पुत्र के प्रति उनके प्रेम की भावना इन गीतों में भी द्रष्टव्य है जो एक माता की सरल स्वाभाविक भावना है। और इन लोक-गीतों में इन्हीं सरल स्त्रियों की निश्छल भावनाओं को शब्द मिले हैं।

[६]

विवाह

विवाह-प्रकरण की भूमिका में विवाह के शास्त्रीय एवं व्यावहारिक कठिनाइयों पर संक्षेप में स्वतन्त्र रूप से विचार व्यक्त किये गये हैं। साथ ही उन अनेक परम्पराओं का उल्लेख भी किया गया है जो विवाह के आवश्यक अंग

हैं। गीतों का सम्पादन भी इस दृष्टि से किया गया है जिससे विवाह में आने वाली प्रत्येक प्रथा का स्थान तथा अवसर स्पष्ट हो जायगा। परन्तु कुछ ऐसी महत्वपूर्ण बातें हैं जिन पर समग्र रूप से विचार कर लेना अनुचित न होगा।

इन गीतों में विवाह का जो प्रमुख रूप प्राप्त होता है वह आज के विवाह का सामान्य रूप है जिसमें कन्या के पिता, बाबा अथवा चाचा वर खोजने निकलते हैं। लड़की के विवाह का प्रश्न परिवार वालों के लिये चिन्ता का विषय होता है। [1]आजी लाल चौपाल में सोते हुए बाबा (अपने पति) को जगाती हैं और कहती हैं ऐसे बाबा को कैसे अच्छी नींद आती है जिसके घर में कुआँरी कन्या हो। पिता आटन, पाटन और गुजरात इत्यादि स्थानों में अपनी लड़की के लिये वर ढूँढ़ कर असफल लौटते हैं तब लड़की स्वयं सुझाती है कि सब स्थान ठीक से नहीं देखे क्योंकि नगर अयोध्या में राम और लक्ष्मण दो सुन्दर वर हैं। [2]प्रायः ब्राह्मण अथवा पुरोहित, नाई और बारी के साथ वर खोजने के लिये जाते थे और विवाह लगभग निश्चित कर आते थे। ससुराल में लड़की को जब भूमि पर लेटना पड़ता है और वह भी अकेले, तो वह अपने पिता को उलाहना देती है। क्रोध में पिता कहते हैं कि मैं नाई, बारी तथा ब्राह्मण के पुत्र को मारूँगा जिन्होंने मेरी बेटी के लिये परदेशी वर ढूँढ़ा जिससे मेरी बेटी को रात में भी अकेले सोना पड़ता है। [3]ऐसे गीत तो अनेक मिलते हैं जिनमें कन्या स्वयं अपने विवाह के संबंध में अनेक प्रकार की राय देती है। [4]एक गीत में कन्या अपने पिता से कहती है कि हे पिता! मैंने तुम्हें बार बार मना किया कि जेठ के महीने में विवाह मत रचना हाथी घोड़े प्यासे मरेंगे और औवर कुम्हला

१—बाबा सोवैं लाली चौपरिया आजी जगावन जायँ।
ऐसे बबन का नींदा भलि आवै जेहि घर बालिनि कुआँरि॥
२—ढूढ्यों मैं आटनु ढूढ्यों मैं पाटनु ढूढ्यों मैं गढ़ गुजरात।
तुम्हरी जोगि वरु नहिं पायों बेटी, अब बेटी रहौ कुआँरि॥
कहाँ ढूढ्यो आटनु पाटनु कहाँ ढूढ्यो देसु सब झारि।
नग्र अयोध्या मा दुइ बर सुन्दर एकु लछिमन एकु राम।
३ आँचनु खोलि दादुलि भुइयाँ पै लोटहिं रैन मा रहौं अकेलि
मरिहऊँ मैं नउआ, मरिहऊँ मैं बरिया, मरिहऊँ बम्हन जी के पूत
जिन मेरी बेटी का बिदेसी बर ढूढ़ा रैनहु मा रहैं अकेलि॥
४—बार बार मैं बरज्यों री दादुलि जेठ जनि रच्यो बिआह।
हाथी औ घोड़ पिआसन मरिहैं औवर जैहैं कुम्हिलाय॥

जायेंगे।[1] एक अन्य गीत में कन्या अपने पिता से कहती है कि कन्नौज कन्नौज मत करो, कन्नौज बड़ी दूर है और वहाँ के लोग दहेज बहुत माँगते हैं जो तुमसे नहीं दिया जायेगा।[2] एक अन्य गीत में कन्या के भाई और होने वाले पति में मोरों को दहेज में लगा लेने के प्रश्न को लेकर झगड़ा हो जाता है और श्रीवर यह कह कर जाने लगते हैं कि कन्या को तुम अपने घर ही में रखो मैं विवाह नहीं करूँगा। तब मण्डप के खम्भे के सहारे खड़ी कन्या अपने भाई से प्रार्थना करती है कि सासु ससुर की मैं विनती करके मोर लौटवा दूँगी। परन्तु इन गीतों में स्वयंवर का उल्लेख नहीं प्राप्त होता बल्कि सीताराम के विवाह को भी ऐसा रूप दे दिया गया है जिससे स्वयंवर की बात स्पष्ट नहीं होती। जिस काल के भी ये गीत हों परन्तु उस समय तक स्वयंवर की प्रथा के स्थान में विवाह के भार को परिवार के पुरखों ने अपने ऊपर ले लिया था। एक गीत के आधार पर पं० रामनरेश त्रिपाठी ने हिन्दू सभ्यता में, लड़के का लड़की पर आसक्त होकर उसके साथ विवाह की माँग को, एक नई बात कहा है।[3] इस गीत में एक युवक लड़की के घर के आँगन में

१—कनउज कनउज जनि करौ दादुलि कनउज है बड़ी दूर।
उई कनउजिया दायज बहुत माँगैं तुम से दिया नहिं जाय॥

२—ई मोरवा मोरे बाबा के पाले नहिं देबै दइजे लगाय॥
एतना बचनु सुनि बहनोइया जो बोले हम नहिं रचब बिआहु॥
अपना बहिन कँहा घर ही मा राखौ हम घर जैब आजु।
मंडये के खम्भा लगि ठाढ़ी लाडिली सुनौ भैया मोरी बात॥
सासु की बिनती ससुर जी की बिनती मोरवा देहौं लौटाय।

३—कौन की ऊँची अँटरिया सुरुज मुख छाइ।
किन घर कन्या कुँवारि त दुलहो चाहिए॥
अजुन की ऊँची अँटरिया सुरुज मुख छाई।
बबुल घर कन्या कुँवारि त दुलहो चाहिए॥
कौन को पूत तपसिया अँगन मेरे तपु करै।
सजना को पूत तपसिया अँगन मेरे तपु करै॥
भीतर से निकसी अजिया थारु भर मोती लिहे।
भीतर से निकसी मैया थारु भरि मोती लिहे।
भीतर से निकसी भौजिया थारु भरि मोती लिहे॥
लेहो न पूत तपसिया अँगन मेरो छाड़ो।
तुम घर कन्या कुँवारि तो हमका बिआहि देव॥

आसन जमा देता है और आग्रह करता है कि उसका विवाह उसी कुआँरी कन्या से कर दिया जाये। लड़की की माँ, भौजाई इत्यादि थाल भर मोती देकर उससे छुटकारा पा लेना चाहती हैं परन्तु वह अटल है। बाहर से भाई आता है और तलवार से उसको मार डालने की बात कहता है तब कन्या भीतर से बाहर निकल आती है और अपने भाई से कहती है कि यदि तुम इसको मार डालोगे तो मेरे जीवन की नैया को कौन पार लगायेगा। इस गीत में किसी भी प्रथा का चित्र नहीं है और यदि लक्षण से किसी प्रथा की ओर संकेत प्राप्त होता है तो उस प्रथा का जिसके अनुसार घर के पुरुष वर्ग पर कन्या के विवाह का दायित्व होता है। यदि विवाह की यह कोई प्रथा होती तो आजी, माँ तथा भौजाई उसे फुसला कर चुपचाप भगा न देना चाहतीं और भाई खड्ग लेकर उसे मार डालने की बात न कहता। कन्या के कुल पर लांछन आ सकता है इस दृष्टि से आजी, माँ, भौजाई तथा भाई उसको भगा देना चाहते हैं। यह अपवाद उनकी सामाजिक मर्यादा के प्रतिकूल होगा और उसी हठी व्यक्ति की बात को मान लेना एक अपमान की बात होती। परन्तु हाँ, कन्या को उस समय तक पर्याप्त स्वतंत्रता थी, ऐसा अवश्य इस गीत से परिलक्षित होता है क्योंकि कन्या की स्वीकृति के बाद भाई कुछ नहीं कर सकता। इस गीत में उक्त परिस्थिति चाहे किसी नवीन प्रथा की ओर संकेत करती हो अथवा किसी परिपालित प्रथा के संरक्षण का प्रयत्न प्रदर्शित करती हो, परन्तु इसमें कोई अस्वाभाविकता नहीं है। यद्यपि पश्चिमी देशों में पुरुष विवाह का प्रस्ताव करता है और हमारे देश में स्त्रियाँ ही पहले पुरुष पर आसक्त होती हैं, फिर भी इन परम्पराओं के विपरीत आचरण अस्वाभाविक नहीं है क्योंकि आकर्षण और प्रेम राज्य में ऐसे सामाजिक नियम नहीं लागू होते और मर्यादाओं के अनुसार प्रेम-व्यापार नहीं चला करते।

विवाह के एक गीत में एक रोचक तथा असाधारण परिस्थिति का उल्लेख हुआ है जिस पर विचार कर लेना अनुचित न होगा।

बाहर से आये बीरन भैया हाथ खड्ग लिहे।
मारौं मैं पूत तपसिया बहिन मोरी मांगै॥
भीतर से निकसी लाडली मोतियन माँग भरे।
जिन मारौ पूत तपसिया जनम मेरो को खेइहै॥

'आँगन में बिछे हुए पलंग पर श्रीवर को, शायद, बैठे हुए काफी देर हो गई है। तारे खूब छिटक आये हैं, आधी रात हो गई है, शुक्रोदय हो गया है; इस पर लड़की की माँ कहती है कि अब शैया भीतर बिछा दी जाये जिस पर मेरा दुलहा दमाद सोयेगा। भीतर दुलहिन दुल्हे में विवाद हो रहा है, और दुलहा कहता है कि तुम्हारे पिता के पास सोने का कटोरा है जिसे मैं दहेज में लगा लूँगा। दहेज में लगा लेने की बात से यह प्रकट ही है कि अभी विवाह की सभी प्रथाएँ पूरी नहीं हैं और दहेज नहीं मिला है परन्तु विवाह अवश्य हो गया है और वे पति-पत्नी के रूप में स्वीकृत हो चुके हैं। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि विवाह के लिये आने के समय में न केवल दुलहे और दुलहिन को मिलने का अवसर दिया जाता है परन्तु उनके एक साथ एकान्त में लेटने या सोने का भी प्रबन्ध किया जाता है। विवाह के अवसर पर दुलहे और दुलहिन के मिलने की ऐसी प्रथा हमारे समाज में यथार्थ रूप में नहीं मिलती। परन्तु इस प्रथा का पालन आंशिक रूप में अवश्य होता है। भाँवरों के उपरान्त साली सरहजों के माध्यम से कोहबर में जो केलि-क्रीड़ा होती है उसमें दूलहा तथा दुलहिन एक दूसरे को लँहकौरि खिलाते हैं, द्यूत-क्रीड़ा करते हैं और उसी समय घूँघट काढ़े हुये दबी हुई बैठी दुलहिन के मुँह को दुलहा देखता है। लाज में लिपटी हुई और घूँघट में सिमटी हुई आज की दुलहिन का मुँह देख पाना दूलहे के लिये एक कठिन कार्य है परन्तु प्रथा के अनुसार मुँह देखना आवश्यक है अतः साली और सरहज दूलहे की सहायता करती हैं और नई दुलहिन का मुँह दुलहे को दिखा देती हैं। बहुत स्थानों में इस प्रथा का पालन होता है। कुछ स्थानों में बारात को तो बिदा कर दिया जाता है परन्तु श्रीवर को रोक लिया जाता है। हाँ, श्रीवर को दुलहिन से मिलाया नहीं जाता।

इस गीत में अनेक महत्वपूर्ण संकेत प्राप्त होते हैं। पहली बात तो यह कि पर्दे और घूँघट की प्रथा बहुत पुरानी नहीं है क्योंकि दूलहा और दुलहिन परस्पर खुले ढंग से बातचीत करते थे जो अब संभव नहीं है; इसीलिये केवल मुँह देखकर श्रीवर सन्तोष कर लेते हैं और बहुत से स्थानों में श्रीवर

१—उड़के जोधइया जो भयय गई है सुकवा उए आधीरात।
आँगने के सेजिया भीतर लै डारो सोवहि मेरा दुलहु दमाद॥
दुलहिन दुलहै भस मतु कान्हा सुनो दुलहिन मोरी बात।
तुमरे दादुल घर सोने का कटोरवा हम लेबै दहजे लगाय॥

को यह सौभाग्य भी प्राप्त नहीं होता। दूसरा महत्वपूर्ण निष्कर्ष यह हो सकता है कि विवाह-क्रम सप्तपदी अथवा भाँवरों के उपरान्त समाप्त हो जाता था और उन्हें पति-पत्नी के अधिकार उसी समय से प्राप्त हो जाते थे जैसा आजकल नहीं होता। आजकल तो विवाह की अनेक प्रथायें चार रोज तक कन्यापक्ष के आतिथ्य के सहारे वहीं पूरी की जाती हैं। तीसरा महत्वपूर्ण निष्कर्ष यह हो सकता है कि दहेज की प्रथा विवाह का आवश्यक तथा मौलिक अंग नहीं है वह केवल विवाह का एक विस्तार मात्र है जिसका उद्भव विवाह की प्रथा के जन्म के साथ नहीं हुआ। विवाह हो जाने के बाद और श्रीवर तथा कन्या को पति-पत्नी के पूर्णाधिकारों के प्राप्त हो जाने तथा उनके उपभोग के उपरान्त विवाह के सम्बन्ध में कोई महत्व-पूर्ण बात नहीं रह जाती। सच तो यह है कि कन्यापक्ष के सुन्दर आतिथ्य तथा उदारता को वरपक्ष वालों ने अपना अधिकार बना लिया है, वर्ना चतुर्थी (चतुर्सी) वाले कृत्य कन्या के घर में न होते क्योंकि वे कृत्य वरपक्ष द्वारा अपने घर में किये जाने चाहिये। विवाह के उपरान्त बारात का चार रोज ठहरने का यदि कोई महत्व है तो दावतें खाने का और चार दिन तक भात, छोटा कलेवा, बड़ा कलेवा, छोटी बढ़ार और बड़ी बढ़ार इत्यादि दावतों के अतिरिक्त अन्य कोई धार्मिक कृत्य नहीं होता। ये विस्तार अधिकांश ब्राह्मणों में ही मिलते हैं नहीं तो अन्य जातियों में एक दावत के बाद विवाह करके बारात बिदा हो जाती है।

फिर भी इस गीत में दहेज-प्रथा के महत्व पर अच्छा प्रकाश पड़ता है। विवाह हो जाने के बाद तथा पति-पत्नी के अधिकार प्राप्त हो जाने के बाद भी यदि दहेज में त्रुटि हो जाये तो श्रीवर अपनी विवाहिता पत्नी को छोड़कर चले जा सकते हैं। विवाह से अधिक महत्वपूर्ण दहेज हो गया है और विवाह के निश्चित होने के पूर्व अब वरपक्ष तथा कन्यापक्ष वालों में करार होता है अर्थात् दहेज पक्का किया जाता है। वरपक्ष वाले मनमाना दहेज माँगते हैं [1]और वरपक्ष वाले मंडप में आकर नौ लाख दहेज माँगते हैं जिसको पूरा करने के लिये कन्यापक्ष वाले घर के सारे बर्तन इत्यादि निकालकर प्रस्तुत कर देते हैं परन्तु दहेज फिर भी पूरा नहीं होता। इस विषम एवं अपमानजनक परिस्थिति

१—बाजा बरात मँड़ये तरे आइ नौ लख दायज होय।
भितरा के बासन अंगने धरि दीन्हेन्हि दिया दायज नाहि होय।

को देखकर माँ कहती है [1]कि यदि मैं जानती कि मेरे कन्या होगी तो मैं जहर खा लेती; बिछी हुई सेज उड़ास डालती और अपने पति से नाराज होकर रहती। [2]एक अन्य गीत में जब कन्या नगर अयोध्या में राम और लक्ष्मण—दो श्रेष्ठ वरों की ओर संकेत करती है तब उसके पिता कहते हैं कि उन दोनों वरों में बहुत कपड़े बर्तन देने पड़ेंगे द्वारचार में हाथी चाहिये और लंका का दहेज देना पड़ेगा जो मेरी सामर्थ्य के बाहर की बात है। इस पर बेटी कहती है कि हे पिता! जिसके पास कपड़े, बर्तन और लंका का दहेज देने की सामर्थ्य न हो तो क्या चरवाह वर चुने?

इन गीतों में दहेज प्रथा के कुप्रभावों का चित्र मिलता है जिसमें लड़की वाले, लड़के के पिता को दहेज देते हैं। इन गीतों में ऐसे संकेत उपलब्ध नहीं जिनके आधार पर यह कहा जा सके कि विवाह में लड़के के पिता को कुछ देना पड़ता है। लड़के वाले को भी चढ़ाव ले जाना पड़ता है जो विवाह के पूर्व अर्थात् भाँवरों के पूर्व लड़की के पास पहुँचा दिया जाता है। उस चढ़ाव में आये आभूषणों को पहन कर लड़की वेदी पर विवाह के लिये बैठती है। वरपक्ष से इस प्रकार जो भी आभूषण इत्यादि आते हैं वे कन्या के साथ उन्हीं के घर वापिस पहुँच जाते हैं जिनमें से बहुत से आभूषण मँगनी के भी होते हैं जो वापिस ले लिये जाते हैं। इस प्रकार वरपक्ष वालों को विवाह में कोई कठिनाई नहीं उठानी पड़ती बल्कि उनका भी सारा भार कन्या पक्ष पर पड़ता है जो कभी-कभी दहेज से भी अधिक महँगा पड़ता है। [3]विवाह के

१—जो मैं जनतिउँ धिया कोखि होइहैं, खातिउँ मैं बन की मकोय।
डासी सेज उड़ासि मैं डरतिउँ प्रभु जी से रहतिउँ कोहाय॥

२—उइ दून्हो वर बेटी अँचहड़ पँचहड़ हथिनि दुआरे कै चार।
उई दून्हो वर बेटी लंका का दायज मोरे बूते दीन्ह न जाय॥
जेहि के न होय दादुलि अँचहड़ पँचहड़ हाथिनि दुआरे कै चार।
जेहि के न होय दादुलि लंका का दायज वह बरु ढूँढ़ै चरवाह॥

३—नौलख आवैं बरतिया बरतिया दस लख झण्डा निशान।
नाचत आवैं समधी की पतुरैं गरद उड़ असमान॥
एतना देखि कै डरपे हैं बाबा देरपि के हननि हैं केवार।
येहि घेरिया मोर पटनु लुटावा अब बेटी रहौ कुआँरि॥
मँडये के खम्भा लगे ठाढ़ी हैं लाड़ली सुनो बाबा बचन हमार।
आये हैं लोग बरतिया बरतिया आये हैं देखनहार॥
एतना सुनि बेटी के दादुलि खोल दीन्हेंहिं चनन केवार।
हम जो ब्याहब अपनी बेटी मोर बेटी जैहै परदेस॥

अन्य गीत में बहुत बड़ी बारात को देखकर कन्या के बाबा डर कर अपने दरवाजे बन्द कर देते हैं, और कहते हैं कि इस लड़की ने तो मेरा नगर ही लुटवा दिया अब बेटी तुम कुआँरी ही रहो। मंडप के खम्भे के पास खड़ी हुई कन्या कहती है कि आने वाले लोगों में केवल आधे ही बाराती हैं बाकी के लोग तो तमाशबीन हैं। यह बात सुन कर कन्या के पिता दरवाजे खोल देते हैं और विवाह करने का आश्वासन देते हैं। इस गीत में बड़ी-बड़ी बारातों के ले जाने और वैभव प्रदर्शन की बात द्रष्टव्य है। यह बड़ी बारात लड़की वाले के आतिथ्य के भरोसे चार दिन तक ठहरती है और खूब आमोद-प्रमोद करती है।

इस गीत से जैसा कि अन्य गीतों से भी यह स्पष्ट रूप से ज्ञात होता है कि कन्या की आयु, विवाह के समय छोटी नहीं होती थी। यद्यपि बाल-विवाह की प्रथा सामान्य रूप से प्रचलित हो गई थी परन्तु फिर भी गीतों में उसका विशद चित्रण नहीं मिलता; केवल कुछ गीतों में संकेत मात्र उपलब्ध है। [1]विवाह के लिये गये हुए पुत्र के लिये माता चिन्तित है अतएव एक पत्र लिख कर समधिन के पास भिजवाती है और कहती है कि मेरे दुलरुआ को दूध पिलाना, आँचल से हवा करना। वहाँ से समधिन भी लिख भेजती है कि तुम्हारा दुलरुआ मेरा दुलरुआ है मैं दूध पिलाऊँगी और आँचल से हवा करूँगी। इस गीत से यह संकेत मिलता है कि दुलरुआ श्रीवर की आयु कम है अन्यथा इतनी बड़ी बारात के साथ जाने वाले प्रमुख व्यक्ति के प्रति इतनी चिन्ता का कारण नहीं दिखाई देता। इस गीत के चिट्ठी भेजने वाले प्रकरण से इस तथ्य की ओर बरबस ध्यान खिंच जाता है कि चिट्ठी के आवागमन में, विशेष रूप से उस युग में, बहुत समय लगता था जिससे सिद्ध होता है कि श्रीवर अपनी ससुराल में विवाह के बाद टिक जाते थे अन्यथा चिट्ठी प्रकरण का अवसर ही न उठता। यह संभव है कि चिट्ठी की बात माता की चिन्ता को व्यक्त करने का एक सुन्दर काल्पनिक माध्यम हो। [2] विवाह के अन्य गीत

१—हियना ते समधिनि चिट्ठा लिखि भेजा धरयो समधिनि के हाथ
हमरे दुलरुआ का दूधा पियायो अंचरे कै कीन्हो बयारि ।।
हुँअना ते समधिनि चिट्ठा लिखि भेजनि म्वार दुलरुआ कि तुम्हार।
अपने दुलरुआ का दूधा पिअइबे अंचरा कै करिबे बयारि ।।

२—तुम तौ पूता मोरे चलिभ्यो बिआहन मोरे दुधवा का मोलु दीन्हे जाओ।
गैया का मोलु भैंसिया का मोलु माता तुम्हरा मोलु कैसे होय ।।

में वर की निकासी के समय माता अपने दूध का मूल्य माँगती है जिसका भी सांकेतिक अर्थ यह हो सकता है कि पुत्र विवाह करके दूसरे का हो जायगा और उस पर उनका भी अधिकार हो जायेगा जिनके घर वह ब्याहा जायेगा। और ठीक विवाह के बाद से ही जब लड़का एक प्रकार से छुट जायेगा तो माता के मुँह से चेतावनी के ये शब्द सांकेतिक भाषा में निकल जाते हैं। तिस पर पुत्र माँ को आश्वासन देता है कि गाय, भैंस का मोल होता है माता का मोल नहीं होता वह अमूल्य है, और वह अपनी माँ के प्रति अपने कर्तव्यों को निभायेगा।

हिन्दू समाज में विवाह की अनिवार्यता तथा पवित्रता पर विचार किया जा चुका है। समाज में अविवाहित पुरुष की अवगणना होती है और उसे दायित्वपूर्ण व्यक्ति नहीं समझा जाता। किसी भी सामाजिक तथा धार्मिक कार्य में उसे भाग नहीं मिलता। हाँ यदि कोई व्यक्ति अविवहित रह कर पवित्रता के साथ ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करते हुए तपश्चर्या करता है तो उसे सम्मान प्राप्त होता है परन्तु एक सामाजिक पुरुष के रूप में नहीं बल्कि एक तपस्वी के रूप में। कन्या तो अविवाहित रहने की बात सोच ही नहीं सकती। सच तो यह है कि विवाह जैसे महत्वपूर्ण प्रश्न पर सोचने विचारने की योग्यता प्राप्त करने के पूर्व ही माता-पिता उसका विवाह कर देते हैं। मनु का कथन है कि प्रत्येक स्त्री को जीवन पर्यन्त पुरुष का संरक्षण प्राप्त होना ही चाहिए—बचपन में माता-पिता, युवा होने पर पति तथा वृद्धावस्था में पुत्र के संरक्षण में ही उसे जीवन यापन करना चाहिए। इस कथन का समाज में अनजाने भी पालन होता है।

कन्या के लिये न केवल विवाह अनिवार्य है प्रत्युत विवाह के मामले में तथा वर के चुनने में उसकी कोई राय नहीं ली जाती। मैंने पिछले पृष्ठों में कुछ ऐसे गीतों के उद्धरण दिये हैं जिनमें कन्या अपने पिता को विवाह के संबन्ध में अनेक प्रकार की सम्मतियाँ देती है परन्तु यह अधिकार माता-पिता के दायित्वपूर्ण शासन के अन्तर्गत तथा बाल विवाह के साथ-साथ समाप्त हो गया। [1]वयस्क कन्या विवाह के लिये अपने बाबा से कहती है, बाबा वर

१—बेटी सोइ मोई जब जागिये अपने बाबन से बरु माँगिये।
बाबा हाथी चढ़े बरु ढ़ढ़िये, बेटी लरकि कै चढा अटारिया॥
बेटी खिड़की खोलि बरु देखिये।
बाबा एक साध मोरे मन रही।
बाबा हम जो गोरे बर साँवरे।

ढूंढ़ते हैं परन्तु वर साँवला है और कन्या आपत्ति करती है। बाबा इत्यादि परिवार के लोग यह कह कर समझा देते हैं कि गजाधर (भगवान) तथा श्रीकृष्ण साँवरे ही हैं। तुम्हारी आजी गोरी हैं परन्तु बाबा साँवले ही हैं। बाल-विवाह के कारण कन्या का यह अधिकार छिन गया। परन्तु पुरुष को इतना भी अधिकार प्राप्त नहीं है। पुरुष के लिये विवाह एक आवश्यक धार्मिक कृत्य है जो गृहस्थाश्रम का सूत्रपात करता है। पितृऋण से उऋण होने के लिये पुरुष की दृष्टि से सभी कन्याएँ तुल्य हैं। सुन्दर, असुन्दर का प्रश्न इस परमार्थ की दृष्टि से गौण हैं। परन्तु यदि कोई स्त्री सन्तान उत्पन्न करने में असमर्थ है तो पुरुष दूसरा विवाह कर सकता हैं और स्त्री यदि केवल कन्याओं को जन्म देती है तो भी पुरुष पुत्र के लिये दूसरा विवाह कर सकता हैं। अस्तु विवाह में पुरुष के सम्मुख केवल एक ही महत्वपूर्ण प्रश्न होता है और वह है पुत्रोत्पत्ति का जिसकी सिद्धि उसके विवाहित जीवन का चरम लक्ष्य है। मनुस्मृति में इसी सिद्धान्त की दृष्टि से "प्रजनार्थं स्त्रियाः सृष्टाः सन्तानार्थं च मानवाः" के नियम की स्वीकृति की गई है। विवाह इसी महत्वपूर्ण धार्मिक उद्देश्य की पूर्ति का एक साधन है।

हिन्दू-विवाह-प्रथा की एक अन्य महत्वपूर्ण अनिवार्यता पति-पत्नी के अविच्छेद संबंध की है। शास्त्रों ने कुछ परिस्थितियों में पुनर्लग्न तथा नियोग की व्यवस्था की थी परन्तु कुछ ही समय बाद ये अनुज्ञाएँ केवल शास्त्रों तक सीमित रह गईं और समाज में उनका पालन असंभव हो गया। मनु महाराज का निम्नलिखित सिद्धान्त सर्वमान्य हो गया:—

"विशीलः कामवृत्तो व गुणैर्वा परिवर्जितः।
उपचर्यः स्त्रिया साध्व्या सततं देववत्पतिः॥"

अर्थात् पति चाहे सदाचार-हीन हो, चाहे कामी और दुराचारी हो और चाहे गुणहीन हो, सती साध्वी स्त्री को पति की सदा देवता के समान सेवा करनी चाहिए। इस प्रकार विवाह स्त्री और पुरुष का अटूट बंधन है जो जन्मान्तर में भी नहीं टूटता। यही विश्वास वैवाहिक जीवन की सफलता तथा परिवार की अखण्डता का महत्वपूर्ण कारण है। विवाह बंधन किसी भी परिस्थिति में नहीं

बेटी (जनम) करौ मन पछिताव।
बेटी गया गजोधर साँवरे।
बेटी मथुरा के बेनी माधव साँवरे।
बेटी आजी गोरी बाबा साँवरे।

टूट सकता यथार्थ रूप में पति-पत्नी के संबंध में चाहे कितनी भी कटुता क्यो न पैदा हो गई हो।

विवाह संबंधी परम्पराओं के विस्तारों पर गीतों के साथ टिप्पणियाँ जोड़ दी गई हैं जिनसे विवाह के विस्तृत रूप पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। परन्तु यहाँ पर सोहाग देने तथा सोहाग के गीतों में आई एक महत्त्वपूर्ण परम्परा पर विचार कर लेना अधिक समीचीन होगा; प्रातःकाल सोहाग गाती हुई स्त्रियाँ कन्या के साथ गौरहानी नेवतने जाती हैं जो शाम को मण्डप में सज-धज के साथ कन्या को सोहाग देने के लिये आती हैं। परन्तु कन्या को सर्व प्रथम सोहाग, एक सोहागिन धोबिन ही देती है. उसके उपरान्त अन्य सोहागिनें अपनी माँग से सेंदुर लेकर कन्या की माँग में भरती हैं। उस समय भी सोहाग के गीत गाये जाते हैं। सोहाग देते समय विशेष रूप से यह गीत गाया जाता है:—

"चलो चलहु धनूरवा 'अमुक' रामा केरे पासा।
दुलहिन देई का सुहाग मोरी चन्द्र बदनियै लागा
मोरी बाबा-दुलारी के लागा।
हमहूँ का जानतीं सोहाग बरसन लागा।
अरी तम्बोल बरसन लागा॥"

अमुक के स्थान में उस व्यक्ति का नाम लिया जाता है जिसकी पत्नी सोहाग देती है। और जब धोबिन सोहाग देती है तब उसके पति का नाम लिया जाता है। धोबिन के सोहाग देने की प्रथा की विचित्रता पर वर्षों विचार करने पर भी मैं कोई उपयुक्त उत्तर न पा सका। परन्तु लोक-कथाओं का संकलन-कार्य करते समय मुझे एक ऐसी कथा मिली जिससे इस प्रथा पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। मैं सोमा धोबिन की कथा इस विचित्र स्थिति के सुलझाने के लिये दे रहा हूँ। इस कहानी से इस लोक-परम्परा के प्रसार का कारण समझ में आजायेगा। नहीं तो एक ब्राह्मण कन्या जो विवाह की वेदी पर बैठने जा रही है और पवित्र यज्ञ में शामिल होने जा रही है किस प्रकार एक अछूत द्वारा छुई जाने पर भी पवित्र बनी रह सकती है। बसंत पंचमी के दिन भी सोहागिन धोबिन मिट्टी की शंकर पार्वती की मूर्ति लेकर घर-घर जाती है और प्रत्येक घर में सोहागिन स्त्रियाँ गौरा (पार्वती) की पूजा करती हैं। तदुपरान्त धोबिन अपनी माँग से सेन्दुर लेकर सोहागिन की माँग में लगाती है। इस प्रकार ऐसा विश्वास बन गया है कि सोहागिन धोबिन से सोहाग मिलने पर अखण्ड सोहाग मिलेगा। इस अखण्ड सोहाग के लिये स्त्रियाँ अपना

र्वस्व त्याग देने के लिये तैयार रहती हैं। अस्तु सोमा धोबिन की कथा कुछ इस प्रकार है:—

(यह कथा सोमवती अमावस के दिन कही जाती है। यही कथा कुछ अन्तान्तर से 'भविष्योत्तर पुराण' में भी मिलती है। हमारे यहाँ सोमा धोबिन को सोना धोबिन कहते हैं। पुराण में कथा का रूप कुछ इस प्रकार है: कांची-नगर में एक देवस्वामी ब्राह्मण था, जिसके एक पुत्री थी। इस देवस्वामी की स्त्री से किसी भिक्षुक ने यह कह दिया था कि तेरी पुत्री विवाह के समय ही विधवा हो जायगी, परन्तु सिंहल द्वीप में जो पतिव्रता सोमा धोबिन है, यदि वह अपना सोहाग तेरी पुत्री को दे दे तो इसका पति जी उठेगा। विवाह के समय ऐसा ही होता है और सोमा धोबिन अपने पतिव्रत धर्म के बल से उसे जिला देती है।

"एक था ब्राह्मण, उसके यहाँ भिक्षा के लिये आया करता था एक साधू। वह साधू, जब ब्राह्मण की बहू भिक्षा देने आती, तो आशीर्वाद देता सोहाग बढ़े" और जब ब्राह्मण की बेटी भिक्षा देने आती तो साधू कहता, "धर्म बढ़े" कन्या ने माँ से कहा कि साधू आशीर्वाद देने में भेद करता है। माँ ने कहा, 'अच्छा देखूँगी!' दूसरे दिन जब साधू भिक्षा लेने आया तो माँ किवाड़ की ओट से सुनने लगी। साधू ने ज्यों ही आशीर्वाद दिया वह निकल आई और बोली, "स्वामी जी बेटा और बेटी दोनों ही मेरी कोख के हैं, फिर आशीर्वाद देने में आप भेद क्यों करते हैं?"

साधू बोला, "क्या करोगी यह सच जान कर! भिक्षा दो और साधू को जाने दो।"

माँ बोली, "न भगवन, मेरी शंका मिटाए जाइये।"

साधू बोला, "माँ! तुम्हारी कन्या को सुहाग नहीं बदा है। विवाह के समय वह विधवा हो जायगी। परन्तु तुम्हारा पुत्र दीर्घजीवी है; इसीलिये ऐसा आशीर्वाद देता हूँ।"

माँ अकुला कर बोली, "तो प्रभु! इसका कुछ उपाय भी बताइये।"

"उपाय बहुत कठिन है," साधु ने कहा, "तुम्हारी पुत्री कर न सकेगी।"

माँ ने कहा, "सुहाग के लिये स्त्रियाँ क्या कुछ नहीं कर सकतीं? मेरी कन्या करेगी। आप बताइये तो।"

साधु ने कहा, "सोना धोबिन जो उस पार रहती है वह बड़ी पतिव्रता

है। तुम्हारी बेटी को वह सुहाग दे तो मिल सकता है। लेकिन है यह बहुत कठिन।"

माँ ने चिंतित होकर पूछा, "पर यह होगा कैसे ?"

साधु बोला, "यदि तुम्हारी कन्या बारह वर्ष तक बिना भेद भाव के उसके यहाँ नीच से नीच काम करके उसको प्रसन्न कर ले और यदि वह अपना सोहाग तुम्हारी बेटी को दे दे तो उसका पति पुनः जीवित हो सकता है।

माँ अपनी बेटी को लेकर उस पार पहुँची और एक मालिन के यहाँ उतरी। धोबिन के सात बेटे और सात ही बहुएँ थीं जो घर का सभी काम करती थीं। कन्या के सामने यह प्रश्न उठा कि वह करे तो क्या करे। वह सबके सो जाने पर रात में सोना धोबिन के घर जाने लगी और चोर की तरह जाती और पौ फटने के पहले लौट आती। दिन में जाती तो ब्राह्मण-कन्या होने के कारण सोना धोबिन उसकी सेवा कभी भी स्वीकार न करती। वह गधे की लीद फेंकती, सफाई करती, चूल्हा चौका करती, रसोई बनाती।

होते करते बारह वर्ष बीत गये। और सोना धोबिन को पता भी न लगा। कन्या के सामने फिर एक समस्या उपस्थित हुई कि सोना को उसकी सेवा का पता कैसे लगे ? एक रात उसने उलटी पुलटी रसोई बना कर रख दी। खीर में नमक, भात में कंकड़ भर दिये। सुबह जब सोना ने भोजन के लिये मुँह में कौर डाला तो कंकड़, खीर में नमक। अपनी बहुओं को फौरन तलब किया "खाना किसने बनाया है ?" सब ने नाहीं कर दी। सभी ने कहा, "हमने तो बारह वर्ष से खाना नहीं बनाया और न दूसरा ही कोई काम किया।"

सोना ने चौंक कर कहा, "हैं ! ऐसा कौन दुखिया है जो बिना बताये बारह वर्ष तक मुझ धोबिन की सेवा कर रहा है ?"

दूसरी रात सोना ताक लगा कर बैठी। ब्राह्मण-कन्या ने घर में जैसे ही पैर रखा सोना ने लपक कर पकड़ लिया। और पूछा, "कौन हो तुम ? मुझ अन्त्यज की बारह वर्ष तक सेवा करके मुझे नरक में डाल दिया।"

ब्राह्मण-कन्या ने पूरी कथा सुनाई, और सोहाग की भीख माँगी।

सोना बोली, "बेटी, माँग तो बहुत कठिन है परन्तु तुम्हारी सेवा से उद्धार होना भी तो कठिन है। तो जाओ, विवाह रचो तुम्हारे कर्म और अपने धर्म से मैं तुम्हें सोहाग दूँगी।

माँ कन्या को लेकर घर लौटी। विवाह रचा। धूमधाम से भाँवरें हुई।

सातवीं भाँवर के साथ ही कन्या का पति वहीं गिर गया और उसका प्राणान्त हो गया। घर में कोलाहल मच गया।

सोना को चलने में कुछ देर हो गई। उसने अपने सोते हुए पति को कोठरी में बन्द कर दिया और अपने बहू-बेटों से कह दिया कि तुम्हारे पिता चाहे जितना चिल्लायें किवाड़ मत खोलना।

कोलाहल के बीच सोना धोबिन पहुँची। और ज्यों-ज्यों कन्या की माँग में सेन्दूर भरने लगी उसका पति घर की कोठरी में छटपटाने लगा। लड़के, पोते चिल्लाने लगे "बाबा भूत भये, बाबा भूत भये।" और इधर कन्या का पति जीवित होने लगा। अन्त में सोना का पति मर गया और कन्या का पति जी उठा। सोना धोबिन की जै जै कार होने लगी।

परन्तु सोना धोबिन चुपचाप उठकर चल दी। उसके पास कुछ भी न था अतएव उसने १०८ कंकड़ों को चुन कर पीपल के फेरे लगाये। जैसे वह फेरे लगाती जाती थी उसके पति जीवित होते जाते। इधर १०८ फेरे पूरे हुए उधर उसके पति उठ बैठे।

इस प्रकार सोना धोबिन के पातिव्रत से ब्राह्मण-कन्या को सोहाग मिला और अपने बलिदान के पुण्य फल के रूप में उसे भी अखण्ड सोहाग मिला।

यह कहानी अनेक प्रकार से कही जाती है। परन्तु मूल कथा, कन्या को सोहाग देने वाली बात सर्वत्र एक ही है। इस कथा के आधार पर धोबिन से सोहाग लेने की परम्परा पर प्रकाश पड़ता है। विवाह सम्बन्धी इस प्रकार की छोटी-बड़ी अनेक परम्पराएँ हैं जिन पर गीतों के साथ यथा स्थान विचार प्रकट किए गये हैं।

[७]

भोजन सम्बन्धी विशेषताएँ

विवाह की दावतें भी बड़ी लम्बी होती हैं। और उनमें परसी जाने वाली चीजों की एक लम्बी सूची होती है। साथ के एक गीत में भी खाने की चीजों की एक लम्बी सूची दी गई है। पं० रामनरेश त्रिपाठी ने अपनी पुस्तक 'ग्राम साहित्य पहला भाग' में एक गीत दिया है जिसमें भोजन की लम्बी सूची दी है। उस गीत को मैं विस्तार की दृष्टि से उद्धृत करता हूँ :—

"जुगुति से परसौ जी ज्योनार—करि करि कै सत्कार।
पेड़ा, बरफी और अमरिती, खाजे खुरमा घेवर परसौ।
गुपचुप सोहन हलुआ परसौ, कलाकन्द की बरफी परसौ।
मक्खनबरा जलेबी परसौ, पेठा और इन्दरसे परसौ।
बूँदी और बतासे परसौ, खुर्चन और मलाई परसौ।
खोया बालूमाही परसौ, खुरमा लड्डू सबके परसौ।
दालमौठ और मठरी परसौ, तरे तिकोना सबके परसौ।
बूरा मिश्री जल्दी परसौ, रबड़ी दही सभी के परसौ।
सिखरन दूध लाय कै परसौ, पुड़ी, कचौड़ी लुचुई परसौ।
खरी कचौरी सब के परसौ, बेसन बरा पकौड़ी परसौ।
हापड़ के तुम पापड़ परसौ, मालपुआ औ पूआ परसौ।
दाल भात सन्नाटी परसौ, मूँग समूची सबके परसौ।
कढ़ी करायल रायता परसौ, खट्टे मीठे बग परोसो।
सुरभी को घिउ गड्डुअन परसौ, रसगुल्ला रसदार—
जुगुति से परसो जी ज्योनार ॥१॥

सोया मेथी मरसो परसौ, सरसौं औ चौरैया परसौ।
पालक पोय मसूँडे परसौ, मूरी मिरचैं सबके परसौ।
हरी हरी तुम धनिया परसौ, कटहर, बड़हर लौकी परसौ।
कद्दू और करैला परसौ, रायलभेग भाँटा परसौ।
भिण्डी घिया तुरैयाँ परसौ, पेटा की तरकारी परसौ।
आलू और रतालू परसौ, पृथ्वीकंद चँचेड़ा परसौ।
अदरख की तरकारी परसौ, केला की तरकारी परसौ।
धनिया की तुम चटनी परसौ, बथुआ की तरकारी परसौ।
पोदीना की चटनी परसौ, छिटिक गलका अमरस परसौ।
आम अचारी सूखा परसौ, दाख मुरब्बा सबके परसौ।
अदरख कमरख सबके परसौ, सभी खटाई सबके परसौ।
हा हा करि के जल्दी परसौ, सत्य भाव से सबके परसौ।
करि करि के सत्कार, जुगुति से परसौ जी ज्योनार ॥२॥

सिलहट की नारंगी परसौ, फरुखाबादी मिठवा परसौ।
सेवतूत सहतूत चिरौंजी, चिलगोजा अखरोटन परसौ।

प्रागराज की एकड़ी परसौ, गरी छुहारे पिस्ता परसौ।
नरम मखाने सबके परसौ, खिन्नी और लुकाठन परसौ।
अनन्नास अंगूरन परसौ, किसमिस आम टिकारी परसौ।
नौधा और तरबूजा परसौ, चपटा और मलदहा परसौ।
मोहनभोग बम्बई परसौ, गोला आमुनि जामुनि परसौ।
खरबूजा तुम सबके परसौ, सोया हिंगहा जोगिया परसौ।
देसी आम सबी के परसौ, कंचन भरि भरि थार।
परोसौ सब तन बारम्बार, जुगुति से परसौ जी ज्योनार ॥३॥

गंगाजल जमुना जल परसौ, नदी नरवदा को जलु परसौ।
सरजू का जलु सबके परसौ, सिंधु सुरसुती को जलु परसौ।
कावेरी कृष्ना जलु परसौ, मानसरोवर को जलु परसौ।
नदी गँभीरी को जलु परसौ, फलगू महानदी को परसौ।
ठण्डे जल सब ही के परसौ, हा हा करि करि सबके परसौ।
विनती करि करि भोजन परसौ, हाथ जोरि कै सबके परसौ।
प्रेम प्यार करि सबके परसौ, छोटे-बड़े सबी के परसौ।
आदर करि करि सबके परसौ, समधी लमधी के ढिंग परसौ।
चारौं भाइन के ढिग परसौ, गुरु वशिष्ट तर जल्दी परसौ।
ऋषि मुनियों तर जल्दी परसौ, सबै देवतन के ढिंग परसौ।
हाथ धुवावौ पान खवावौ, आभूषण बस्तर पहिरावौ।
जनवासे सबको पहुँचावो, करि करि वाहन तैयार।
गाँवैं तुलसीदास गँवार, जुगुति से परसौ जी ज्यौनार ॥४॥

पं० रामनरेश त्रिपाठी ने आशंका प्रकट की है कि संभव है कि यह गीत किसी चतुर के गवारपन का परिणाम हो, सही मालूम होती है। यह गीत बहुत नया और लिखकर बनाया हुआ है और इसकी मौखिक परम्परा मुझे बिलकुल नहीं मालूम देती। लोकगीतों की भाँति इसे कहीं गाया जाता है और स्त्रियाँ सभी विस्तार याद रखती हैं, असंभव प्रतीत होता है परन्तु मैंने इस गीत का उल्लेख केवल इसलिये किया कि इसमें खाने की चीजों के विस्तार हमें एक स्थान में उपलब्ध हो जाते हैं। छप्पन प्रकार के व्यंजनों की चर्चा गीतों में की जाती है परन्तु यहाँ इस गीत में वे सभी विस्तार प्राप्त होते हैं। यह ठीक है कि इस गीत में गिनती गिनाने का प्रयत्न और दावत खिलाने का उत्साह अधिक है परन्तु इसकी घोषणा ढपोरशंख की

घोषणा की भाँति थोथी ही प्रतीत होती है। इसमें कोई संदेह नहीं कि विवाह की दावतों में अधिक से अधिक व्यंजन परोसने की भावना रहती है और लगभग आध पौन घंटे तक एक के बाद दूसरा और दूसरे के बाद तीसरा व्यंजन क्रम से बँधा चला आता है और भोजन करने वाले के धैर्य की परीक्षा हो जाती है। विस्तार एवं वैभव प्रदर्शन की यह भावना गरीब लोगों के लिए आर्थिक दृष्टि से विनाश का कारण बन जाती है क्योंकि झूठी मान-मर्यादा के संरक्षण के लिये इन सभी चीजों के प्रबन्ध करने के लिये कर्जदार बनना पड़ता है। बिरादरी में नककटी से बचने के प्रयत्न में अपने परिवार की गरदन ही काट डालते हैं। सामाजिक समृद्धि के पीछे व्यक्तिगत हीनता तथा दरिद्रता का इतिहास ही हमारे समाज का यथार्थ चित्र है। विवाह में किये जाने वाले प्रदर्शन में हमारे समाज का सबसे बड़ा झूठ छिपा हुआ है।

[८]

वस्त्राभूषण तथा अन्य शृङ्गार-प्रसाधन

वस्त्राभूषण तथा अन्य शृङ्गार-प्रसाधनों में भी अत्यधिक विस्तार दिखाई देते हैं। इन गीतों में वस्त्राभूषणों के सभी प्रकार उपलब्ध नहीं हैं केवल उन्हीं वस्त्राभूषणों तथा शृंगार-प्रसाधनों का उल्लेख मिलेगा जो विशेष होंगे और जिनकी चाहना की जाती है जो साधारणतया प्राप्त नहीं होते। [1]छठी के एक गीत में सेन्दुर की टिकुली अथवा बिन्दी, आँखों में काजल की सुरेख, सोने के आभूषण तथा मोतियों के हार को विशेष महत्व दिया गया है। [2]साध के एक गीत में गर्भवती स्त्री अपने पति से तिलरी लेने की साध प्रकट करती है साथ ही चुनरी के लिये भी कहती है। [3]खिचड़ी शीर्षक से दिये गये साध

१—टिकुली तो नीकी सेन्दुर केरी सुरखी कजर केरी।
गहना तो नीक सोने केरा, हार मोतिन केरा रे॥

२—पलकी के राते माते दुइ जने मतु जो मतति हवैं रे।
हे राजा हमका तिलरी के साध तिलरी हम लेबे, चुनरी हम लेबे।

३—हमका तो रे गहना के साध, अब कुछ गहना चाहिए।
कँकना तो रे ढाके ते मँगावो ऊपर पहुँची यों बनी।
राजा छल्ला मुदरिया यों बनो, हथफूल गलफूल यों बने।
राजा छन्नी पछेला यों बने, राजा तैता औ बाँके यों बने।
राजा पट्टी बजुल्ला यों बने, हार औ कठिया यों बने।

के गीत में गर्भवती स्त्री अपनी गहनों की साध को अपने पति के समक्ष प्रकट करती है। ढाके के बने कंगन, पहुँची, छल्ला, मुंदरिया, हथफूल, गलफूल, छन्नी, पछेला, तैता, बाँक, पट्टी, बजुल्ला, ढार, कटिया, झुमका, बारी, बेंदी, नथ, लटकन, गुलूबन्द, कण्ठा, नेकलेस, हार, कमर की पेटी, पैर के छागल, झाँझें, लच्छी, कड़ा, छड़ा, बिछुआ इत्यादि आभूषणों की माँग इस गीत में प्रकट की गयी है। अनेक गीतों में 'सोलहौ सिंगार' (सोलह शृंगार) की बात कही गयी है परन्तु वास्तव में यहाँ सोलह से भी अधिक आभूषणों का उल्लेख किया गया है। इन सभी गहनों को पहन कर दुलहिन जब पालकी से 'छुम छुम' करती हुई उतरती है तो सारे गाँव में बिजली-सी कौंध जाती है और सारे गाँव की स्त्रियाँ (दुलहिन का आभूषण अधिक) दुलहिन देखने के लिए एकत्र हो जाती हैं।

वस्त्रों की सूची इतनी लम्बी नहीं है। चुनरी की चर्चा तो तिलरी के साथ की जा चुकी है। [1]इसके अतिरिक्त खिचड़ी के गीत के कुछ अन्य विस्तार भी उपलब्ध हैं। अतलस का लहँगा, दुपट्टा, लाल चादर, कुर्ता, फतुही, बनारस की साड़ी तथा जम्पर और ब्लाउज की माँग इस गीत में की गई है। साल-दुसाले की चर्चा तो अनेक गीतों में हुई है। कुछ गीतों में लहर-पटोर का उल्लेख हुआ है। पेरी (पीली साड़ी) की चर्चा तो पेरी के गीतों में उसके महत्व के साथ की गयी है।

अन्य सौन्दर्य-प्रसाधनों में न तो वास्तविक जीवन में कोई विशेषता है और न गीतों में। [2]शरीर को स्वच्छ तथा कान्तिवान बनाये रखने के लिए

राजा झुमका औ बारी यों बने, राजा माथे की बेंदी यों बना।
राजा नकबेसरिया यो बनी बोहि पर लटकन यों बना।
राजा गले है गुलूबन्द यों बना, राजा गरे है कण्ठा यों बना।
राजा निकलिस हरवा यों बना राजा कमर की पेटा यों बनी।
राजा पैर की छागल यों बनी राजा झाँझें औ लच्छी यों बनी।
राजा कड़ा औ छड़ा यों बने राजा पाँव के बिछुआ यों बने।

१—हमका त रे सलोने राजा कपड़ा के साध, अब कुछ कपड़ा चाहिए।
लहँगा तौ रे, अतलस का मंगवाऊँ, पर दुपट्टा यों बना।
राजा लाल चदरिया यों बनी, कुर्ता फतुही यों बनी।
सारी तौ रे बनारस से मँगावो; जम्फर ब्लाउज यो बना।
२—नाउनि बिटिया उबटहि चुपरहि बहै डारे मूँडे तेलु

उबटन की प्रथा है। [1]परम्परा रूप से छरपुरिया के उबटन का प्रचलन है, जिसे वर की माँ तैयार करती है और जो बारात के साथ जाता है। यही छरपुरिया का उबटन कन्या के लगाया जाता है। कन्या जब अपनी ससुराल पहुँच जाती है तब भी लगभग एक मास तक छरपुरिया का उबटन लगाया जाता है। सौन्दर्य प्रसाधन केवल सुहागिन के लिए ही हैं। हमारे समाज में कन्या का शृंगार अच्छी निगाह से नहीं देखा जाता और विधवा के तो स्वभाविक सौन्दर्य साधन केशों को भी काट दिया जाता है. शृंगार का प्रश्न ही नहीं उठता। किसी भी स्त्री का सबसे महत्वपूर्ण सौन्दर्य प्रसाधन सेन्दुर है जो न केवल शृंगार का साधन है प्रत्युत सोहाग का प्रतीक है। [2]सेन्धौरा वरपक्ष से चढ़ाव के साथ जाता है जिसमें सिन्दूर होता है। काँच की काली चूड़ियाँ भी चढ़ाव में जाती हैं और चतुर्थी के दिन 'जोरा' लाख की चूड़ियाँ पहनाई जाती है। चूड़ियाँ भी सोहाग का चिह्न है। पावों की उंगलियों में बिछुओं का पहनना भी सोहागिन के लिये आवश्यक है। नाक में नथ, आजकल कील का पहनना भी सोहागिन के लिए आवश्यक है। इस प्रकार के बहुत सौन्दर्य के प्रसाधन तथा वस्त्राभूषण सोहागिन के अनिवार्य आभरण बन गये हैं। दाँतों में मिस्सी का भी उल्लेख मिलता है। सवर्णों में तो नहीं परन्तु अन्य जातियों में [3]गोदना का विशेष प्रचार है। गरीबी में अनेक वस्त्राभूषण के अभाव में गोदना एक महत्वपूर्ण शृंगार-प्रसाधन है।

पुरुषों की परम्परागत पोशाक के भी कुछ उल्लेख प्राप्त हैं। परन्तु जिस पोशाक का उल्लेख गीतों में हुआ है वह विवाह जैसे उत्सव के अवसर पर गाये जाने वाले गीतों में ही हुआ जो असाधारण पोशाक होती है। बनरा के गीतों में भीवर के सारे रूप का नखशिख वर्णन प्राप्त होता है। मौर, सेहरा, मोतियों की माला, सुरमा, पान, जामा, पटुका तथा जूता और मोजों का उल्लेख बनरा के गीतों में मिलता है। अब हाथ-घड़ी की भी चर्चा होने लगी है। विवाह के समय नाखुर करके भीवर के पाँवों में भी महावर लगाया

१—"मातु कौसिल्ला छरपुरिया बनावहिं महकति चलै बरात।"
(छरपुरिया में छराला, कचूर और हल्दी विशेषरूप से होती है। उन सभी चीजों को तेल में भून कर तथा पीसकर जौ के आटे में मिलाकर उबटन के रूप में लगाया जाता है। इस उबटन के लगाने से शरीर में कान्ति आ जाती है और शरीर सुवासित हो जाता है।)

२—कन्या सेन्धौरा लीन्हे ठाढ़ि री बन्ना मँडये आये।

३—गोदनहारी लीका गोदियो सँभारि के।

जाता है। सुहागिन स्त्रियों के लिये तो महावर लगाना बहुत ही आवश्यक है। यहाँ तक कि स्त्रियाँ अन्य अनेक उत्सवों पर भी पाँवों में महावर लगाती हैं। मेंहदी लगाने की भी प्रथा है। स्त्रियाँ हाथों और पाँवों में विशेष रूप से सावन महीने में लगाती है।

[६]

धार्मिक भावना

ग्रामीणों में, वह भी स्त्रियों में, धर्म-भावना अंधविश्वास की कोटि तक पहुँच जाती है अतएव उनके साथ किसी एक विशिष्ट इष्टदेव की पूजा की चर्चा करना उनकी धर्म-सहिष्णुता का अवमूल्यन होगा। उनके हृदय में वेद, धर्मशास्त्र, पुराण तथा लोक परम्परागत देवी-देवताओं के प्रत्येक रूप को पूजा का भाव प्राप्त है। उन अनेक डीहों, पत्थरों तथा कब्रों को भी उनकी पूजा मिल जाती है जिनके संबंध में एक बार भी अदृश्य शक्ति की चर्चा हो जाती है अथवा भूले से भी सेन्दुर की छाप लग जाती है। नदी, तालाब तथा वृक्षों की पूजा तो निश्चित अवसरों तथा दिनों में होती ही रहती है। वृक्षों में बरगद, पीपल, नीम, आँवला, तुलसी इत्यादि की पूजा तो बहुत ही साधारण बात है। तुलसी का पौधा तो प्रत्येक घर में मिलेगा। पशुओं की पूजा भी गाँवों में एक साधारण घटना है। बैल, गाय, साँप इत्यादि जानवरों की विस्तृत पूजा होती है। यहाँ तक घूर बाबा की भी पूजा होती है। इन गीतों में जिनका संकलन इस पुस्तक में प्रस्तुत किया गया है विशेषरूप से देवी माँ का उल्लेख मिलता है। इन देवियों में से दुर्गा तथा शीतला देवी का विशेष महत्व है और उनकी अपरम्पार माया का गहरा प्रभाव है। अनेक गीतों में सतमाता का उल्लेख हुआ है। इस प्रकार से अनेक गीत हैं जिनमें माँ के सम्बोधन से गीत गाये जाते हैं और जिनसे पुत्र, अन्न, धन की माँग की जाती है। प्रत्येक शारीरिक, आर्थिक संकटों से मुक्त रहने के लिए इन देवियों की पूजा होती है। भवताप हरण करने वाली देवियों की पूजा और अन्न, धन, पुत्र तथा स्वास्थ्य प्राप्ति के लिये मनौतियाँ पाने वाली देवियों की प्रतिष्ठा, ऋग्वेद काल की संस्कृति को ही परिलक्षित करती हैं जबकि ईश्वर से पुत्र भूमि, अन्न, भवन, रथ इत्यादि की कामना की जाती थी। यद्यपि तात्विक परब्रह्म की कल्पना का प्रभाव यहाँ नहीं मिलेगा परन्तु विरोधी सम्प्रदायों के इष्टदेवों का सुन्दर समन्वय लोक-भावना में ही मिलेगा। किसी का भी

ईश्वर उनका अपना है और उसका कोई भी रूप क्यों न हो हमारे ग्राम-समाज को, विशेष रूप से स्त्रियों को स्वीकार है। जहाँ एक ओर देवी देवताओं की विभिन्नता तथा अनेकता में अपरिसीम अस्तव्यस्तता मिलेगी वहीं उस अनेकता तथा अस्तव्यस्तता में एक प्रगाढ़, अटूट तथा अखंड श्रद्धा, आस्था का भाव मिलेगा जो शायद अद्वैतवादी साधक के लिये भी आकाश-कुसुम हो। उनकी दृष्टि में सभी ईश्वर हैं और सर्वत्र ब्रह्म विद्यमान है। रूपों की विचित्रता तथा अनेकता में उनका भाव नहीं रमता उनकी आस्था तो है उस परम शक्तिशाली ब्रह्म में जो किसी भी विशेष देवी देवता के माध्यम से प्रभावपूर्ण हो सकता है, जो प्रकृति के किसी भी रूप व्यापार में प्रकट हो सकता है बल्कि होता रहता है। यदि ऐसा न होता तो किस प्रकार उसी गहन श्रद्धा तथा निष्ठा से वे वृक्षों, पशुओं, खण्डहरों, घूरों तथा पत्थरों की पूजा करते जिस प्रकार वे साक्षात भगवान की पूजा करते हैं ?

यह ठीक है कि उनमें ज्ञानाभाव है और उनकी पूजा अर्चना स्वार्थ सिद्धि की आकांक्षा से प्रेरित होती है परन्तु फिर भी उनके बहुदेववाद में एकेश्वर की ही निश्छल भावना है। उनके मन में ईश्वर के रूप के आधार पर कोई न तो विरोध ही है और न संघर्ष। परम शक्तिशाली अविनाशी ब्रह्म प्रत्येक रूप में पूज्य है और किसी भी रूप में उनकी पूजा सार्थक। यही भावना देवी-देवताओं में अनेकरूपता के होते हुए भी ग्राम-समाज में संघर्ष की भावना जन्म नहीं ले पाती और हिन्दू देवी-देवताओं की शक्ति को मानते हैं।

लोक-कथाओं में ग्रामीण धर्मभावना का विशद रूप प्राप्त होता है अनेक प्रकार के रोचक उदाहरण भी उपलब्ध हैं। उन अनेक प्रकार की लोक-कथाओं को लेकर, जिनका मैंने संकलन किया है, ग्रामीण धर्म-भावना और समाज-रचना पर स्वतन्त्र रूप से एक प्रथम पुस्तक में विस्तृत विवेचना कर रहा हूँ। आशा है कि उस पुस्तक को शीघ्र ही प्रकाश में ला सकूँगा। विस्तारों की विविधता तथा विशदता की दृष्टि से इस विषय का स्वतन्त्र अध्ययन अत्यधिक आवश्यक है।

फिर भी गीतों में प्राप्त कुछ संकेतों के आधार पर धार्मिक भावना के रूप तथा आलम्बनों पर संक्षेप में विचार कर लेना अनुचित न होगा। अवधी क्षेत्र में राम से सम्बन्ध रखने वाले गीतों की संख्या का अधिक होना बिलकुल स्वाभाविक है। राम की पूरी कथा अवधी लोक-गीतों में उपलब्ध है। इस

लोक-रामायण के अनेक रूप हैं। जिस प्रकार गोस्वामी तुलसीदास ने अनेक छन्दों में रामकथा पदशैली, भजनशैली तथा बिरहाशैली में प्राप्त है। राम की दिनचर्या भी लोक-शैली में सुन्दर रूप से प्रस्फुटित हुई है। [1]बिआरी, [2]अँचवन, [3]खरिका, [4]पान-बीड़ा, [5]विश्राम इत्यादि का विस्तृत चित्रण मिलता है। उनका विश्वामित्र के साथ जनकपुर-गमन, अहिल्योद्धार, फुलवारी में सीताराम की भेंट, धनुषभंग, विवाह, बारात, बाती मिलाना, देवीरूप में जूता पूजना, कंगन छोरना, तथा बारात की विदाई, घर आने पर परछन, राज्याभिषेक, वनगमन, जानकी को बन में चलने के लिये राम की सीख; जानकी का आग्रह, गंगापार करना, कौशल्या-विलाप, स्वर्ण मृग, सीता हरण, रामशोक, लक्ष्मण को शक्ति का लगना, राम-रावण युद्ध और विजयी होकर सबका अवध आगमन इत्यादि राम-कथा की महत्वपूर्ण घटनाओं पर अनेक गीत उपलब्ध हैं। यह तो हुआ राम-कथा का रूप जो लोकगीतों के रूप में प्रचलित है। इसके अतिरिक्त सैकड़ों गीतों में अपने पुत्र में राम के गुणों का आरोप करते हुए पुत्र की प्रशंसा की गई है और राम का आदर्श समाज के समक्ष प्रभावपूर्ण रूप से प्रस्तुत किया गया है। अपने पुत्र को रामनाम देकर उसके सुशील होने की आशा की गई है। [6]राम-जैसा पति, लक्ष्मण-जैसा देवर, दशरथ-जैसे ससुर तथा कौशल्या ऐसी सासु पाने की उत्कट इच्छा

१—बिआरी के कारन सिया रघुबीर कौसिल्ल बोलि पठायो जी।

२—अँचवन करो राम रघुबीरा।
सुन्दर जल सरजू को सिया भरि लाई, सरजू जल नीरा गंगा जल नीरा।

३—जेइ जूँठि अँचवन हरि कीन्हयो खरिका इन्द्र सँवारी जी।
(खरिका— दाँत खोदकर मुँह साफ करने का तिनका)

४—बीरी देओंगी लगाय नागर पान की।
हरे-हरे पान मोतिन को चूना ऐसी लगाई बड़े मान की बीरी।

५—उनिंद नैन रतनारे भरे रामा सोउनार चले अब।
उज्जल अति कचन की थारा दीपकु राखेन बारी।

६—एकु माँगन सीता माँगे जो सीता माँगे पावें।
सोता माँगे अयोध्या के राज सरजू जी के दरसन।
दूसर माँगन सीता माँगे जो सीता माँगे पावें।
सासु माँगे कौसिल्ला ऐसी सासु ससुर राजा दसरथ।
तीसर माँगन सीता माँगे जो सीता माँगे पावें।
बर माँगें भगवान, देवर राजा लछिमन।

विवाह के समय कन्या के मुँह से प्रकट होती है और कन्या को सीता माना जाता है। राम के अनुसार कार्य करके समाज को सुन्दर मार्ग पर चलने के लिये अवधी लोक-गीतों में पर्याप्त सामग्री है। एक अन्य गीत में जब पिता वर ढूँढ़कर लौटते हैं और कहते हैं कि मैंने अनेक नगर छान डाले परन्तु तुम्हारे उपयुक्त वर नहीं मिला तब कन्या कहती है [1]अयोध्या नगर में दो वर हैं एक राम दूसरे लक्ष्मण।

इस प्रकार अनेक स्थानों में राम को आदर्श वर के रूप में प्रस्तुत किया गया है और [2]अनेक स्थानों में राम के द्वारा और दशरथ, कौशल्या तथा लक्ष्मण के माध्यम से लोक-परिवार का रूप प्रस्तुत किया गया है। सरिया, सोहर में अनेक स्थानो पर रानी के राजाराम हैं और लक्ष्मण देवर, [3]दशरथ और कौशल्या ससुर सासु के रूप में प्रस्तुत किये गये हैं। सच तो यह है कि राम हमारे लोकगीतों के नायक हैं और सीता नायिका उनके परिवार के लोग हमारे संयुक्त परिवार का प्रतिनिधित्व करते हैं। इनके माध्यम से लोक-रूप को प्रकट किया गया है। अस्तु, राम भगवान होते हुए भी उनसे दूर नहीं हैं—आदर्श होते हुए भी अप्राप्य नहीं हैं।

कृष्ण संबंधी गीतों की संख्या भले ही इतनी विशाल न हो परन्तु उनके प्रति भक्तिभाव में किसी प्रकार की कमी नहीं है। परन्तु कृष्ण का बालरूप तथा लीला रूप ही अधिक लोकप्रिय हुआ। बारहमासा, में कृष्ण के वियोग में वियोगिनी गोपियों की मनोव्यथा तथा होली के गीतों में प्रणय-क्रीड़ा का विस्तृत चित्रण हुआ है। विवाह की गालियों में कृष्णावतारी गालियों की

१—नग्र अयोध्या मा दुइ वर सुन्दर एकु लाछमन एकु राम।

२—अगिले के घोड़वा रामचन्द्र पछिले लखन लाल
पछिले भरत जी उलल बछेड़वा सत्रुहन रामा
दाई माई लेन चले मेरे लाल॥

३—राम चले हैं ससुररिया सितला देई के नैहर रे।
मोरी नग्न अयोध्या उजारि राम ससुरारी गे है रे।
दसरथ चिट्ठी लिखि भेजें जनक जी बाचैं।
मोरे राम का दिहो पठवाय अजोध्या मोरी सूनी।

संख्या विशाल है।[1] गोवर्धन धारण लीला, [2]सुदामा के माध्यम से दैन्य भाव, [3]गोपिकाओं के माध्यम से छेड़खानी, [4]और राधा तथा ऊधो से संदेश-वाहक के द्वारा विप्रलम्भ-श्रृंगार का सुन्दर चित्रण इन लोकगीतों में मिलेगा। और अवधी लोकगीतों में भी लोक-नायिकाएँ मुरली मनोहर के वियोग में बिना पानी की मछली की भाँति [5]तड़फती हैं और राधा की भाँति आज भी कृष्ण की राह देख रही हैं। [6]बालरूप में श्रीकृष्ण राधा को छेड़ते भी हैं और गोपियों की शिकायत भी करते हैं। और उनकी माँ उन गोपियों को डाँटती हैं। कहती हैं तू तो तरुणी है और गिरधारी तो बालक है, तेरी बाँह कैसे पकड़ेंगे ? गिरधारी आँसू बहा-बहा कर रो रहे हैं तू मुस्करा रही है। गोपी यशोदा की आलोचना करती हुई कहती है जसोदा को न्याय करना नहीं आता।

१—ब्रज मा महा घटा घन घेरो।

+ + + +

एतना सुनि जसुदा के नन्दन गोबर्धन तन हेरो।
लेत उठाय बाँयें कर नख ते लीन्ह उखेसे।

२—मैं तुम्हरे भरोसे गिरधारी।
दुर्बल गात सुदामा आये पूछत उनके नारी।
हरि अस मित्र तुम्हारे स्वामी हुआ न गयो पठैहारी।

३—तुम्हरे तो गिरधर बन बन घूमैं धरे मुँह मा मुरली।
भुज मोरी पकरैं चीर मोर फारैं फोरि डारत गगरी।

४—ऊधो काह करब लै पाती।
जब तन देखा मदन गोपाला बिरहा जरै मोरी छाती।
प्राण रहैं सो बोई हरि लैगे रहिगे मदन बराती।

५—दुइ नैना दरसन का कल्पैं जैसे मान बिना पानी।
जाको ब्रह्म ध्यान धरति हैं सोई राधारानी।

६—हमरे गिरधारी ते काहे का लड़ी।
चलु माय हम तुम ते बतावौं जौनी हमते झगड़ी।

+ + +

त्वै तरुनी ढोठा गिरधारी कैसे भुज पकरी।
बहै-बहै अँसुवन गिरधर रोवैं त्वै मुसक्यात खड़ी।
भली जसोमति न्याउ न जानति सुत की ओर करी॥

अपने बालक का ही पक्ष ग्रहण करती हैं। [1]एक होली-गीत में सभी गोपियों ने मिलकर कृष्ण को पकड़ कर औरत बनाया है और उन्हें नचा रही हैं तथा उन्हें चिढ़ाती हैं कि अब तुम्हारी चतुराई कहाँ गई, अब नन्द-जसोदा कहाँ गये जो आकर तुम्हें छुड़ा लें ?

इस प्रकार राम और कृष्ण को लोक-परम्परा ने पूरी तरह से अपना लिया है और जीवन के अनेक व्यापारों में उन्हें सम्मिलित कर लिया है। राम और कृष्ण के प्रति श्रद्धा और भक्ति भाव तो है ही परन्तु यह भाव इतना साधिकार प्रकट किया गया है कि राम और कृष्ण का भगवान रूप सर्वत्र प्रकट नहीं होता और न उनके प्रति भयपूर्ण सम्मान का भाव ही मिलता है। राम और कृष्ण तो जनमन में ऐसे घुलमिल गये हैं कि वे जननायक के अतिरिक्त और कुछ नहीं प्रतीत होते। देवताओं का सा प्रभुत्व, वैभव तथा आतंक के भाव का राम और कृष्ण में अभाव है। लोक-मन में उनके प्रति पूर्ण मैत्री का भाव है जिनसे किसी प्रकार का दुराव-छिपाव नहीं है। गाँवों में राम और कृष्ण के मन्दिरों का अभाव है इसलिए भी उनके प्रति प्रेमभाव में आतंक और भय का अभाव है।

परन्तु प्रत्येक गाँव में महादेव अथवा शंकर का मन्दिर अवश्य मिल जायगा। और शंकर का भोलानाथ तथा अवढरदानी का रूप ही अधिक ग्राह्य है। शंकर के साथ राम और कृष्ण वाली मैत्री नहीं है। उनके प्रति भयमिश्रित भक्ति की भावना की विशेषता है। शंकर के प्रति अपने व्यवहार को सम्मानपूर्ण रखने का सतत प्रयत्न मिलता है क्योंकि शंकर भगवान बहुत शीघ्र प्रसन्न हो जाते हैं तो शीघ्र ही रुष्ट भी हो जाते हैं। अतएव शंकर भगवान से किसी प्रकार की छूट नहीं ली जाती। शंकर भगवान के प्रति मर्यादापूर्ण आचरण अनिवार्य रूप से मिलेगा। शंकर को लेकर क्रीड़ा तथा लीला का रूप नहीं रचा जाता। सच तो यह है कि लोक-मन में शंकर ही

१—भला ब्रज मा हरि होरी मचाई।
राधा सान दियो सखियन को झुण्ड-झुण्ड उठि धाईं।
लपटि झपटि गईं श्याम सुन्दर के परबस पकरि लै आईं।
लालजी का नाच नचाई।
छोरि लियो मुख मुरली पीताम्बर सिर चुनरी ओढ़ाई।
बेंदी भाल नयन बिच काजर नकबेसर पहिराई।
मानो नई नारि बनाई।— इत्यादि।

पूर्ण ईश्वर के रूप में विराजमान हैं; उन्हीं की सबसे अधिक प्रभुता तथा महत्व है। हाँ, उनके भंगड़ रूप को लेकर गाँवों में अच्छा विनोद रहता है तथा उनके गणों के आधार पर पर्याप्त हास्य की उत्पत्ति होती है। शंकर-पार्वती अपने विमान में चढ़े हुए सदैव ही घूमा करते हैं और पार्वती प्रत्येक दुखिया के दुख को दूर करने के लिए शंकर से आग्रह करती रहती हैं और अन्ततोगत्वा उस दुखिया का दुःख दूर होता है। सैकड़ों लोककथाओं में शंकर पार्वती के इस रूप की चर्चा की जाती है। स्त्रियाँ तो वर्ष में अनेक अवसरों पर मिट्टी अथवा बेसन की महादेव पार्वती की मूर्तियाँ बना कर उन्हें पूजती हैं तथा व्रत करती हैं। अखतीजों में हरतालिका का कठिन निर्जला व्रत इन्हीं को प्रसन्न करके अखंड सौभाग्य प्राप्त करने के लिए करती हैं। विवाह में सेरवा में बेसन के शिवपार्वती बनाये जाते हैं और वे बारात के साथ जाते हैं और कन्या के यहाँ मण्डप में स्थापित किये जाते हैं। उनकी पूजा होती है और विवाह हो जाने पर फिर पालकी में ही बैठ कर दुलहिन के साथ पुनः लड़के के घर आ जाते हैं। [1]कन्या के विवाह में एक गीत में शंकर भगवान स्वयं कैलाश से उतर कर आते हैं और नारियल लेकर आते हैं। उनके साथ पार्वती जी भी बन्दन (कलावा) लेकर आती हैं और कन्या के हाथ में बन्दन देकर पार्वती वापिस जाती हैं। इस प्रकार शंकर पार्वती की कृपा से विवाह सम्पन्न होता है और वर-वधू का सारा जीवन इनके आशीर्वाद से सफल होता है।

प्रत्येक कार्य को निर्विघ्न सम्पन्न करने के लिए सर्वप्रथम गणपति की पूजा होती है। कोई भी अनुष्ठान गणेश जी की पूजा के बिना नहीं हो सकता। गणपति पूजा का प्रचलन जितना महाराष्ट्र में है उतना तो अवध प्रदेश में नहीं है परन्तु फिर भी भादों में गणेश चौथ के दिन गणपति की विशेष रूप से पूजा होती है। दीवाली की रात भी गणपति की पूजा होती है यद्यपि वह लक्ष्मी की पूजा का दिन है।[2] एक गीत में गणपति से आनन्द-

---

१—कैलास ते उतरे महादेव दस हाथ नरियरा लै चले।
सेजिया ते उतरीं गौरा देई बन्दन कैरै बिटिया हाथ।
बेटी लड़ी लड़ी का दइ चलीं बन्दन करो बिटिया हाथ।

२—आवति हैं गनपति, अनन्द करौ।
गंगा नाचैं जमुना नाचैं औ नाचैं सुरसुति।
खोलि जटा सिव शंकर नाचैं औ नाचैं पारवती।
बोध बोंधारे गनपति नाचैं औ नाचैं भगवती।

प्राप्ति की माँग की गई है।[1] नाखुर के गीत में प्रथम सरस्वती तथा गणपति के चरणों में पूजा समर्पित की गई है। इसी में सरस्वती-पूजा का उल्लेख हुआ है। वसंतपंचमी के दिन तो सरस्वती की ही पूजा होती है।

इन्द्र वर्षा के देवता हैं जिनसे पानी बरसाने अथवा न बरसाने की प्रार्थना की जाती है। गोवर्धन-धारण की कहानी तथा गोवर्धन-पूजा के द्वारा इन्द्र के महत्व को कम करने का प्रयत्न किया गया है परन्तु फिर भी लोगों के मन में इन्द्र का महत्त्व अक्षुण्ण है।[2] बरुआ-गीत में इन्द्र से प्रार्थना की जाती है कि वे कृपा कर आज न बरसें क्योंकि आज रामचन्द्र जी का जनेऊ है।[3] एक अन्य गीत में इन्द्र बादलों को बरसने के लिये आज्ञा देते हुए दिखाई देते हैं और कहते हैं कि गोकुल आज बचने न पाये उसे जम का डेरा बना दो।

भारतवर्ष में हनुमान की पूजा बड़े विस्तार के साथ होती है। उत्तर भारत के प्रत्येक शिव मन्दिर में हनुमान की मूर्ति मिलती है जो दीवार पर गीले सेन्दुर से रँगी रहती है। दक्षिण में सैकड़ों मारुति मन्दिर हैं। हनुमान की पूजा रामभक्त के रूप में होती है। देवता के रूप में नहीं; तथापि उनको भी देवताओं की भाँति ही पूज्य माना जाता है। हनुमान की भक्ति से अथवा उनकी प्रसन्नता से रामकृपा प्राप्त हो जाना सरल हो जाता है।[4] हनुमान का भक्त रूप देवी के गीतों में भी समाविष्ट हो गया है और अन्य लंगूरों अथवा

१—आदि शारदा गनपति चरन मनाइये।

२—इन्द्र घटा घन घेरिये इन्द्रि बरसन आये हैं हो।
अथैयाँ ते उठिले राजा दसरथ राजा दोनों कर जोरिहिं हो।
हाथ जोरि विनती करौं सुनौ इन्द्र विनतिउ हो।
आज दिवस जनि बरसौ मोरे बरुआ रामचन्द्र होई।

३—ब्रज मा महा घटा घन घेरो।
इन्द्र ने हुकुम दिया मेघन को ब्रज ऊपर करो डेरो।
गोकुल आज बचे न पावे कै डारौ जम धेरो॥

४—अपना भवनु बताबो जगदम्बे।
माताजी का भवन बना नौरंगा तरे बहे गंगा ऊपर बिन्दबासिनी।
सातों बहिनी भूलें लँगुरा भुलावें हनुमत चँवर डुलावें।

बन्दरों को भी सम्मान प्राप्त हो गया है।[1] एक अन्य गीत में राम भरत से कहते हैं कि मैं इस कपि से कभी उऋण नहीं हो सकता और हनुमान के कार्यों का विस्तार से वर्णन करते हुए उसकी सराहना करते हैं। हनुमान का यही आदर्श भक्त रूप ही विशेष लोकप्रिय है क्योंकि राम भी उसकी सेवाओं से उऋण नहीं अतएव किसी पर भी हनुमान की प्रसन्नता राम की प्रसन्नता बन सकती है।

इन सब देवताओं के होते हुए भी और उनकी पूजा करते हुए भी ग्राम-संस्कृति में देवियों का महत्व विशेष है। यहाँ तक कि [2] स्वयं महादेव इन देवियों की आरती उतारते हैं और पार्वती जी भी उस आरती में सम्मिलित हैं। आनन्दी माता का रूप काफी विचित्र है। उनके मन्दिर में कुम्हार के यहाँ के बने हुए झँझरीदार ढक्कनों की भरमार दिखाई देती है जो शायद दीपकों को ढकने के उद्देश्य से बनाये मालूम देते हैं। अन्य देवियों के वास्तविक रूप को हम नहीं जान सकते क्योंकि छोटी-छोटी मण्डपियों में कुछ लंबी आकृति के कंकड़ों अथवा पत्थरों के जमाव से उनका संकेत होता है। जालिपा, जगदम्बा, विन्दबासिनी, दुर्गा, शीतला भवानी, संकटा इत्यादि नामों मे देवी माता की प्रसिद्धि है और ग्रामीण जनता, विशेष रूप से स्त्रियाँ अपनी सभी कठिनाइयों तथा सुखों-दुखों के लिये उन्हीं की शरण आती हैं।

सभी नदियाँ पवित्र तथा देवी के रूप में मानी जाती है।[3] गंगा का विशेष

१—भरतजी हम यह कपि ते उरिन अब नाहीं।
पैठ पताल तूरि जमकातर बैठ रहा मठ माहीं।
एहरावन कै भुजा उखारिसि फेंक दिहिस दलमाहीं।
सक्ति जबै लागि लछिमन के सान्‍नु भयो दलमाहीं।
धौलागिरि पर मौलसँजीवन लै आवा छिन माहीं।
सौ जोजन मरजाद सिन्धु कै लाँघि गवा छिनमाहीं।
लंका जारि सिया सुधि लावा गरब नहीं मनमाहीं।

२—ठाढ़े महादेव आरती सजुहैं हाथ लिये आरती पारबती संगा।

३—आरती गंगा जीव तुम्हारी।
भरि कै कमण्डलु भगीरथ लाये,
सब देउतन के सिरे चढ़ाये।
करि स्नान निर्मल भये मनुआ।
छूटि जात आवागमन के तनवा।
सब तिरथन का गंगा पटरानी।
नारद सारद वेदु बखानी॥

महत्व है और गंगा की पूजा में लोक-संस्कृति ने अनेक गीतों की अर्चना प्रस्तुत की है। बरगद की पूजा ज्येष्ठ की अमावस में सावित्री-सत्यवान आख्यान के आधार पर अखण्ड सौभाग्य के लिये स्त्रियाँ बड़े उत्साह से करती है तथा अन्य अवसरों पर भी वटवृक्ष की पूजा होती है। पीपल की पूजा सोमवती अमावस के दिन होती है जिसका भी उद्देश्य अखण्ड सोहाग है। [1]तुलसी की पूजा तो घर-घर होती है। तुलसी का चौरा अथवा अरहना रोज लीपा जाता है। विशेष रूप से कार्तिक मास में और कार्तिक पूर्णमासी के दिन धूमधाम से पूजा होती है। कहीं-कहीं तो तुलसी का बड़े धूमधाम से विवाह रचा जाता है।

[2]इसके अतिरिक्त गाँवों में टोनों-टटकों का विशेष महत्व है। कदम-कदम पर साधारण कार्यों में भी टोनों-टटकों का सहारा लिया जाता है। भूत-प्रेतों की मान्यता भी गाँवों की साधारण घटना है। इसीलिये झाड़-फूंक करने वाले ओझाओं तथा भवानी आने वाली स्त्रियों का अभाव नहीं है।

[१०]

मेरा अनुभव

अवधी लोक-गीतों की संख्या विशाल है। मैंने भी पर्याप्त संख्या में अवधी क्षेत्र से गीतों तथा कथाओं को एकत्र करने का प्रयास किया है। प्रस्तुत पुस्तक में बानगी के तौर पर केवल उन्हीं गीतों को रखा गया है जो सामाजिक तत्वों पर प्रकाश डालते हैं और अनेक सामाजिक परम्पराओं को पुष्ट करते हैं। मेरे प्रयत्न की अपनी सीमाएँ रही हैं और लोकगीतों का सामाजिक परम्पराओं की दृष्टि से अध्ययन के प्रयत्न ने मेरे कार्य को और भी सीमित कर दिया है। अतएव स्वाभाविक ही है कि इस ग्रंथ में बहुत से सुन्दर तथा भावपूर्ण गीत नहीं प्रस्तुत किये जा सके हैं।

इस संकलन में केवल स्त्रियों द्वारा गाये जाने वाले गीतों का समावेश किया गया है। पुरुषों के गीतों को मैंने यहाँ प्रस्तुत नहीं किया है। उसका स्पष्ट कारण यही है कि पुरुषों के गीतों में प्रेम, विरह, वीरता, मनोरंजन तथा

१—तुम ठाकुर की सदा पियारी तुलसा मैं आरती करों तुम्हारी।

२—टोना पढ़ावन गई है कवन देवी इतवार मंगर की राती न,
टोना पढ़ाय घरे जब लौटीं माया बहिन घर आगें न॥

भक्ति संबंधी विषयों को व्यक्त किया गया है जो मेरे प्रस्तुत अध्ययन के विषय की दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण नहीं है। इसका यह तात्पर्य कदापि नहीं है कि उन गीतों में सामाजिक तत्वों का नितान्त अभाव है परन्तु किसी विशेष सामाजिक तत्व का स्वतन्त्र चित्रण नहीं मिलता जैसा कि गीतों में प्राप्त है। सच तो यह है कि प्रस्तुत गीतों का सामाजिक परम्पराओं से सीधा संबंध है। इस पुस्तक के अधिकांश गीत संस्कारों से संबंध रखते हैं। परन्तु कुछ गीत ऐसे भी हैं जिनका संस्कारों से संबंध नहीं है परन्तु क्योंकि वे स्त्रियों द्वारा गाये जाते हैं इसलिये इस संकलन में उनका भी समावेश कर दिया गया है।

लोक-गीतों की गायन शैली (तर्ज) अथवा ट्यूनों ने मुझे अवध की गलियों में ला खड़ा किया। मैंने उनके सुर में सुर मिलाकर गाने का प्रयास किया। मैंने सोहर सीखे, सरिया गाई, मुण्डन-विवाह गाये, बरुआ के गीत गुनगुनाये परन्तु सन्तोष नहीं हुआ। यही लगता रहा कुछ न बना। उन सुरों में मेरा सुर पूरी तरह से मिल न सका। मैं गायक नहीं हूँ। मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि मेरे जैसे शिक्षित लोग कदाचित् चाह कर भी सुर न मिला सकेंगे। मैंने यह भी देखा कि दो अक्षर पढ़ी लड़कियाँ भी इन गीतों का गाना गँवारपन समझती है परन्तु सिनेमा की ट्यूनों के आधार पर सोहर बड़े मजे में गाती हैं। मुझे भय हुआ कि कदाचित् अब हमारी लोकतर्जों का शीघ्र ही अन्त हो जायेगा। इस आशंका ने मुझे व्यथित किया क्योंकि मुझे लोकगीतों से भी अधिक इन ट्यूनों से मोह है। अतएव टेपरिकार्डर के जरिये इन गीतों को रिकार्ड करके इन गीतों की स्वर लिपियाँ तैयार कराने का पक्का इरादा किया। मुझे पूर्ण विश्वास है कि मैं लगभग २५ महत्वपूर्ण ट्यूनों की स्वर-लिपियों को (भारतीय और पश्चिमी पद्धतियों के आधार पर) शीघ्र ही एक पुस्तक के रूप में प्रकाशित कर सकूँगा। परन्तु इस प्रबन्ध के पूर्व अपने मन को संतोष देने के लिए मैंने गीतों का संकलन प्रारम्भ किया क्योंकि मुझे ऐसा लगता था कि नागरिक सभ्यता के प्रभाव स्वरूप इन गीतों का लोप होता जायेगा। गाँव के ही लोग शिक्षित हो कर अपने ग्रामों से घृणा करने लगते हैं। जो कुछ गाँव से सम्बन्ध रखता है वह असभ्य है, असंस्कृत है जिनसे सम्बन्ध रखने से शिक्षा प्राप्त होने पर भी गँवार समझे जायेंगे। स्कूलों और कालेजों में पढ़ने वाले वह सब कुछ त्याग देना चाहते हैं जिससे गाँव का दूर का भी संबंध हो। सभ्य और सुसंस्कृत बनने के लिये उनके पास एक ही नुस्खा है जिसे उन्होंने अपनी 'नोट बुक' में मोटी कलम से लिख रखा है,

"सभ्य बनने के लिये गाँव से दूर रहो।" शहर में ४० रुपये की नौकरी करना या बेकार घूमना परन्तु गाँव में अपने घर की दो गोंई की खेती न करना। लड़कियों की अधकचरी शिक्षा से सिनेमा की एक आना वाली गानों की पुस्तकों की बिक्री तो बहुत बढ़ गई है परन्तु गाँव का शायद ही कोई लाभ हुआ हो। अस्तु मैंने इन गीतों का संकलन किया।

परन्तु संकलन करने पर भी मन में ऊहापोह मची रही; असन्तोष कचोटता रहा। गीतों को बार-बार घोखता। इस घोखने से अथवा गीतों के मथन से गीतों में समाये सामाजिक परम्पराएँ मक्खन की भाँति ऊपर उभर आईं। फिर मैंने ढूँढ़-ढूँढ़ कर सामाजिक परम्पराओं वाले गीत एकत्र किये और अवसर तथा परम्पराओं के आधार पर उन्हें पृथक्-पृथक् करने लगा। मुझे इस प्रकार इन गीतों में समाज की सुन्दर एवं विस्तृत रूपरेखा प्राप्त हुई।

यद्यपि यह ठीक है कि इन लोकगीतों में जीवन की विविध समस्याओं तथा निरन्तर विकासवान समाज के अनेक व्यापारों का चित्रण नहीं हुआ है तथापि गीतों में परम्परा ने बोल पाया है और प्रगति बोल पाने के लिए परम्परा की कोड़ में आश्रय खोज रही है। प्रगति को परम्परा बनने में समय लगता है और वही समय हमारी सामाजिक प्रगति की सुदृढ़ता है। भारतीय जनमन समय की कसौटी पर खरी उतरने वाली प्रगति को स्वीकार करता है और जीवन के पोषक तत्वों के आधार पर उसे परम्परा के रूप में ग्रहण करता है। हमारे जीवन में प्रगति से अधिक महत्त्वपूर्ण है परम्परा। [1]और यही कारण है कि भारत पर विजय पाने वाली जातियाँ भी भारतीय संस्कृत में विलीन हो गईं और इन गीतों में जीवन की इसी शक्ति का दर्शन प्राप्त होता है। यदि परम्परा जीवन को कुछ पिछाड़ देती है तो समाज को सुदृढ़ भी बना देती है।

प्रथाओं तथा परम्पराओं के उद्भव एवं विकास का अध्ययन एक बहुत ही मनोरंजक विषय है परन्तु साथ ही उनका पूर्ण सहेतुक ज्ञान तथा उनके रहस्य का उद्घाटन अत्यधिक कष्टसाध्य कार्य है। मैंने इसी पक्ष पर कार्य करने का दुस्साहस किया है परन्तु केवल उनका उल्लेख मात्र करके। जिन

---

1. Arabs, Turks, Tatars, who have successfully overrun India soon became hinduised, the barbarian conquerers being, by an eternal law of history, conquered themselves by the superior civilization of their subject." Karl Marks,

कठुला तो सोहै वोहि के नाना के दरवाज, मामा के दरवाज,
लालु का नाना आवेगा, लालु का मामा आवेगा,
गदहा चढ़ि कै आवेगा, रीछ माँ चढ़ि कै आवैगा,
कौड़ी खूब लुटावैगा, बाजै वोहि के घुँघरू खेलावै छिनरिया माइ
खेलावै पतुरिया नानी ॥ ६ ॥

वाह रे लालु, (पुत्र) तुम्हें कण्ठे की इच्छा है ।। १ ।।

कण्ठे के लिए अच्छा सोना मँगवाना। उसके बाबा बनवाते हैं और उसकी आजी पहिनाती हैं ।। २ ।।

लालु (पुत्र) का बाबा आयेगा, हाथी में चढ़कर आयेगा, मोहरें वह खूब लुटायेगा। पुत्र के घुंघरू बजते हैं उसकी आजी खिलाती हैं ।। ३ ॥

कण्ठा उसके भैया के दरवाजे पर शोभा देता है। लालु (पुत्र) का भैया आयेगा, लालु (पुत्र) का पिता आयेगा। मोटर पर बैठाकर आयेगा, बग्घी पर चढ़कर आयेगा, खूब रुपये लुटायेगा। लालु (पुत्र) के घुंघरू बजते हैं उसकी माँ खेलाती हैं ।। ४ ।।

कण्ठा उसके जीजा के दरवाजे पर शोभा देता है। लालु का जीजा आयेगा, लालु का फूफा आयेगा; बग्घी में बैठकर, मोटर पर चढ़कर आयेगा खूब रुपये लुटावेगा। उसके घुंघरू बजते हैं और उसकी बुआ खिलाती हैं।
।। ५ ।।

कण्ठा उसके नाना के दरवाजे पर, उसके मामा के दरवाजे पर शोभा देता है। लालु का नाना आयेगा, लालु का मामा आयेगा। नाना गधे पर बैठ कर आयेगा और मामा रीछ पर सवार होकर आयेगा। वे कौड़ी खूब लुटायेंगे। उसके घूंघरू बजते हैं और उसकी छिनरिया माई खेलाती हैं उसकी पतुरिया (रंडी) नानी खेलाती हैं ।।। ६ ।।

कंठा का गीत केवल अब गीत ही रह गया है। शायद ही किसी घर में अब कण्ठा बन पाता है और जिन घरों में यह संभव भी है उनमें कण्ठा न बनवा जंजीर बनवाते हैं। किन्तु जिस प्रकार हाथों में कंगन, पावों में पैज-नियाँ जरूरी हैं उसी प्रकार गले में कण्ठा या जंजीर जरूरी है।

विचित्र प्रथा का उत्तर है और कारण भी।" मैं और भी आश्चर्य चकित हो गया।

उन्होंने बताया, "इसी परिवार में दो पीढ़ी पूर्व एक कन्या का विवाह था। उस समय उनके यहाँ एक बिल्ली पली हुई थी और जब बारात 'भात' खाने आई तो बिल्ली बारातियों के चारों ओर घूमने लगी। तब कन्या के पिता ने अपने लड़कों से बिल्ली को वहीं बाँधने के लिये कहा। लड़कों ने बिल्ली को आँत से बाँध दिया। जब वे ही लड़के बड़े हुए और उनके घर में फिर कन्या ब्याहने का अवसर आया तो बिल्ली बाँधने का प्रश्न उठा और बिल्ली बाँधने की प्रथा चल पड़ी।

मैं यह नहीं कहता कि उपर्युक्त प्रथा किसी विशेष घर में प्रचलित है अथवा थी, परन्तु इस कहानी से यह स्पष्ट है कि प्रथा के रूप में आई हुई अनेक स्थितियाँ अपने मूल कारण तथा प्रेरणा से दूर हो जाती हैं और उनके संबंध में हमेशा उचित और सही कारण नहीं दिया जा सकता। इस कहानी में प्रथम बिल्ली बाँधने की बात आवश्यक थी जो परम्परा में पड़ कर बिल्ली के न होने पर भी उसका बाँधा जाना अनिवार्य हो गया। बिल्ली का आँत से पहले बाँधना एक समस्या का हल था जो बाद में आगे चलकर स्वयं में एक समस्या बन गई। अतएव सभी परम्पराओं के संबंध में यदि सदैव सहेतुक ज्ञान न प्राप्त हो सके तो आश्चर्य नहीं। अनेक परम्पराओं के साग्रह पालन के पीछे न तो उनका सहेतुक ज्ञान होता है और न उन प्रथाओं की उपयोगिता के संबंध में ध्यान। सैकड़ों ऐसे विधि-निषेध हैं, सैकड़ों अन्य प्रथाएँ हैं जिनका प्रायः पालन होता रहता है परन्तु किसी से पूछिये, 'ऐसा क्यों करते हो?' तो एक ही उत्तर मिलता है, "हमारे पुरखों से होता आया है। क्या हमारे पुरखे मूर्ख थे?" परन्तु उनको कौन समझाये कि पुरखे मूर्ख नहीं थे उन्होंने वे कार्य बहुत संभव है किसी आवश्यकतावश ही किये होंगे परन्तु अन्धानुकरण करने वाले अवश्य मूर्ख हैं जो बिना सोचे समझे काम करते हैं।

हमारे समाज में इस प्रकार असंख्य प्रथाएँ हैं जिनमें से सभी का स्पष्टीकरण देना असंभव है और सभी का सहेतुक होना भी आवश्यक नहीं। प्रस्तुत पुस्तक में मैंने कुछ प्रथाओं का उल्लेख किया है और उनका स्पष्टीकरण देने का भरसक प्रयत्न किया है। कुछ तो हमारे समाज की सर्वव्यापी प्रथाएँ हैं और कुछ अपने प्रदेशों तथा जातियों की सीमा में आबद्ध हैं। अनेक प्रथाएँ विभिन्न ग्रामों में अपने भिन्न रूप के साथ स्वतन्त्र महत्व रखती हैं। कुछ

प्रथाओं के पालन में समय तथा अवसर में हेर-फेर हो जाता है और कुछ प्रथाएँ किन्हीं स्थानों में मान्य हैं तो किन्हीं गाँवों में उनका चिह्न भी नहीं मिलता। किसी के यहाँ कुछ परम्पराएँ कुलबन्धुओं के साथ उनके मायके से आ जाती हैं और उसी परिवार तक सीमित रहती हैं; कुछ विभिन्न स्वभाव के लोगों के साथ परिवर्तित हो जाती हैं। कुछ प्रथाएँ पर्व, उत्सव या किसी की मृत्यु से खण्डित हो जाती हैं और उनको छोड़ दिया जाता है। इस प्रकार जातिरीति, ग्रामरीति, तथा कुलरीति बनती, बिगड़ती तथा परिवर्तित होती रहती है। प्रायः परम्परा पालन की विधियों तथा विस्तारों में भेद पैदा हो जाते हैं और मूल परम्परा ज्यों की त्यों बनी रहती है। मैंने उन सामान्य परम्पराओं पर विशेष ध्यान दिया है जिनकी मान्यता काफी व्यापक है और अवधी-क्षेत्र में किसी न किसी रूप में उनका पालन होता है। किसी भी परम्परा के अन्यथा पालन की सभावना को अस्वीकार नहीं करता। क्षेत्र के सीमित होते हुए भी विविधता इतनी है कि मैं सभी कुछ जानने का दावा नहीं कर सकता। सच तो यह है कि मेरी जानकारी बहुत स्वल्प है और इस स्वल्प जानकारी के आधार पर अधिक जानकारी प्राप्त करने के उद्देश्य से मैंने यह प्रयत्न किया है। संभव है मेरे निष्कर्ष कुछ शंकाएँ पैदा करें, पाठकों को कुछ सोचने पर विवश करें। यदि प्रस्तुत पुस्तक कुछ प्रश्न तथा शंकाएँ भी पैदा कर सकी तो मेरा प्रयत्न सफल होगा और इस क्षेत्र में मेरी ज्ञान-वृद्धि की संभावना बढ़ जायेगी और इस विषय पर अधिक सुन्दर, व्यापक तथा वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत हो सकेगा।

दो शब्द मैं इन गीतों के सकलन के सबंध में भी कहना चाहता हूँ। संकलन-कार्य के तीन वर्षों के अनुभव के आधार पर मैं यह कह सकता हूँ कि गीतों का सकलन-कार्य भी उतना ही रोचक है जितने ये गीत हैं और उतना ही मधुर जितनी इनकी ट्यूनें। मुझे अन्य गीत-संकलनकर्त्ताओं की भाँति बड़े-बड़े ऐडवेन्चर नहीं करने पड़े और न कठिन संघर्ष ही। परन्तु इस कार्य में कठिनाइयाँ भी अनेक हैं ;जिनकी मैं चर्चा नहीं करना चाहता क्योंकि यह तो कार्यकर्त्ता की व्यवहार-कुशलता पर निर्भर करता है कि वह किस सफलता के साथ अपने सहायकों से कार्य ले सकता है। स्त्रियों से गीत एकत्र करने में मैंने अपनी माँ से बहुत सहायता ली। मेरी माँ स्त्रियों को घर बुलातीं, सीखने के बहाने उनसे गीत गवातीं और बार-बार गवातीं और मैं उसी बीच में लिख लेता। बहुत से गीत उन्होंने स्वयं लिखवाये। बहुत सी वृद्धा स्त्रियों ने तो बड़ी खुशी से घण्टों बैठकर गीत लिखाये। मैंने उन्हें बताया था कि

गीतों का जो खजाना उनके पास है वह किसी के पास नहीं है और ये गीत पुस्तक रूप में छपेंगे। उनका स्वाभिमान जाग्रत हो जाता और उन्हें लगता कि इस अवस्था में जब सभी तिरस्कार करते हैं, कम से कम इन गीतों के कारण, उन्हें महत्व मिल रहा है और गर्व के साथ वे मुझे गीत लिखा देतीं, मेरे दुहराने पर मेरी गलती भी ठीक कर देतीं। अधिकांश स्त्रियों को तो मेरे लिखने में इतना रस मिलता कि वे मेरे काम को अपना काम समझने लगतीं और कभी यदि कोई गीत याद आ जाता तो मुझे लिखवा देतीं। खूब गीत गाने वाली स्त्री के पते बतातीं, मेरे लिये उन्हें बुलवा देतीं। मतलब यह कि गीत एकत्र करने में मुझे विशेष कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ा।

परन्तु पुरुषों से गीत इकट्ठे करने में कुछ कठिनाई अवश्य उठानी पड़ी। पुरुषों की अनेक शंकाओं के समाधान के बाद भी मैं प्रायः भक्ति विषयक तथा निर्गुन ही प्राप्त कर पाता। वे शृंगार रस के गीत गाने में हिचकते रहते थे। प्रेम विरह के गीत न गाकर रामनामी अथवा कृष्णनामी गीत गाते। जिन बूढ़ों के पास गीतों का विशाल खजाना भी है वे भी शृंगार रस के गीत सुना कर अपने संबंध में मेरी राय को नहीं बिगाड़ना चाहते थे। परन्तु जवान लोगों से मुझे सभी प्रकार के गीत मिलते रहे।

इसी संदर्भ में मैं एक निरीक्षण विशेष रूप से प्रस्तुत करना चाहता हूँ— वह यह कि इन पुरुष गवैयों में अपने जातिगत गीतों के प्रति जबरदस्त हीन भावना कार्य कर रही है। यह हीन भावना न केवल गीतों तक ही सीमित है प्रत्युत इन्हें अब अपने रीति-रिवाजों से भी घृणा हो चली है। यहाँ तक कि अहीर कहने लगे हैं, "बिरहा कोरी-चमार गाते हैं।" जातीय गीत बिरहा को आजकल अहीर अपनी विशेषता न मानकर अपनी असभ्यता का एक चिह्न मानने लगे हैं। यद्यपि अभी भी अहीर बिरहा गाते हैं परन्तु खुलकर नहीं और पढ़े-लिखे के सामने तो और भी नहीं। वे अब बिरहा गाना अपनी प्रतिष्ठा के विरुद्ध मानने लगे हैं। चमार भी नृत्य की अपनी विशिष्टता को तिलांजलि दे देना चाहते हैं। वे समझते हैं कि केवल इन विशेषताओं के कारण ही उनकी जाति प्रकट हो जाती है जिसके साथ युगों का लांछन बँधा हुआ है। उस लांछन से मुक्ति प्राप्ति के लिए वे अपने विशेष गुणों को भी त्याग देने के लिए उद्यत हैं। चिलुओं के डर से ये लोग कथरी ही छोड़े दे रहे हैं। आजकल इस प्रकार के जातीय गीतों का संकलन काफी कठिन होता जा रहा है। अतएव इस क्षेत्र में जितनी ही तत्परता से कार्य किया जाये उतना ही

श्रेयस्कर होगा। आज की इस शिक्षा में जो बनावटी तथा आडम्बरपूर्ण शहरीपन है वह ग्रामीणों को अपनी प्राचीन परम्परागत सांस्कृतिक विरासत को भी छोड़ने पर विवश कर रही है। शहरीपन के प्रति प्रशंसा तथा सराहना का भाव गाँवों के वातावरण को दूषित करता जा रहा है और वे लोग वह सभी छोड़ देना चाहते हैं जिनसे उनका परम्परागत संबंध है। एक ओर जनेऊ पहन कर उच्च बनने के प्रयत्न दिखाई दे रहे हैं तो दूसरी ओर अपनी निम्नता को प्रकट करने वाली विशिष्ट सांस्कृतिक परम्पराओं का बहिष्कार हो रहा है। सिनेमा ने भी ग्राम संस्कृति पर परोक्षरूप से घातक प्रभाव डाला है। गाँव के कुछ लोग शहरों में रहकर सिनेमा के गीतों तथा नाचों की प्रशंसा से गाँवों के वातावरण को पूरित कर देते हैं और जातीय तथा ग्रामीण गीतों तथा नाचों के प्रति उनकी आलोचना ग्रामीणों के उत्साह को ठंडा कर देती है। दुर्भाग्य से प्रत्येक ग्रामीण प्रत्येक शहरी (City return) को विलायत पलट (England return) मानते हुए उसे सर्वज्ञ मानने की भूल कर रहा है। उसका आदर्श ग्राम और जाति छूट कर शहर होता जा रहा है। शहर में तीस रुपये की नौकरी करने वाला ग्रामीण जब महीने पन्द्रह दिनों की छुट्टी पर घर लौटता है तो सुगन्धित तेल में डूबी हुई जुल्फें, कम्पनी की धुली हुई बुर्राक पोशाक गाँव वालों की आँखों में चकाचौंध तथा दिल में ललका पैदा कर देती है। ग्रामीण का मन शहर के लिए मचल उठता है और शहरों में दूसरों की चलने वाली मोटरों पर अभिमान का भाव पैदा होता है और शहर जीवन के आडम्बर तथा आसानी से पैसे पाने का भ्रम उनके कानों में मधुर गीत और दिलों में ऊँचे सपने भर देते हैं और दूसरी ओर उनके जीवन की गहरी निराशाएँ परास्तता का भाव भरती जा रही हैं।

प्रस्तुत पुस्तक १९५२ में ही तैयार हो गयी थी परन्तु हिन्दी क्षेत्र से बहुत दूर रहने के कारण मैं शीघ्र ही प्रकाशन का प्रबन्ध न कर सका और प्रकाशन के लिए मैं जिन पर निर्भर था उन्होंने कुछ कारणवश मेरी सहायता करने से इनकार कर दिया। फलतः पुस्तक चार वर्ष तक पड़ी रही और शायद पड़ी ही रहती यदि श्री मोतीलाल अग्रवाल इस भार को न स्वीकार करते। इसके अगले भाग, मुझे आशा है शीघ्र ही प्रकाशित हो सकेंगे।

इस पुस्तक के लिये मैं किस-किस को धन्यवाद दूँ! एक दो हो तो उनका नाम देकर कृतज्ञता ज्ञापन कर लूँ; परन्तु इस पुस्तक के प्रत्येक गीत के पीछे

लाखों लोग हैं जिनका मैं जीवन पर्यन्त ऋणी ही बना रहना चाहूँगा। हाँ, पुस्तक के प्रकाशन के लिए प्रकाशक रामनारायण लाल, प्रयाग को विशेष श्रेय दिया जा सकता है। त्रुटियों के लिये क्षमाप्रार्थी हूँ।

बसन्तपंचमी २०१४
मु० शिवपुरी
पो० गेगासों
जि० रायबरेली (उ० प्र०)

इन्दु प्रकाश पाण्डेय
अध्यक्ष हिन्दी विभाग
एलफिन्स्टन कालेज
बम्बई—१

अवधी लोक-गीत

प्रथम प्रकरण

१

पुत्र-जन्म-संबंधी गीत

दोहद (साध)

ये गीत सोहर के अन्तर्गत आते हैं। इनके गाने की तर्ज भी वही है। दोहद होने पर प्रत्येक स्त्री में अनेक प्रकार की इच्छाएँ जाग्रत होती रहती हैं। उन इच्छाओं की पूर्ति करना परिवार के लोग अपना कर्तव्य समझते हैं। न केवल इच्छाओं की पूर्ति की ओर ही ध्यान दिया जाता है परन्तु प्रथम बार तो सभी रिश्तेदार गर्भवती स्त्री को सधौरी देते हैं। इस सधौरी में अनेक प्रकार की मिठाइयाँ, खाने की चीजें तथा वस्त्राभूषण इत्यादि भी रहते हैं। जिस व्यक्ति की जैसी आर्थिक सामर्थ्य होती है, उसी के अनुसार वह गर्भ के पाँचवें मास के उपरान्त सधौरी देता है।

इसी सधौरी को उत्सव के रूप में भी मनाया जाता है और इसी अवसर के अनुसार इन साध के गीतों को गाया जाता है। ये सधौरी के गीत विशेष रूप से उस समय गाये जाते हैं जिस समय गर्भवती स्त्री के मायके से पंचमासा या सतमासा आता है। पंचमासा तथा सतमासा एक महत्त्वपूर्ण सामाजिक रिवाज है। गर्भवती स्त्री के मायके के लोग जब गर्भ के संबंध में सुनते हैं तो प्रसन्न होकर अनेक प्रकार के वस्त्राभूषण तथा मिठाइयाँ इत्यादि भेजते हैं। इसमें गर्भवती बहू के पति, सासु, ससुर के लिये भी वस्त्राभूषण रहते हैं। आजकल पंचमासा तथा सतमासा देने का सुन्दर रिवाज गर्भवती

बहू की सास तथा ससुर के पँचमासा या सतमासा माँगने का अधिकार बन गया है। लड़कियों के गरीब माँ-बाप के लिये कभी-कभी यह सुखद समाचार काफी कष्टप्रद सिद्ध हो जाता है।

इस प्रकार के अवसरों पर तथा कभी-कभी बच्चों की वर्षगाँठ में ये साध के गीत विनोद के लिये गाये जाते हैं। इनमें कुछ गीत बहुत ही फूहड़ (अश्लील) होते हैं। इस प्रकार के गीतों की भी संख्या बहुत है। कुछ गीत उदाहरण के लिये प्रस्तुत किये जाते हैं।

दोहद

(१)

पलकी की राते माते दुइ जने मतु जो मतति ह्वैं रे।
हे राजा हमका तिलरी कै साध तिलरी हम लेबै
चुनरी हम लेबै रे ॥ १ ॥

रनियाँ हो मोरी रनियाँ तुमहि मोरी रनियाँ रे।
रनियाँ तुम धना काली कोइलिया तिलरी नहीं सोहे—
तिलरी कहा करिहो चुनरी कहा करिहौ रे ॥ २ ॥

राजा हो मोरे राजा तुमहिं मोरे राजा रे।
राजा कारे की सेज मति आयो कारे परि जइहौ रे ॥ ३ ॥

हँकरौं मैं नगर के सोनरा तो हँकरि बोलावौं—तो बेगि बोलावौं रे।
सोनरा पाँच मोहर कै तिलरिया बेगि गढ़ि लावहु रे ॥ ४ ॥

हँकरौं मैं नगर के बजजा तौ हँकरि बोलावौं रे।
बजजा पाँच रंग चुनरी लै आवहु मैं रानी का मनावहुँ रे ॥ ५ ॥

एक हाथे लीन्हेन्हि तिलरी दुसरे हाथे चुनरी रे।
तो लपकि कै चढ़ि गे अँटरिया तो धना का मनावहिं रे ॥ ६ ॥

रानी छाँड़ि देव जिया का विरोगु पहिनि लेओ तिलरी
ओढ़ि लेओ चुनरी रे ॥ ७ ॥

तिलरी तो पहिनैं तुम्हारी माया और बहिनियाँ रे।
राजा चुनरी तो ओढ़ै ‿जइया जहाँ तुम रीझे रे ॥ ८ ॥

हँकरौं मैं नगर के तम्बोली तो हँकरि बोलावौं रे।
तम्बोली पाँच पान बिरिया लै आवौ मैं रजवा मनावौं रे ॥ ६ ॥

एकु हाथे लीन्हेन्हि बिरिया दूसरे हाथे ललना रे।
लयकि कै चढ़ि गई महलिया तो रजवा मनावहिं रे ॥ १० ॥

राजा छोड़ि देओ जिया का विरोगु चाभि लेओ बिरिया
खेलाय लेओ ललना रे ॥ ११ ॥

बिरिया तो चाभै तेरा भइया और भतीजा रे।
रानी ललना खेलावै बहनोइया जहाँ तुम रीझिऊ रे ॥ १२ ॥

बड़ेन की हम बेटी बड़ेन घर ब्याहिनि रे।
राजा अपने भइयन की दुलारी तुरतै बदलु लीन्ह्यो रे ॥ १३ ॥

पलंग पर प्रेम क्रीड़ा में मस्त दोनों (राजा और रानी) वाद-विवाद कर रहे हैं। रानी कहती है "हे राजा, मुझे तिलरी की साध है, मैं तिलरी लूंगी, चुनरी लूंगी" ॥ १ ॥

राजा कहते हैं, "रानी, हे मेरी रानी तुम मेरी रानी हो, हे रानी तुम काली (श्माम वर्ण) हो, तुमको तिलरी शोभा नहीं देगी। तुम तिलरी और चुनरी का क्या करोगी" ॥ २ ॥

रानी कहती है, "राजा हे मेरे राजा, तुम मेरे राजा हो। राजा, तुम काली की सेज पर मत आना, नहीं तो काले पड़ जाओगे ॥ ३ ॥

इस पर राजा ने उत्तर दिया, "मैं नगर के सुनारों को शीघ्र बुलवाता हूं।"—"ऐ सुनार तुम पांच मोहर की तिलरी शीघ्र गढ़ लाओ" ॥ ४ ॥

और मैं नगर के बजाजों को बुलवाता हूं—"ऐ बजाज, तुम शीघ्र पांच रंग की चुनरी लाओ, मुझे रानी को मानना है" ॥ ५ ॥

तब एक हाथ में तिलरी और दूसरे हाथ में चुनरी लेकर राजा अपनी रानी के कमरे में ऊपर चढ़ गये, और रानी को मनाने लगे। कहने लगे—"रानी! अपने मन का क्रोध त्याग दो, तिलरी पहिन लो, चुनरी ओढ़ लो ॥ ६,७ ॥

रानी रोषपूर्ण व्यंग से कहती है—"तिलरी तो तुम्हारी माँ और बहिन पहिने और चुनरी तुम्हारी भौजाई पहिने, जिस पर तुम रीझे हो" ॥ ८ ॥

इस व्यंग तथा आरोप से राजा अप्रसन्न हो जाते है। अब रानी के मनाने की बारी आती है।

मैं नगर के तम्बोलियों को शीघ्र बुलाती हूँ। "ए तम्बोली, पाँच पान का बीड़ा बना कर लाओ, मैं राजा को मनाऊँगी" ॥ ९ ॥

एक हाथ में पान का बीड़ा और दूसरे में बच्चे को लेकर राजा के महल पर चढ़ गई, और राजा को मनाने लगी। "राजा, मन का क्रोध त्याग दो, पान खालो और अपने बच्चे को गोद में लेकर खिला लो" ॥ १०-११ ॥

इस पर राजा व्यंग करते हैं—"पान तेरा भाई खाये, तेरा भतीजा खाये और बच्चा तेरा बहनोई खिलाए, जिस पर तू रीझी है" ॥ १२ ॥

इस पर रानी क्षमा-याचना करती हुई कहती है, "मै बड़ों की बेटी हूँ। और बड़े लोगों के घर व्याही गई हूं। और हे राजा मै अपने भाइयों की बहुत दुलारी हूँ, मैंने आपसे तुरन्त बदला लिया" ॥ १३ ॥

इस गीत में पति-पत्नी की प्रणय क्रीड़ा का सुन्दर चित्र प्रस्तुत किया गया है।

'काली की सेज पर मत आना, तुम भी काले हो जाओगे' रानी के व्यंग का कितना सुन्दर उदाहरण है। साथ ही साथ अन्त की पंक्तियों में अपने पति के सम्मुख कैसा आत्मसमर्पण है तथा अपनी भूल की कैसी करुण आत्मस्वीकृति है!

(२)

खिरकी के तरे बनजरवा तो सोवै कि जागै रे?
राजा तोरी धना गरुए गरभ सन तो अमवा माँगति हैं रे ॥ १ ॥

सरग उड़ंती चिरैया सरग मँडरानी रे।
चिरयी खिरकी के तरे बनजरवा तो जाहि जगावौ रे ॥ २ ॥

खिरकी के नायक तो स्वावौ कि जागो रे।
राजा तोरी धना गरुए गरभ सन तो अमवा मागति हैं रे ॥ ३ ॥

येहि रितु अमवा न बौरें अमिलिया न करहैं रे।
चिरयी बाव बहुरिया के अलबल अमवा माँगति है रे ॥ ४ ॥

अगिले के घोड़वा*कवन रामा पछिले के कवन रे
जैसे अलल बछेड़वा कवन रामा अमवा की चोरी चले रे ॥ ५ ॥
झुकि धरि डरिया नवावें बगल लई चाँपै रे।
जैसे जागि परा रखवार चोरु कहँ बाँधे रे ॥ ६ ॥
केहि के हो तुम नाती कहीय केरे बेटा रे।
राजा कौन बहुरिया के नाह आम चोरी आयो रे ॥ ७ ॥
बाबा के हम नाती दादुली रामा बेटा रे।
जैसे रनिया सोहागादेई गरभ सन आम चोरी आये न रे ॥ ८ ॥
जो मैं अस कछु जनत्यों कि बेटी गरभ सन कि बहिनी
गरभ सन रे।
गाड़िन आम्ब लदौत्यों तो तुम्हारे द्वारे उतरत्यौं रे ॥ ९ ॥

खिड़की के नीचे मेरा बनजारा (व्यापारी) सोता है कि जागता है ? हे राजा, तुम्हारी रानी, गर्भ के पूरे दिनों पर पहुंच रही है। इसलिये आम माँगती है ॥ १ ॥

आकाश में उड़ने वाली चिड़िया आकाश में उड़ने लगी। रानी चिड़िया से कहती है—'हे मेरी चिड़िया, खिड़की के नीचे मेरा बनजारा सो रहा है। उसे जगा लाओ' ॥ २ ॥

चिड़िया ने बनजारे के पास जाकर कहा—'हे खिड़की के मालिक तुम सो रहे हो या जाग रहे हो ? तुम्हारी रानी, पूरे गर्भ से है, वह आम माँगती है' ॥ ३ ॥

राजा इसका उत्तर देते हैं, "इस ऋतु में आम नहीं बौरते, और न इमली में ही फूल आते हैं। हे चिड़िया, ये बहू के विचित्र नखरे हैं कि आम माँगती है" ॥ ४ ॥

---

*कवन के स्थान पर गाने के समय रानी के राजा का नाम कहा जाता है और दूसरे तथा तीसरे कवन के स्थान पर राजा के छोटे भाइयों के नाम लिये जाते हैं। और इस प्रकार गीत को व्यक्ति-विशेष से सम्बन्धित कर दिया जाता है।

घोड़े पर आगे-आगे अमुक रामा और पीछे अमुक रामा, और मस्त बछेड़ी पर बैठ कर अमुक रामा आम की चोरी करने चल दिये ।। ५ ।।

(वे) डाल को झुका कर बगल में दबाते हैं कि उसी समय रखवाला जाग उठता है, और इनको चोर कह कर बाँध लेता है ।। ६ ।।

और उनसे रखवाला पूछता है, "तुम किसके नाती हो, किसके बेटे हो, और किस बहू के नाथ हो जो आम चुराने आये हो ?" ।। ७ ।।

"बाबा के हम नाती हैं, अपने बाप के बेटा हैं, और सौभाग्यशालिनी रानी, जो गर्भवती हैं, उनका मैं पति हूँ, उन्हीं के लिए मैं आम की चोरी करने आया हूँ" ।। ८ ।।

"हे बेटा, जो मैं ऐसा जानता कि बेटी अथवा बहिन (जैसा भी रिश्ता लगता हो) गर्भवती है, तो गाड़ियों आम लदवा कर तुम्हारे दरवाजे पर डलवा देता" ।। ९ ।।

आशय यह है कि यदि आम की इच्छा किसी गर्भवती स्त्री को है तो उसकी इच्छापूर्ति अवश्य ठीक ढंग से होनी ही चाहिए। गर्भवती स्त्री की साध को बहुत अधिक महत्व दिया जाता है।

(३)

राजा रतनारे, कुँअर रतनारे, जामुन ला दो।
पहिला महीना जब लागो जच्च्या रानी,
फूल गये, फल लागे मैं बारी-बारी ।। १ ।।
दुसरा महीना जब लागो जच्च्या रानी,
मूँड़ टंडंकन लागो मैं बारी-बारी ।। २ ।।
तीसरा महीना जब लागो जच्च्या रानी,
पींडुरिया घहरानी मैं बारी-बारी ।। ३ ।।
चौथा महीना जब लागो जच्च्या रानी,
आम अमिली मन लागो मैं बारी-बारी ।। ४ ।।
पाँचौ महीना जब लागो जच्च्या रानी,
होरिल फरकन लागे मैं बारी-बारी ।। ५ ।।

छठो महीना जब लागो जच्च्या रानी,
खीर पुरी मन लागो मैं बारी-बारी ॥ ६ ॥

सातवाँ महीना जब लागो जच्च्या रानी,
निम्बू नरंगी मन लागो मैं बारी-बारी ॥ ७ ॥

आठौं महीना जब लागो जच्च्या रानी,
पेरा जलेबी मन लागो मैं बारी-बारी ॥ ८ ॥

नवौं महीना जब लागो जच्च्या रानी,
ससुर का बँगला झरा देव मैं बारी-बारी ॥ ९ ॥

पैसे की सेर मैं नहिं खाओं,
रुपये की आठ मँगा देव मैं बारी-बारी ॥ १० ॥

फीकी जामुन मैं नहिं खाओं,
निमक मिरच मिलवा दो मैं बारी-बारी ॥ ११ ॥

एकले दुकले मैं नहिं खाओं,
सँग की सहेली बुलवा दो मैं बारी-बारी ॥ १२ ॥

दसो महीना जब लागो जच्च्या रानी,
होरिल रोय सुनायो मैं बारी-बारी ॥ १३ ॥

राजा सुन्दर हैं, कुंअर सुन्दर हैं, मुझे जामुन ला दो।

रानी के गर्भ का जब पहिला महीना प्रारम्भ हुआ तो पुष्पित होने वाली अवस्था समाप्त हो गई और फल के विकास की अवस्था आरम्भ हुई। ऐसी सुखमय बात पर में बलि-बलि जाती हूं ॥ १ ॥

दूसरा महीना जब लगा तो सिर में पीड़ा होने लगी ॥ २ ॥

तीसरा महीना जब लगा तो पिंडुलियां भारी होने लगीं, और उनमें पीड़ा होने लगी ॥ ३ ॥

चौथे महीने के लगते ही आम-इमली खाने की इच्छा होने लगी ॥ ४ ॥

और जब पांचवा महीना प्रारम्भ हुआ, तो गर्भ में बच्चा फड़कने लगा ॥ ५ ॥

छठे महीने के लगने पर खीर-पूरी खाने को मन करने लगा ॥ ६ ॥

सातव महीने में नींबू-नारंगी खाने की इच्छा होने लगी ।। ७ ।।
आठवें महीने के लगने पर पेड़ा-जलेबी की इच्छा होने लगी ।। ८ ।।

नवें महीने के लगने पर प्रसूति-गृह की आवश्यकता हुई, और ससुर का बंगला साफ करने की जरूरत हुई ।। ९ ।।

रानी कहती हैं—"पैसे की सेर भर काली चीजें में नहीं खाऊंगी । रुपये की आठ मँगवा दो" ।। १० ।।
"फीकी जामुन में नहीं खाऊँगी, उनमें नमक मिर्च मिलवा दो" ।। ११ ।।
"अकेले दुकेले में नहीं खाऊँगी, साथ के लिए सहेलियाँ बुलवा दो" ।।१२।।

और दसवें महीने के लगते-लगते बच्चे ने जन्म ले लिया, और रोकर सब को प्रसन्न कर दिया ।

इस गीत में गर्भवती स्त्री के महीनों के अनुसार अवस्था में परिवर्तन प्रदर्शित किये गये हैं, और उसकी अनेक प्रकार की इच्छाओं की ओर संकेत किये गये हैं । "फूल गये, फल लागे ।" यह बहुत ही सुन्दर सांकेतिक उक्ति है ।

(४)

किला तरे मोरी बहुआ महला उठायो री ।
महला उठायो मोरी बहुआ खिरकी रखायो री ।। १ ।।

खिरकी रखायो मोरी बहुआ पलँगा बिछायो री ।
पलँगा बिछायो मोरी बहुआ तोसका लगायो री ।। २ ।।

तोसका लगायो मोरी बहुआ दिअना जलायो री ।
दिअना जलायो मोरी बहुआ गडुआ भरायो री ।। ३ ।।

गडुआ भरायो मोरी बहुआ रजवा सोवायो री ।
रजवा सोवायो मोरी बहुआ रगा मचायो री ।। ४ ।।

सासु पूछै मोरी बहुआ तुमका का का भावै री ।
नीम्बू नरंगी मोरी सासू केला हमैं भावै री ।। ५ ।।

जीजी पूछै मोरी छोटी तुम्हें क्या-क्या भावै री ।
दाख छुहारा मोरी जीजी किसमिस भावै री ।। ६ ।।

ननद पूछै मोरी भाभी तुम्हें क्या-क्या भावै री।
पूरी कचौरी मोरी ननदी रबड़ी हू भावै री ॥ ७ ॥

देवर पूछै मोरी भाभी तुम्हें क्या-क्या भावै री।
सोने का गिलास मोरे देवरा सरबतु भावै री ॥ ८ ॥

राजा पूछै मोरी रनिया तुम्हें क्या-क्या भावै री।
राजि तो भावै पिग्रा तुम्हारि गोदी होरिलवा री ॥ ९ ॥

सासु ग्रपनी बहू से कहती है, "किले के नीचे बहू, महल बनवाना। ग्रौर मेरी बहू ! महल बनवा कर उसमें खिड़की लगवाना।" ॥ १ ॥

"खिड़की रखवा कर मेरी बहू ! पलंग बिछवाना ग्रौर पलंग बिछवाकर उसमें तकिया रखवाना" ॥ २ ॥

"तकिये लगवा कर दिया जलवाना, ग्रौर दिया जलवा कर गेड़ुवा में पानी भरवा कर रखना" ॥ ३ ॥

"गेड़ुवा भरवा कर, मेरी बहू ग्रपने राजा को लिटाना, ग्रौर इस तरह राजा को लिटा कर रति क्रीड़ा करना" ॥ ४ ॥

यहाँ तक गर्भाधान की पूर्व परिस्थितियाँ वर्णित हैं। इसके उपरान्त गर्भाधान के विश्वास से सासु पूछती है—"बहू तुम को क्या-क्या ग्रच्छा लगता है ?"

बहू कहती है—"मुझे नींबू, नारंगी ग्रौर केला ग्रच्छा लगता है" ॥ ५ ॥

जिठानी पूछती है—"मेरी छोटी (दिवरानी) तुम्हें क्या-क्या ग्रच्छा लगता है" ? तब बहू कहती है, मेरी जीजी ! मुझे ग्रंगूर-छुग्रारा ग्रौर किसमिस ग्रच्छी लगती हैं" ॥ ६ ॥

ननद पूछती है—"मेरी भाभी, तुम्हें क्या-क्या ग्रच्छा लगता है।" तब बहू कहती है—"मेरी ननदी, मुझे पूरी-कचौड़ी तथा रबड़ी ग्रच्छी लगती है" ॥ ७ ॥

देवर पूछता है—"मेरी भाभी, तुम्हें क्या-क्या ग्रच्छा लगता है ?" तब रानी उत्तर देती है—"हे मेरे प्यारे देवर मुझे सोने के गिलास में तुम्हारे हाथ से शरबत पीना ग्रच्छा लगता है" ॥ ८ ॥

तब राजा पूछते हैं—"मेरी रानी तुम्हें क्या-क्या ग्रच्छा लगता है ?" तब

उत्तर देती है--"मेरे राजा ! तुम्हारा राज्य तथा गोदी में बच्चा मुझे अच्छा लगता है" ।। ६ ।।

इस गीत में गर्भाधान के पूर्व तथा बाद की परिस्थितियों का वर्णन किया गया है। प्रत्येक सासु पोते का मुँह देखने के लिए व्याकुल रहती है। वह सभी सम्भव तथा असम्भव प्रयत्न करती है, जिससे उसके पुत्र के पुत्र हो, और वंश-वृक्ष सुरक्षित हो जाय।

(५)

कौने मास फूली करैली कौने मास बहुआ गरभ से।
सावन फूली करैली रे भादौं मास बहुआ गरभ सन ॥ १ ॥

आगे चली ननदिया पाछे चली भवजिया हो ऐ लालना।
अब कस भौजी दुबरान्यू हाँ रे लालना!
काह करौं मोरी ननदी तोरे भइयै गजबु कई डारा ॥ २ ॥

ननदी अस चल बाँकी जाय अम्मा बतलानी।
मैं तो अच्छा सगुन लै आयूँ हाँ रे लालना।
तेरी बहुआ तो गरुए गरभ सन हाँ रे लालना ॥ ३ ॥

सासू अस चल बाँकी जाय पुरिख बतलानी।
मैं तो अच्छा सगुन लै आयूँ हाँ रे लालना।
तेरी बहुआ गरुए गरभ सन हाँ रे लालना ॥ ४ ॥

पुरिखा अस चले बाँके बजरिया माँ ठाढ़े।
उइ तो गुरु औ सोंठि बेसाहैं हाँ रे लालना ॥ ५ ॥

बहुरिया की साधैं पुरावैं हाँ रे लालना।
आठ मास नौ लाग बहुरिया का पेट पिराना ॥ ६ ॥

पाँवरिये दीन्ह असीस बहुरिया के भये नन्दलाला।
क्या मोहरें क्या अशर्फी हाँ रे लालना ॥ ७ ॥

क्या साला क्या दुसाला हाँ रे लालना।
एतना गायों और बजायों यहि जच्या का जी न पसीजा।
यहि जच्या का पत्थर कलेजा ॥ ८ ॥

किस महीने करैली फूली, किस महीने से बहू गर्भवती है ? सावन महीने में करैली फूली और भादों महीने में बहू गर्भवती हो गई ।। १ ।।

आगे ननदी चली और पीछे-पीछे भौजाई । ननद भौजाई से पूछती है, "भाभी तुम क्यों दुबली हो रही हो ?" तब भाभी उत्तर देती है, 'क्या कहूं ननदी, तुम्हारे भैया ने गजब कर दिया" ।। २ ।।

यह सुनकर बहुत खुश होकर ननदी ने अम्मा के पास जाकर बताया— "मैं अच्छा सगुन लेकर आई हूं, तेरी बहू गर्भवती है" ।। ३ ।।

यह सुनकर सास बहुत ही प्रसन्न होकर घर के पुरिखा (अपने पति) के पास गई, और कहा—"मैं अच्छा सगुन लेकर आई हूं, तुम्हारी बहू पूर्ण गर्भवती है" ।। ४ ।।

ऐसा सुन कर घर के पुरिखा बड़े उत्साह से बाजार चल दिये और वे वहाँ गुड़ और सोंठ खरीद रहे हैं ।। ५ ।।

वह अपनी बहू की साधों को उत्साह के साथ पूरा कर रहे हैं। आठ मास के व्यतीत होते और नवें के लगते ही बहू का पेट दर्द करने लगा ।। ६ ।।

दाई ने बाहर आकर आशीष दिया और बताया कि बहू के पुत्र हुआ है । इस पर क्या मोहरें, और क्या अशर्फी, क्या शाल और क्या दुशाले सभी मामूली बात थीं ।। ७ ।।

किन्तु गाने वाली औरतों की शिकायत है कि हमने इतना गाया और बजाया लेकिन अब्बा का कलेजा न पसीजा, उस का कलेजा पत्थर का है । ।। ८ ।।

दोहद

(६)

खिचड़ी

अगने तोरे चनन बड़ा रुख तेहि तरे सेजिया बिछाइये ।
तेहि पर सोवें कवन रामा रनियाँ डोलावहि रसबेनियाँ ।। १ ।।

रनिया ते रजवा पूछन लागे अब काहे के तुम्हें साध रे ?
हमका तो रे सलोने राजा खट्टे के साध अब कुछ खट्टा चाहिए ॥ २ ॥
आम का अमचुल यों बना राजा टिकिया और फारा यों बना ॥
राजा मीठी अचारी यों बनी, राजा मीठा मुरब्बा यों बना ॥ ३ ॥
खट्टा तौ रे, सलोनी रानी खट्टे के साध, बेटा जाई खट्टे के साध ।
अब काहे के साध ॥ ४ ॥
हमका तौ रे सलोने राजा मेवा के साध, अब कुछ मेवा चाहिए ।
गरी तौ रे बम्बई से मँगावौ दाख छुहारा यों बना ।
बादाम, चिरौंजी यों बनें राजा मखाने के लावा यों बने ॥ ५ ॥
मेवा तौ रे, सलोनी रानी मेवा के साध ।
बेटा जाई मेवा के साध, अब काहे के तुम्हें साध रे ॥ ६ ॥
हमका तौ रे, सलोने राजा मीठे के साध अब कुछ मीठा चाहिए ।
पेरा तौ रे मथुरा ते मगावौ खजुहा की बर्फी यों बनी ।
कनउज के गट्टा यों बने, राजा अमनी की लेड़ुई यों बनी ।
लखनऊ की खुटिया यों बनी, बरा बरौली के यों बने ।
राजा खाजा और खुरमा यों बने, राजा तातों जलेबी यों बनी ।
राजा बतासा गंगाघाटों के यों बने ॥ ७ ॥
मीठा तौ रे सलोनी रानी मीठा के साध ।
बेटा जाई अब काहे के तुम्हें साध ? ॥ ८ ॥
हमका तौ रे, सलोने राजा करुए के साध अब कुछ करुआ चाहिए ।
सोंठि तौ रे, कलकत्ते ते मगावौ, करुई पिपरिया मगावौ ।
हरदी तौ रे अम्बा से मँगावौ जवाइनि जँमीराबाद की रे ।
सूद तो श्यामागढ़ ते मँगावौ ॥ ९ ॥
करुआ तौ रे सलोनी धन करुआ के साध ।
बेटा जाई अब काहे के साध ? ॥ १० ॥
हमका तौ रे, सलोने राजा कपड़ा के साध, अब कुछ कपड़ा चाहिए ।
लहँगा तौ रे, अतलस का मँगवाऊँ पर दुपट्टा यों बना ।
राजा लाल चदरिया यों बनी कुर्ता फतुही यों बनी
सारी तौ रे बनारस से मँगावौ, जम्फर ब्लाउज यों बना ॥ ११ ॥
कपड़ा तौ रे, सलोनी धना कपड़ा के साध
बेटा जाई कपड़ा के साध, अब काहे के साध ? ॥ १२ ॥

हमका तौ रे, गहना के साध, अब कुछ गहना चाहिए।
कंकना तौ रे, ढाके ते मँगावौ ऊपर पहुँची यों बनी।
राजा छल्ला मुँदरिया यों बनी, हथफूल गलफूल यों बने।
राजा छन्नी पछेला यों बने राजा तैना औ बाँके यों बने।
राजा पट्टी बजुल्ला यों बने ढार औ कटिया यों बने।
राजा झुमका औ बाली यों बने राजा माथे के बेंदियाँ यों बनी।
राजा नकबेसरिया यों बनी वोहि पर लटकन यों बना।
राजा गले हे गुलूबन्द यों बना राजा गरे हे का कण्ठा यों बना।
राजा निकलिस हरवा यों बना राजा कमर के पेटी यों बनी।
राजा पैर की छागल यों बनी राजा झाँझें औ लच्छी यों बनी।
राजा कड़ा औ छड़ा यों बने राजा पाँव के बिछुआ यों बने॥ १३॥
गहना तौ रे, सलोनी धना गहना के साध
बेटा जाई, अब तुम्हें काहे के साध?॥ १४॥
हमका तौ रे, खिचड़ी के साध, अब कुछ खिचड़ी चाहिए।
चाउर तौ रे बगाले से मँगावौ दारि हरेरी मूँग की।
निमकु तौ रे श्यामलगढ़ ते मँगावौ हींग लाहौर देस ते।
घिउ तौ रे अरे मुरही का मँगावौ एकु पिअर दूजे सोंध है।
बटुआ तौ रे भारत ते मँगावौ कांचन थारी यों बनी।
राजा ऊपर कटोरा यों बना ऊपर चमचा यों बना॥ १५॥
खिचड़ी तौ रे, सलोनी धना तुमका खिचड़ी के साध।
बेटा जाई, अब काहे के तुम्हें साध है?॥ १६॥
हमका तौ रे, सलोने राजा ललना के साध
अब हमें ललना चाहिए॥ १७॥
पलँगु तौ रे चन्दनु का मँगावौ मचवन ईंगुरु ढराइये।
चारिउ पाटिन अरसी लगाइये राजा रेसम बान बिनाइये॥ १८॥
राजा गद्दा गलीचा यों बना राजा तोसका तकिया यों बनी
राजा पानन डिब्बा यों बना, राजा झझन गेडुआ यों बना
राजा बाँके सिपहिया तुम बनो राजा बाँको छबीली मैं बनूँ॥ १९॥
ललुआ तौ रे, ललुआ के साध
बेटा जाई, अब तुम्हें काहे के साध?॥ २०॥

हमका तौ रे, सलोने राजा अब नहिं चाह
हाथ जोरि विनती करौं ॥ २१ ॥
जेहिके तौ रे सलोनी धना एतना न होय सो दुखिया वह क्या
करे ॥ २२ ॥
जेहिके तौ रे सलोने राजा एतना न होय
जाय भुसौरा मा सोय रहै
जाय खरिहाने मा बसि रहै
आयत पायत सोय रहै ॥ २३ ॥
जेहिके तौ रे सलोने राजा एतना न होय
जाय कुकुरि सँग सोय रहे ॥ २४ ॥
अँगना तौ रे, सलोने राजा कुइयाँ खँदाव
राजा दुस्मन औ बैरी डूबि मरैं ॥ २५ ॥

तुम्हारे आंगन में चन्दन का एक बड़ा वृक्ष है, जिसके नीचे पलंग बिछवाओ। उस पर अमुक रामा लेटे हैं, उनकी रानी धीरे-धीरे प्रेम से पंखा झल रही है ।। १ ।।

रानी से राजा पूछने लगे कि अब तुम्हें किस चीज की साध है, तो रानी उत्तर में कहती हैं, "मेरे सुन्दर राजा मुझे खट्टे की साध है, मुझे खट्टा चाहिए" ।। २ ।।

"आम का अमचुल इतना अच्छा बना है, टिकिया और फारा भी इतना अच्छा बना है, और राजा! मीठी अचारी भी बहुत अच्छी बनी है और मुरब्बा भी बहुत अच्छा बना है" ।। ३ ।।

"अच्छा, खट्टा तो हुआ, मेरी सुन्दर रानी तुम्हें खट्टे की साध है। पर अब और भी किसी चीज की साध है ?" ।। ४ ।।

"मेरे सुन्दर राजा मुझे तो अब मेवे की इच्छा है, अब कुछ मेवा चाहिये। गरी तो बम्बई से मँगवाओ, और किसमिस छुहारे तो इतने अच्छे हैं, राजा! बदाम, चिरौंजी और मखाने के लावा भी बहुत अच्छे हैं" ।। ५ ।।

"अच्छा मेवे की बात यों हुई। मेरी सलोनी रानी! अब तुम्हारी और क्या साध है ?" ।। ६ ।।

"सलोने राजा ! मुझे तो मिठाई की इच्छा हो रही है अब कुछ मिठाई चाहिए । पेड़ा मथुरा से मंगवाओ और खजुआ की बर्फी भी बहुत अच्छी बनती है, कन्नौज के गट्टा और असनी की लेड्डई भी राजा ! इतनी अच्छी बनी हैं लखनऊ की रेवड़ियाँ; और रायबरेली के बडा भी बहुत अच्छे बने हैं, राजा ! खाजा, खुरमा और गरम जलेबी भी बहुत अच्छी हैं; राजा गेगासों के बताशे भी इतने अच्छे बने हैं" ।। ७ ।।

"अच्छा रानी ! मीठा तो यों रहा, अब तुम्हारी और क्या इच्छा है ?" ।।८।।

"सलोने राजा ! मुझे तो कुछ कडुवे की साध है, अब कुछ कडुवी, तीखी चीजें चाहिए । सोंठ कलकत्ते से मँगवाओ, और कडुवी पिपरी भी और हल्दी तो अम्बा से और अजवाइन जमीराबाद से और मूढ़ श्यामलगढ़ से मँगवाओ" ।। ९ ।।

'कडुवा तो यों रहा । अब सलोनी रानी ! बेटा देने वाली रानी ! तुम्हारी और क्या इच्छा है ?" ।। १० ।।

"सलोने राजा अब मुझे कपड़े की साध है, मुझे कुछ कपड़ा चाहिए । अतलस का लँहगा मँगवाओ, जिस पर सुन्दर दुपट्टा हो । राजा लाल रंग की चद्दर इतनी अच्छी लगती है, और कुरता बण्डी भी बहुत अच्छी है । साड़ी बनारस से मँगवाओ जिस पर जम्पर ब्लाउज इतना अच्छा लगता है ।"।।११।।

"अच्छा ! कपड़े की बातें तो यों हुई । सलोनी रानी ! बेटा देने वाली रानी ! तुम्हें अब और क्या चाहिये ?" ।। १२ ।।

"अब मुझे गहनों की साध है । मुझे कुछ गहने चाहिए । ककँना तो ढाके से मँगवाओ जिस पर पहुंची इतनी अच्छी लगती है ! राजा! छल्ला और मुंदरी हाथफूल और गलफूल बहुत अच्छे बने हैं ! राजा ! छन्नी, पछेला, तंता और बाँके भी सुन्दर बने हैं। राजा ! पट्टी, बज्जुला, ढार और कटिया भी अच्छे लगते हैं । राजा ! झुमका, बाली और माथे की बेंदी अच्छी बनी है । राजा ! नाक की बेसर (बाली) और उस पर लटकन बहुत ही अच्छा बना है । राजा ! नेकलेस (हार), कमर की पेटी, पैर की छागल, झांझें, लच्छी, कड़ा और छुड़ा तथा बिछुआ बहुत अच्छे बने हैं" ।। १३ ।।

"ये तो गहने की बात हुई । सलोनी रानी ! बेटा देने वाली रानी ! तुम्हारी अब क्या इच्छा है ?" ।। १४ ।।

"सलोने राजा ! मुझे तो अब खिचड़ी की साध है। अब कुछ खिचड़ी चाहिए। चावल बंगाल से मंगवाओ, और दाल हरे मूंग की, नमक श्यामलगढ़ से और हींग लाहौर से। घी तो सुरभी गाय का, जो देखने में पीला और खाने में सौंधा हो। बटुआ भारत से मँगवाओ, और सोने की थाली मँगवाओ जिस पर कटोरा और चम्मच भी हो" ॥ १५ ॥

"अच्छा सलोनी, तुम्हें खिचड़ी की साध है, अब किस चीज की साध है ?" ॥ १६ ॥

"सलोने राजा ! मुझे तो लड़के की साध है। मुझे लड़का चाहिए" ॥१७॥

पलँग चन्दन का मंगवाओ, जिसके पावों में इंगुर ढाला गया हो। चारों पाटियों में आरसी लगवाओ और रेशम के बाधों से बिनवाओ ॥ १८ ॥

राजा ! गद्दा और गलीचा सुन्दर होता है, तोसक और तकिया भी अच्छी है। राजा ! पान का डिब्बा भी सुन्दर है और गेडुआ भी अच्छा बना है और राजा ! बाँके सिपाही तुम बनो और सुन्दर छबीली मैं बनूं ॥ १९ ॥

अच्छा ! लड़के की साध है तुम्हें ? बेटा देने वाली रानी ! तुम्हें अब काहे की साध है ? ॥ २० ॥

सलोने राजा ! मुझे अब और किसी चीज की साध नहीं है। मैं हाथ जोड़ आपको विनती करती हूं ॥ २१ ॥

इतनी सब माँगों को सुन लेने पर राजा पूछते हैं, मेरी सलोनी रानी, जिसके पास यह सब कुछ देने की सामर्थ्य न हो, वह दुखी व्यक्ति क्या करे ॥ २२ ॥

रानी इस प्रश्न का उत्तर कठोर और व्यंगपूर्ण देती है। 'सलोने राजा ! जिसके पास इतना न हो, वह भुसौरा (भुस रखने की कोठरी) में जाकर सोये, बाहर खलिहान में रात बिताया करे या पाँयताने (पलँग पर सोने वाले के पाँवों की तरफ सोया करे)" ॥ २३ ॥

इतने से ही उसे सन्तोष नहीं होता, और भी आगे वह कहती है "सलोने राजा ! जिसके पास इतना न हो, वह कुतिया के संग सोये। फिर स्वयं ही एक युक्ति बताती है—सलोने राजा आँगन में एक कुआ खुदवाओ जिसमें दुश्मन डूब कर मर जाये। (संकेत है कि शत्रुओं के मर जाने से यह सब कुछ मिल जायेगा)।

इस लम्बे गीत में साधों की एक लम्बी सूची दी गई है। गहनों की सूची तो विशेष लम्बी है, जिसमें गहनों के विषय में रोचक विस्तार प्राप्त होते हैं।

इनमें से अनेक गहने तो अब बिल्कुल ही नहीं पहिने जाते हैं। साधों की इस विस्तृत सूची को देकर गीत में विनोद भरा गया है। अन्तिम पंक्तियाँ अश्लील हैं परन्तु निकम्मे वादों के लिए इनमें एक सख्त चुनौती है। यह गीत विशेष रूप से जच्चा के मनोरंजन के लिए है। एक स्थान पर खिचड़ी की इच्छा प्रकट की गई है। उसी के आधार पर गीत का नामकरण भी "खिचड़ी" कर दिया गया है।

———

सरिया

(२)

सरिया, छन्द तथा गाने की तर्ज की दृष्टि से सोहर से भिन्न है। विषय दोनों का एक ही—पुत्र-जन्म। पुत्र-जन्म पर सर्वप्रथम सरिया ही गाई जाती है तत्पश्चात् विविध प्रकार के सोहरों का गान होता है। पुत्र-जन्म के समय पर पड़ोस की स्त्रियाँ एकत्र होकर जच्चा का मनोरंजन करती हैं और शुभ कामनाएँ प्रकट करती हैं। यह सब कार्य गीतों के माध्यम से होता है। पुत्र की प्रत्येक वर्षगाँठ में तथा छठी, पसनी, मुण्डन तथा छेदन इत्यादि अवसरों पर सरिया अवश्य गाई जाती है। साथ में सोहर भी गाये जाते हैं। सरिया के बहुत लम्बे होने के कारण कम औरतें ही इसे पूरा गा पाती हैं। अनेक स्थानों और अनेक स्त्रियों से सरिया सुन कर मैंने गीत का प्रस्तुत रूप प्राप्त किया है। लोकप्रिय तथा प्रचलित होते हुए भी बहुत संभव है कि निकट भविष्य में सरिया का लोप हो जाये क्योंकि एक भी युवती अथवा प्रौढ़ा इस गीत को नहीं सुना सकीं यद्यपि वे गीत का कुछ भाग अवश्य जानती थीं। इसके गाने की विधि बहुत ही प्रवाहपूर्ण, सरल, मधुर एवं प्रभावपूर्ण है। विषय को इतने रोचक तथा विस्तृत ढंग से प्रस्तुत किया गया है कि एक प्रभावपूर्ण नाटक का मजा आता है। वर्णन तथा संवाद बहुत ही चुभते हुए तथा विनोदपूर्ण हैं। हास्य की बड़ी ही सुन्दर परिस्थितियों की परिकल्पना की गई है। स्थायी "मोरे लाल" की माधुर्यपूर्ण पुनरावृत्ति श्रोता को लुब्ध कर लेती है।

इस गीत में पुत्र-जन्म के पूर्व जच्चा की पीड़ा, पति का दाई को लिवाने जाना, दाई के नखरे करना और उसका महारानी की भाँति पालकी में आना, नेग न मिलने पर झगड़ना, जच्चा की धमकियाँ तथा अन्त में भली-भाँति पुरस्कृत होने पर आशीष देते हुए जाना ये ऐसी नाटकीय परिस्थितियाँ हैं जो बिलकुल यथार्थ और रोचक हैं। अपने स्वार्थ पर सर्वस्व उत्सर्ग के वायदे और स्वार्थ-पूर्ति के उपरान्त दाई को बिना पारिश्रमिक दिये प्रसूतिगृह से निकाल

देना, सामाजिक यथार्थ का बड़ा ही सुन्दर व्यंग्य है। "लँगोटा मारे हम चलैं तोरे साथ" की पंक्ति तक गीत की मुस्कुराहट अट्टहास में फूट पड़ती है। अन्त में दाई के आशोष के साथ गीत में व्यक्त सारे संघर्ष का शमन हो जाता है और शान्ति और सन्तोष का कल्याणमय वातावरण निर्मित हो जाता है।

सरिया

(२)

सरिया खेलन्ते कवन रामा, रानी के कवन रामा।
कहाँ सारी खेलिए मेरे लाल ?
सरिया तो धरहु उठाय तो झड़ुले बिरिछु तरे।
तमोली की हाटिया मेरे लाल ?
तुम्हें रानी बोलती मेरे लाल ॥ १ ॥
एक पाँव धरेनि डेहरिया तौ दूसर पलंग पर लई धना कंठ लगाइ—
"कहो धना वेदना मेरे लाल" ॥ २ ॥
"लाज शरम केरी बात, सकुच केरी बात
मरद आगे क्या कहौं मेरे लाल" ॥ ३ ॥
"मोरा तोरा अन्तर एक कपट जिया नहीं- भेद जिया नाहीं-
कहौ दिल खोलि कै मेरे लाल ?
कहौ समुझाई कै मेरे लाल" ॥ ४ ॥
'बावाँ कूल मोर कसके, दहिन मोरे साले,
मारे पजँरवा कै पीर, चतुर दाई चाहिए मेरे लाल।
सुघर दाई चाहिए मेरे लाल" ॥ ५ ॥
''दाई के देस नहिं जान्यों कोस नहीं जान्यों
सुघर दाई कहाँ बसै मेरे लाल ?
चतुर दाई कहाँ बसै मेरे लाल ?" ॥ ६ ॥
"पूछो न माया बहिनियाँ, सगी पितिअनियाँ
कुआँ पनिहरियाँ, सहर के लोग से मेरे लाल
नगर के लोग से मेरे लाल" ॥ ७ ॥
"पूँछेनि माया बहिनियाँ, सगी पितिअनियाँ,
कुँआ पनिहरियाँ, सहर के लोग से मेरे लाल
नगर के लोग से मेरे लाल" ॥ ८ ॥

ऊँचा सा नग्र अजोध्या हरे बंस छावा,
अगर चन्दन का है रूख चम्पे केरी डार
गुलाब सुहावन मेरे लाल ॥ ६ ॥
अगिले के घोड़वा रामचन्द्र पछिले लखन लाल
पछिले भरत जो उलल बछेड़वा सत्रुघ्नरामा
दाई माई लेन चले मेरे लाल
सुघर दाई लेन चले मेरे लाल ॥ १० ॥

टटवा मोरा चिंचिआय कुकुर दुइ भूँकैं
कौन छैलु दुआरे ठाढ़—,
सो सोवत जगाइए मेरे लाल !
सो एती राती आइए मेरे लाल ? ॥ ११ ॥

केहि को हो तुम नाति केहि के बेटा,
कौनी बहुरिया के नाह—,
सो सोवत जगाइए मेरे लाल ॥ १२ ॥

बाबा के हम नाति (जसरथ) 'कवन' केरे बेटा
हम घर रनियाँ गरभ सन दरद बहुत ह्वै मेरे लाल,
तो चलहु बुलावतीं मेरे लाल ॥ १३ ॥

दाई तो बैठी पलँग चढ़ि, अंजन मंजन कीन्हें ।
सोरहों सिंगार कीन्हें नैन कजरु दीन्हें ।
माँग सेंदूर भरे मुखहू तम्बोलु खाये
बोलत गर्भ भरी मेरे लाल
उतरु नहिं देति है मेरे लाल ॥ १४ ॥

तेरी धना हँथवा के माँकरि मुँह के फोहरि ।
देई नहिं जानति मेरे लाल
अदरु नहिं जानति मेरे लाल ॥ १५ ॥
"मेरी धना हँथवा के गहवरि मुख मिठ बोलनी
देई भल जानति मेरे लाल" ॥ १६ ॥
सासू ननद के बहुरिया
अदरु भल मानती मेरे लाल
हुकुम भल मानति मेरे लाल ॥ १७ ॥

"कि तोरी माया पिरवानी, बहिनि दुख पाइए मेरे लाल" ॥ १८ ॥
"माया के अदरु न जान्यों बहिनी रजनघर
पान फूलु ऐसी रनियाँ तो दर्द बहुत ह्वै मेरे लाल
तो चलहु डुलावति मोरे लाल" ॥ १९ ॥
आवो पलँग पर बइठो करौ मोसे बचन
कहा मोहे देओगे मेरे लाल ॥ २० ॥
जो होइहैं नन्दलाल-मैं अगरु गढ़इहौं ।
मैं पाट पुहइहौं, मैं घर पहुँचाइहौं मेरे लाल ॥ २१ ॥
जो मोरे लक्षमिन धेरिया कुसुम रंग चूनरी लाल ॥ २२ ॥
"जेठ बैसाख केरा घाम, ऊपर ते चलै लूक ।
लूके माँ दाई न चलैं मेरे लाल" ॥ २३ ॥
"तुम मेरा घोड़ा लेहु, बछेड़ा लेहु ।
सईसे बनि हम चलैं तोरे साथ" ॥ २४ ॥
"सावन भादौं केरी कीच अँधेरिया राति
कीचन दाई न चलैं मेरे लाल" ॥ २५ ॥
"नौमन सरसौं पेराऊँ, मसाल जलाऊँ
उजेरे दाई लै चलौं मेरे लाल" ॥ २६ ॥
"माँह पूस केरा जाड़ जाड़न दाई न चले मेरे लाल" ॥ २७ ॥
"तुम मेरा साला लेहु, दुसाला लेहु
उघारे दाई हम चलैं तेरे साथ ।
लँगोटा मारे हम चलैं तेरे साथ" ॥ २८ ॥
दाई डोले असवार दसै जन आगे दसै जन पाछे
माँझे की पलकिया माँ दाई तो चँवर डुलत आवे मेरे लाल ।
हुकुम करत आवे मेरे लाल ॥ २९ ॥
दाई तो आई दुआरे, पँवरि दुआरे
सगुन रस भले भये मेरे लाल ॥ ३० ॥
घोड़ी तो ब्यानी घोड़सार,
भैंसि कुस डाभर,
दही की दहेड़ी लाई ग्वालिनि
धीमर लायो माछिरी मेरे लाल ॥ ३१ ॥

"आवो पलँग पर लेटौ मलौं रस पेडुरी मेरे लाल" ॥ ३२ ॥
लावो न करुवा तेलु, मलौं तेरा पेट,
हलाई झुलाई मलौं रस पेंडुरी मेरे लाल ॥ ३३ ॥
भोर भयो पौ फाटत, लालन उर धरयो मेरे लाल।
लालन जल्म लियो मेरे लाल।
झँडुलवा जल्म लियो मेरे लाल ॥ ३४ ॥
पूतु दीन्ह करतार, विधाता नाथ
सासु केरि भागि, ससुर केरि भागि, हमरिउ भागि
लँगड़िया दाई क्या कियो मेरे लाल।
हुडुकनियाँ दाई क्या कियो मेरे लाल ॥ ३५ ॥
खाइनि गुरु औं सोंठि रचाइँनि-दाँत, भई मतवाल।
लालन लइकै सोय रहीं मेरे लाल ॥ ३६ ॥
दाई कीन्ह बकवाह उठी सिर पीर
लँगड़िया दाई परदे से बाहर हो ॥ ३७ ॥
दाई के बड़े बड़े दाँत ऊपरा ऐसे होंठ।
होरिलवा देखि डरै मेरे लाल ॥ ३८ ॥
सेरु भरि जौ का आँटा टका एकु रोंक
तो गुरु केरी डेली छिनरिया का करौ विदा मेरे लाल ॥ ३९ ॥
आवैगी मेरी सासु, करे तोरे बाँसु,
बाँसु लइकै जाओ घरै मोरे लाल ॥ ४० ॥
आवेगा मेरा जेठ रखै तेरा पेटु
पेटु लइकै जाओ घरै मोरे लाल ॥ ४१ ॥
आवेगा मेरा देवर चलावै तेरे तीर
घाव लइकै जाओ घरै मेरे लाल ॥ ४२ ॥
आवेगा मेरा राजा धरेगा तेरी बाँह
सवति होइकै रहो घरै मेरे लाल ॥ ४३ ॥
फटकै ह्वै मति जायो,
फाटक कै रखवाल कैद करैं मेरे लाल ॥ ४४ ॥
खिड़की ह्वै मति जायो,
घोड़ा मेरा लात मारै मोरे लाल ॥ ४५ ॥

दुआरे ह्वै मति जायो,
कुकुरी मेरी, टाँग धरै मेरे लाल ॥ ४६ ॥
आँगन है बड़ी कीच
लँगड़िया दाई रपटि पड़ै मेरे लाल ॥ ४७ ॥
ऐसे बोल मति बोलो
सुहागिनि नारि, सपूती नारि,
तौ फिरि मोसे काम पड़ै मेरे लाल ॥ ४८ ॥
सखियाँ माँ बैठे हैं राजा तौ उनका बोलावौ।
अलबेली जच्चा के नौमति करैं मेरे लाल।
सुहागिनि जच्चा के नौमति करैं मेरे लाल ॥ ४९ ॥
दीन्हेन्हि नथुनी औ लटकनु, काने के रे बारी पत्त।
दसहूँ मुँदरिया अनवट बिछुआ
गरे गजमोतिन हारु तौ चौकी जड़ाये की मेरे लाल ॥ ५० ॥
दीन्हेन्हि रुपिया पाँच जवन केरी मोट,
हरद केरि गाँठ मद कै गगरिया सिर पै
पियाला वोहि के हाथ, पियत झुकत घर जाहु,
दोहाई नन्दलाल की मेरे लाल ॥ ५१ ॥
दाई देति असीस, बढ़ौ जगदीस,
लला का बाबा, लला का चाचा,
लला का बप्पा लला का भैया,
लला का जीजा, फूफा लला का नाना, मामा,
तौ सब परिवार से मेरे लाल।
तौ हमरी असीस लगै मेरे लाल।
सुहागिनि और जलमियो मेरे लाल।
तो नित उठि आइये मेरे लाल ॥ ५२ ॥

भीतर से दासी ने आकर पाँसा खेलते हुए रानी के पति तथा देवरों से कहा कि आप लोग पाँसा खेल रहे हैं ? इस पाँसा को उठाकर सघन वृक्ष के नीचे रख दो अथवा तम्बोली की दूकान पर रख दो, आप को भीतर रानी बुलाती हैं। इतना सुनते ही रानी के राजा ने एक पाँव देहरी पर रखा और

दूसरे में तुरन्त रानी के पास पहुंच गये। और रानी को गले से लगाते हुए पूछने लगे कि तुम्हें क्या कष्ट है? तिस पर रानी कहती है कि बताने में शर्म लगती है और फिर आप पुरुष हें आपके सामने कैसे कहूं।। १, २, ३, ४।।

इस पर राजा कहते हें और समझाते हें कि हमारा-तुम्हारा हृदय एक है; मन में किसी प्रकार का न तो भेद है और न कपट है इसलिये तुम दिल खोल कर निःसंकोच कहो।। ५।।

इस आश्वासन के उपरान्त रानी कहती हें किन्तु केवल सांकेतिक शब्दों में—"कि मेरी कमर का बांया भाग दर्द कर रहा, है दायां भाग भी पीड़ा दे रहा है और पार्श्व की पीड़ा तो असह्य हो रही है—एक चतुर तथा सुघड़ दाई चाहिए"।। ६।।

राजा दाई का घर नहीं जानते, दाई कितनी दूरी पर रहती है यह भी नहीं जानते। अतएव रानी से ही पूछते हें सुघड़ दाई कहां रहती है।। ७।।

इस पर रानी कुछ खीझ कर कहती हें कि दाई का घर अपनी मां-बहन से पूछो, चाची से पूछो, कुएं पर पानी भरने वाली पनिहारिन से पूछो, शहर के लोगों से पूछो।। ८।।

ऐसा सुन कर राजा ने उन सभी लोगों से पूछा कि दाई कहां रहती है। लोगों ने बताया कि अयोध्या एक बड़ा शहर है जिसके चारों ओर बांसों के झुरमुट हें और जहां चन्दन वगैरह के सुगंधि वाले वृक्ष हे जहां चम्पा (के फूल) बहुत हें और गुलाब खिले हुए हें।। ९, १०।।

इस वर्णन के सुन लेने पर राजा घोड़े पर आगे-आगे चलते हें और पीछे उनके छोटे भाई खूब उछलने वाली घोड़ी पर दाई को लिवा लाने के लिये चल देते हें।। ११।।

और जब दाई के दरवाजे पर पहुंचते है, तो दाई बांस के फाटक के खोलने की आवाज से तथा कुत्तों के भौंकने से जाग जाती है और कुछ चिढ़ कर कहती है कि इतनी रात गये कौन सा छैला जगा रहा है? फिर आये हुए लोगों को सम्मुख पाकर उनका परिचय पूछती है कि तुम किसके नाती हो, किसके बेटे हो और किस रानी के राजा हो जो मुझे रात में जगा रहे हो। राजा अपने को अपने बाबा का नाती, बाप का बेटा होने का परिचय देते हें और उससे विनती करते हें कि मेरी रानी गर्भ से हें और उनको असह्य पीड़ा हो रही है इसलिये तुम्हें बुलाती हें।। १२, १३, १४।।

इतना सुनकर दाई पलँग पर बैठ जाती है । (उसका रूप वर्णित है) वह अंजन और मंजन किये हुए है, आँखों में काजल लगाये हुए है, सोलहों शृंगार कर रखे हैं, माँग में सिंदूर भरे है और मुँह में पान भरे हुए है और जब बोलती है तो गर्व से; नहीं तो उत्तर ही नहीं देती ।।१५।।

फिर वह कहती है कि तुम्हारी रानी कंजूस है और भद्दी बातें करती है । और न तो देना जानती है और न आदर-सत्कार करना जानती है ।।१६।।

इस पर राजा कहते हैं कि मेरी पत्नी बड़ी दानी है और मीठे बचन बोलने वाली है और देना खूब जानती है । सासु-ननद के साथ रहने वाली बहू है. वह अदब तो बहुत ही करती है, और आज्ञापालन भी खूब करती है ।।१७, १८।।

फिर भी दाई राजा से मजाक करती हुई पूछती है कि तुम्हारी माँ के पेट में वेदना है कि बहिन के पेट में दर्द हो रहा है ? इस पर राजा कुछ रुष्ट हो जाते हैं और कहते हैं कि तेरे हृदय में माता के लिये कुछ भी सम्मान नहीं है, और बहिन अपने पति के घर है । पान-फूल के समान कोमल मेरी रानी के बहुत पीड़ा हो रही है इसलिये शीघ्र चलो तुम्हें बुलाया है ।।१९, २०।।

तब दाई उनसे अपने पलँग पर बैठने को कहती है और चलने के पूर्व ही वह राजा से जान लेना चाहती है और वचन ले लेना चाहती है कि वह क्या देंगे ।।२१।।

इस पर राजा कहते हैं कि यदि मेरे लड़का होगा तो मैं तुम्हें (अगरु) गहना बनवा दूंगा और पुहाकर तुम्हारे घर तक भिजवा दूंगा । और जो मेरे लड़की होगी तो तुम्हें एक कुसुम रंग की चुनरी मिलेगी ।।२२, २३।।

यह सुन कर दाई नखरे करने लगती है और कहती है, "जेठ महीने की कड़ी धूप है ऐसी कड़ी धूप में मैं नहीं चलूंगी ।" राजा इस बात को सुन कर दाई की सवारी के लिये घोड़े-बछेड़े देने को कहते हैं और स्वयं सईस बन कर चलने के लिये तैयार हैं ।।२४, २५।।

(और यदि बरसात का मौसम और रात का मौका हुआ तो दाई कहती है) बरसात के कारण रास्ता कीचड़ से भरा है और काली अंधेरी रात है, मैं ऐसी हालत में नहीं चलूंगी ।।२६।।

राजा कहते हैं कि मैं नौ मन सरसों पेरा कर उसके तेल से मसाल जलाऊंगा और उजेले में तुम्हें ले चलूंगा ।। २७।।

(और यदि सर्दी के दिन हुए) पूस माह की ठिठुराने वाली सर्दी में वह जाने से इन्कार करती है ।।२८।।

तब राजा अपना साल-दुसाला देने को तैयार हो जाते हैं और स्वयं केवल लंगोट तक पहिन कर चलना स्वीकार कर लेते हैं ।।२९।।

तब कहीं दाई पालकी में बैठ कर चलने के लिये राजी होती है। जब उसकी पालकी चलती है तब उस पर चंवर ढले जाते हैं और दस आदमी उसकी पालकी के आगे और दस ही पीछे चलते हैं जैसे किसी महारानी की सवारी जा रही हो: और बीच-बीच में वह हुक्म भी देती चलती है ।।३०।।

इस प्रकार दाई की पालकी पौरी के सामने आकर ठहरती है। उसके आते ही अच्छे-अच्छे सगुन होने लगते हैं—घोड़ी घोड़साल में ब्याई और भैंस भी हरे कुस चबा रही है अर्थात् वह भी ब्याई है; और ग्वालिनि दही की मटकी लेकर आई है और धींवर (मल्लाह) मछलियां लेकर आया है। दाई घर में प्रवेश कर रानी के पास पहुंचती है। रानी को पलंग पर लिटा कर धीरे-धीरे उसकी पिंडुलियां मलती है। उसके बाद कड़वा तेल मंगवा कर उसका पेट मलती है और पौ फटते ही बच्चा जन्म लेता है ।।३१, ३२, ३३, ३४, ३५।।

भगवान ने बच्चा दिया है। सासु, ससुर की भाग्य से लड़का हुआ है,—और मेरे भाग्य से भी—इस लँगड़ी और झगड़ालू दाई ने क्या किया ।।३६।।

रानी गुड़ और सोठ से बना हुआ 'सुठैला' खाकर मुंह को पान से रचा कर बच्चे को लेकर सो रही। दाई कुछ न पाकर झगड़ने लगती है, जिस पर रानी के सिर में दर्द होने लगता है। और वह लँगड़िया दाई को प्रसूति घर से बाहर निकल जाने के लिये कहती है। रानी दाई पर दो दोषारोपण करते हुए कहती है "दाई के बड़े-बड़े दांत हैं और मोटे बदसूरत होंठ हैं,—जिन्हें देख कर मेरा बच्चा डर जायेगा। इसलिये सेर भर जौ का आटा, दो पैसे और एक छोटी सी गुड़ की डली देकर इस बदमाश दाई को बिदा करो। और फिर भी यदि तू नहीं जाती तो मेरी सासु आयेगी और तेरे बाँस डाल देगी और तब वही बाँस लिये घर जाना। नहीं तो मेरा जेठ आयेगा जो तुझे गर्भवती कर देगा तब पेट लेकर जाना, और जो मेरा देवर आयेगा तो वह तेरे तीर मारेगा तब घाव लेकर जाना और जो मेरा पति आयेगा तो तुम्हारी बाँह पकड़ेगा तब तू मेरी सौत बन कर यहीं रहना ।।३६-४३।।

दाई को और भी परेशान करने के लिये और चिढ़ाने के लिये रानी कहती है।

फाटक होकर मत जाना वहाँ पहरेदार तुझे गिरफ्तार कर लेंगे, पिछवाड़े के छोटे दरवाजे से होकर भी मत जाना वहाँ घोड़ा बंधता है जो तुझे लातें

मारेगा, दरवाजे से भी मत जाना वहाँ कुतिया पैर काट लेगी। आँगन में बड़ी कीचड़ है जहाँ फिसल कर गिर पड़ेगी" ।।४४, ४७।।

दाई दुखी होकर कहती है, "तुम सौभाग्यवती स्त्री हो, पुत्रवती हो, ऐसे शब्द तुम्हें शोभा नहीं देते। मुझसे तुम्हारा काम फिर पड़ेगा" ।।४८।।

"सभा में राजा बैठे हुए हैं उनको बुलावो—अलबेली (अनोखी) जच्चा ?—वे तुम्हारी दुर्गति करेंगे ।।४६।।

इस पर दाई को खूब अच्छी तरह से इनाम दिया जाता है। नथ, लटकन बालियां इत्यादि, दसों उँगलियों के लिये अँगूठियां, बिछुए, गजमुक्ताहार और रत्नजटित चौकी दी ।।५०।।

पांच रुपये और जौ की बड़ी सी गठरी, हल्दी और शराब की मटकी उसके सिर पर और हाथ में प्याला दिया और शराब पीकर मस्त झूमती हुई जाने के लिये कहा। इस पर दाई प्रसन्न होकर बधाई और आशीष देने लगी ।।५१।।

दाई आशीष देती है, पुत्र के बाबा, चाचा, पिता, भैया, जीजा, फूफा, नाना, मामा तथा परिवार के अन्य सभी लोग दीर्घायु हों। मेरी आशीष सब को प्राप्त हो। हे सौभाग्यवती रानी, और पुत्रों को जन्म देना जिससे मैं प्रति दिन आऊँ ।।५२।।

———

सोहर

(३)

पुत्र-जन्म के अवसर पर सरिया के अतिरिक्त सोहर गाये जाते हैं। लोक-गीतों में सोहर गीतों को विशेष महत्त्व प्राप्त है। क्योंकि इन गीतों की संख्या अनन्त है और विषयों की विविधता भी अपार है। स्त्रियाँ सोहर गाने के लिये बड़ी उत्सुक रहती हैं, विशेष रूप मे वृद्धाएँ; और जिस घर में पुत्र-जन्म का शुभ अवसर हुआ शीघ्र पहुँच जाती हैं। वेदना से कराहने वाला घर मधुर विनोद पूर्ण, संगीतमय सोहरों की मिठास और हुलास से भर जाता है। घर के भीतर गाये जाने वाले सोहरों की मिठास घर के बाहर चौपाल तक पहुँच कर पुत्र-जन्म का सुखद समाचार पहुँचा देती है। ये सोहर अथवा सोहिलो पुत्र-जन्म के सुखद अवसर को मंगलमय बना देते हैं। हमारे पंडितों और पुरोहितों के मंत्र जिसे अभिषिक्त नहीं कर पाते वहाँ हमारे लोकगीत जीवन का स्तवन कर लेते हैं। ये गीत हमारे लोक-जीवन के मंत्र है, प्रेरणा स्रोत हैं।

सोहर विषय तथा अवसरों अथवा संस्कारों के अनुसार दो मुख्य भागों में विभाजित किये जा सकते हैं।

विषय के अनुसार सोहर में पुत्र-कामना, वंध्यापन से निराश स्त्री की आत्महत्या करने के प्रयत्न, देवर-भाभी का अनुचित सम्बन्ध, पति का पर स्त्री, विशेष रूप से मालिन से अनुचित सम्बन्ध, ननद-भाभी के झगड़े, पति का परदेश में होना और देवर मे पुत्रोत्पत्ति, नेग, ननद, देवरानी, जिठानी तथा सासु मे झगड़ा, रविवार के व्रत का पुत्र प्राप्ति के लिये साधन, बधाई, खुशी मनाना इत्यादि सोहर के सामान्य विषय हैं। गर्भावस्था तथा जच्चा के नखशिख-वर्णन भी बड़े विस्तृत तथा रोचक हैं।

अन्य अवसरों तथा पुत्र की आवश्यकताओं के आधार पर भी अनेक सोहर गीत हैं। दौहद, छठी, कठुला, झुंझना, पालना, पलंग, रोचना इत्यादि ऐसे अवसर तथा चीजें हैं जिन पर भी अनेक सोहर गीत हैं।

छन्द तथा गाने की तर्ज में भी पर्याप्त विविधता तथा स्वतन्त्रता है। सोहर अनेक प्रकार के छन्दों में अनेक प्रकार से गाये जाते हैं।

सोहर पुत्र-जन्म से लेकर कर्णछेदन तक सभी अवसरों पर तथा वर्षगाँठों में गाये जाते हैं। श्रीराम इकबाल सिंह ने अपने ग्रन्थ मैथिली के लोक-गीत में कहा है कि सोहर जनेऊ में भी गाये जाते हैं परन्तु अवधी क्षेत्र में सोहर जनेऊ के अवसर पर नहीं गाये जाते। बिलकुल सम्भव है कि सोहर में इतना माधुर्य है कि उनके गाने का आकर्षण कभी कम नहीं होता। अवधी क्षेत्र में जनेऊ के समय बनरा भी गाये जाते हैं जिनका सम्बन्ध समावर्तन संस्कार से है। सम्भव है कि मैथिली प्रदेश में बचपन की स्मृतियाँ अधिक जागरूक रहती हों और अवध में युवक श्रीवर-दूल्हा बनने की भावना अधिक प्रबल हो।

सोहर

(१)

जा दिन लालन तुम भये, मैं बलि जइहौंऊँ रे।
लालन ओहि घरी चननु कटइहों, फुलेलु ढरकइहौंऊ रे॥ १॥
चनन केरी पलकिया, गज ओबरी बिछावहु रे।
लालन आय गई सुख केरी निदियाँ, जगाये नहिं जागहिं रे॥ २॥
तो पाटी लागे ठाड़ी ननदरानी, भौजी जगावहिं रे।
"भाभी तेरे हरि ठाड़े फुलवरिया, मलिनि संग खेलमंइ रे" ॥ ३॥
बगिया से आये हैं रजवा, तो रनियाँ से मनु करैं रे।
जो मोरी मलिनि छुटावै, 'अरे' कहि बोलई रे।
देश निकरि हम जइबै मलिनिया के कारन रे॥ ४॥
काहे का देसु निकरिहौ, अरे मिरी साहिब रे।
राजा मलिनि के बेनिया डोलइबै, मैं चेरिया कहावहैं रे॥ ५॥
काहे क बेनिया डोलइहौ, अरे चेरिया कहइहौ रे।
रानी वह बगवसिनी मलनियाँ तुम कुलतारिन
तुम बंस रोपनि रे॥ ६॥

जिस दिन मेरा पुत्र जन्म लेगा, (उस दिन) मैं बलि-बलि जाऊँगी। मैं उसी समय चन्दन कटवाऊँगी और इतर से सुगन्धित करूँगी॥ १॥

(और) चन्दन के छोटे पलंग को गजओवरी (प्रसूतिगृह) में बिछावाऊँगी। और ऐसा सोचते-सोचते उसे इतनी गहरी नींद आ गई कि जगाये भी नहीं जागती ॥ २ ॥

पलँग की पाटी के पास खड़ी नन्द रानी भाभी को जगा रही हैं। भाभी तुम्हारे राजा फुलवाड़ी में खड़े मालिन से हँसी-मजाक कर रहे हैं ॥ ३ ॥

इतने में बाग से राजा आ गये, और रानी से वाद-विवाद करने लगे। 'जो मेरी मालिनि छुटाने की चेष्टा करती है और मेरा ऐसा करने पर 'अरे' कह कर बोलती है, अर्थात् आपत्ति करती है, (तो) में मालिनि के कारण इस देश से ही निकल जाऊँगा ॥ ४ ॥

इस पर रानी विनीत होकर कहती है "मेरे स्वामी, आप देश से बाहर क्यों निकल जायेंगे। मैं मालिनि के पंखा झलूंगी, और (इससे भी आगे) मैं उसकी दासी बनने के लिये तैयार हूँ" ॥ ५ ॥

रानी के इस विनम्र स्वभाव तथा उत्सर्ग पर राजा पसीज जाता है, कहता है--"तुम उसके पंखा क्यों झलोगी और क्यों उसकी दासी कहलाओगी--मेरी रानी ! वह बाग में रहने वाली मालिनि है और तुम तो कुलतारन हो, वंश वृक्ष का आरोपण करने वाली हो"।

किसी भी स्त्री तथा वंश चलाने वाली पत्नी में इस गीत के द्वारा अन्तर स्पष्ट किया गया है। दोनों में आकाश-पाताल का अन्तर है। वंश वृक्ष का आरोपण करने वाली पत्नी और बाग की मालिनि में क्या समता ! साथही इस गीत में भारतीय पत्नीत्व का आदर्श झलकता है, जो पति की खुशी को अपनी खुशी समझती है, और इसलिये मालिनि की जो उसके पति की आश्ना (प्रिया) है, दासी तक बनने के लिये प्रस्तुत है। यह गीत भारतीय नारी की सेवा और सहिष्णुता का ज्वलन्त उदाहरण उपस्थित करता है।

(२)

गंगा किनारे एकु गोरिया, तो गंगा मनावै रे।
गंगा एकु लहरि तुम लेउ, बूड़न हम आइन रे ॥ १ ॥
की तुम सासु ससुर दुख, नैहर दूरि बसै रे।
की तोरे हरि परदेस कउने गुनु बूड़हऊ रे ॥ २ ॥

न हम सासु ससुर दुख, नैहर दूरि बसै रे।
न मोरे हरि परदेस, कोखिया गुनु बुड़िहऊँ रे
बालक बिनु बूड़िहउ रे। ॥ ३ ॥

जाउ न गोरिया घरे तुम, अपने रजन घर रे।
गोरिया आजु के नवएँ महीना, ललन तुम्हारे होइहैं रे ॥ ४ ॥

आठ मास नौ लागत, लालन उनके उरु धरैं।
एहो बजन लगे अनन्द बधाव, गावहिं सखी सोहर रे॥ ५ ॥

हँकरौं मैं नगर कै नाउनि, तो हँकरि बोलावहुँ रे।
नाउनि भारि के गोतिन बोलावौ, मैं गंगा पूजे जइहौं रे।। ६ ॥

हँकरौं मैं नगर के बजजा, तो हँकरि बोलावहुँ रे।
बजजा पंचरंग चुनरी लै आवौ, मैं गंगा पूजे जइहौं रे ॥ ७ ॥

हँकरौं मैं नगर के डोमवा, तो हँकरि बोलावहुँ रे।
डोम सात बाजन लै आवौ, मैं गंगा पूजे जइहौं रे ॥ ८ ॥

गंगा किनारे एकु गोरिया, तो गंगा मनावहि रे।
गंगा लेउ न अपनी लहरियाँ मैं चुनरी चड़इहौं,
मैं पिअरी चढ़हौं रे। ॥ ९ ॥

जो तुम चुनरी चढ़इहौ, अरे पिअरी चढ़इहौ रे।
रनियाँ सात बालक तोरे होइहैं, चिरंजिव होइके रहिहैं रे।

गंगा के किनारे एक गोरी गंगा की पूजा कर रही है। और गंगा से अनुनय-विनय कर रही है—'गंगा, एक लहर तुम ले आओ, में डूबने आई हूँ ।।१।।

इस पर गंगा उस गोरी से पूछती है—क्या तुम्हें सासु-स्वसुर के यहाँ दुख है या तुम्हारा मायका दूर है। या तुम्हारे पति परदेश में, हे आखिर किस दुख से तुम दुखी हो।। २ ॥

(गोरी उत्तर देती है)—न मुझे सासु-स्वसुर से किसी प्रकार का दुख मिला है, न मायका ही दूर है, न मेरे स्वामी ही परदेश में ह, (बस) कोख के कारण ही में डूबने आई हूँ। (कहने का तात्पर्य यह है कि निःसंतान होने का इस युवती को दुःख है, और इसी कारण वह आत्म-हत्या करना चाहती है)।। ३ ॥

'ऐ गोरी।' गंगा उससे कहती है—'तुम अपने घर जाओ, आज से नवएँ महीने तुम्हारे पुत्र होगा' ।। ४ ।।

आठवें महीने के बीतते तथा नवें महीने के लगते ही पुत्र ने जन्म लिया। आनन्द बधाई बजने लगी और सखियाँ सोहर गाने लगीं ।। ५ ।।

'मैं नगर की नाउन को बुलवाऊँगी, अरे (बुलवाऊँगी ही नहीं, वरन्) शीघ्र पकड़ बुलवाऊँगी।—नाइन के आने पर वह (गोरी) उससे कहती है—नाउन, तुम सभी गोत्र वालों को नेवता दे आओ, मैं गंगा पूजने जाऊँगी ।।६।।

आगे कहती है--'मैं नगर के बजाजों को हकवा बुलवाऊँगी। बजाज ! पाँच रंग की चूनरी ले आओ मैं गंगा पूजने जाऊँगी ।। ७ ।।

मैं नगर भर के डोमों को हकवा बुलवाऊँगी,--डोम! सात प्रकार के बाजे ले आओ, मैं गंगा पूजने जाऊँगी ।। ८ ।।

(तब) गंगा के किनारे एक गोरी गंगा की पूजा कर रही है—'गंगा अपनी लहरें उठाओ मैं चुनरी चढ़ाऊँगी, पियरी (पेरी—पीले रंग से रंगा हुआ कपड़ा) चढ़ाऊँगी।

तब गंगा उत्तर देती हैं--अरे, जो तुम चुनरी और पियरी चढ़ाओगी, तो हे रानी तुम्हारे सात बालक होंगें और सब चिरजीव होगें।

इस गीत में पुत्र न होने वाली स्त्री की मानसिक वेदना का सुन्दर चित्रण है। पुत्र न होने के कारण वह आत्म-हत्या करने तक के लिए तैयार है। पुत्र होने के कारण वह बहुत ही प्रसन्न होती है। और गंगा-पूजा की व्यवस्था बड़े उत्साह से करती है।

संसार के अनेक देशों में अनेक नदियाँ देवी और देवताओं की भाँति पूज्य हैं। परन्तु भारत में हिन्दुओं द्वारा गंगा को जो श्रद्धा मिली है, वह अद्वितीय है। प्रत्येक सुख-दुख के अवसर पर गंगा की शरण ही जैसे एक मात्र सहारा है। सैकड़ों हजारों मील से आकर लोग गंगा की पूजा करते हैं। गाते-बजाते स्त्रियों के झुंड मीलों से गंगा के किनारे पर आते हैं, और गंगा को चुनरी और पियरी चढ़ा कर विविध प्रकार से पूजन करते हैं। स्त्रियों के लिये, मेरी दृष्टि में, गंगा जी सबसे निकट हैं जिससे सभी दुख-सुख कहे जा सकते हैं। गंगा के निकट रहने वालों का कोई भी शुभ कार्य पूर्ण नहीं समझा जाता है, जब तक गंगा पूजा न हो जाय।

(३)

पनु ऐसी पतरी बहुरिया, कुसुम रंग सुन्दरि रे।
सुन्दरि चढ़ गई पिया की अँटरिया, सोवहिं सुख निंदिया रे ॥ १ ॥

सोइ मोइ जब जागी, पलँग चढ़ि बैठी रे।
राजा छाँड़ि देउ अँचला हमारि घरै हम जइबै रे ॥ २ ॥

की तोरी सासु बोलावहि, कि ननद जगावै रे।
सुन्दरि की तोरे बारे होरिलवा, जिनहिं लई बैठो रे ॥ ३ ॥

न मोरी सासु बोलावै, न ननद जगावै रे।
न मोरे बारे होरिलवा, जिनहिं लई बैठों रे ॥ ४ ॥

महल ते उतरी बहुरिया, आँगन बिच ठाढ़ी है रे।
द्वारे ते आये देवर राजा, कस भौजी अनमनि रे ॥ ५ ॥

देवर हो मोरे देवर, तुमहिं मोरे देवर रे।
भइया तोरे बोले हैं बोल, करेज मोरे सालैं,
जनम नहिं बिसरहिं रे ॥ ६ ॥

भौजी हो मोरी भौजी, तुमहिं मोरी भौजो रे।
भौजी, उअत के सुरिज मनाऔ, ललन तुम्हरे होइहैं रे ॥ ७ ॥

आठ मास नौ लागत, ललन उरु धरयो रे।
एहो बाजन लागे अनन्द बधाव, गावैं सखी सोहर रे ॥ ८ ॥

मैं बलि सासु ससुर केरी, अपने करम केरी रे।
मैं बलि अपने देवर केरी, जिन हमे बुधि दीन्ही रे ॥ ९ ॥

पान के समान पतली बहू है, और कुसुम के रंग की भाँति सुन्दर है। और सुन्दरी अपने पति के कोठे पर चढ़ गई और सुख के साथ सोने लगी ॥१॥

सोकर जब जगी और पलंग पर उठ कर बैठ गई। (पति के आंचल पकड़ने पर) वह कहती है, "राजा हमारा आंचल छोड़ दो मैं घर जाऊंगी"॥२॥

"तुमको तुम्हारी सासु बुला रही है या ननद जगा रही है या तुम्हारे छोटा बच्चा है जिसे गोद में लेकर बैठना है।" यह पति का पत्नी के लिए पुत्र न होने पर व्यंग है ।। ३ ।।

"न मुझे सास बुलाती है और न ननद जगाती है और न मेरे छोटा बच्चा ही है जिसे गोद में लेकर बैठना है" ।। ४ ।।

इतना कह कर बहू महल से नीचे उतर आई और आँगन में खड़ी हो गई। इतने में बाहर से देवर राजा आये और उन्होंने भाभी से पूछा, "भाभी अनमनी (उदास) क्यों हो ?" ।। ५ ।।

"देवर, हे देवर, तुम्हीं मेरे देवर हो। तुम्हारे भइया ने ऐसे बोल बोले जो मेरे कलेजे को छेदे डाल रहे हैं जो मुझे जन्म भर नहीं भूलेंगे" ।। ६ ।।

"भाभी, हे मेरी भाभी, तुम्हीं मेरी भाभी हो। भाभी, तुम उदय होते हुये सूर्य की पूजा करो तुम्हारे पुत्र अवश्य होगा" ।। ७ ।।

आठवें मास के बीतते और नवें के लगते ही पुत्र ने जन्म लिया। आनन्द बधाई बजने लगी और सखियाँ सोहर गाने लगीं ।। ८ ।।

इस पर बहू सासु ससुर पर बलि जाती है, अपने कर्म को सराहती है, और अपने देवर पर निछावर हुई जा रही है जिन्होंने (सूर्य-पूजन की) विधि सुझाई थी ।। ९ ।।

इस गीत में दो बातें महत्त्वपूर्ण हैं, एक तो यह कि बंध्या को अपने पति के व्यंग वचन सुनने पड़ते हैं और इस प्रकार जीवन विडम्बनापूर्ण हो जाता है। दूसरी बात यह है कि बहू पुत्र के लिए सर्वप्रथम अपने सासु-ससुर के प्रति उपकृत रहती है। यह हिन्दू घर की बहू के शील-शिष्टता का सुन्दर उदाहरण है।

(४)

विन्दावन एकु कुइयाँ, सुघर धना पानी भरैं रे।
एहो हथिनी चढ़े एकु रजवा, तो बोली ठोली मारै रे ।। १ ।।

केहि की हो तुम बेटी, तो केहि की बहुरिया रे।
रनियाँ कौने छयल केरी नारि, पनियाँ भरन आइउ रे ।। २ ।।

अपने बाप की मैं बेटी, ससुर की बहुरिया रे।
अपने छयल की मैं नारि, तो पनियाँ भरन आइन रे ॥ ३ ॥

जो तुम होतिउ हमारी धना, पलँग बैठउतेऊँ रे।
रानियाँ परिउ मुरुख के रे पाले, पानी भरन आइउ रे ॥ ४ ॥

पानी के पिआसे हो तो पानी पिओ, नैना देखे जनि भूलौ रे।
तुमहू से हरि मोरे सुन्दर, मोतिया बनिज गे हैं रे ॥ ५ ॥

कहाँना है तोरी रसोइयाँ, कहाँना तोरा बैठकु रे ?
रनियाँ कहाँना है रंगमहलिया हुआँन हम अइबै रे ॥ ६ ॥

राम रसोइयाँ मोरि रसोइयाँ, देहरी मोरी बैठकु रे।
राजा रंगमहल सुख सेज, हुआँन कैसे अइहौ रे ॥ ७ ॥

रखिहौं मैं चारि पहरुआ, अउर दुइ कूकुर रे।
राजा हनि लेहौं कुलुफ जँजरिया, अक्कासी दियना बारऊँ रे ॥ ८ ॥

कुकरन देहौं कलेवा, पहरुअन भोजन रे।
तोरि डारों कुलुफ जंजरिया, अक्कासी दियना गुल करौं
तुम्हें लइ बिलसौं रे ॥ ९ ॥

गगरी तो धरिनि घनौची, औ एँडुरी झरोखे रे।
सासू हथिनी चढ़े एकु रजवा, तो बोलो ठोली मारे रे ॥ १० ॥

कैसी है ओहि की हथिनिया, तो कइसी अम्बारी रे ?
कौने वरन के हैं रजवा, तो बोलो ठोली मारहिं रे ॥ ११ ॥

लीली है उनकी हथिनिया, और जरद अम्बारी रे।
सासू गेहुँआ वरन के हैं रजवा, तो बोली ठोली मारहिं रे। १२ ॥

चुप रहौ चुप रहो बहुआ, दुसमन न सुनै रे।
बहुआ उई आहीं पूत हमार, तो कंत तुम्हारि रे ॥ १३ ॥

वृन्दावन में एक कुँआ है जहाँ एक सुगढ़ (सुन्दर) स्त्री पानी भर रही है। उधर से हाथी पर चढ़ कर आने वाला एक राजा उस पर बोली ठोली (हास्य-विनोद के व्यंग) कस रहा है। ॥ १ ॥

"तुम किसकी बेटी हो और किसकी बहू हो और किस छेला की स्त्री हो, जो पानी भरने आई हो ? ॥ २ ॥

"अपने बाप की मैं बेटी हूँ, और ससुर की बहू हूँ और अपने स्वामी की मैं स्त्री हूँ, सो पानी भरने आई हूँ।" ।। ३ ।।

"जो तुम मेरी स्त्री होती तो मैं तुम्हें सदा पलँग पर बिठाता। रानी तुम किसी मूर्ख के पाले पड़ गई हो जो पानी भरने आई हो" ।। ४ ।।

इस पर रानी गुस्सा होकर बोलती है, "यदि पानी के प्यासे हो तो पानी पिओ, अपने घमंड में मत भूलो, तुमसे भी अधिक सुन्दर मेरे पति हैं जो इस समय मोतियों का व्यापार करने गये हैं" ।। ५ ।।

तब राजा परिचय पूछता है, "तुम्हारी रसोई कहाँ है, तुम्हारी बैठक कहाँ है और तुम्हारा रंगमहल कहाँ है. वहीं पर मैं आऊँगा" ।। ६ ।।

"राम की रसोई मेरी रसोई है, और देहरी मेरी बैठक है, रंगमहल पर सुखसेज है, वहाँ पर तुम किस प्रकार आ सकते हो ?" ।। ७ ।।

"मैं चार पहरेदार रखूँगी और दो कुत्ते और दरवाजे में जंजीर चढ़ाकर ताला लगाऊँगी और आकाश-दिया जलाऊँगी।" (आकाश-दिया जलाने से प्रकाश होगा और इसलिये कोई चोरी-छिपे नहीं आ सकता है।)।। ८ ।।

राजा चतुर है, वह कहता है, "मैं कुत्ते को कलेवा (कुछ खाने को) दे दूँगा और पहरेदारों को भोजन दूँगा। और ताला और जंजीर तोड़ दूँगा, आकाशी दिया बुझा दूँगा और तुम्हारे साथ विलास करूँगा।" ।। ९ ।।

(इन शब्दों को वह न सुन सकी तुरन्त घर पहुँच कर) घनोची पर पानी की मटकी रख दी और खिड़की पर एँडुरी रख दी और सासु से शिकायत करने लगी, "सासु हाथी पर चढ़ा हुआ एक राजा मुझे बोली-ठोली मार रहा था" ।। १० ।।

सासु राजा का परिचय पूछती है, "उसकी हथिनि किस तरह की है और उस पर कैसी अम्बारी पड़ी हुई है। और राजा का वर्ण कैसा है जो बोली-ठोली मार रहे हैं" ।। ११ ।।

"नीली हथिनि है और पीली अम्बारी है और राजा गेहुँए वर्ण के हैं वे ही बोली-ठोली मार रहे हैं" ।। १२ ।।

"बहू चुप रहो कहीं दुश्मन न सुन लें। वही तो मेरा बेटा है और वही तुम्हारा पति है" ।।१३।।

लगभग इसी प्रकार दो सोहर पं० रामनरेश त्रिपाठी के ग्राम साहित्य,

पहले भाग में प्राप्त होते हैं। कुछ अन्तर है लेकिन वह अन्तर बड़ा रोचक है। त्रिपाठी जी द्वारा दिये गए सोहरों की नायिका बोली मारने वाले राजपूत पर बहुत आक्रोश प्रकट करती है, वह कहती है।

असं रजपुतवा जो पाइत चाकर हम राखित हो॥
अपने सासु जी के पांव के पनहिया तौ तोह से ढोवाइत हो॥

ऐसा राजपूत मैं पाती तो नौकर रख लेती और अपने सासु के जूते मैं तुझसे उठवाती।

परन्तु दोनों सोहरों में बोली मारने वाले व्यक्ति का प्रतिकार किया गया है और पातिव्रत को सुरक्षित रखा गया है। एक में सीधा आक्रोशपूर्ण उत्तर है, दूसरे में कल्पना का आश्रय विशेष है और विस्तार के कारण क्रोध के आवेग में अभाव है।

इस गीत में विनोद प्रस्तुत किया गया है। यह हास्य परिस्थिति के कारण पैदा हो जाता है। जब क्रोध करने वाली रानी को यह विदित होता है कि अपने पति पर ही भूल से क्रोध कर रही थी तो मन में सकुचाती है। और उसके संकोच और झेंप जाने से अन्य लोगों का मनोविनोद होता है। बहुत ही सुन्दर विनोद की परिस्थिति की कल्पना की गई है। परिस्थितियों के द्वारा इतना सुन्दर हास्य अथवा विनोद बहुत कम प्राप्त होता है।

(५)

पनु ऐसी पतरी बहुरिया, कुसुम रंग सुन्दरि रे।
सुन्दरि चढ़ि गईं पिया की अँटरिया, सोवै सुख निंदिया रे॥ १॥
सोइ मोइ जब जागीं तो महलन चितवैं रे।
ननदी आज महल मोरा सूना, रजन नहिं आये रे॥ २॥
भौजी हो मोरी भौजी, तुमही मोरी भौजी रे।
भौजी तुम्हरे रजन फुलबगिया, मलिनि संग बिहँसै रे॥ ३॥
हँकरौं मैं नगर की मलिनो, तो पकरि बोलावौं रे।
मलिनी कैसे का राजा बेलमायो, कौने रस राख्यो रे॥ ४॥
पानन सेजिया बिछायों, कुसुम रंग डाभर रे।
रनियाँ अँचरा कै ढुरति बयारि, नयन रस राख्यों रे॥ ५॥

हँकरौ मैं नगर के लोनियाँ, तो हँकरि बोलावौं रे।
लोनिया दस हाथ धरती खोदावौं, मैं मलिनि गड़ावौं राह
मैं चलावौं रे ॥ ६ ॥

काहे का राह चलवइहौ, काहे गड़वइहौ रे ।
रनियाँ अपने रजन तौलावौ, पसंघा दुइ आगर रे ॥ ७ ॥

हुअना ते आये हैं रजवा, रनियाँ संग बिहँसै रे।
ऐसे चतुर बिजनारि, रतिन पिय तौलहि पसंघा दुइ आगर रे ॥ ८ ॥

पान की भाँति पतली और कुसुम के रंग के समान सुन्दर बहू है। सुन्दरी अपने पति के कोठे पर चढ गई और सुख की नींद सोने लगी ॥ १ ॥

सोकर जब जगी तब महल की ओर देखने लगी। "ननदी आज मेरा महल सूना है, मेरे राजा नहीं आये" ॥ २ ॥

"भाभी, हे मेरी भाभी तुम्हीं मेरी भाभी हो। भाभी तुम्हारे राजा फुलबगिया में मालिन के साथ हँसी-मजाक कर रहे है" ॥ ३ ॥

"मैं नगर की मालिन को हंकवा बलाऊँगी, पकड़वा मगाऊँगी।" मालिन के आने पर रानी उससे पूछने लगी, "मालिन किस प्रकार राजा को रोक रखा किस रस से उनको सन्तुष्ट रखा ?" ॥ ४ ॥

"रानी, पान की सेज बिछाई, कुसुम रंग के रंगीन फूलों मे सजाई, और अंचल मे पंखा झलती रही और आँखों के रस रखा" ॥ ५ ॥

"मे नगर के लोनिया (राज) हंकवा बुलाऊंगी। लोनिया दस हाथ पृथ्वी खोदो, मे मालिन को गड़वा दूंगी, उस पर राह चलवाऊँगी" ॥ ६ ॥

"राह क्यों चलवाओगी और मुझे क्यों गड़वाओगी रानी ? अपने राजा को तौलाओ, दो सुन्दर पसंघों से। (पसंघा शब्द से नितम्बों की ध्वनि है)" ॥ ७ ॥

"वहाँ से राजा आये और रानी के साथ हँसी-मजाक करने लगे। वह ऐसी चतुर ब्रजनारि है कि रति मे अपने पति को तौलती है दो सुन्दर पसंघों के द्वारा" ॥ ८ ॥

यह ग्रामीण शृंगारिक उक्ति है। यद्यपि अन्तिम पंक्तियों में रति का स्पष्ट चित्र प्रस्तुत किया गया है जो अश्लील हो सकता है, तथापि शृंगार का चित्र बहुत ही सांकेतिक है। एक प्रकार से इस गीत की नायिका अज्ञात यौवना के अन्तर्गत आ सकती है जिसे रति संबन्धी बातें मालूम नहीं हैं। परन्तु मालिन के सांकेतिक सुझाव के अनुसार कार्य करने पर उसे अपना पति प्राप्त हो जाता है। प्रायः मालिन इस प्रकार के प्रसगों में नवविवाहिता स्त्रियों की बड़ी सहायक सिद्ध होती हैं।

(६)

पनु ऐसी पतरी बहुरिया, कुसुमरंग सुन्दरि रे।
सुन्दरि ठाढ़ी जमुना जी के रेत, तो केवटु केवटु करैं रे ॥ १ ॥

अरे अरे केवट बेटऔना, नवइया लैके आवहु रे।
केउटा हरि जी की रूठी बहुरिया, तो पार उतारहु रे ॥ २ ॥

जो हम पार उतरिबै तो अबहिं उतरिबै रे।
रनिया कहा देहौ उतराई, मैं पार उतारहूँ रे ॥ ३ ॥

देहौं हाथे हिरौंदी, कानन केरे मोती रे।
केउटा चम्पकली चन्दहार, थारी भरि मोती रे ॥ ४ ॥

सोनवा तो हमरे बहुत हवै, रुपवन को गनै रे ।
सुन्दरि आजु रैनि बसि जाहु, सबेरे उतारब रे ॥ ५ ॥

जो हमें रैन बसइहौ, सबेरे उतरिहौ रे।
केउटा कहा रचौ जेउनार, काहे केरे भोजन रे ॥ ६ ॥

गंगा, जमुना जी के रेत, तो हमरी मँड़इया है रे।
रनियाँ जल रे ओढ़न जलदास, तो मछली के भोजन रे ॥ ७ ॥

एकु डुब्भी मारिनि दुसरि डुब्भी, तीसरी माँ पार लागीं रे।
एहो ठाढ़े केवटु मींसे हाथ, रनियाँ हमसे छली गई रे ॥ ८ ॥

पान के समान पतली बहू कुसुम रंग की भाँति सुन्दर है। सुन्दरी जमुना जी के रेत में खड़ी है और केवट को बुला रही है।। १ ॥

"अरे, अरे, केवट के बेटे नाव लेकर आओ। हरि जी की बहू रूठ गई है, इनको पार उतार दो" ।। २ ।।

रानी कहती है, जब में पार उतरूँगी तो अभी उतरूँगी। केवट पूछता है—रानी, उतराई में क्या दोगी ? में तुम्हें पार उतारूँगा ।। ३ ।।

"में हाथ की हिरौंदी (गहना) और कानों के मोती और चम्पाकली का सा चन्द्रहार और थाल भर मोती दूँगी" ।। ४ ।।

इस पर केवट कहता है "सोना तो मेरे पास बहुत है, रुपयों को कौन गिनता है। सुन्दरी ! केवल आज रात भर को यहीं टिक जाओ, में तुम्हें सबेरे पार उतार दूंगा ।। ५ ।।

"जो मुझे रात भर यहीं रोकोगे, और सबेरे पार उतारोगे, तो क्या भोजन बनाओगे और भोजन में क्या-क्या चीजें होंगी ? ।। ६ ।।

'गंगा-जमुना जी की रेत पर हमारी झोपड़ी है। जल ही मेरा ओढ़ना है, में जलदास हूँ, केवल मछली का ही भोजन मेरे पास है" ।। ७ ।।

इतने में रानी ने मौका पाकर जमुना जो में एक गोता मारा, दूसरा गोता मारा, और तीसरे में पार पहुँच गई। इधर केवट हाथ मलता, कहता रह गया—हाय, रानी मुझसे छल कर गई ।। ८ ।।

रानी किस प्रकार वीरता से, अपनी जान की बाजी लगा कर उस लम्पट केवट से अपने को बचाती है, यही इस गीत का विषय है।

(७)

साव सींक का चँगेरवा, तो बिनत बहुत बना रे।
जेठनिया ने बायनु बहोरा, देवरानी के घर जायँ रे।। १ ।।
एक दिन बीते दुसर दिनु, तिसरे बायन माँगे रे।
दुलहिन बायने बहुत दिन लागि, बायनु मेरा फ्यारौ रे ।। २ ।।
ना मैं घर के घरोंतिनि, ना पुत आगरि रे।
जीजी तुम्हरे देवर परदेस, बायनु कैसे फ्यारौं रे ।। ३ ।।
बरहीं बरस जब बहुरे, तो मोरे राजा आये रे।
राजा सुनौ भौजी केरे बोल, बायनु हमसे माँगें रे ।। ४ ।।

तुम राजा बैठौ पलँग चढ़ि, हमहू मचिया चढ़ि रे।
राजा तुम्हरी भौजी केरे बोल करेजे मोरे सालें, जलमु नहिं बिसेरहिं रे ॥ ५ ॥

बोरन गोहुँआ धोवाइन, औ मैदा पिसाइन रे।
रानी हमरी भौजी केरा बायनु तुरत दई आवौ रे ॥ ६ ॥

सात सींक का चँगेरवा, तो बिनत बहुत बना रे।
देवरनियाँ ने बायनु बहोरा, जेठनियाँ तुम्हारे घरै ॥ ७ ॥

छप्पर ऐसी मोरी पुरिया, बदरु ऐसे लेड़ुआ रे।
दुलहिन भैंइसी के सींगा ऐसे गुनवा, बायन मैं न लइहौं रे ॥ ८ ॥

पत्ता ऐसी तोरी पुरिया, निम्बू ऐसे लेड़ुआ रे।
दुलहिन अँगुरी ऐसे तोरे गुनवा, बायनु मैं न लैहौं रे ॥ ९ ॥

सासु ने तुम्हरी बेलावा, ननद लोई काटा रे।
जीजी हमरा दोसु जनि देहु, परमेसुर जानहिं रे ॥ १० ॥

सासु तो हमरिहु आहँई, औ तुम्हरिउ आहँई रे।
हमरे रजन केरी, तुम्हरे रजन केरी रे।
दुलहिन वह घर घलिनी ननदिया, दून्हो घर घाले रे ॥ ११ ॥

लरिकन दीन्ह सोवाय, पुरिख केरी नीदा हरी रे।
दुलहिन एही रे बयनवा की आस, बियारिऊ नहिं कीन्ह्यौ रे ॥ १२ ॥

सात सींक का चँगेरवा (डलिया) बहुत अच्छा बिना हुआ है। उसमें जिठानी ने अपनी देवरानी के घर बायन भेजा है ।। १ ।।

एक दो दिन बीते कि तीसरे दिन (जिठानी) बायन वापिस माँगने लगी। दुल्हिन बायन के बहुत दिन हो गये। मेरे बायन का बदला चुकाओ ।। २ ।।

'न मैं घर की पुरखिन हूँ, न बच्चे वाली हूँ। जीजी, तुम्हारे देवर परदेश में हैं, तुम्हारा बायन कैसे फेरूँ।' (संकेत है कि मेरे पति के परदेश में होने के कारण न बच्चा होगा न बायन फेरने का मौका ही आयेगा) ।। ३ ।।

बारहवें वर्ष जब राजा परदेश से घर वापिस आये, तो रानी ने कहा— राजा अपनी भाभी के वचन सुनो, वह मुझसे बायन माँगती है ।। ४ ।।

राजा, तुम पलँग पर बैठो, मैं मचिया (बाधों द्वारा बनी हुई छोटी सी मंचिका) पर बैठती हूँ। राजा, तुम्हारी भाभी के वचन मेरे कलेजे को छेदे डाल रहे हैं, वे वचन मैं जन्म भर नहीं भूलूंगी ।। ५ ।।

कई बोरे गेहूँ धुलवाये गये और मैदा पिसवाया गया, और राजा ने रानी से कहा—रानी, हमारी भाभी के बायन तुरन्त दे आओ ।। ७ ।।

सात सींक के सुन्दर बिने हुए चंगेरवा में देवरानी ने जिठानी के घर बायन भेजा ।। ७ ।।

बायन की सामग्री को देखकर उनको हीन बताती हुई जिठानी कहती है— 'मेरी पूड़ियाँ तो छप्पर के समान बड़ी-बड़ी थीं और लेड़वा (लड्डू) बादल के समान बड़े-बड़े थे और मुर्रा भैंस के सींग के समान मेरे गूना थे। मैं तुम्हारा ऐसा बायन नहीं लूंगी' ।। ८ ।।

'तुम्हारी पूड़ियाँ तो पत्ते के समान हैं, और लेड़आ नीबू के समान हैं। और अंगुली के बराबर तुम्हारे गूना हैं, मैं तुम्हारा बायन नहीं लूंगी ।। ९ ।।

देवरानी अपनी जिठानी को समझाती है। 'तुम्हारी सासु ने ही पूड़ियाँ बेलाई थीं। तुम्हारी ननद ने ही लोई काटी थी। जीजी ! मुझे दोष न दो, मेरा तो परमेश्वर ही जानता है, कि मेरा ऐसा विचार न था' ।। १० ।।

'सासु तो हमारी भी है, और तुम्हारी भी है, और मेरे पति की भी, तथा तुम्हारे पति की भी वह माँ है। दुल्हिन, यह दष्ट ननदी ही दोनों घरों को ठगा करती है' ।। ११ ।।

''लड़कों को सुला दिया। पुरखा की नींद हरी। दुल्हिन, इसी बायन के कारण मैंने कलेवा (नाश्ता) तक नहीं किया है'' ।। १२ ।।

इस गीत में घर के कलह का विस्तृत चित्र खींचा गया है। जिठानी, देवरानी और ननद के झगड़े जो इस गीत मे दिखाई देते हैं, वे हमारे घरेलू जीवन के कटु सत्य हे। यह झगड़ा संयुक्त परिवार की ओर सकेत करता है, जिसमें इस प्रकार की दुखदायी घटनाएँ प्राय: हर घर हुआ करती हैं। किन्तु इस गीत में एक विशेष बात प्रस्तुत की गई है, वह है जिठानी और देवरानी के बीच समझौता। उनके अनुसार ननदी ही सारे झगड़े की जड़ है। दूसरे घर में ननद के स्वार्थों तथा हितों के निहित होने के कारण अपनी भाभियों के प्रति ननद का दृष्टिकोण प्राय: स्वस्थ नहीं होता। वह प्राय: हमारे घरों मे कलह का कारण बनती है। वह जिस घर में पैदा हुई, जिस पर उसका एक प्रकार का

जन्म-सिद्ध अधिकार है, वहीं, वह अपनी भाभियों के आ जाने पर पाती है कि भाभियों का अधिकार उससे अधिक है। अत: उसके मन में अपनी भाभियों के प्रति द्वेष उत्पन्न हो जाता है, और प्राय: भाभियों को भी घर के मामलों में, ननद के उचित हस्तक्षेप भी अनुचित दीख पड़ते हैं। हमारे संयुक्त परिवार का यह दुखदायी पक्ष है।

(८)

अपने बापा की दुलारी, तो माया की पिआरी रे।
अपने भइया की मैं बहिनियाँ, कलेउना नहि पायेऊँ रे ॥ १ ॥

द्वारे ते आये बीरन भइया अँगने माँ ठाढ़े भेहैं रे।
बहिनी भीतर ते लाओ चिरौंजी, पसर लै चाबौ रे ॥ २ ॥

इतना सुनि के भउजरानी, झहर झहर करै; भहर भहर करैं रे।
ऐसी दुलारी बहिनियाँ, मैं कतहूँ न देख्यों रे ॥ ३ ॥

द्वारे ते आये बीरन भइया, अँगना माँ ठाढ़े भेहैं रे।
रनियाँ बहिनी के आये लिवैया, तो कैसे बिदा करौं रे ॥ ४ ॥

कँकना तो उनके गढ़न गये, तिलरी भरन गई रे।
रानी चुनरी तो उनको रंगन गई, तो कैसे बिदा करौं रे ॥ ५ ॥

कँकना तो देहौं हाथन केरे, तिलरी गरे केरो रे।
अरे चुनरी तो देहौं बकस केरी, अबहीं बिदा करौं रे ॥ ६ ॥

एकु बनु नाँघे दुसर बनु, तीसरे माँ ठाढ़े भेहैं रे।
भइया गइयन के चरवइहा, तुम मोरे भइया रे।
भइया येही राह गई हैं बहिनियाँ, रोवत की बिहँसत रे ॥ ७ ॥

भइया हो मोरे भइया, तुमहिं मोरे भइया रे।
भइया तुम्हरी बहिनिया के रोईबै माँ गइया बिड़रि गईं छतिया फटन लागीं रे ॥ ८ ॥

द्वारे ते आये रजवा तो, अँगने में ठाढ़े भेहैं रे।
रनियाँ लाओ न ढाल तलवरिया, बिदेस हम जइबैं रे।
रनियाँ लाओ न कपड़े हमार जोगिया होई जइबै बहिनियाँ के कारण रे ॥ ९ ॥

हँकरौ मैं नगर के कहरा, मैं हँकरि बोलावौं रे ।
कहरा पंचरंग डोलिया सजाओ, मैं ननद बोलइबै ।
ऐसी दुलारी बहिनियाँ, मैं अबहीं बलइहौं रे ॥ १० ॥

'अपने बाप की मैं दुलारी हूँ और माँ की प्यारी हूँ और अपने भइया की बहिन हूँ परन्तु कलेवा नहीं मिला।' ।। १ ।।

बाहर से बीरन भइया आये और आँगन में खड़े हो ग े और बहिन से बोले "बहिन भीतर से चिरौंजी ले आओ और पसर-पसर भर कर चबाओ" ।।२।।

इतना सुन कर भाभीरानी नाराज हो गईं और कहने लगीं, "ऐसी दुलारी बहिन तो मैंने कहीं नहीं देखी" ।। ३ ।।

बाहर से आये बीरन भैया और आँगन में खड़े हो गये "रानी बहिन के विदा कराने वाले आये हैं तो कैसे विदा करूँ?" ।। ४ ।।

"कंकना उनके बनने गये हैं और तिलरी भराने के लिए भेजी गई है, चुनरी रंगने के लिए गई है कैसे विदा कर दूँ" ।। ५ ।।

इस आपत्ति का निराकरण करते हुए रानी कहती है—"कंकना में अपने हाथों के दूँगी और तिलरी अपने गले से, चुनरी बक्स से निकाल दूँगी । आप अभी विदा कर दो" ।। ६ ।।

किन्तु बहिन के प्रेम ने भाई को ठहरने न दिया । उन्होंने एक वन नाघाँ दूसरा वन नाघाँ और तीसरे में जाकर खड़े हो गये । और पूछने लगे, गायों के चराने वाले भइया, मेरी बहिन इसी रास्ते से गई है ? वह रोती हुई गई है या हँसती हुई ?" ।। ७ ।।

"भैया तुम्हीं मेरे भइया हो, भइया तुम्हारी बहिन के रोने से गैयाँ तक दुखी हो इधर-उधर हो गई और छाती फटने लगी" ।। ८ ।।

बाहरा से राजा आकर आँगन में खड़े हो गये और बोले, रानी मेरी ढाल-तलवार दे दो मैं विदेश जाऊँगा । रानी मेरे कपड़े दे दो मैं बहिन के कारण जोगी हो जाऊँगा" ।। ९ ।।

"मैं नगर के कहारों को हाँक बुलवाऊँगा। कहारो पाँच रंग की डोली सजाओ मैं ननद को बुलवाऊँगी। ऐसो दुलारी बहिन को मैं अभी बुलाऊँगी" ।। १० ।।

इस गीत में बहिन के प्रति भाई का गहरा प्रेम वर्णित है। और साथ ही राजा की रानी अपने पति को प्रसन्न रखने के लिये ननद को बुलाने के लिये तुरन्त प्रबंध करती है।

(९)

मोरे आँगन एक जैफर का बिरवा, फूल फूलै आधीरात। मैं बारी बारी।
वही तरे धना सेजा बिछाइन, हेरैं पिया की बाट ।। मैं बारी बारी ।। १ ।।

साँझौं न आये सबेरयो न आये, आय परे आधी रात।
खोलो न रानी मोरी चनन केंवरिया रहिबै पलँगवा माँ सोय ।। २ ।।

हमरी पलँगियाँ माँ ठौर नहीं है, गोदी परे हैं नन्दलाल।
खोलो न रानी मोरी चनन केंवरियाँ, रहिबै पैतनवाँ के सोय ।। ३ ।।

हमरे पैतनवाँ के ठौर नहीं है, जहाँ से आये तहाँ जाव।
हाथ लकुटिया काँधे कमरिया, जाय बसे है खरिहान ।। ४ ।।

पूरब दिसा ते आई बयरिया, उड़िगै कमरिया, रहिगै लकुटिया सइँयाँ
गये हैं खिसियाय।
पूरब दिशा ते उमही बदरिया, बरसै झमाझम मेघ ।। ५ ।।

ऐसी धना काहू की न होय जैसी धना घर मोरी।
मोरे आँगन एक जैफर का बिरवा, फूल फूलै आधीरात ।।

मेरे आंगन में एक जैफल का वृक्ष है जिसमें आधीरात में फूल फूलते हैं। उसी के नीचे स्त्री ने सेज बिछाई और पति की राह देखने लगी ।। १ ।।

शाम को भी नहीं आये, सबेरे भी नहीं आये, आधीरात को आ पहुँचे। "रानी चन्दन के किवाड़ खोलो मैं पलंग पर आकर सो रहूँगा" ।। २ ।।

"हमारी पलंग पर जगह नहीं है गोदी में नन्दलाल है।" "मेरी रानी खोलो न चन्दन के किवाड़, में पैताने सो रहूँगा ॥ ३ ॥

"मेरे पैताने भी जगह नहीं है, जहाँ से आये हो वहीं जाओ" तब हाथ में डंडा लिये हुए और कंधे में कमरी डाले हुए खलिहान जाकर सो रहे । ॥ ४ ॥

पूर्व की दिशा से हवा आई, जिससे कमरी उड़ गई केवल डंडा रह गया और सैयाँ खिसिया (झेंप) गये । पूर्व दिशा से बादल उठे और झमाझम बरसने लगे । ॥ ५ ॥

"ऐसी स्त्री किसी की न हो जैसी मेरी है । मेरे आँगन में एक जैफल का वृक्ष है जिसमें आधीरात फूल लगते हैं" ॥ ६ ॥

यह गीत केवल मनोविनोद के लिये है । सैयाँ की पत्नी के ही कारण असहाय अवस्था हास्य का कारण है ।

(१०)

केहि के आँगने जँभिरिया, तो लहर लहर होय हो ।
महर महर आवै बास, तो नींदा भलि आवे न ॥ १ ॥

दशरथ अँगने जँभिरिया, तो लहर लहर होय हो
महर महर आवे बास, तो नींदा भलि आवे न ॥ २ ॥

रामचन्द रनिया गरभ सन भुइँया परै लोटे ना ।
पहरु पहरु आवे पीर, तो राम मनावै ना ॥ ३ ॥

केहि के पुतवा के पूत भये, केहि के नाती भैहैं ना ।
केहि केरि बेटी जुड़ानी, तो नगर आनन्द भयो ना ॥ ४ ॥

दसरथ राजा के पुतवा के पूत भये, उनहीं के नाती भैहैंना ।
जनक राजा बेटी जुड़ानी, तो नगर आनन्द भयो है ना ॥ ५ ॥

किस के आँगन में जँभिरिया का वृक्ष है । जो हवा में लहरा रहा है । जिसकी सुगन्धि चारों तरफ फैल रही है । (अतः) नींद बहुत अच्छी आती है । ॥१ ॥

राजा दशरथ के आँगन जँभिरिया का वृक्ष है, जो हवा में लहरा रहा है। (जिसकी) सुगन्धि महर महर आ रही है, (तो) ऐसे में नींद अच्छी आती है। ।।२।।

रामचन्द्र की रानी गर्भ से हैं, वह धरती पर पड़ी छटपटा रही हैं। थोड़ी-थोड़ी देर में पीड़ा उठती है, राम उनको सान्त्वना दे रहे हैं ।।३।।

किसके पुत्र के पुत्र हुआ और किसके नाती हुआ ? किसकी बेटी के हृदय की अभिलाषा पूरी हुई है, और क्यों सारा नगर आनन्दित हो उठा है ।।४।।

राजा दशरथ के पुत्र के पुत्र हुए हैं। और उन्हीं के नाती हुए हैं। जनक जी की बेटी की अभिलाषा पूरी हुई है, इसीलिये सारा नगर आनन्दित हो उठा है ।।५।।

इस गीत में गर्भ की पीड़ा का वर्णन है।

(११)

अम्बा बौरे, नीमि बौरी, बीच इतर रस केवला। सलोनी गुइयाँ। टेक
चँदन काटि कै पलँग बिनाइन, झारि बिछावैं उनकी रनियाँ ।। १ ।।

वोहि माँ सोवैं कवन रामा, रनियाँ डोलावैं रस बेनियाँ।
हाथ की बेनियाँ भुइँया गिरी है, आई झमाके कै नीदियाँ ।। २ ।।

माँगें का होय सो माँगों जच्चारानी आज माँगन केरी बेरिया।
सासु, ससुर केरी राजि माँगिनि, देवर, जिठानी का जोड़वा ।। ३ ।।

आवन जान का ननद माँगिनी, औरों नन्दोइया मोरा पाहुना।
पाँच बरिस कै कन्या माँगेनि, गोद माँ लीन्हे होरिलवा ।। ४ ।।

छुज्जन छुज्जन लाल खेलैं, बीच खेलै मोरा भाँजा।
सातों सुख तुम माँग्यों सो जच्चा रानी, जो रे गोविन्द विधि पुरवै ।।५।।

आमों में मंजरी आ गई। नीम भी बौरा गई। और बीच में रस भीनी सुगन्धि देने वाला केवड़ा भी। चन्दन काट कर पलँग बनवाया, जिसे उनकी (राजा की) रानी झाड़ कर बिछाती है ।।१।।

उस पर अमुक रामा सोते हैं। और रानी धीरे-धीरे पंखा झल रही है। पंखा झलते-झलते रानी को जोरों से नींद आ गई। और हाथ से पंखा छूट कर धरती पर गिर पड़ा ।।२।।

जच्चा रानी, जो तुम्हें माँगना हो, माँग लो। आज माँगने का अवसर है। रानी ने सासु-श्वसुर का राज्य माँगा, और देवर जिठानी का जोड़ा। (अर्थात् सासु-श्वसुर के शासन में रहने की इच्छा प्रकट की और देवर (रानी का पति) और जिठानी (देवर की भाभी) में खूब प्रेम रहे ।।३।।

आने जाने के लिये ननद माँगी। और पाहुन के रूप में नन्दोई को माँगा। पाँच वर्ष की कन्या माँगी और गोदी में पुत्र ।।४।।

छज्जों छज्जों पर मेरा पुत्र खेले, और साथ में मेरा भांजा भी खेले। सातों सुख, ओ जच्चा रानी तुमने माँगे। ईश्वर इन्हें पूरा करे ।।५।।

इस गीत में एक आदर्श बहू के दर्शन होते हैं। जो अपने परिवार के सभी लोगों को साथ लेकर रहना चाहती है। बहुओं का इसी प्रकार का स्वभाव होने पर संयुक्त परिवार का समस्त सुख खिल उठता है।

(१२)

सेंदुरे के टिकुली दुलहिन देई, नित ठनगन करैं रे।
राजा दुलरुआ कवन रामा, मथवा निहारैं रे ।। १ ।।

मुख माँ उनके दीपक बरैं, ओठवा ओगारु चुऐ रे।
निहुरि निहुरि झाँके ओबरी, तो काहे रानी अनमनि रे ।। २ ।।

बावाँ कूल मोर कसके, दहिन मोर साले रे।
राजा मोर पँजरवाँ कै पीर, कोहि का बुलावौ रे ।। ३ ।।

कहौ तो जाल डरावौं तो मछरी मराऔं रे।
कहौ तो घिया केरी पुरिया, दहिया संग भोजन रे ।। ४ ।।

कहौ तो चन्दनु कटावौं, मैं पलंग गढ़ावौं रे।
कहौ चमेली बन जाऔं, तखत लई आवौं रे ।। ५ ।।

हे राजा, मन ते न उतरें, चित्त ते न बिसरैं रे।
उई राजा जइहैं चमेली बन कैसे जिया राखौं मैं ना जिया
राखौं रे ।। ६ ।।

होत भोर पौ फाटत, लालन उर धरैं रे।
एहो बाजन लागे आनन्द बधाव, गावैं सखी सोहर रे ॥ ७ ॥

हे राजा सोनवाँ गढ़ावैं, तो रुपवा भरावैं रे।
एहो उई राजा खरचहिं दाम, नेगिया समझावहि रे ॥ ८ ॥

घर मोरे बाजत बधइया, भीतर मोरे सोहर रे।
ए हो सात सबद सहनइयाँ ससुर द्वारे बाजै बहुत नीक
लागे रे ॥ ९ ॥

दुलहिन देवी के माथे पर सेन्दूर की बिन्दी है और वह नित्य नखरे करती है। और राजा दुलरुआ (प्यारे) अमुक रामा उसका माथा देख रहे हैं ॥१॥

उसके मुख पर दीपक की सी कान्ति है और होंठों से रस टपक रहा है; झुक-झुक कर कोठरी के भीतर देख कर पूछते हैं, "रानी उदास क्यों हो ?" ॥२॥

"कमर का बायाँ भाग कसक रहा है, और दाहिना पीड़ा दे रहा है और पंजरे (बगल) की पीड़ा तो मारे डाल रही है। राजा किसी को शीघ्र बुलाओ।" ॥३॥

राजा पूछते हैं, "कहो तो जाल डलवा कर मछली पकड़वाऊं और कहो तो घी की पूड़ियाँ दही के साथ भोजन मँगवाऊँ।" ॥४॥

"कहो तो चन्दन कटवाऊँ और पलंग बनवाऊं। कहो तो चमेली-वन जा कर तखत ले आऊँ" ॥५॥

"हे राजा जो मन से नहीं उतरते, चित्त से नहीं बिसरते वह राजा चमेली-वन जायेंगे, तो मै कैसे अपने जी को शान्त रखूंगी—में अपने चित्त को शांत नहीं रख सकूंगी" ॥६॥

पौ फटते ही और सबेरा होते ही पुत्र पैदा हुआ और आनन्द की बधाई बजने लगी और सखियाँ सोहर गाने लगीं ॥७॥

राजा सोना गढ़ा रहे हैं और चाँदी भरवा रहे हैं और राजा इस प्रकार प्रजाजनों के नेग को समझा-समझा कर दे रहे हैं ॥८॥

मेरे घर बधाई बज रही है, भीतर सोहर हो रहे हैं और बाहर सात स्वरों की शहनाई ससुर के दरवाजे पर बज रही है, बहुत अच्छा लग रहा है ॥६॥

इस गीत में रानी की पीड़ा के बढ़ने के साथ-साथ पति की चिन्ता बढ़ती जा रही है और वह सभी कुछ करने के लिए तैयार है जिससे रानी का क्लेश मिटे। और सन्तानोत्पत्ति होने पर अत्यधिक प्रसन्न होकर प्रजाजनों को उनका नेग बड़े उत्साह गहनों-रुपयों में चुका रहे हैं। आज भी ग्रामों में नाई, बारी, कुम्हार, चमार इत्यादि मजदूरी पर काम नहीं करते। काम-काजों के नेगों के आधार पर अपने यजमानों की यथाशक्ति सेवा करते हैं। और यजमान भी अपनी सामर्थ्य के आधार पर उन्हें सन्तुष्ट करना चाहते हैं।

(१३)

तुम तौ कहत त्यो राजा महलिया मोरी आयो,
सेजरिया मोरी आयो रे।
मेरे जिया परे हैं गाढ़ तिसरे ह्वै के बैठौ रे ॥ १ ॥

दुअँना से चलि भे हैं रजवा, माया के लागे ठाढ़े भे हैं रे।
अम्मा तुम्हारे महल कुछ काज तो बहुआ बुलावै रे ॥ २ ॥

पूता न हो मोरे पूता, तुमहिं मोर पूता रे।
पूता तुम्हरी रानी केरे बोल, करेजे मोरे सालै
तो हम नहिं जइबै लउटि घर जाओ रे ॥ ३ ॥

दुअँना ते चलि भे हैं रजवा, भाभी के लगे ठाढ़े भे हैं रे।
तो भाभी तुम्हरे महल कुछ काज, देवरनियाँ बोलावहिं रे ॥ ४ ॥

देवर हो मोर देवर तुमहिं मोर देवर रे।
देवरा तुम्हरी रानी केरे बोल करेजे मोरे सालैं रे ॥ ५ ॥

दुअँना ते चलि भे हैं रजवा, बहिनि लगे ठाढ़े भे हैं रे।
बहिनी तुम्हारे महल कुछ काज, तो भउजी बोलावहिं रे ॥ ६ ॥

भइया हो मोरे भइया, तुमहिं मोर भइया रे।
भइया तुम्हरी रानी केरे बोल, करेजे मोरे सालैं
हम नहिं जइबै, लौटि घर जाओ रे ॥ ७ ॥

हुअँना ते चलि भे हैं रजवा, महल बिच ठाढ़े भे हैं रे।
रनियाँ तुम्हरी जीभी केरे कारण, अम्मा नहिं आवैं, भउजी नहिं
आवैं, बहिनि नहिं आवैं, तो कोऊ नहिं आवै रे ॥ ८॥

पकरौ न खटिया कै मचिया, तो मचिया कै पटिया रे।
रानी पकरौ न मोरि करिहइयाँ, ललन भुँई लोटैं रे ॥ ९ ॥

पकरेनि खटिया कै मचिया, तो मचिया कै पटिया रे।
पकरेनि राजा केरि करिहइयाँ, ललन भुँइ लोटैं रे ॥ १० ॥

आवैं, चाहे नहिं आवैं, अरे कबहूँ न आवैं रे।
रनियाँ हमका दीन्ह भगवान, चौक लइ बैठौ रे ॥ ११ ॥

सन्तानोत्पत्ति की पीड़ा से पीड़ित रानी अपने राजा पर व्यंग कसती हुई कहती है, "राजा तुम तो कहते थे कि मेरे महल में आना, मेरी सेज पर आना। अब मुझ पर मुसीबत आ पड़ी है अब मेरी सहायता करो" ॥ १ ॥

इतना सुन कर वहाँ से राजा चल दिए और माता के पास आकर खड़े हुए। "अम्मा! तुम्हारा महल में कुछ काम है, बहू तुमको बुला रही हैं" ॥ ३ ॥

"पुत्र! तुम मेरे पुत्र हो परन्तु पुत्र तुम्हारी रानी ऐसे वचन बोलती है जो मेरे कलेजे में चुभ रहे हैं, मैं नहीं जाऊंगी तुम घर लौट जाओ" ॥ ३ ॥

वहाँ से चलकर राजा भाभी के पास जा खड़े हुए। "भाभी! महल में तुम्हारा कुछ काम है तुमको बहू बुला रही है।" ॥ ४ ॥

"देवर! तुम्हीं मेरे देवर हो, देवर तुम्हारी रानी के बोल मेरे कलेजे को छेद डाल रहे हैं" ॥ ५ ॥

वहाँ से चलकर बहिन के पास जाकर खड़े हुए। "मेरी बहिन! तुम्हारा महल में कुछ काम है, तुमको बहू बुला रही है" ॥ ३ ॥

"भइया! तुम्हीं मेरे भइया हो, भइया, तुम्हारी रानी के बोल मेरे कलेजे में साल रहे हैं, मैं नहीं जाऊँगी। तुम घर लौट जाओ" ॥ ७ ॥

वहाँ से चल कर राजा महल में वापिस आकर खड़े हो गए। रानी तुम्हारी जीभ के कारण अम्मा नहीं आती, भाभी नहीं आती, बहिन नहीं आती तो कोई भी नहीं आता" ॥ ८ ॥

ऐसी असहायावस्था में पति रानी को युक्ति बतलाता है—रानी, खाट को पकड़ो और पाटी पकड़ो, रानी ! मेरी कमर पकड़ो अभी पुत्र हो जायेगा ।। ९ ।।

पति के कथनानुसार रानी ने खाट की मचिया पकड़ी और मचिया की पाटी पकड़ी और राजा की कमर पकड़ी, लाल भूमि पर आ गया ।। १० ।।

राजा कहता है, "आवें चाहे न आवें, चाहे कभी न आवें, रानी ! हमको भगवान् ने दिया है" चौक में खुश होकर पुत्र को लेकर बैठो ।। ११ ।।

इस गीत में सासु बहू, ननद भौजाई तथा जिठानी और देवरानी के बीच के झगड़े की परकाष्ठा दिखाई देती है । प्रसव जैसे कष्टदायक समय में भी सासु, ननद तथा जिठानी जरा सी सहायता नहीं देती हैं । इसका कारण है बहू के कटु वचन । इस गीत में बहुओं के लिए यही चेतावनी है कि उन्हें मिष्टभाषी होना चाहिए और अपनी जेठानी, ननद तथा सासु से किसी भी दशा में झगड़ा नहीं करना चाहिए । गीत में वर्णित अवस्था शायद ही कभी जीवन में पैदा होती है । परन्तु कटु वचनों के सम्भावित परिणाम को लेकर एक चेतावनी दी गई है जिससे घर के लोग परस्पर न झगड़ें, और एक दूसरे के सहयोग से जीवन को सुखमय बनाएं ।

(१४)

राजा हो मोरे राजा, तुमहिं मोरे राजा रे ।
राजा बिनरे सम्पति कुल हीन, जोगिन होइ जइहौं रे ।। १ ।।

रानी हो मोरी रानी, तुमहिं मोरी रानी रे ।
तुम धना बैठौ महलिया, जोगु हम लेबै रे ।। २ ।।

तुम राजा होइहौ जोगिया, हमहूँ जोगिन होइबै रे ।
राजा ओहि रे बिन्दाबन बीच, मा कुटिया रमैहौ रे ।। ३ ।।

राजा जो रे आवैं राजा राम, मैं ओरहनु देहौं रे ।
कोहू का दीन्ह्यो दुई चार, कोहू सात पाँच रे ।। ४ ।।

रामा मोरे घर फेरबौ न कीन्ह्यो, तो हमरी कौनि गति रे ।
सासू का दीन्ह्यो दुई चार, ननद सात पाँच रे ।। ५ ।।

रानी तोरे घर फेरबौ न कीन्ह्यो, तो तुम्हरे करम गुन रे।
सासू कै सेवा न कीन्ह्यो, ननद गरियायौ रे ॥ ६ ॥

रानी जेठवा का बोली ठोली मारयो, वोही ते राम रूठे रे।
सासू कै सेवा मैं करिहौं, ननद दुलरइहौं रे।

रामा जेठवा का रचौं मैं रसोइयाँ, तो दादा कहि बोलइहौं रे।
सब देउता मिलि मतु करैं, और सुमति करैं रे।
ब्रह्मा तिरिया बहुत अकुलानी, बलकु एकु देत्यो रे ॥ ८ ॥

जाउ न रनियाँ घरैं तुम, अपने रजन वरैं रे।
रानी आजु के नवएँ महीना, होरिल तोरे होइहैं रे ॥ ६ ॥

आठ मास नौ लागत, ललन उर धरैं रे।
एहो बाजन लगे आनन्द बधाव, तो गावैं सखी सोहर रे ॥ १० ॥

घरु मोरे बाजत बधइया, औ भीतर सोहर रे।
एहो सात सबद सहनइया, ससुर द्वारे बाजत,

बहुत नीक लागइ र ॥ ११ ॥

'राजा ! हे मेरे राजा, तुम मेरे राजा हो। राजा ! (तुम्हारे) सम्पत्ति-हीन और कुलहीन होने के कारण मे जोगिन हो जाऊंगी' ॥ १ ॥

'रानी हे मेरी रानी, तुम मेरी रानी हो। रानी, तुम यहीं महल में रहो, मैं जोग लूंगा' ॥ २ ॥

'राजा, तुम जोगी होगे, तो मे भी जोगिन हो जाऊंगी। और वहीं वृन्दावन के बीच कुटिया बना कर उसी में रहूंगी' ॥ ३ ॥

"राजा, जो राजा आवेंगे, तो मैं उनको उलाहना दूंगी। कहूंगी, किसी को दो चार पुत्र दिये, किसी को सात पाँच दिये ॥ ४ ॥

और राम तुमने मेरे घर फेरा तक नहीं किया तो हमारी क्या दशा होगी ! सासु को दो-चार दिये और ननद को सात-पांच दिये" ॥ ५ ॥

'रानी ! तुम्हारे घर राम ने फेरा नहीं किया, वह तुम्हारे ही गुणों (दुर्गुणों) के कारण। तुमने सासु की सेवा नहीं की, और ननद को गाली दी। रानी ! जेठ को व्यंग कहे, उसी के कारण रामजी रूठे हैं' ॥ ६ ॥

(१४)

'सासु की में सेवा करूंगी, ननद को प्यार करूंगी और जेठ के लिए में भोजन बनाऊँगी, और दादा कह कर सम्मान से बुलाऊँगी' ।। ७ ।।

सब देवता मिल कर विचार कर रहे हैं और ब्रह्मा (सृष्टिकर्ता) से कहते हैं 'ब्रह्मा ! इस स्त्री को बहुत व्याकुलता है इसको एक बालक दे दो' ।। ८ ।।

'रानी ! तुम अपने घर जाओ । अपने राजा के पास जाओ, रानी ! आज से नवें महीने तुम्हारे पुत्र उत्पन्न होगा' ।। ९ ।।

आठवें महीने के बीतते और नवें महीने के लगते ही पुत्र ने जन्म लिया । और आनन्द बधाई बजने लगी । सखा सोहर गाने लगीं ।। १० ।।

'मेरे घर बधाई बज रही है । और भीतर सोहर हो रहे हैं और सात स्वरों की शहनाई ससुर के दरवाजे पर बज रही है । यह बहुत अच्छा लगता है' ।। ११ ।।

इस गीत में बहू के लिये सासु-श्वसुर तथा परिवार के अन्य लोगों की सेवा की शिक्षा है। तथा सबसे अच्छा व्यवहार रखना चाहिए, इसकी ओर संकेत है । अच्छा व्यवहार रखने से तथा गुरुजनों की सेवा करने से पत्र आशीर्वाद के स्वरूप प्राप्त होता है ।

(१५)

जच्चा तेरा बच्चा जीवै, जीवै हो लाल ।। १ ।।
सासू का मैं कँकना दीन्ह्यो, ननद का तिलरिया ।
जिठानी का जयमाला दीन्ह्यो, दीन्ह्यो हो लाल ।। २ ।।
नाउनि का मैं चुनरी दीन्ह्यो, बारिन का पिअरिया ।
तेलिनिया का मैं सारी दीन्ह्यो, दीन्ह्यो मैं लाल ।। ३ ।।
पंडित का मैं हाथी दीन्ह्यो, भाट का मैं घोड़ा ।
देवर का मैं मुंदरी दीन्ह्यो, दीन्ह्यो हो लाल ।। ४ ।।
मोढ़ा चढ़ि कै सैंया बोले, सुनि रनिया मोरी बात ।
सब तो तुम सब कुछ दीन्ह्यो का हमका बेकार ।। ५ ।।
परदे भीतर जच्चा बोली, सुनु राजा मोरी बात ।
तुमका तो मैं सब कुछ दीन्ह्यो, बंस उजागर दीन्ह्यों ।
बाबा जी को नाम दीन्ह्यों, दीन्ह्यों हो लाल ।। ६ ।।

जच्चा ! तेरा बच्चा जीवित रहे ॥१॥

सासु को मैंने कंकना दिया और ननद को तिलरी दी। जिठानी को जयमाला, हे लाल ! मैंने दिया ॥२॥

नाइन को चूनरी दी, बारिन को पियरी और तेलनिया (दाई, चमारिन) को साड़ी दी ॥३॥

पंडित को (जिसने ग्रह-नक्षत्रों का विचार किया) हाथी, भाट को घोड़ा और देवर को अंगूठी दी ॥४॥

मोढ़े (एक प्रकार की ग्राम्यकुर्सी) पर बैठे हुए पति ने पत्नी से कहा—रानी, मेरी बात सुनो, सब को तो तुमने सब कुछ दिया, पर मुझे क्या दिया ? ॥५॥

प्रसूतिकक्ष से जच्चा बोली—राजा, मेरी बात सुनो, तुमको तो मैंने सब कुछ दिया है, तुम्हें तुम्हारे वंश को प्रकाशित करने वाला दिया है, जिससे तुम्हारे बाबा जी का नाम चलेगा ॥६॥

इस गीत में एक विस्तृत सूची मिलती है। जिन्हें अनेक प्रकार के नेम बच्चे की माँ को देने पड़ते हैं। पौत्र के होने की खुशी में पुत्र की माँ लगभग सभी को अपनी सामर्थ्य के अनुसार चीजें देती हैं। अब आजकल यह पुरस्कार वितरण एक खुशी की चीज न रह कर जैसे पुरस्कार-प्राप्तकर्ताओं के अधिकार बन गये हैं। न केवल प्रजाजन अपने नेग माँगते हैं, बल्कि जच्चा की सासु, ननद, देवर सभी उससे अपने नेग माँगते हैं।

(१६)

चारि नखत मोरे भइया तो बदरी बहिनियाँ ना।
मोरी बदरी ! जाये बरसौ वोहि देस, जहाँना हरि छाये हैं रे ॥ १ ॥

बदरी तो उठि कै बरसन लागी, रजवा भीजन लागे रे।
भीजत भीजत घर आये, दुआरे माँ ठाढ़े
बरोठे माँ ठाढ़े भे हैं रे ॥ २ ॥

माया भोजनु लीन्हे ठाढ़ीं, बहिनि ठंडा पानी रे।
पानी पियें मोरे रजवा, औ बहिनी ते तुम करैं रे॥
बहिनी! लोग कुटुम्ब सब देख्यों, मैं धना नहिं देख्यों रे॥ ३॥

भइया ओ मोरे भइया, तुमहिं मोरे भइया रे।
भइया! विरहा कै मारी भवजिया, सोवहिं धौरहारे रे॥ ४॥

एकु हाथ लीन्हेन्हि गेडुआ, दूसरे हाथे बिरिया रे।
पाएँन माँ लाली खरहुएँ, धाये दै धौरहारे रे॥ ५॥

की तुम नींद निंदारी, कि नींदा केरे माते ना।
की रे होरिलवा के बाप, पलँगु मोरा डोलई रे॥ ६॥

ना हम नींद निंदारे, न नींदा के रे माते ना।
रनिया हम तो होरिलवा के बाप, पलँगु तोरा डोलई रे॥ ७॥

घरी एकु लाग मनावत, घरी फुसलावत रे।
जब मोरा जुरा है सनेहु, मुर्ग उठि बोलहिं रे॥ ८॥

रहु रहु मुर्गा मैं तोहे मरवइहौं, मैं देसु निकरिहौं रे।
मोरे मुर्गा हमरे पहरु कस बोल्यो, मैं तोहें मरवइहौं रे॥ ६॥

काहे का हमै मरवइहौ, औ देसु निकरइहौ रे?
मोरी रनियाँ अपने पहरु हम बोलेन, काहे मरवइहौ रे॥ १०॥

चार नक्षत्र मेरे भाई हैं, और बदली बहिन है। मेरी बदली, तुम उस देश में जाकर बरसो, जहाँ मेरे पति मग्न होकर निवास कर रहे हैं॥१॥

बदली उठी और बरसने लगी, राजा भीगने लगे। भीगते-भीगते घर आये और दरवाजे पर खड़े हो गये। वे बरोठे में खड़े हो गये हैं॥२॥

माँ भोजन लिए खड़ी है और बहिन ठंडा पानी। (मेरे) राजा पानी पीते जाते हैं और बहिन से वाद-विवाद करते जाते हैं। कहते हैं, कुटुम्ब के सभी लोग तो दिखाई दे रहे हैं, मेरी स्त्री ही नहीं दिखाई दे रही है॥३॥

(तब बहिन कहती है)—भइया, हे मेरे भइया, तुम ही मेरे भइया हो। भइया, विरह में जलती हुई भौजाई धौरहरे में सो गई है॥४॥

एक हाथ में गेड़आ लेकर तथा दूसरे हाथ में पान का बीड़ा लेकर और

पाँवों में लाल खड़ाऊँ पहिन कर (भइया) धौरहरे की तरफ दौड़ कर चल दिये ।। ५ ।।

(भइया अपनी स्त्री से पूछते हैं)—तुम्हें नींद लगी है, कि तुम नींद में मस्त हो । या मैं पुत्र का पिता हूँ क्योंकि मेरा पलँग हिल रहा है ।। ६ ।।

न मुझे नींद लगी है, और न मैं नींद में मस्त ही हूँ । मेरी रानी मैं पुत्र का पिता हूँ, तुम्हारा पलँग हिल रहा है ! ।। ७ ।।

एक घड़ी मनाने में व्यतीत हुई और एक फुमलाने में और जब मेरा स्नेह जुड़ गया, तो मुर्गा बोल उठा (प्रातःकाल की घोषणा हुई !) ।। ८ ।।

"मुर्गा ! मैं तुझे मरवा डालूँगी, देश से निकलवा डालूँगी । मुर्गा ! तुम मेरे समय पर क्यों बोले, मैं तुम्हें मरवा डालूँगी ।। ९ ।।

(तब मुर्गा कहता है) रानी ! मुझे क्यों मरवा डालोगी ? मैं तो अपने समय पर बोला था । मुझे क्यों मरवाओगी ? ।। १० ।।

इस गीत में रानी का नक्षत्रों को भाई और बदली का बहिन बताना सांकेतिक है । इससे उसके विरह की ओर संकेत मिलता है कि वह धौरहरे में पड़ी पड़ी नक्षत्र और बादलों को देखा करती है । दूसरी महत्वपूर्ण बात है, राजा का पुत्रेच्छा की ओर संकेत करके अपनी रानी को मनाना । इससे यह प्रतीत होता है कि पुत्रेच्छा रानी को भी उतनी ही है, प्रत्युत अधिक है ।

(१७)

अब केहि के दुआरे नींबिया, औ केहि के दुआरे अम्बे केरी डार ।
सहेलरि अम्बा बौरे । टेक ।। १ ।।

ससुर बड़े घर नींबिया, राजन घर अम्बे केरी डार ।
मेरे ससुर बड़े दिलदारिया, सासुरानी खांडे केरी धार ।। २ ।।

मेरे जेठ हथन केरे कँकना, जेठनिया हिअरे बिचहार ।
मेरे देवर हमारे दिल आँगिया, देउरानिया सलुए बिच कोर ।। ३ ।।

और ननद जड़ाऊ आरसी, नन्दोइया मुँदरी बिच लाल ।
धन्नि धन्नि सासू तुम्हारी कोखि का, जिन जावे देवर अरु जेठ ।। ४ ।।

धन्नि धन्नि बहू तेरी जीभ का बखान्यो हमरा परिवार।
धनि रुकमिनि तोरा नैहर, धनि भीखम ऐसे बाप तो
पाटन लुटावैं ॥ ५ ॥

अब किसके दरवाजे पर नीम का वृक्ष है और किसके दरवाजे पर आम की डाल है, सखी री आम बौरा है ॥ १ ॥

बड़े ससुर के घर नीम है और राजा के घर आम की डाली है। मेरे ससुर बड़े उदार हैं, और सासु रानी ऐसी सीधी हैं जैसे तलवार की धार हो! ॥ २ ॥

मेरे जेठ मेरे हाथ के कंगन के समान और जेठानी गले के हार की भाँति प्रिय हैं। मेरे देवर मेरे दिल की अंगिया या चोली की भाँति और देवरानी सालू (एक प्रकार की उत्तरीय) के बीच की कोर की भाँति प्रिय हैं ॥ ३ ॥

और ननद जड़े हुए दर्पण की भाँति और नन्दोई अंगूठी में जड़े हुए लाल की भाँति हैं। और सासु रानी तुम्हारी कोख धन्य है जिसने जेठ-देवर को जन्म दिया ॥ ४ ॥

बहू, तुम्हारे वचन धन्य हैं जिन्होंने मेरे परिवार का ऐसा वर्णन किया। रुक्मिनी तुम्हारा नैहर धन्य है और धन्य है तुम्हारा भीखम ऐसा पिता जो बहुत ही उदार है ॥ ५ ॥

इस गीत में एक गुणवती शीलवान बहू का चित्र प्रस्तुत किया गया है। संयुक्त परिवार में इसी प्रकार की शील वाली बहू से परिवार में सुख और शान्ति आती है। ऐसी ही बहुओं को गृह-लक्ष्मी कहा जाता है।

(१८)

गंगा जमुना के रेत माँ मछिली बहि आई हो लाल। टेक ॥ १ ॥
महला के ऊपर महला, हमें रजवा बोलावै।

कैसे का आवौं रजवा, सासु मोरी जागै।
जागि लेओ अम्मा, जागि लेओ कबहूँ मरि जइहौ ॥ २ ॥

महला के ऊपर महला, मोहे रजवा बोलावै।
कैसे का आवौं रजवा, जिठनी मोरी जागी।
जागि लेओ जीजी जागि लेओ, कबहूँ जुदी होइ जइहौ ॥ ३ ॥

महला के ऊपर महला, मोहे रजवा बोलावै।
कैसे का आवौं रजवा, ननदी मोरी जागै।
जागि लेहु बीबी जागि लेहु, कबहूँ बहि जइहौ ॥ ४ ॥

मेरे पिछवारे सोनरा, पायल गढ़ि लावै।
केके का आवौं रजवा, पायल मोरी बाजै।
जो तुम्हें होय रजवा, आप्यू चले आवौ ॥ ५ ॥

गंगा-जमुना की रेत में मछली बह कर आ गई है ।।१।।

महल के ऊपर महल से मुझे मेरा राजा बुलाता है। राजा! कैसे में आऊँ, मेरी सासु जाग रही है। जागती रहो अम्मा एक दिन तो मर ही जाओगी ।।२।।

महल के ऊपर महल से मुझे राजा बुलाता है। राजा! में कैसे आऊँ मेरी जिठानी जाग रही है। जीजी, जागती रहो एक दिन जुदा हो जाओगी ।।३।।

महल के ऊपर महल से मुझे राजा बुलाते हैं। राजा! मैं कैसे आऊँ मेरी ननद जाग रही है। बीबी (ननद), जाग लो अभी एक दिन बह जाओगी अर्थात् विवाह होने पर चली जाओगी ।।४।।

मेरे पिछवारे एक सोनार है जो पायल बना कर लाया है। राजा! कैसे मैं आऊँ मेरी पायल बजती है। जो तुम्हें जरूरत हो तुम्हीं चले आओ ।।५।।

नायिका के हृदय के सम्भावित विचारों को अन्य स्त्रियों में व्यक्त करके विनोदपूर्ण ढंग से वह बातें कही हैं जो उपयुक्त परिस्थितियों में किसी के दिल में तो उठ सकती हैं परन्तु कही नहीं जा सकतीं। नवविवाहिता को अपने पति से मिलने में इस प्रकार की कठिनाइयों पर सखियों की, नायिका की ओर से, प्रगल्भतापूर्ण उक्ति है।

(१९)

ओरी सेरु भरि गोहुँआ भुँजायो चिरौंजी ऐसी गुरधनियाँ ॥ १ ॥
मैं तो सारे नग्र बँटवायों, ननद घर न पठयौं
नाउनिया असिली कै छिनारि, ननदी घर दै आई ॥ २ ॥
अब द्वार ते आये श्री साहेब, काहे रानी अनमनियाँ ।
राजा सेरु भरि गोहुँआ भुजायों, चिरौंजी ऐसी गुरधनियाँ ॥ ३ ॥
मैं तो सारे नग्र बँटवायों, ननद घर न पठयों ।
नाउनिया असिल कै छिनारि, ननद घर दै आई ॥ ४ ॥
अब उठौ न रनियाँ हमारि, करौ कुछ जलपनियाँ ।
अबहीं जइबे बहिनिया के देश, फेरि लइबै गुरधनियाँ ॥ ५ ॥
घोड़ा तो साजे घोड़सार, बहिनि देस होय जो रहे ।
बहिनी ठाढ़ी हैं पँवरि दुआर, भइया तो आये पहुनियाँ ॥ ६ ॥
अब आवौ न भइया हमारि, करौ कुछ जलपनियाँ ।
बहिनी न मोर भूख न प्यास, लेन आयौं गुरधनियाँ ॥ ७ ॥
भइया लरिका हैं निपट अजान, चबाय डारिन गुरधनियाँ ।
अब द्वार ते आये हैं पूत, तो काहे अम्मा अनमनियाँ ॥ ८ ॥
बेटा आये हैं मामा तुम्हार, लेन आये गुरधनियाँ ।
उठौ न माया हमारि, करौ न कुछ जलपनियाँ ॥ ९ ॥
माया जइबै माई केरे देस फेरि अइबै गुरधनियाँ ।
ओरी सेरु भरि गोहुँआ भुजायौं, चिरौंजी ऐसी गुरधनियाँ ॥ १० ॥
भइने घोड़ा तो साजे घुड़सार मामन देस होय जो रहे ।
माई ठाढ़ी हैं पँवरि दुआर, भइने तो आये पाहुनियाँ ॥ ११ ॥
भइने घोड़ा तो बाँधौ घुड़सार, करौ कुछ जलपनियाँ ।
माई न मोरे भूख न प्यास, फेरन आयौं गुरधनियाँ ॥ १२ ॥
भइने मामा हैं असल गवाँर, लेन गये गुरधनियाँ ।
भइने भे हैं किवाँरिन ओट, चबाय डारिन गुरधनियाँ ॥ १३ ॥
माई जो मोर होती गरीबी, कहाँ ते पउत्यों गुरधनियाँ ।
माई करिबे भइया केरा ब्याह, लदाय देबै गुरधनियाँ ॥ १४ ॥

"सेर भर गेहूं भुनवाये, चिरौंजी की भांति गुरधनियाँ अच्छी थी ॥ १ ॥

मैंने सारे नगर में बंटवाई परन्तु ननद के घर नहीं भेजी । नाउनि असिल छिनाल ननदी के घर दे आई" ॥ २ ॥

बाहर से श्री साहब आये और पूछा, "रानी उदास क्यों हो ?, "राजा सेर भर गेहूं भुनवाए, चिरौंजी की भांति गुरधनियां थी" ॥ ३ ॥

"मैंने सारे नगर में बंटवाई परन्तु ननदी के घर नहीं भेजी । असली छिनाल नाउन ननदी के घर दे आई" ॥ ४ ॥

"अब मेरी रानी उठो कुछ जलपान करो । अभी बहिन के देश जाऊंगा और गुरधनियां वापिस ले आऊंगा" ॥ ५ ॥

"घोड़सार में घोड़ा तैयार करके बहिन के देश में जा पहुंचे । बहिन पौरी (बरोठे) में खड़ी है—"भैया पाहुन आये हैं" ॥ ६ ॥

"आओ भइया बैठो कुछ जलपान करो ।" "बहिन ! न तो मुझे भूख है और न प्यास है, मैं तो गुरधनियां लेने आया हूं" ॥ ७ ॥

"भइया लड़के बड़े अनजान हैं उन्होंने गुरधनियां चबा डाली"(तुम्हें अब वापिस क्या दूं) बाहर से बेटा आया, 'अम्मा तुम क्यों उदास हो ? ॥ ८ ॥

"बेटा तुम्हारे मामा गुरधनियां वापिस लेने आये हैं ।" "अम्मा, तुम उठो और कुछ जलपान करो" ॥ ९ ॥

"मां, मैं माई के देश जाऊंगा और गुरधनियां फेर आऊंगा । सेर भर गेहूं पिसाये—चिरौंजी की भांति गुरधनियां" ॥ १० ॥

"भांजे ने घोड़सार में घोड़ा साजा और मामा के दरवाजे जा पहुंचा । माई पौरी (बरोठे) में खड़ी हैं भांजे पाहुन आये हैं" ॥ ११ ॥

"भान्जे घोड़सार में घोड़ा बांधो और आओ कुछ जलपान करो" । "माई न मुझे भूख है न प्यास मैं गुरधनियां फेरने आया हूं" ॥ १२ ॥

"भांजे तुम्हारे मामा ो पूरे गंवार हैं जो गुरधनियां लेने पहुंच गये !" इतना सुनकर भांजे ने किवाड़ों की ओट में होकर गुरधनियां चबा डाली ॥ १३ ॥

"माइ जो मेरे गरीबी होता तो मैं कहाँ से गुरधनियाँ पाता ? माई भइया का विवाह करूँगा तो गुरधनियाँ लदवा कर भेज दूँगा" ।। १४ ।।

इस गीत में ऐसी परिस्थिति उत्पन्न की गई है जिसमें मामा का मजाक उड़ाया जा सके। मामा कंजूसी और मूर्खता के लिए न केवल लोकगीतों में प्रसिद्ध हैं वरन् हमारे वास्तविक सामाजिक जीवन में मामा हास्य और विनोद के स्रोत हैं। वही दशा माई की भी है।

(२०)

राम चले हैं ससुररिया, सितलादेई के नैहर रे
मोरी नग्र अयोध्या उजारी, रामा ससुरारी में हैं रे ।। १ ।।

दसरथ चिट्ठी लिखि भेजें, जनक जीऊ बाँचे रे।
मोरे राम का दिहो पठवाई, अयोध्या मोरी सूनी लागे रे ।। २ ।।

हँसि कै चिठिया बाचैं बिहँसि मूठी दाबैं रे।
राम लिल्ली घोड़ी हो असवार, ओरहनु हम पावा रे ।। ३ ।।

अगिले के घोड़वा रामचन्द, पछिले के लछिमन रे ।
एहो आइ अयोध्या माँ उतरे, बहुत बिधि साजा रे ।। ४ ।।

अब द्वारे माँ उतरे हैं रामा, भितर उई पहुँचै हैं रे।
पूत बख्तर धरहु उतारि, नयन भरि देखौं रे ।। ५ ।।

साध एकु जिया उपजी, जो बिधि पुरवै रे।
मोरी सीता का होत गवनवाँ, तो चारिउ भइया आने जात्यो रे ।। ६ ।।

दूसर साध जिया उपजी, जो बिधि पुरवै रे।
मोरी सीता करहिं रसोइया, दसरथ राजा ज्यावैं रे ।। ७ ।।

तीसरि साध जिया उपजी, जो बिधि पुरवै रे।
मोरी सीता सुतति महलिया, तो राम नेवाजैं रे ।। ८ ।।

चौथि साध जिया उपजी, जो बिधि पुरवै रे।
मोरी गइया के होत बछेड़वा, अहिरि दूधु लावै रे ।। ९ ।।

पाँचई साध जिया उपजी, जो बिधि पुरवै रे।
मोरी सीता के होत होरिलवा, सुनित सुख सोहर रे ।। १० ।।

जो यह मंगलु गावै, औ गाय सुनावै रे।
तो तरि बैकुण्ठे जाय, सुनइया फल पावै रे॥ ११ ॥

राम अपनी ससुराल और सीता जी के मायके चले। उनके जाने से मेरा नगर अयोध्या उजड़ सा गया, राम ससुराल गये हैं॥ १ ॥

दशरथ ने जो चिट्ठी लिख कर भेजी जनक जी उसे पढ़ रहे हैं, "मेरे राम को भेजवा दो मेरी अयोध्या सूनी है" ॥ २ ॥

हँसते हुए चिट्ठी पढ़ते और हँसते हुए मुट्ठी बन्द कर लेते हैं। "राम लिल्ली घोड़ी पर सवार हो—मुझे उलाहना मिला है॥ ३ ॥

आगे घोड़े पर रामचन्द्र पीछे-पीछे लक्ष्मण अयोध्या में तमाम साज-सामान के आकर उतरे॥ ४ ॥

राम द्वार पर उतर कर भीतर पहुँचे। उनकी माता ने उनसे कहा, "पुत्र बख्तर उतार कर रखो, कि मैं आँखें भर कर तुम्हें देखूँ॥ ५ ॥

दिल में एक इच्छा पैदा हुई है जिसे ईश्वर पूरी कर दे—मेरी सीता का द्विरागमन होता और चारों भाई उसे बिदा कराने जाते॥ ६ ॥

मन में दूसरी इच्छा पैदा हुई है जिसे ईश्वर पूरी कर दे—मेरी सीता रसोई बनावे और राजा दशरथ भोजन करें॥ ७ ॥

तीसरी इच्छा उत्पन्न हुई है जिसे ईश्वर पूरी करे—मेरी सीता महल में सोती और राम उनको मनाते॥ ७ ॥

चौथी इच्छा मन में पैदा हुई है जो ईश्वर पूरी करे—मेरी गाय के बछड़ा होता और अहिर दूध लाते॥ ६ ॥

पाँचवीं इच्छा मन में पैदा हुई है जो ईश्वर पूरी करे—मेरी सीता के पुत्र होता, जिससे मैं सुखदाई सोहर सुन सकती॥ १० ॥

जो यह मंगल गावे और गाकर सुनावे तो वह मुक्ति पाकर बैकुंठ पहुँच जायेगा। और सुनने वाला अच्छा फल पायेगा॥ ११ ॥

इस गीत में सासु रानी अपनी बहू से पुत्र की अकांक्षा करती है। सासु की

इच्छा और भी बलवती होती है कि उसके पुत्र के पुत्र हो। जब तक ऐसा नहीं हो जाता, उसे चैन नहीं मिलती। कहावत है कि 'मूल से ब्याज अधिक प्यारा होता है, अर्थात् पुत्र से अधिक पुत्र का पुत्र प्यारा होता है। यह आकांक्षा वंश चलाने की चिन्ता से विशेषतया प्रेरित है। बिना पुत्र के पुरखे नहीं तर सकते।

(२१)

मेरो मन लाग्यौ हरी धरी।
बाहेर ते आये रानी के राजा, काहे धना अटपटी रे ॥ टेक १ ॥
हँसि कै बोली राजा की रनियाँ, आजुइ होइहैं लले लले। ,,
बाहेर बाजै आनन्द बधइया, भीतर रोवै लली लली ॥ ,, २ ॥
तुम तो कह्यो रानी लालन होइहैं, करि बैठी तुम लली लली।,,
अपनी लली को नाम धरइबै, सुरजमुखी की कली कली ॥ ,, ३ ॥

मेरे मन में हरी-हरी की इच्छा है। बाहेर से राजा आये, "रानी तुम क्यों खिन्न हो?" ॥ १ ॥

राजा की रानी हँस कर बोली, "आज पुत्र होगा।" बाहर आनन्द बधाई बज रही है और भीतर पुत्री रो रही है ॥ २ ॥

"रानी तुमने तो कहा था कि पुत्र होगा और तुमने तो पुत्री पैदा कर दी।" "मैं अपनी पुत्री का नाम रखाऊंगी सूरजमुखी की कली" ॥ ३ ॥

यह पहिला सोहर है जिसमें पुत्री-जन्म का वर्णन किया गया है। न केवल वर्णन है किन्तु पुत्री होने पर संतोष और खुशी प्रकट की गई है। पुत्र के होने वाली खुशी तो नहीं है परन्तु माँ को फिर भी बहुत खुशी है। यह सोहर अपेक्षाकृत नया है। इसीलिए आशा होने लगती है कि पुत्रियों की ओर वह उपेक्षा-भाव अब नहीं रहेगा। समाज के लिए यह बहुत कल्याणकारी चिह्न है।

(२२)

ऊँच चौतरा बनिनि केरा, बसिगे महाजन रे।
बनिनि झारि बिछावौ सतरंजिया, सिपाही लोग बैठैं रे ॥ १ ॥
तो कितने सेर बेचहु सुपरिया, कितने सेर नरियल रे?
तो कितने सेर बेचहु पिपरिया, पिपरी हम लेबै रे ॥ २ ॥

रुपिया सेर बेचउँ सुपरिया, रुपिया सेर नरियल रे ।
राजा लाखु टका बेचौं पिपरिया, पिपरी बड़ी महँगी हैं रे ॥ ३ ॥

की तोरी माया गरभ सन, की तोरी बहिनी गरभ सन रे ।
राजा बारह बरस कै उमरिया, पिपरी कहा करिहऊ रे ॥ ४ ॥

माया का आदरु न जान्यो, बहिनी राजन घर रे ।
बनिनि बारह बरस कै उमरिया, तो राम नेवाजें रे ॥ ५ ॥

तो हँसि कहि पिपरी ऽवाखै, बिहँसि लई बाँधे रे ।
राजा जुग-जुग जिये तेरा लाल, पीपरी जच्चा पीहँई रे ॥ ६ ॥

बनिया की स्त्री का ऊँचा चबूतरा है जिस पर महाजन बस गये हैं। "बनिनि झाड़ कर दरी बिछाओ सिपाही लोग बैठेंगे ॥ १ ॥

क्या भाव सुपारी बेचोगी और कितने सेर नारियल बेचोगी ? और पिपरी क्या भाव बेचती हो । मैं पिपरी लूँगा ॥ २ ॥

रुपये सेर सुपारी बेचती हूँ, और रुपया सेर नारियल बेचती हूँ । और राजा लाखु रुपये सेर पिपरी बेचूंगी । पिपरी बड़ी महँगी है ॥ ३ ॥

"तुम्हारी माँ गर्भ से है या तुम्हारी बहिन ? तुम्हारी उम्र तो बारह वर्ष की है तुम्हें पिपरी की आवश्यकता ? ॥ ४ ॥

'तू माता का आदर नहीं जानती और बहिन तो अपने पति के घर हैं । बनिनि बारह वर्ष की उम्र तो जरूर है परन्तु राम की कृपा है ॥ ५ ॥

हँसी खुशी से पिपरी तौलती है और पुड़िया बाँधती है । राजा तुम्हारा पुत्र जुग-जुग जिये और जच्चा पिपरी खाय ॥ ६ ॥

जच्चा के लिए पिपरी एक अच्छी औषधि है । उसका प्रभाव गर्म होता है और भूख लगती है । जहाँ अनेक प्रकार के अन्य मेवे और गर्म मसाले खाने को दिये जाते हैं पिपरी भी दी जाती है । गाँव की औरतें यह सब जानती हैं जो ऐसे अवसर पर आवश्यक होता है । सन्तानोत्पत्ति के लिए हमारे देश में अधिकांश औरतों को न तो डाक्टर की सहायता प्राप्त ही है और न आवश्यक ।

(२३)

तो मइके माँ मुनुआ जलमु लीन्ह, ससुरे बधइया बाजै रे।
द्वारे से रजवा भीतर आये, रनियाँ ते मतु करैं रे॥ १॥

रानी न हो मोरी रानी, तुमहिं मोरी रानी रे।
रानी तुम्हरे भे हैं नन्दलाल, तो केहिका मैं नेउतहुँ रे॥ २॥

तो नेउतहु माया हमारि, सासु पिया आपनि रे।
राजा नेउतहु ददुली हमारि, ससुर पिया आपनि रे॥ ३॥

तो नेउतहु भौजी हमारि, सरहज पिया आपनि रे।
राजा नेउतहु भइया हमारि, सार पिया आपनु रे॥ ४॥

नेउतहु बहिनी हमारि, सारि पिया आपनि रे।
राजा नेउतहु बहनोइया हमार, साढ़ू पिया आपन रे॥ ५॥

तो रनिया न हो मोरी रनिया, तुमहिं मोरी रनिया रे।
रनिया छोटी सी बहिनि हमारि, तो उनहूँ का नेउतब रे॥ ६॥

तो राजा हो मोरे राजा, तुमहिं मोरे राजा रे।
राजा छठिया मैं डरिहौं उठाय, ननद न बुलइहौं रे॥ ७॥

मायके में पुत्र ने जन्म लिया, सुसराल में बधाई बज रही है। दरवाजे से राजा भीतर गये और रानी से विवाद करने लगे॥ १॥

(कहते ह) "रानी, तुम मेरी रानी हो, तुम्हारे नन्दलाल हुए हैं तो (इस शुभ अवसर पर) किस किस को बुलवाया जाय?" ॥ २॥

(रानी कहती है) 'मेरी माँ को न्यौता दो यानी अपनी सासु को, और राजा मेरे पिता अर्थात् अपने स्वसुर सभी'को न्यौता दो॥ ३॥

'मेरी भौजाई को बुलाओ यानी अपनी सरहज को और राजा मेरे भइया को बुलाओ यानी अपने साले को' ॥ ४॥

'मेरी बहिन को अर्थात् अपनी साली को, बुलाओ और राजा मेरे बहनोई अर्थात् अपने साढ़ू को बुलाना' ॥ ५॥

(तब राजा कहते हैं) रानी, तुम मेरी रानी हो, रानी! मेरी छोटी सी बहिन है, उसे भी बुलाऊंगा॥ ६॥

"राजा ! तुम मेरे राजा हो । राजा, जो तुम ननद को बुलाओगे, तो मैं छठी ही उठा डालूंगी" ।। ७ ।।

ननद के प्रति द्वेष और शत्रुता की भावना हमारे भारतीय परिवारों में बहुत गहरी बैठ गई है । और पत्नी के प्रेम में मस्त पति अपनी बहिन के लिए कुछ भी नहीं कर पाता । यह पुरुष की सामाजिक दुर्बलता सी बनती चली जा रही है ।

४—रोचना

रोचना संबंधी गीत सोहर के अन्तर्गत आते हैं। गाने की तर्ज भी सोहर के समान ही है। पुत्र-जन्म से सम्बन्ध रखने वाली अनेक प्रथाओं में से यह भी एक है। रोचना का वास्तविक महत्त्व उस समय तक था जब डाक, तार तथा आवागमन के साधन स्वल्प थे।

पुत्र के जन्म पर नाई को रोचना लेकर भेजा जाता है कि वह संबंधियों के यहाँ सूचना पहुँचा आये। पुत्र की दृष्टि से मामा, नाना सबसे महत्त्वपूर्ण संबंधी हैं। अतएव यदि पुत्र का जन्म अपने पिता के घर होता है तो नाई उसके मामा तथा नाना के यहाँ यह खुशखबरी लेकर जाता है। और यदि पुत्र-जन्म ननिहाल में होता है तो ननिहाल का नाई बाबा और पिता के घर जाकर रोचना देता है। रोचना पुत्र-जन्म के समाचार को भेजने का एक दूसरा प्रकार है। जो असुविधा के कारण एक अनिवार्य आवश्यकता थी वह एक प्रथा के रूप में रूढ़ हो गई है। नाई भी ऐसे अवसरों की ताक में रहता है क्योंकि इस खुशखबरी की एवज में उसे कुछ न कुछ इनाम मिल जाता है। पुत्र के कल्याण की कामना से नाई को कोई भी कम देकर अप्रसन्न नहीं रखना चाहता। एक रोचना के गीत में, जिसे मैंने यहाँ नहीं दिया है, सीता जी बाल्मीकि के आश्रम से अयोध्या रोचना भेजती हैं, जिसमें नाई को आदेश देती है कि रोचना सबको देना परन्तु पुत्र के पिता को मत देना क्योंकि राम ने ही सीता को ऐसी दशा में बनवास दिया था। जिस लोकरंजन के लिए राम ने सीता को बनवास दिया वही लोकमत राम के इस कृत्य की सदा बुराई करता आया है। वास्तव में राम ने एक मूर्ख धोबी के शब्दों के आधार पर सीता को बनवास दिया था, लोकमत के अनुसार नहीं। यह गीत पं० रामनरेश त्रिपाठी के 'ग्राम साहित्य' में प्रथम भाग में दिया गया है इसीलिये मैं इस गीत को नहीं दे रहा हूँ।

रोचना

(१)

हँकरों मैं नग्र के नउआ तो हँकरि बोलावा रे ।
नउआ हमरे नैहर लगे जाओ रोचन दई आवो रे ॥ १ ॥
न जानौ देसु न कोसु कहाँ तुम्हरा नैहर रे ।
रानी न जानौ भीखम दुआर कहाँ नउआ उतरहि रे ॥ २ ॥
सुरजन मुख दरवजवा तो सोने बाजूबन्द हैं रे ।
नउआ हथिया झुकहिं दरवाजा तो भीखम भइया बैठे हैं रे ॥ ३ ॥
एहो भीखम पिता बैठे हैं अथइया तो नउए जोहारा रे ।
कहना के तुम नउआ अरे किन्हरे पठावा है रे ॥ ४ ॥
अरे किनके भे है नन्दलाल रोचनु लई आयो है रे ।
एतना सुनि के नउआ बिहँसि उठि बोले ।
राजा बेटी के भये नन्दलाल रोचन लई आयेन रे ॥ ५ ॥
तुम नउआ बइठौ तखत चढ़ि औरु पलँगु चढ़ि ।
नउआ दुखवा ते पाँय पखारौं सुखु जो सुनायो रे ॥ ६ ॥
घिया केरी पुरिया पवाइनि दूधु केरी जावरि रे ।
एहो विधि ते रचेन्हि जेवनारि तो नउए जेंवाँवहि रे ॥ ७ ॥
नउआ का टोडरु उढ़ावैं नउनियाँ का बेसरि रे ।
एहो पाँच असर्फी तो हँसि कै विदा भे हैं रे ॥ ८ ॥
धनि रुकुमिनि तोरा नैहर धनि भीखम ऐसे बापु तो पटन लुटावैं रे ॥६॥

मै नगर के नाइयों को बुलवा भेजती हूँ । हे नाई, तुम मेरे मायके तक जाओ, और रोचना दे आओ ॥१॥

नाई कहता है—तुम्हारा नैहर किस देश में है, और यहाँ से कितने कोस है । यह मैं नहीं जानता । और हे रानी, न भीखम (रानी के पिता का नाम) का दरवाजा ही जानता हूँ, कहाँ जा कर उतरूँगा ? ॥२॥

सूरज की ओर दरवाजा है, जिसके बाजबन्द सोने के हैं। जहाँ आकर हाथी झुकते हैं, वहीं भीखम भैया बैठे हैं ॥३॥

वहाँ पहुँच कर नाई ने देखा कि अथइया में भीखम भैया बैठे ह, उनको इसने (नाई ने) राम जोहार की। उसके पहुँचते ही उन्होंने पूछा, 'तुम कहाँ के नाई हो, तुमको किसने भेजा है' ॥४॥

'अरे, किसके लड़का हुआ है, जो रोचना लेकर आये हो ?'

इतना सुन कर नाई ने हँस कर कहा—'राजा, आपकी बेटी के पुत्र हुआ है, में रोचना लेकर आया हूँ' ॥५॥

इस खुशी की बात को सुन कर उन्होंने बड़े उत्साह से कहा, 'नाई तुम तख्त पर बैठो, अरे पलंग पर चढ़ कर बैठो नाई, में दूध से तुम्हारे पैर धोऊँगा, तुमने यह परम सुख की बात सुनाई है' ॥६॥

(फिर) घी की पूड़ियाँ बनवाई गईं और दूध की खीर, और बड़ी विधि से भोजन बनाकर नाई को बड़े प्रेम से भोजन करवाया ॥७॥

नाई के लिए तोड़र (गहना) गढ़वाया और उसकी नाइन के लिए नथुनी बनवाई और विदा करते समय नाई को पाँच अशर्फी दी ॥८॥

रुक्मणि, तेरा नैहर धन्य है, जहाँ भीखम ऐसे पिता हैं, जो नाती होने की खुशी में अनेक गहने वगरह लुटा रहे हैं ॥९॥

नाती या पुत्र के होने से कितनी प्रसन्नता होती है, इसका एक अनुपम चित्र इस गीत में है। भीखम पिता नाई के पाँव दूध से पखारने के लिये उद्यत हैं। यह वास्तव ही प्रसन्नता की सीमा है।

———

५—पलँग

पलंग के गीत भी सोहर के अन्तर्गत आते हैं और इनके गाने का ढंग भी वही है।

पलँग

(१)

पलँगु तौ आवा बिकाई, पलँगु बड़ा सुन्दर रे।
मोरी सासू! करौ पलँगु केरा मोलु, ललन लई पहुड़ऊँ रे॥ १॥
अस गरबीली बहुरिया, गरब जनि बोलहु रे।
बहुआ मइके ते पलँगु मँगावहु, ललन लई पहुड़ऊ रे॥ २॥
हँकरौं मैं नग्र के नउआ, तो हँकरि बोलावौं रे।
नउआ हमरे नैहर लगे जावौ, पलँगु लई आवौ रे॥ ३॥
एकु बनु नाघे दूसर बन तिसरे नैहर बन रे।
एहो तखत बैठे राजा दसरथ, नउआ अरज करै रे॥ ४॥
राजा न हो मोरे राजा तुमहिं मोरे राजा रे।
राजा बेटी के भये नन्दलाल, पलँगु उन माँगा रे॥ ५॥
बइठौ न नउआ तखत चढ़ि, औरु पलँगु चढ़ि रे।
नउआ सरजू ते जल भरि लावौं, तो चरन पखारौं सुखु जो
सुनायो रे॥ ६॥
आलस चनन कटाइन, पलँगु गढ़ाइनि रे।
एहो मचवन ईंगुरु धरावैं, तो पटियन अरसी रे॥ ७॥
रेसम बाध बिनाइन, ओरदावन मखतूल की रे।
नउआ लैके पलँगु तुम जावहु, बिटिया मोरी पहुड़े रे॥ ८॥
तो नउआ पलँग लई आवा, बरोठे धरि दीन्हेसि रे।
मोरी सखिया सासु जी का लावो बुलाई पलँगु मेरा दूयाखई रे॥ ९॥
बहुअर ओ मोरी बहुअर तुमहिं मोरी बहुअर रे।
मोरी बहुअर कमरा मा पलँगु बिछावहु, ललन लई पहुड़ऊ रे॥ १०॥

पलँग बिकने के लिये श्राया है पलँग बड़ा सुन्दर है। मेरी सास पलँग का मोल भाव करो पुत्र को लेकर लेटूँ ॥ १ ॥

ऐसी गर्व वाली बहू है गर्व के साथ मत बोलो। बहू मायके से पलँग मगावो श्रौर तब श्रपने पुत्र को लेकर लेटो ॥ २ ॥

"मैं नगर के नाइयों को हँकवा बुलाऊँगी। नाई मेरे मायके जाश्रो श्रौर पलँग ले श्राश्रो" ॥ ३ ॥

एक वन पार किया, दूसरा किया तीसरा नेहर का ही वन है। तखत पर राजा दशरथ बैठे हुए हैं श्रौर नाई विनती कर रहा है ॥ ४ ॥

"राजा तुम्हीं मेरे राजा हो, तुम्हारी पुत्री के पुत्र हुश्रा है इसलिये उन्होंने पलँग मँगाया है" ॥ ५ ॥

हे नाई, तुम तख्त पर बैठो श्रौर पलँग पर बैठो। नाई मैं सरजू से जल भर लाऊँ तब तुम्हारे चरण धोऊँगा। तुमने सुख की बात सुनाई है ॥ ६ ॥

श्रसली चन्दन कटवाया, श्रौर पलँग बनवाया। श्रौर पायों को ईंगुर लाल रंग से रँगाया श्रौर पाटियों में श्रलसी का तेल लगवाया ॥ ७ ॥

रेशम के बाधों से पलँग बुनवाया श्रौर मखतूल की श्रोरदावन लगवाई। "नाई, तुम पलँग लेकर जाश्रो मेरी बेटी लेटे" ॥ ८ ॥

तो नाई पलँग लेकर श्राया श्रौर उसने बरोठे में रख दिया। मेरी सखियो, सासु जी को बुला लावो मेरा पलँग देखें ॥ ९ ॥

बहू तुम मेरी बहू हो, कमरे में पलँग बिछाश्रो श्रौर पुत्र को लेकर लेटो ॥ १० ॥

इस गीत में सासु का बहू के साथ बर्ताव की एक झाँकी है। श्रौर दूसरी बात जो इस गीत से परिलक्षित होती है वह यह कि सासु को श्रपने पुत्र की ससुराल से कुछ ले लेने श्रौर मँगवाने में लाज नहीं श्राती। यह तो लड़के वाले का प्रमुख श्रधिकार है। बेटी के विवाह के समय सभी श्रावश्यक चीजें बेटी के साथ भेजी जाती हैं यहाँ तक कि पलँग भी। किन्तु यदि कोई चीज छूट जाये तो सासु श्रधिकारपूर्वक उसकी माँग कर सकती है श्रौर बेटी के बाप को कर्जदार की भाँति उसकी पूर्ति करनी पड़ती है। दहेज श्रौर लड़के वालों के श्रन्य श्रधिकारों ने पुत्री जन्म को ही दुर्भाग्य का प्रतीक बना दिया है। सासुश्रों का प्रायः बहुश्रों के साथ बर्ताव बहुत कठोर होता है। किसी सामान्य स्वाभिमान

वाली लड़की सासु के साथ सुचारु रूप से जीवन कदाचित् ही व्यतीत कर सकती है। यह हमारे सामाजिक जीवन की एक दुर्भाग्यपूर्ण परिस्थिति है। बहू का जीवन प्रायः सासु की इच्छाओं से परिचालित होता है। और बहू का पति अधिकतर छोटा न कमाने वाला होता है अतएव वह किसी प्रकार का विरोध नहीं करता। किन्तु समर्थ होने पर झगड़ता है और इस प्रकार प्रायः हमारे परिवार कलह के क्षेत्र बने रहते हैं।

(२)

लाल चनन रूख कटाइये, भोरै पलकिया गढ़ाओ। टेक।
पालकिया हाथी दाँत की।
चारिउ मैंचवन ईंगुरु ढराइये, चारिउ पटियन अरसी लगाओ ॥ १ ॥
आल मसाले के गेन्डुला, ऊपर साल दुसाला।
तापर रामचन्द्र पौढ़िये, और संग राजन केरी बेटी ॥ २ ॥
अरे को हारे को जीतिए अरे केहि का परिगा है दाँव।
धना जीती पिउ हारिगे, होरिलवा का परिगा है दाँव ॥ ३ ॥
लाल भोर भये पौ फाटिये, जच्चा का जियरा आनन्द।
केहि केरे दुआरे बाजा बाजिये, जच्चा का जियरा आनन्द ॥ ४ ॥

लाल चन्दन का वृक्ष कटवाओ और सुबह ही पलँग बनवाओ। पलँग हाथी-दाँत का। चारों पायों में ईंगुर का लाल रंग लगवाओ और चारों पाटियों में अलसी का तेल लगवाओ ॥ १ ॥

आल (?) मसाले के गद्दे बने हैं और ऊपर से साल और दुशाले हैं। तिसके ऊपर रामचन्द्र लेटे हैं और संग में राजा की बेटी है ॥ २ ॥

कौन जीता और कौन हारा और किसका दाँव पड़ गया। स्त्री जीत गई और पति हार गया है और पुत्र दाँव पड़ गया है ॥ ३ ॥

पौ फटने के साथ ही जच्चा का चित्त आनन्दित हो उठता है। किस के दरवाजे बाजे बज रहे हैं ? —जच्चा का चित्त प्रसन्न है ॥ ४ ॥

यह गीत यद्यपि बच्चा पैदा होने के बाद के अवसरों पर गाया जाता है परन्तु वास्तव में यह गीत गर्भाधान संस्कार के समय का प्रतीत होता है। गर्भाधान संस्कार अब एक सामाजिक प्रथा के रूप में नहीं मनाया जाता, परन्तु

कभी गर्भाधान संस्कार अवश्य मनाया जाता था। महाराष्ट्र में अभी विधिवत् पुरोहित की सहायता से गर्भाधान संस्कार को पूर्ण किया जाता है जो कि एक सामाजिक और धार्मिक कृत्य है। परन्तु महाराष्ट्र में भी इसका प्रचलन समाप्तप्राय है।

इस गीत से गर्भाधान का सांकेतिक वर्णन है। गृहस्थ-जीवन में पलँग का विशेष महत्त्व है। रति की दृष्टि से पलँग उद्दीपन विभाव का कार्य करता है। कितनी भी गरीबी क्यों न हो फिर भी नवविवाहितों के लिये पलँग की व्यवस्था लगभग अनिवार्य सी है। कामसूत्र में पलँग को अनिवार्य माना है। गर्भवती स्त्री के लिये पलँग की आवश्यकता और भी बढ़ जाती है, बच्चे की सुरक्षा की दृष्टि से और जच्चा के आराम के विचार से। बच्चे के जन्म से, कम से कम चार महीने तक बच्चे को अवश्य पलँग पर या पालने पर लिटाया जाता है जिससे कीड़े, सर्प या अन्य जन्तु बच्चे को किसी प्रकार हानि न पहुँचा सकें। यहाँ तक कि सासु या ससुर को भूमि पर लेटना पड़ सकता है, परन्तु नव-विवाहितों तथा बच्चे वाली स्त्री के लिये पलँग की व्यवस्था अनिवार्य सी है। इस प्रकार से पलँग की अनिवार्यता एक सामाजिक रीति बन गई है। महाराष्ट्र में ऐसे पलँग को विशेष महत्त्व प्राप्त है जिस पर बच्चे ने जन्म ग्रहण किया है। ऐसे पलँग पीढ़ियों सुरक्षित रखे जाते हैं और उनमें बच्चा और जच्चा ही लेटते हैं। जो पलँग जितना अधिक पुराना हो जाता है और जिसमें जितने ही अधिक बच्चे पैदा हो चुके होते हैं वह पलँग विशेष भाग्यशाली और महत्त्वपूर्ण हो जाता है और इसीलिये पलँग का मालिक अपने पलँग को अधिक से अधिक मंगनी पर देने के लिए उत्सुक रहता है कि उस पलँग पर और बच्चे हों।

———

६–पालना

पालना गीतों का विषय भी सन्तानोत्पत्ति है। बच्चे को पालने में लिटाकर झुलाने से बच्चा खुश रहता है। ये गीत भी सोहर के अन्तर्गत आते हैं यद्यपि भिन्न छन्द का प्रयोग किया गया है।

पालना

(१)

सिरी रामचन्द झूलैं अजब पालना ॥ १ ॥
उनके बाबा लै आये अजब पालना।
आजी रानी झुलावै झुलैं पालना ॥ २ ॥

श्री रामचन्द्र अनोखे पालने में झूल रहे हैं ।।१।।

उनके बाबा वह अनोखा पालना लाये हैं और आजी उनको पालने में झुलाती हैं ।।१।।

इसके आगे पिता, चाचा इत्यादि पालना लाने वालों में और माता, चाची इत्यादि क्रमशः झुलाने वालियों में जोड़ दिये जाते हैं। और इस प्रकार गीत का आकार बढ़ जाता है। पालना गीत भी सोहर के अन्तर्गत हैं। ये भी सोहरों के गाये जाने के उपरान्त गाये जाते हैं।

(२)

नीका लागे घर तेरा जसोदा ॥ १ ॥
रेशम पाटि का बना है पालना, झूलि रहा सुत तेरा जसोदा। टेक
हाँथ कँकन पायेन पैजनियाँ, खेलि रहा सुत तेरा जसोदा ॥ २ ॥

बलिदाऊ की बाँह् पकरि कै, चाल चलै सुत तेरा जसोदा।
दैइकै असीस चली सब सखियाँ, जुग जुग जिये सुत तेरा जसोदा ॥ ३ ॥

जसोदा तेरा घर अच्छा लगता है ॥१॥

रेशम की किनारी का पालना बना है जिसमें जसोदा तेरा बेटा झूल रहा है। हाथों में कंगन और पैरों में पैंजनियाँ (घूंघरूदार पावों में पहिनने का गहना) पहने हुए जसोदा तेरा बेटा खेल रहा है ॥२॥

बलदाऊ का हाथ पकड़ जसोदा तेरा बेटा चाल चल रहा है। सब सखियाँ आशीष देकर चलीं कि जसोदा तेरा बेटा युगों तक जीवित रहे ॥३॥

———

७–झुँझुना

बच्चे के खेलने के लिये झुंझुना साधारण खिलौना है जो सभी बच्चों को किसी न किसी प्रकार का मिलता है; भले ही वह सींकों का ही क्यों न हो। सोहर के अन्तर्गत इन गीतों को माना जा सकता है।

सन्तानोत्पत्ति के उपरान्त सखियाँ, और टोले-मुहल्ले की स्त्रियाँ आकर सोहर गाती हैं तभी झुंझुना के भी गीत गाती हैं। वैसे तो इन गीतों की भी संख्या बड़ी है परन्तु दो गीत उदाहरण के लिये प्रस्तुत हैं।

झुँझुना

(१)

सोने का झुँझना बाजना, रूपे का झुँझना बाजना ॥ १ ॥
लाल काहे का तेरा झुँझुना, काहे के कंकड़ डारे रे!
सोने का मेरा झुँझन रे, मोतीचूर के कंकड़ डारे रे ॥ २ ॥

गढ़ा गढ़ावा झुँझुना रे, हाटे धरौं कि बजार रे।
कै लख का तेरा झुँझना रे, कै लख बाबा देंय रे ॥ ३ ॥
नौ लख का मेरा झुँझना रे, दस लख बाबा देंय रे।
ज्यों ज्यों झुँझुना बाजन लागे, आजी बलाइया लेय रे ॥ ४ ॥

सोने का झुंझुना बजने वाला है और चाँदी का झुंझुना बजने वाला है ॥१॥

पुत्र! तुम्हारा झुंझुना किस चीज से बना और उसमें कंकड़ काहे के पडे है? सोने का मेरा झुंझना है और मोतियों के टुकड़ों के कंकड़ पड़े हैं ॥२॥

बना बनाया झुंझुना है इसको हाट मे रखूं या बाजार में? कितने लाख का तेरा झुंझुना है और तुम्हारे बाबा ने कितने लाख रुपये दिये? ॥३॥

नौ लाख का मेरा झुंझुना है बाबा ने दस लाख दिये हे । और जैसे-जैसे झुंझुना बजता है उनकी आजी बलाइयाँ लेती हें ।

झुंझुना बच्चे के खेलने का एक खिलौना है । झुंझुना बाबा लाते हैं बच्चा खेलता है और आजी प्रसन्न होती है । बाबा नाती की खुशी में नौ लाख के झुंझुना के दस लाख देते हैं । पिता, चाचा इत्यादि का उल्लेख करके तथा आजी के बलइयाँ लेने के स्थान पर माता, चाची इत्यादि को क्रमशः रख कर यह गीत गाया जाता है । और इस प्रकार गीत काफी लम्बा हो जाता है ।

(२)

झुँझुना खेलै बनवारी, झुँझुना खेलै बनवारी ॥ १ ॥
लइकै झुँझुना आवा है कबारी, लेन चली जसुदा महतारी ।
पाँच रुपइया थारु भरि मोती, लेन चली जसुदा महतारी । टेक ॥ २ ॥
कै लख झुँझुना का मोलु भयो है, कै लख बाबा देंय रे ।
नौ लाख का मेरा बना है झुँझुना, दस लख बाबा देंय रे ॥ ३ ॥
काहे का तेरा बना है झुँझुना, काहे की लगी वामे घुँघुरवारी ।
लइकै झुँझुना चढ़ि गे अँटारी, मचलि रहे नटवर गिरधारी । टेक ॥ ४ ॥

बनवारी झुंझुना खेलते हैं, बनवारी झुंझुना खेलते हैं ॥१॥

कबाड़ी (अनेक प्रकार की चीजें बेचने वाला) झुंझुना लेकर आया है जसोदा माता लेने चली हैं । पांच रुपये और थालभर मोती लेकर जसोदा माता झुंझुना लेने चली हैं ॥२॥

कितने लाख रुपये में झुंझुना का मोल हुआ है, कितने लाख बाबा दे रहे है ? नौ लाख में झुंझुने का मोल हुआ है और बाबा दस लाख दे रहे हैं ॥३॥

तेरा झुंझुना काहे का बना है और किस चीज के घुंघरु लगे हैं । इतने में ही गिरधारी झुंझुना लेकर अंटारी (छत) पर चढ़ गये मचलने लगे ।

———

८—कठुला

कठुला गले में पहिनने का एक प्रकार का हार होता है जिसमें मोटे-मोटे सोने के दाने पोहे जाते हैं। इस गीत का भी संबंध बच्चे से है।

कठुला

(१)

वाह रे लालु तुम्हें कठुला कै साथ ॥ १ ॥
कठुला का सोना सुरेख-मँगावौ,
गढ़ावै वोहि के बाबा, पहिरावै वोहि की आजी। टेक ॥ २ ॥
लालु का बाबा आवैगा, हाथी चढ़ि कै आवैगा।
मोहरैं खूब लुटावेगा, बाजै वोहि के घुँघरू खेलावै वोहि कै आजी।
॥ टेक ॥ ३ ॥
कठुला तो सोहे वोहि के भइया के दरवाज,
लालु का भइया आवेगा लालु का बाबू आवेगा
मोटर चढ़ि के आवेगा, बग्घी चढ़ि के आवेगा।
रुपिया खूब लुटावैगा, बाजै वोहि के घुँघरू खेलावै वोहि कै माया।
॥ टेक ॥ ४ ॥
कठुला तो सोहै वोहि के जीजा के दरवाज
लालु का जीजा आवेगा, लालु का फूफा आवेगा,
बग्घी चढ़ि कै आवेगा, मोटर चढ़ि कै आवेगा।
रुपिया खूब लुटावैगा, बाजै वोहि के घुँघरू, खेलावै वोहि के बुआ।
॥ टेक ॥ ५ ॥

कठुला तो सोहे वोहि के नाना के दरवाज, मामा के दरवाज,
लालु का नाना आवेगा, लालु का मामा आवेगा,
गदहा चढ़ि कै आवेगा, रीछ माँ चढ़ि कै आवैगा,
कौड़ी खूब लुटावैगा, बाजै वोहि के घुँघरू खेलावै छिनरिया माइ
खेलावै पतुरिया नानी ॥ ६ ॥

वाह रे लालु, (पुत्र) तुम्हें कण्ठे की इच्छा है ।। १ ।।

कण्ठे के लिए अच्छा सोना मंगवाना। उसके बाबा बनवाते हैं और उसकी आजी पहिनाती है ।। २ ।।

लालु (पुत्र) का बाबा आयेगा, हाथी में चढ़कर आयेगा, मोहरें वह खूब लुटायेगा। पुत्र के घुंघरू बजते हैं उसकी आजी खिलाती हैं ।। ३ ।।

कण्ठा उसके भैया के दरवाजे पर शोभा देता है। लालु (पुत्र) का भैया आयेगा, लालु (पुत्र) का पिता आयेगा। मोटर पर बैठाकर आयेगा, बग्घी पर चढ़कर आयेगा, खूब रुपये लुटायेगा। लालु (पुत्र) के घुंघरू बजते हैं उसकी माँ खेलाती है ।। ४ ।।

कण्ठा उसके जीजा के दरवाजे पर शोभा देता है। लालु का जीजा आयेगा, लालु का फूफा आयेगा; बग्घी में बैठकर, मोटर पर चढ़कर आयेगा खूब रुपये लुटावेगा। उसके घुंघरू बजते हैं और उसकी बुआ खिलाती हैं।
।। ५ ।।

कण्ठा उसके नाना के दरवाजे पर, उसके मामा के दरवाजे पर शोभा देता है। लालु का नाना आयेगा, लालु का मामा आयेगा। नाना गधे पर बैठ कर आयेगा और मामा रीछ पर सवार होकर आयेगा। वे कौड़ी खूब लुटायेंगे। उसके घूंघरू बजते हैं और उसकी छिनरिया माई खेलाती है उसकी पतुरिया (रंडी) नानी खेलाती हैं ।।। ६ ।।

कंठा का गीत केवल अब गीत ही रह गया है। शायद ही किसी घर में अब कण्ठा बन पाता है और जिन घरों में यह संभव भी है उनमें कण्ठा न बनवा जंजीर बनवाते हैं। किन्तु जिस प्रकार हाथों में कंगन, पावों में पैजनियाँ जरूरी हैं उसी प्रकार गले में कण्ठा या जंजीर जरूरी है।

इस गीत में जो मुख्य बात है वह मामा और माता, मामी और मामी के लिये अपशब्द तथा उनका मजाक बनाना। मामा-मामी और भाञ्जे के रिश्ते में एक अनोखी परम्परा चली आ रही है। एक दूसरे के लिए मरने तक की गालियाँ देना दोनों पक्षों का विशेष अधिकार है। ऐसी मान्यता है कि भाञ्जे की गालियों से मामा, माईं का और मामा-माई की गलियों से भाञ्जे का किसी प्रकार अहित नहीं हो सकता बल्कि आयु बढ़ती ही है। इसलिए भी ननिहाल में पालन-पोषण पाने वाले लड़के अधिक ढीठ तथा उद्दण्ड हो जाते हैं। हमारे गाँवों में मेहमानों की चार कोटियाँ बताई गई हैं, (१) ताकन-समधी, जो अपने पुत्र के ससुराल, विवाह इत्यादिक अवसरों पर जाता है, और अच्छी-अच्छी चीजें ताक लेता है अर्थात् देखकर निगाह मे रख लेता है। (२) टारन जब ताकन मेहमान ताक कर अपने बेटे को बताता है कि अमुक चीज अच्छी है तो टारन (पुत्र जिसका विवाह हुआ है) अपने ससुर से माँग लाता है इस प्रकार चीजों को टार लाता है। (३) अँगन भवन (आंगन के भीतर तक साधिकार प्रवेश पाने वाला) साला उसको घर के भीतर बाहर कहीं भी कोई बाधा नहीं है। (४) चुल्ह धमकन (चूल्हे तक को तोड़ देने वाला मेहमान) यह है भाञ्जा। यदि उसे भोजन न मिले तो वह चूल्हा फोड़ डाल सकता है। भांजे का यह विचित्र अधिकार हमारे सामाजिक जीवन का अनुपम व्यापार है। मेरा ऐसा विश्वास है कि इस प्रकार का भांजे का अधिकार बहू और ननद के संघर्ष और कलह से उत्पन्न हुआ है। बहू साधारणतया अपनी ननद के प्रति ईर्ष्यालु रहती है उसी के परिणामस्वरूप वह ननद के पुत्र से भी असंतुष्ट रहती है और उसके साथ अच्छा व्यवहार न करती रही होगी। जहाँ तक बहू और ननद की ईर्ष्या और झगड़े का प्रश्न है पुरुषों ने उसको विशेष महत्त्व न दिया होगा क्योंकि सोचते होंगे कि यह तो लड़की है एक दिन पराये घर चली जायेगी; इसको लेकर झगड़ा बढ़ाकर घर को अशान्त क्यों किया जाय। परन्तु जब बहू का लड़की के लड़के के साथ भी वैसा व्यवहार देखा गया होगा तब घर के पुरखा तथा अन्य व्यक्तियों को बुरा मालूम हुआ होगा। परन्तु घरेलू मामलों में स्त्री का अधिकार सर्वमान्य है और आसानी से उसके विरुद्ध कुछ नहीं किया जा सकता। अतएव मामा अपने भाञ्जे को चुप-चाप शै देता रहा होगा और माईं अर्थात् अपनी स्त्री के विरुद्ध ही कुछ विनोद के कारण और कुछ भाञ्जे के मन को बढ़ावा देने के लिए उकसाता रहा होगा। और तब मामा की शै पाकर छोटा भाञ्जा माईं को चिढ़ाने खिजाने के

लिए जबरदस्ती वे कार्य करता रहा होगा जो उसे पसन्द न हों। इस पर वह खीझ कर उस भाञ्जे को उसके मामा अर्थात् अपने पति के विरुद्ध उकसाती रही होगी। और मामा अपनी पत्नी की इस खीझ पर आनन्दित होता रहा होगा और भाञ्जे से कहता रहा होगा कि इस घर में सब कुछ तुम्हारा ही है, तुम्हारी माई का कुछ भी नहीं। कोई भी स्त्री अपने पति का मन बहिन के विरुद्ध हमेशा के लिए नहीं कर सकती—फिर बच्चे ने क्या बिगाड़ा है। इस प्रकार की परिस्थिति में भाञ्जा कभी मामी को मामा के उकसाने पर और कभी मामा को मामी के खीझने पर चिढ़ाने और परेशान करने लगा, और इस प्रकार की परम्परा चल पड़ी कि कभी—"माई मरें मलीदा होय, सब भइनेन का न्योता होय" और कभी "मामा मरें मलीदा होय, सब भइनेन का न्योता होय" की रट शुरू हो जाती है। इस प्रकार मामा के घर पर भाञ्जे का अधिकार हो गया।

मामा को कंजूस बताने और कौड़ी बाँटने के भीतर दो कारण छिपे हुए हैं। एक तो इसमें बहिन की अपनी भावज के प्रति प्रच्छन्न विरोधात्मक मानसिक प्रतिक्रिया छिपी है। मामा को कंजूस बताने में वास्तव में मामा की पत्नी को बुरा कहा जाता है क्योंकि बहिन सोचती है कि मेरा भाई बिल्कुल शुद्ध था और मुझसे बहुत स्नेह करने वाला था परन्तु भावज के आने पर सारा प्रेम गायब हो गया। अतएव बहिन अपनी भावज से असंतुष्ट रहती है और चूँकि भाई भावज के प्रभाव में होता है अतएव भावज के विचारों की प्रतिच्छाया ही भाई के कार्यों में मिलती है अतएव भाई भी भावज की भाँति हो जाता है और इस प्रकार के व्यंगों का शिकार बनता है। दूसरा कारण यह है कि वह साला भी होता है और साला होने के कारण उसे बहुत से अवसरों पर नेग चुकाने होते हैं और लड़के पक्ष वालों के लिये सब कुछ थोड़ा है चाहे जितना भी दिया जाये इन्हें लगता ही नहीं कुछ मिला।

इस प्रकार के व्यंग में और अधिक देने के लिए एक प्रकार से सुझाव रहता है और पानी चढ़ा कर अधिक से अधिक लेने की नियत छिपी रहती है। कुछ लोगों के हिसाब से नाना-नानी भी साले, सरहज, समधी और समधिन के रिश्ते में आते हैं। साले, सरहज, समधी और समधिन से मजाक करने का अधिकार है। अतएव नाना-नानी को भी इस प्रकार के अनेक व्यंगों और कटाक्षों का शिकार बनना पड़ता है क्योंकि उस रिश्ते वाले लोग भी मौजूद होते हैं।

कुछ भी हो मामा-माई का रिश्ता हमारे सामाजिक जीवन का एक ऐसा केन्द्र है जहाँ से न जाने कितना आनन्द फूट बहता है, जिसकी कल्पना नही की जा सकती केवल अनुभव किया जा सकता है। बिना मामा के जिन्दगी का मजा आधा है। गुजराती में एक लोकोक्ति है कि 'मामा न होने से काना मामा ही अच्छा है।'

कुछ लोगों का मत है कि मामा-भान्जे की गाली-गलौज की प्रथा का स्रोत श्रीकृष्ण का कंस-संहार की कथा है। और चूँकि श्रीकृष्ण के हाथों मर कर कंस की मुक्ति हुई थी इसीलिए सभी मामा अपने भान्जे के हाथों मर कर मुक्ति चाहते हैं। अतएव भान्जे की गालियाँ मामा को प्रिय हैं, इस मत में भी काफी सार है।

———

६—बधाई

पुत्र के पैदा होने पर बधाई बजती है। पुत्र की बुआ बड़े उत्साह से बधाई लाती हैं। उस समय बधाई के गीत गाये जाते हैं।

बधाई

(१)

देखो बृज मा बधाई बाजै ॥ १ ॥
काहे के छुरवा ते नारु छिनायौ, काहे के जल अन्हवायो। टेक
सोने के छुरवा ते नारु छिनायौ, जमुना के जल अन्हवायो ॥ २ ॥
केहि की कोखिया मा जलमु लियौ है, केहि के तुम लालु कहायो।
देउकी की कोखिया मा जलमु लियौ है, जसुदा के लाल कहायो ॥ ३ ॥

देखो ब्रज में बधाई बज रही है ॥ १ ॥
किस चीज से बने छुरे मे नाल कटाया और कैसे पानी से स्नान कराया ?
सोने के छुरे से नाल कटवाया और जमुना के जल से स्नान कराया ॥ २ ॥
किसकी कोख से जन्म लिया है और तुम किसके पुत्र कहलाते हो ?
देवकी की कोख से जन्म लिया है और जसोदा का बेटा कहलाता हूँ ॥ ३ ॥

(२)

भये नन्दजी के लाल बधाव लाई मालिनियाँ ॥ १ ॥
कहा लाई मालिनि, तो कहा तम्बोलिनियाँ ॥
तो कहा लाई आजु सुघर पटवारिनियाँ ॥ २ ॥

गजरा लाई मालिनि तो बिरिया तम्बोलिनियाँ।
कोई अच्छे से बन्दनवार सुघर पटवारिनियाँ ॥ ३ ॥
काह् माँगत मालिनि तो काह् तम्बोलिनियाँ।
कोई अच्छा दक्खिनु का चीरु माँगे पटवारिनियाँ ॥ ४ ॥
मालिनि देति असीस, तम्बोलिनि उठि डगरी।
जुग जुग जियै तेरा लाल, कहै पटवारिनियाँ ॥ ५ ॥

नन्दजी के पुत्र हुआ है, मालिनि बधाई लेकर आई है ॥१॥

मालिन क्या लाई है और तम्बोलिन क्या लाई है ? और सुन्दर पटवारिन आज क्या लाई है ? ॥२॥

मालिन गजरा (फूलों की बडी माला) और तम्बोलिन पान का बीड़ा लाई है। और सुन्दर पटवारिन अच्छे बन्दनवार बना कर लाई है ॥३॥

तो कुछ मालिन माँगती है और कुछ तम्बोलिन माँगती है और पटवारिन अच्छा सा दक्षिण का बना हुआ कपडा माँगती है ॥४॥

मालिन आशीष देती है—तम्बोलिन उठ कर चल देती है और पटवारिन कहती है कि तेरा लाल जुग-जुग जीवित रहे ॥५॥

बहुत संभव है कि इस गीत मे आया पटवारिन शब्द पटवाइन का ही रूपान्तर हो। पटवाइन (पटुवा की बीबी) रेशम का बन्दनवार लाती है।

(३)

मोरे अँगने माँ चम्पा का बिरवा, फूल फूलै आधी राति हो।
वोही फूल भाभी हारु जो गूथैं, हारु खूँटिनि बिच टाँगिये हो ॥१॥
हाथन खड़ुआ पायन छागल, नन्द बधाव लैके आई हैं हो।
अपनी नन्द का मैं पुरिया संकाय देहौं, येही भतीजे के
सोहिले हो ॥२॥
अपनी नन्द का मैं खीर रँधाय देहौं, जेंवै भतीजा मेरा लाड़िला हो।
जेंय जूठि नन्द उठि चली हैं, चितु खुटिनि बिचु जाइये हो ॥३॥
यह तो हारु भाभी हमका दीन्ह्यो, यही भतीजे के सोहिले हो।
जोई जोई देखो ननदी सोई सोई माँगो, बिनई दीन्हे कैसे
पाइये हो ॥४॥

भरी सभा मा भाभी ऐसे बैठी, जैसे ऐमल हथिया हो।
द्वारे से आये राजा रामचन्द, का धना तुम अनमनि हो ॥५॥
बार बार मैं बरजौं रे राजा, नन्द परोसे ना बसै हो।
आपनि जिभिया कलम करौ रनियाँ, बहिनि परोसिनि न
कहो हो ॥६॥
अपनी बहिनि का मैं महला उठाय देहौं, येही भतीजे के
सोहिले हो।
अपनी बहिनी का मैं भइँसी मँगाय देहौं, दूधु भनेजा मेरा
रोजु पिये।
दूधु दूधु मौरे पियैं लाड़िले, साढ़ी भनेजा मोरा लाड़िला हो ॥७॥

मेरे आंगन में चम्पा का वृक्ष है जिसमें आधी रात को फूल फूलते हैं। उन्ही फूलों का भाभी ने हार गूंथा और उसको खूंटी पर टांग दिया ॥१॥

हाथों में कड़े, पैरों में छागल पहिन कर ननद बधाई लेकर आई। अपनी ननद के लिए म खीर बनवा दूंगी इसी भतीजे के उपलक्ष में ॥२॥

अपनी ननद के लिए मैं खीर बनवा दूंगी और मेरा लाड़िला भाञ्जा भोजन करेगा। खा-पीकर ननद उठकर चल दी—चित्त खूंटी पर ही लगा रहा ॥३॥

भाभी यह हार मुझको देना—इसी भतीजे के उपलक्ष में। ननद जो जो देखो वह वह मांगो, बिना तुम्हें दिये कैसे पार पाऊंगी ॥४॥

भरी सभा में भाभी ऐसे बैठी हैं जैसे मस्त हाथी।

बाहर से राजा रामचन्द्र आये और बोले, मेरी रानी तुम उदास क्यों हो? ॥५॥

"राजा बार-बार मैंने कहा है कि ननद के पड़ोस में मत रहो।" रानी अपनी जीभ कटवा डालो, बहिन को कभी पड़ोसिन मत कहना ॥६॥

अपनी बहिन के लिए मैं महल बनवा दूंगा इसी भतीजे के उपलक्ष पर। अपनी बहिन के लिए मैं भैंस मंगवा दूंगा जिससे मेरा भाञ्जा रोज दूध पिये। दूध तो मेरे पुत्र पियेंगे और मलाई मेरा भाञ्जा खायेगा ॥ ७ ॥

इस गीत में बहुत ही महत्त्वपूर्ण प्रथा की ओर संकेत है। पुत्र होने की

तिथि से लेकर उसके अन्नप्राशन्न तक पुत्र की बुआ बधाव लेकर आती है। जब वह बधाव लेकर आती है तो उसके साथ बाजे बजते होते हैं, दो-चार आदमियों के सिर पर बच्चे के लिए कपड़े, खिलौने, पालना तथा फल मिठाइयाँ होती हैं। एक छोटा मोटा स्त्रियों और पुरुषों का जुलूस पुत्र की बुआ के साथ चलता है। वह सारा सामान लाकर भतीजे को बड़ी खुशी से देती है। बड़े उत्साह से यह बधाव आता है। शाम को बुआ फिर गीत गाती है उसमें सोहर सरिया, झुंझुना, पालना, बधाई और आशीष के गीत बड़े धूमधाम से गाये जाते हैं।

दूसरी महत्त्वपूर्ण बात इस गीत में भाई और बहिन के सच्चे स्नेह की है। भाई अपनी बहिन के विरुद्ध अपनी पत्नी के भी शब्द नहीं सहन कर सकता है और अपनी स्त्री के जीभ कटवाने के लिए कहता है और अपनी बहिन के लिए महल बनवा देने को कहता है और भाञ्जे के लिए भैंस खरीद देना चाहता है और अपने पुत्रों से भी अधिक प्यार प्रदर्शित करता है। मामा-मामी का यही दो प्रकार का बर्ताव भाञ्जे को साहसी अथवा दुस्साहसी बना देता है। इसीलिये मामा-माईं के साथ भाञ्जे का रिश्ता जबरदस्त बन जाता है। कुछ लोगों का यह विचार है कि भावज का बर्ताव ननद के लिए अच्छा नहीं होता और मामा भी उसमें व्यापक रूप से सम्मिलित होता है। अतएव ननद का पुत्र अपनी माँ के प्रति दुर्व्यवहार का बदला लेता है और सभी प्रकार की बातें कहता है। परन्तु इस कथन में अधिक सत्य नहीं है। इस बधावे में जितना बुआ लाती है उसका दुगुना करके लड़के की माँ को देना पड़ता है।

१८—आशीष

पुत्र को आशीष देते हुए प्रायः यह गीत गाया जाता है।

आशीष

(१)

चलौ दै आई जच्चारानी का असीस।
दूर खेलने जनि जइओ रे लालन, को वैरी को मित्र। टेक ॥ २ ॥
जुगजुग जिये तेरा बाबा दुलारा, बाढ़ै लाखु बरीस। टेक ॥ ३ ॥
दूधु दही की गागर भरि लेओ, वैसे भरि लेओ असीस। टेक ॥ ४ ॥

चलो जच्चा रानी को आशीष दे आयें ॥ १ ॥
दूर खेलने मत जाना, न जाने कौन बैरी है और कौन मित्र है ॥ २ ॥
तेरे बाबा का दुलारा बेटा जुगजुग जीवित रहे ॥ ३ ॥
जिस प्रकार दूध दही से गागर भर लेती हो उसी प्रकार आशीष भर ले ॥ ४ ॥

सोहर, झुनझुना, पालना और कठुला के गाने के बाद बधाई के गीत गाये जाते हैं और उसके उपरान्त आशीष के गीत गाये जाते हैं। सभी जगहों पर इसी क्रम में गाये जाते हों ऐसी बात नहीं है। छोटी-छोटी प्रथाएँ ग्रामों के अनुसार बदलती रहती हैं। बाबा के स्थान पर अन्य पुरुष रिश्तों के नाम लेकर यह गीत गाया जाता है।

द्वितीय प्रकरण

१—छठी

छठी पुत्र उत्पन्न होने के छठे दिन मनाई जाती है। कुछ घरों में एक दो दिन का हेर-फेर कर दिया जाता है। कभी छठे दिन शुभमुहूर्त नहीं पड़ता तब भी एक दिन का अन्तर पड़ जाता है। कुछ घरों में पुत्रों के न जीने पर भी छठे दिन छठी नहीं मनाई जाती है।

छठी का उत्सव पुत्र-जन्म के बाद सबसे महत्त्वपूर्ण उत्सव होता है। इस दिन कुटुम्बी जनों को चूल्हे का न्योता दिया जाता है जिसका अर्थ है कि आमंत्रित घर में चूल्हा नहीं जलता। अनेक प्रकार का कच्चा भोजन विधि से बनाया जाता है। उर्द की दाल की इस दिन विशेषता रहती है और बरा बनते हैं। इसीलिए छठी के बरा खाने की एक कहावत हो गई है जिसका अर्थ है बचपन से भली भाँति किसी व्यक्ति को जानना।

इस दिन सर्वप्रथम दो पत्तलों में भोजन निकाला जाता है जो जच्चा के सामने रखा जाता है। उनमें अन्य सभी व्यंजनों के साथ छः छः रोटियाँ रखी जाती हैं। एक पत्तल जच्चा के लिए होती है और दूसरी पत्तल विमाता के लिए। विमाता एक काल्पनिक माता है जो बालक का पालन-पोषण उदर के भीतर करती रहती है और बालक के पैदा हो जाने पर उदर में इधर-उधर मंथन कर बालक को ढूँढ़ा करती है और इसीलिए जच्चा के पेट में बालक के पैदा हो जाने पर भी तीव्र पीड़ा होती रहती है। उस विमाता के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने के लिए और पेट में पीड़ा के शमन के लिए उसको भी भोजन अर्पित किया जाता है। उस पत्तल को दाई ले जाती है।

इस प्रकार छठी के दिन जच्चा, बालक उत्पन्न होने के उपरान्त, प्रथम दिन भोजन पाती है। इसके पूर्व उसे दूध ही पिलाया जाता है तथा अन्य प्रकार के पौष्टिक पदार्थ खिलाये जाते हैं जिनमें सुंठैला (घी, गुड़, सोंठ,

गरी मिलाकर बनाया जाता है) और हरीरा (हल्दी, सोंठ, पिपरामूर, अजवाइन, छहारा, बदाम इत्यादि को गुड़ के साथ पका कर बनाया जाता है : यह तरल पेय है) मुख्य हैं ।

और इसी दिन सर्वप्रथम बालक अपनी माता का दूध पीता है । इसीलिए कभी लोग झगड़े में छठी के दूध की याद दिलाने की बात कहते हैं ।

छः दिन तक माता को भोजन और बालक को माता के दूध न देने की प्रथा स्वास्थ्य की दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण तथा लाभाकारी है । लगभग छः दिन में संतान उत्पन्न होने के कारण आये अन्तर को प्रकृति मिटा देती है और तब माता इस योग्य हो पाती है कि साधारण भोजन पचा सके । इसी प्रकार माता का दूध लगभग छः दिन तक बालक के पीने योग्य नहीं होता है । उस दूध के पिलाने से बालक निरोग नहीं रह सकता । छठी की इस प्रथा से वे बातें बच जाती हैं जिनसे जच्चा और बच्चा दोनों पर घातक प्रभाव पड़ सकता है ।

छठी के उत्सव के अनेक विस्तार हैं जिनका उल्लेख गीतों में प्राप्त होता है । उन्हीं गीतों के साथ उन विस्तारों पर विचार प्रस्तुत किये गये हैं । इस दिन सरिया, सोहर खूब गाये जाते हैं । कुछ सोहर विशेष रूप से छठी में ही गाये जाते हैं । इन सरिया-सोहरों के साथ ही खूब बाजे बजते हैं और दावत होती है । गाँव भर के लोग छठी पूजते हैं; और तिलक लगवा कर मिठाई खाकर प्रसन्न हो अपने घर जाते हैं । इस प्रकार छठी एक घर की खुशी को गाँव भर की खुशी बना देती है ।

छठी

(१)

अलबेली जच्चा मेरी खूब बनी, बेटा जाई जच्चा मेरी खूब बनी ॥ १ ॥

पियारी जच्चा जैसे नारियल जटा जच्चा केरा मूड़ बना ॥ २ ।
पियारी जच्चा जैसे रेशम लच्छा जच्चा केरे केस बने ॥ ३ ॥
पियारी जच्चा जैसे आम केरी फाँकी जच्चा केरे नैन बने ॥ ४ ॥
पियारी जच्चा जैसे सुआ केरी चोंच जच्चा केरी नाक बनी ॥ ५ ॥
पियारी जच्चा जैसे अनार के दाने जच्चा केरे दाँत बने ॥ ६ ॥
पियारी जच्चा जैसे नदी केरी सूति जच्चा केरे कान बने ॥ ७ ॥

पियारी जच्चा जैसे मटर केरी फली जच्चा केरी अँगुरी बनी ॥ ८ ॥
पियारी जच्चा जैसे नीबू नारंगी जच्चा के जोबन बने ॥ ९ ॥
पियारी जच्चा जैसे मैदा केरी घानी जच्चा केरा पेट बने ॥ १० ॥
पियारी जच्चा जैसे केला के खम्भ जच्चा की जाँघ बनी ॥ ११ ॥
पियारी जच्चा जैसे नगाड़न जोड़ी जच्चा के चूतर बने ॥ १२ ॥
पियारी जच्चा ऐति कैति कुसकास चमेली बिच फूलि रही ॥ १३ ॥

अलबेली जच्चा रानी बहुत सुन्दर लगती हैं—बेटा पैदा करने वाली जच्चा बहुत सुन्दर लगती हैं ॥१॥
प्यारी जच्चा रानी का सिर ऐसा सुन्दर है जैसे जटादार नारियल ॥२॥
प्यारी जच्चा रानी के बाल ऐसे सुन्दर हैं जैसे रेशम के लच्छे ॥३॥
प्यारी जच्चा रानी की आँखें ऐसी सुन्दर हैं जैसे आम की फाँकें ॥४॥
प्यारी जच्चा रानी की नाक जैसे तोते की चोंच की भाँति सुन्दर बनी है ॥५॥
प्यारी जच्चा रानी के दाँत अनार के दाने की भाँति सुन्दर हैं ॥६॥
प्यारी जच्चा रानी के कान नदी की सूती की भाँति सुन्दर हैं ॥७॥
प्यारी जच्चा रानी की अँगुलियाँ ऐसी सुन्दर बनी हैं जैसे मटर की फलियाँ ॥८॥
प्यारी जच्चा रानी के स्तन नीबू-नारंगी की भाँति बने हैं ॥९॥
प्यारी जच्चा रानी का पेट मैदा की सनी हुई घानी के समान सुन्दर है ॥१०॥
प्यारी जच्चा की जाँघें केले के तने के समान समवार हैं ॥११॥
प्यारी जच्चा के नितम्ब नगाड़ों की जोड़ी की भाँति सुन्दर हैं ॥१२॥
प्यारी जच्चा के इधर-उधर कुसकास है और बीच में चमेली फूल रही है ॥१३॥
(यह बहुत ही सांकेतिक अभिव्यक्ति है)।

यह ग्रामगीतों का प्रसिद्ध नखशिख वर्णन है। इसमें जो उपमाएँ दी गई हैं वे कुछ भद्दी एवं विनोदपूर्ण हैं। परन्तु उपमेय और उपमान में जो साम्य है वह बहुत वास्तविक है। अन्तिम पंक्ति में तो बहुत ही सुन्दर सांकेतिक कथन है। संकेत का अर्थ भले ही अश्लीलता के अन्तर्गत लिया जा सकता है परन्तु अभिव्यक्ति उच्चकोटि के ध्वन्यात्मक काव्य के अन्तर्गत रखा जा सकता है।

यह गीत छठी के समय जच्चा के मनोरंजन के लिये गाया जाता है जिससे सभी का मनोरंजन होता है। आगे दिये गये कुछ गीत विशेष रूप से पुत्र की छठी के अवसर पर प्रायः गाये जाते हैं यद्यपि ऐसा कोई निश्चित नियम नहीं है।

छठी पुत्र के जन्म के उपलक्ष में मनाया जाने वाला अवसर है। इस अवसर पर खानदान भर के सभी लोग आमंत्रित होते हैं और वहीं पर सबको कच्चा भोजन कराया जाता है। इस अवसर के भोजन में उर्द की दाल के बने हुए बड़े, एक विशेषता है। इसलिए छठी के बड़े खाने की लोकोक्ति विख्यात है।

इस अवसर पर छठी का चित्र प्रस्तुत किया जाता है। इस विस्तृत चित्रण में अनेक प्रकार के देवता सूर्य, चन्द्र, गंगा, जमुना तथा गृह-देवता एवं ग्राम-देवता के चित्र अंकित किये जाते हैं। इन सब चित्रों के बीच में माँ और पुत्र का चित्र भी अंकित किया जाता है जिसमें बच्चे का पूर्ण अवयवों के साथ अंकन होता है। कहीं-कहीं पर इन विस्तारों के अंकन कर सकने की असमर्थता के कारण गीली हल्दी से हाथ के छः निशान (थापे) बनाये जाते हैं। सम्पूर्ण अंकन के ऊपर एक सूजा गाड़ दिया जाता है जिसमें हल्दी, सुपारी छुहारे तथा गरी के समूचे गोले की एक माला पहिना दी जाती है। खानदान के सभी लोग छठी पूजने जाते हैं। सर्वप्रथम खानदान का सबसे वृद्ध उसको पूजता है तपश्चात् अन्य लोग। उस समय पुत्र वाले घर का मालिक अपनी सामर्थ्य के अनुसार सबकी आवभगत करता है और छठी का प्रसाद बाँटता है। छठी का मन से पूजना बंध्याओं के लिए पुत्रदायक समझा जाता है। छठी के दिन देवर और पुत्र की बुआ के लिये महत्त्वपूर्ण नेग हैं जिनकी चर्चा यथास्थान की जायेगी।

(२)

लोभिन जच्चा को मोरे गावैं,
को मोर लालु मरै गरु तूरि।
हम तो गैबे कवन लली का
देहैं लालु उई दुलहा ते माँगि, लरिका ते पूछि।

लोभी जच्चा को कौन गाये और मुफ्त में कौन अपना गला तोड़े। मैं तो

गाऊँगी अमुक रानी के लिये; वह अपने पति से पूछ कर जरूर कुछ देंगी—लड़के से पूछ कर कुछ देंगी।

इस गीत में छठी के उपलक्ष पर नेग लेने के सम्बन्ध में कटाक्ष-पूर्ण संकेत है। ऐसे अवसरों पर कुछ पेशेवर गाने वाली स्त्रियाँ भी होती हैं जो नेग के लिए गाती हैं। छठी के दिन इन विशिष्ट सोहरों के साथ सोहर, सरिया तथा अन्य गीत गाये जाते हैं।

(३)

को मोरे जोते को मोरे बोवे को मोरे डारै बीज धतूरा मस्ताना ॥ १ ॥
देवर जोते देवर बोवे नन्दोइया ने डारा बीज मस्ताना ॥ २ ॥
लाँई लाँई नन्दीरानी तोरि धतूरा मस्ताना ॥
जच्चा रानी का एके घूँट धतूरा मस्ताना ॥ ३ ॥
उइतो राती डोलैं माती डोलैं चीन्हैं न देवर जेठ।
गई गई कवने रामा की सेज। टेक
उनके भये धतुरिया लाल। टेक ॥ ४ ॥
सासू रानी ने माँगा नेग बहू चरुआ चढ़ाई मेरा नेग। टेक ॥ ५ ॥
सासुइया के हाथ कटइहौं ॥ ६ ॥
जेठानी ने माँगा नेग। टेक। बहू पिपरी पिसाई मेरा नेग। टेक ॥ ७ ॥
जेठानी के पाँव कटइहौं। टेक ॥ ८ ॥
ननदिया ने माँगा नेग। टेक। भाभी छठिया धराई मेरा नेग।
टेक ॥ ९ ॥
ननदिया कै नाक कटइहौं। टेक ॥ १० ॥
देवरा ने माँगा नेग। टेक। भाभी वंशी बजाई मेरा नेग। टेक ॥ ११ ॥
देवर का हिजरा करइहौं। टेक ॥ १२ ॥
गउनाहरिन माँगा नेग। टेक। बजन्हारिन माँगा नेक। टेक ॥ १३ ॥
बहू मंगल गवाई मेरा नेग। बहू ढोलक बजाई मेरा नेग। टेक ॥ १४ ॥
गौन्हारिन कै जीभि कटइहौं बजन्हारिन के हाथ कटइहौं। टेक ॥ १५ ॥

कौन जोतै कौन बोवे और कौन बीज डाले—धतूरा मस्त बना देने वाला है ।।१।।

देवर जोते देवर बोवे और नन्दोई मस्त बीज डाने ।।२।।

ननद रानी मस्ताना धतूरा तोड़ लाईं और जच्चा रानी एक ही घूंट में मदमस्त हो गईं ।।३।।

वह मस्त घूमती हैं और देवर और जेठ को भी नहीं पहिचानतीं । और उसी मस्ती मे वह अमुक की सेज पर पहुँच गईं उनके धतूरिया पुत्र हुआ ।।४।।

सासु ने चरुआ चढ़ाने के बदले में अपना नेग माँगा ।।५।।

जिस पर बहू ने कहा "मैं सासु के हाथ कटवाऊँगी" ।।६।।

जेठानी ने नेग माँगा । बहू पिपरी पिसाई का मेरा नेग दो ।।७।।

"जेठानी के पैर कटाऊँगी" ।।८।।

ननद ने नेग माँगा । भाभी छठी रखाई का मेरा नेग दो ।।९।।

"ननदी की नाक कटाऊँगी" ।।१०।।

देवर ने नेग माँगा । भाभी वंशी बजाने का मेरा नेग देओ ।।११।।

"देवर को मैं हिजड़ा करवा दूंगी" ।।१२।।

गाने वाली स्त्रियों ने नेग माँगा । बजाने वालियों ने नेग माँगा ।।१३।।

"बहू मंगल गीत गाने का हमारा नेग; बहू ढोलक बजाने का हमारा नेग" ।।१४।।

"गाने वाली स्त्रियों की जीभ कटाऊँगी और बजाने वालियों के हाथ कटाऊंगी" ।।१५"

ग्राम-गीतों की अश्लीलता पर विचार करना साधारणतया ग्रामविनोद पर विचार करना है । गीतों में बनावटी सभ्यता की बारीकियां ढूंढ़ना व्यर्थ है क्योंकि ग्राम-जीवन में नागरिक बनावट का अभाव है । इस गीत में अश्लीलता प्रतीत होगी; परन्तु परम्परागत विनोद के कटाक्ष रिश्तों के निश्चित रूपों पर आधारित हैं । देवर-भाभी के मजाक करने के अधिकार पर विस्तृत समीक्षा

प्रस्तुत की जा चुकी है। नन्दोई भी उसी कोटि में आता है। अतएव बीज डालने के सांकेतिक मजाक की व्यंजना उसी का भाग है।

दूसरी महत्त्वपूर्ण बात परिवार के अनेक लोगों के अनेक प्रकार के कार्यों के एवज में अनेक प्रकार के नेग हैं। चरुआ (मिट्टी का बर्तन) पानी गर्म करने के लिए चूल्हे पर चढ़ाया जाता है। इसी गर्म पानी को जच्चा छठी तक पीती है। केवल छठी के बाद जच्चा गर्म पानी को ठंडा करके पी सकती है। गर्म पानी पीने की यह व्यवस्था जच्चा के स्वास्थ्य की दृष्टि से बहुत ही आवश्यक है। चूल्हे पर इस प्रकार पानी गर्म करने का भार सास का है। उसे, नेग में जच्चा की सामर्थ्य के अनुसार सबसे बड़ी चीज मिलती है। इसके बाद पिपरी पीसने का कार्य जिठानी का है। उसको भी इस कार्य का नेग मिलता है। ननद छठी अंकित करती है। और वह पुत्र के काजल लगाती है। वह भी मूल्यवान चीज नेग में लेती है। देवर को भी छठी में, उसके रिश्ते के अनुकूल, जच्चा को प्रसन्न करने के लिये वंशी बजाने का कार्य मिलता है। उसे भी इसका नेग मिलता है। कहीं-कहीं पर वंशी के स्थान पर हिरना मारने की प्रथा है। उसमें एक नकली हिरन बनाया जाता है और छत से लटकाया जाता है जिसे देवर तीर कमान से मारता है। यह प्रथा क्षत्रियों के मांसाहारी होने के।कारण है। छठी की दावत में हिरन का मांस पकाया जाता है और आमंत्रित लोगों को खिलाया जाता है। उनके प्रभाव के अन्तर्गत रहने वाले ब्राह्मणों के यहाँ सचमुच का हिरन तो नहीं मारा जाता; क्योंकि अधिकाश ब्राह्मण मांस नहीं खाते अतएव नकली हिरन को मारकर ग्राम-प्रथा की पूर्ति की जाती है। इसका नेग देवर को मिलता है। हिरन मारने का एक बहुत ही भावपूर्ण गीत पं० रामनरेश त्रिपाठी के 'ग्राम साहित्य' पहिला भाग में संकलित है। इतना भावपूर्ण गीत लोकगीतों में कम ही मिलेगा।

इसके अतिरिक्त गाने-बजाने वाली भी अपना नेग माँगती हैं। जो कार्य कभी जच्चा की खुशी के कारण प्रारम्भ हुआ था उसने एक प्रथा का रूप धारण कर लिया। और प्रसन्न होकर देने के पूर्व ही सब नेगी अपने नेगों के लिए चिल्ल-पों मचा देते हैं। यहाँ तक कि परिवार के लोग भी कभी-कभी बड़ी कठोरता से अपना नेग माँगते हैं। कम या हलका नेग मिलने पर जच्चा को जीवन-पर्यन्त सास जेठानी के कटाक्ष सुनने पड़ते हैं। इस प्रकार से घरों के सुन्दर वातावरण, जो उच्च संस्कृति के द्योतक हैं, में प्रायः कटुता और ऊँच-नीच की भावना भर जाती है।

(४)

मोरा अवसर बीता जाय, हरदी चाहिए । टेक
कहाँना हरदी ऊपजी है, कवन रामा लादन जाँयें ?
(अमुक स्थान) हरदी ऊपजी है, कवन रामा लादन जायें ॥ १ ॥
को यह हरदी बाँटिये, अब को धरे छठिया-रेख ?
नाउन हरदी बाँटिये, ननदी धरै छठिया-रेख ॥ २ ॥

मेरा अवसर व्यतीत हुआ जा रहा है, हल्दी चाहिए । कहाँ हल्दी पैदा हुई है और कौन लादकर लाने जायेगा । अमुक स्थान में हल्दी पैदा हुई और अमुक रामा लादकर लेने जायेंगे ॥ १ ॥

इस हल्दी को कौन बाँटेगा और अब छठी के चित्र कौन बनावेगा ? नाउन (नाई की स्त्री) हल्दी पीसेगी और ननद छठी के चित्र रखेगी ।

जच्चा के मायके से हल्दी लादकर उसका पति तथा पति के भाई लाते हैं। वास्तव में जिस हल्दी के रंग से छठी रखी जायेगी वह जच्चा के मायके की होनी चाहिए । इसीलिए 'अमुक स्थान' पर जच्चा के मायके के स्थान का नाम लिया जाता है और 'कवनरामा' के स्थान पर जच्चा के पति और उसके भाइयों के नाम लिये जाते हैं ।

(५)

पूजत छठिया श्यामसुन्दर व्रजराज कँअर की,
बहुत विधि पूजा बनाई । टेक ॥ १ ॥
पहिले तौ पूजै दसरथ मोतिन थारु भराये ॥ २ ॥
फिर तौ पूजै रानी कौसिल्यादेई मोतिन माँग भराइ ॥ ३ ॥
फिर तो पूजै बाबा सबै जनै, मोतिन थारु भराये ॥ ४ ॥

श्यामसुन्दर व्रजराज कुँवर की छठी बहुत विधि से पूजा बना कर पूजा कर रहे हैं ॥ १ ॥

पहिले दशरथ मोतियों का थाल भराकर छठी पूजते हैं ॥ २ ॥

फिर कौशल्यारानी मोतियों से माँग पुराकर पूजती हैं ॥ ३ ॥

फिर उनके बाद बाबा वगैरह सभी लोग मोतियों के थाल भरा कर पूजते है।

(६)

कँटवा हो सोहिया मोरे लाल ॥ १ ॥
को मोरे कँटवा काढ़िये रे, को मोरे वेदना हरि लेय। टेक
देवर हमरे कँटवा काढ़ैं, सइयाँ हो दरद हरि लेंय ॥ २ ॥
को मोरे परदा डारिये रे, को मोरे गउअन को दान।
जेठ हमारे परदा डारैं, ससुर हो गउअन केरा दान ॥ ३ ॥
को मोरे ऐपनु पीसै रे, को मोरे छठिया धरै रे।
नाउनि ऐपनु बाँटिये रे, औ ननदी हो धरै छठिया रेख ॥ ४ ॥
को मोरे ढोलक बजाइये रे, को मोरे मंगल दुई चारि।
परोसिनि ढोलक बजाइये रे, सखियाँ हो मंगल दुई चारि ॥ ५ ॥

मेरे लाल काँटा शोभा दे रहा है। अर्थात् जो बच्चा पेट मे काँटे की भाँति पीड़ा दे रहा था वही अब शोभा दे रहा है ॥ १ ॥

कौन मेरा काँटा (बच्चा) निकालेगा और मेरी पीड़ा हरेगा। देवर मेरे काँटा (बच्चा) निकालेंगे और सैया दर्द मिटा देगे ॥ २ ॥

कौन मेरे पर्दा डालेगा और गायों का दान, कौन देगा ? मेरे जेठ पर्दा डालेंगे और ससुर गायों का दान देंगे ॥ ३ ॥

मेरे कौन ऐपन (गीली पिसी हुई हल्दी) पीसेगा और कौन छठी रखेगा ? नाइन ऐपन पीसेगी और ननद छठी रखेगी ॥ ४ ॥

मेरे यहाँ ढोलक कौन बजायेगा और कौन मंगल गीत (सोहर) गायेगा ? पड़ोसिन ढोलक बजायेगी और सखियाँ मंगल गायेंगी ॥ ५ ॥

कही-कही पर काँटा चौक की प्रथा है जिसमें पुत्र के हो जाने पर देवर उस प्रथा को सम्पन्न करता है। एक सोने का काँटा बनवाया जाता है—(इतनी सामर्थ्य न होने पर चाँदी के काँटे से ही प्रथा की पूर्ति कर ली जाती है) जिसके निकालने का अभिनय देवर करता है और वही सोने का काँटा उसे पुरस्कारस्वरूप प्राप्त हो जाता है।

(७)

टिकुली तौ नीकी सेंदुर केरी, सुरखी काजर केरी रे।
गहना तो नीका सोने केरा, हारु मोतिन केरा रे ॥ १ ॥

रासि तो नीकी गौंहुअन केरी, औरु जवन केरी रे।
एहो घर मा झगरै नउनिया, बाहेर हेलिनिया रे ॥ २ ॥

एहो झगरा तो नीका ननद केरा बँसुरी देवर केरी रे।
साँझ होत दिन अथवत, छठिया की बेरा आई रे।
एहो गरव गहेली ननदिया, तो अजहूँ न आई रे ॥ ३ ॥

की भौजी पठ्यो नउआ, की भौजी बरिया रे।
भौजी की रे 'कवन' ऐसे भइया, गरव मोरा उलह्यो रे ॥ ४ ॥

एक बार पठ्यों मैं नउआ, सहस बार बरिया रे।
नन्द लिल्ली घोड़ी कंत हमारि, लौटि घर आये रे ॥ ५ ॥

जो भौजी कोठला के काटेनि चाउर भसाकनि रे।
उइ भौजी बेटवा पजानी गरव मोरा उलह्यो रे ॥ ६ ॥

कोठिला तो काट्यों मैं आपन, अपने ससुर केरा रे।
ननदी मैं तुम्हरौ काह नसार्यो, गरव मेरा उलह्यो रे ॥ ७ ॥

बिन्दी सेन्दुर की सुन्दर लगती है, सुरेख काजल की। गहना सोने का अच्छा होता है और हार मोतियों का सुन्दर होता है ॥१॥

राशि (ढेर) गेहूँ की और जौ की अच्छी लगती है। घर में नाउन झगड़ती है और बाहर हेलनिया (डोमिन) झगड़ती है ॥२॥

ननद का झगड़ना अच्छा लगता है और देवर का वंशीवादन। संध्या हो गई, दिन पूर्ण हो गया—तो छठी पूजने का समय आया ॥३॥

गर्व से ग्रस्त ननद फिर भी नहीं आई।

भौजाई क्या तुमने नाई भेजा था या बारी? या तुमने अमुक ऐसे भइया को भेजा था मेरे गर्व को रखने के लिये? ॥४॥

एक बार मैंने नाई भेजा । सैकड़ों बार बारी भेजा । और ननद, लिल्ली घोड़ी पर बैठ कर स्वयं मेरे पति गये परन्तु वापिस लौट आये ।।५।।

जिस भौजाई ने कोठला (अनाज रखने के मिट्टी के घर ही मे बनाये भांड) से चावल चुरा-चुरा कर खाये उसी भौजाई ने पुत्र को जन्म दिया है वह मेरा गर्व क्या रखेगी ? ।।६।।

यदि कोठला मैंने काटा तो अपना और अपने ससुर का काटा । ननदी मैंने तुम्हारा क्या नुकसान किया जो मेरे स्वाभिमान को ऐसा धक्का दे रही हो ।।७।।

ननद और भावज के झगड़े की इस गीत में भी चर्चा है । परन्तु यह झगड़ा अच्छा समझा जाता है । यदि किसी का झगड़ना अच्छा लगता है तो वह ननद का । हमारे घरों में ननदों के इस प्रकार के झगड़े को भी अपना लिया गया है और उस झगड़े को भी बुरा नहीं माना जाता । ऐसे पुत्र-जन्म और पुत्र सम्बन्धी अन्य अवसरों पर ननद के झगड़े को अच्छा मानते हैं । उस झगड़े के बिना मजा नहीं आता । यह सौभाग्य की बात मानी जाती है कि ऐसा अवसर तो आया और मेरे ननद तो है झगड़ने के लिये । ननद का इस प्रकार का झगड़ा भी परम्परागत हो गया है ।

(८)

हाँ हाँ रे मुनुआ चाँदनी । टेक ॥ १ ॥

जब आवै लाला का बाबा;
हाथी पै चढ़ि कै आवै,
कलकत्त सहर का राजा
दरवाजे पै नौबत घरावै ॥ २ ॥

जब आवै लाला का चाचा,
वह तो घोड़े पै चढ़ि कै आवै,
बम्बई सहर का राजा,
द्वारे पै रुपिया लुटावै ॥ ३ ॥

जब आवै लालु का बप्पा,
मोटर पै चढ़ि कै आवै,

वह तो दिल्ली सहर का राजा,
दरवाजे पै पतुरै नचावै ॥ ४ ॥

जब आवै लालु का भइया,
सइकल पै चढ़ि कै आवै,
कानपुर सहर का राजा,
वह तो मोहरें खूब लुटावै ॥ ५ ॥

जब आवै लालु का फूफा,
वह तो बग्घी चढ़ि कै आवै,
लखनऊ सहर का राजा,
वह तो मोतिन झालर लावै ॥ ६ ॥

जब आवै लालु का नाना,
वह तो गदहा चढ़ि कै आवै,
सीपों, सीपों करते आवै,
वह तो पैसा खूब लुटावै ॥ ७ ॥

जब आवै लालु का मामा,
वह तो रीछु पै चढ़ि कै आवै,
वह तो चिलुअन झालरि लावै ॥ ८ ॥

जब आवै लालु का मौसा,
वह तो चलनी बेंचत आवै ।
वह तो बाँदर नचावत आवै ।
वह तो डमडम डमरू बजावै ॥ ९ ॥

जब आवै लालु कै नानी ।
वोहि नानी कै मब मेहमानी ।
वोहि नानी कै एेंचातानी ॥ १० ॥

जब आवै लालु कै माई ।
वह तो बेड़िनि बनि कै आवै ।
दरवाजे पै बाँसु गड़ावै ।
वह तो बेड़िन बनि कै नाचै ।

वह कौड़ी पैसा पावे ।
लालु का कठुला गढ़ावै ॥ ११ ॥

जब आवै लालु कै मौसी ।
गुरु खाँय कठौता ऐसी ।
वह मौसी के लागे चौसी ।
कुँअना पै परी उतानी ॥ १२ ॥

मुनुआ चांदनी की भाँति सुन्दर है ॥ १ ॥

जब लालु का बाबा आता है—वह कलकत्ते शहर का राजा है । वह दरवाजे पर नौबत (शहनाई इत्यादि) बजवाता है ॥ २ ॥

जब लालु का चाचा आता है तो वह घोड़े पर चढ़ कर आता है । वह बम्बई शहर का राजा है, वह दरवाजे पर रुपये लुटाता है ॥ ३ ॥

जब लालु का पिता आता है, वह मोटर पर चढ़ कर आता है, वह दिल्ली शहर का राजा है, वह दरवाजे पर रंडियाँ नचवाता है ॥ ४ ॥

जब लालु का भइया आता है, वह साइकिल पर बैठ कर आता है, वह कानपुर शहर का राजा है, वह मोहरे खूब लुटाता है ॥ ५ ॥

जब लालु का फूफा आता है, वह बग्घी पर बैठ कर आता है, वह लखनऊ शहर का राजा है, वह मोतियों की झालर लाता है ॥ ६ ॥

जब लालु का नाना आता है, वह गधे पर चढ़ कर आता है, वह सीपों-सीपों करता आता है, और पैसे लुटाता है ॥ ७ ॥

जब लालु का मामा आता है, वह रीछ पर चढ़ कर आता है, वह चिलुओं की झालर लाता है ॥ ८ ॥

जब लालु का मौसा आता है, वह चलनी बेचता आता है, बन्दर नचाता है, डमडम डमरू बजाता है ॥ ९ ॥

जब लालु की नानी आती है । तो सभी उस नानी की मेहमानी करते हैं और उसकी खींचातानी खब की जाती है ॥ १० ॥

जब लालु की मामी आती है, तो वह बेड़िन बन कर आती है, वह दरवाजे पर बाँस गड़वाती है और बेड़िन बन कर नाचती है। (परन्तु) वह लालु के लिये कठुला बनवाती है ।। ११ ।।

जब लालु की मौसी आती है, वह कठौता ऐसी गुड़ बहुत खाती है, ऐसी मौसी के चौंसी (पिसी हुई उर्द की दाल), वह कुँआ पर बेशर्मी से चित पड़ी है ।। १२ ।।

तृतीय प्रकरण

अन्न प्राशन

हमारे घरों में पुत्र के प्रत्येक कार्य के आरम्भ को बड़ी धूमधाम से, उत्सव की भाँति मनाया जाता है। पंडित के द्वारा शुभ मुहूर्त निश्चय करवा कार्य को उत्साह के साथ सम्पन्न किया जाता है। १६ संस्कारों में से अन्न प्राशन भी एक महत्त्वपूर्ण संस्कार है। जिस दिन प्रथम बार पुत्र को अन्न खिलाया जाता है उस दिन बाजे बजते हैं, सरिया-सोहर गाये जाते हैं। इस दिन पिता या बाबा या आजी चाँदी के चम्मच से—चाँदी के चम्मच के न होने पर रुपये से, जो चाँदी का होता है, बालक को गाय के दूध में बनी खीर खिलाती हैं। इसी उत्सव को अन्न प्राशन कहते हैं। इस दिन के उपरान्त ही बच्चे को कुछ हलका अन्न खिलाया जा सकता है। अन्न प्राशन बच्चे के पाँचवें या सातवें महीने में मनाया जाता है। कुछ विशेष गीत, जिनके उदाहरण आगे दिये गये हैं, इस अवसर पर गाये जाते हैं जिन्हें पसनी का गीत कहा जाता है। बच्चे के अन्न प्रारम्भ करने की यह बड़ी उपयोगी सामाजिक व्यवस्था है क्योंकि पाँच महीने के पूर्व बच्चे को अन्न नुकसान पहुंचायेगा। अन्न प्राशन के गीत बहुत कम मिलते हैं। इसका कारण सोहरों का प्रभुत्व है इस अवसर पर भी खूब सोहर गाये जाते हैं और सरिया भी गाई जाती है।

अन्न प्राशन

(१)

को मोरे चाउर बेसाहै औ गौएँ दुहावै।
को मोरे खिरिया बनावै लालन कै पसनिया॥ १॥

बाबा मोरे गौए दुहावैं औ चाउर बेसाहैं।
आजी उनकै खिरिया बनावै तो जाँघा बैठावै।
लालन का चिखावै लालन कै पसनिया ॥ २ ॥

मेरे चावल कौन खरीदे और गायें कौन दुहावे ? और मेरे लालन (पुत्र) की पसनी (अन्न प्राशन) है कौन खीर पकावे ।। १ ।।

मेरे बाबा गौएँ दुहाते है और चावल खरीदते हैं। आजी उनकी खीर पकाती हैं और जांघ पर बिठाती है और लालन (पुत्र) को चिखाती हैं—लालन (पुत्र) की पसनी है ।। २ ।।

(२)

अँगने मा ठाढ़ीं सासु रानी बहुआ अरज करैं।
अम्मा आजु लालु कै पसनियाँ तो काह लुटैहौ ॥ १ ॥

सोनवा मैं लुटैहौं पसेरी भरि रुपवा दसेरी भरि।
सब धनु दैहौं मैं लुटाय लालन कै पसनिया ॥ २ ॥

हँकरौं मैं नग्र के नउआ तो हँकरि बोलावौं।
नउआ हमरे नैहर लगे जाओ तौ खबरि जनाओ,
तो लालु कै पसनिया ॥ ३ ॥

मैके तो लौटा है नउआ तौ पियरी लै आवा, कठुला लै आवा,
झँगिया लै आवा।
भरिगै है चौक हमारि लालन कै पसनिया ॥ ४ ॥

सात सखी मिलि आईं तौ सगुन मनावैं।
भरी रहै गोद तुम्हारि तौ लालन कै पसनिया ॥ ५ ॥

आंगन में सासु रानी खड़ी हैं, बहू प्रार्थना करती है, अम्मा ! आज लालन

मैं पंसेरी भर सोना और दसेरी (दस सेर) भर चांदी लुटाऊँगी । और सारा धन लालन की पसनी में लुटा दूंगी ।। २ ॥

मे नगर के नाइयों को हंकवा बुलाऊँगी । नाई मेरे नैहर तक जाओ और जाकर खबर सुनाओ कि लालन की पसनी है ।। ३ ॥

मैके से नाई लौटा—पियरी ले आया, कठुला ले आया, झँगियां ले आया—लालन की पसनी मे हमारी चौक भर गई ।। ४ ।।

सात सखी मिल कर सगुन मनाती हैं । तुम्हारी गोद भरी रहे ! आज लालन की पसनी है ।। ५ ।।

———

चतुर्थ प्रकरण

मुण्डन-छेदन

मुण्डन, बालक का महत्त्वपूर्ण संस्कार है। ज्योतिषी से शुभ दिन, घड़ी का शोध करवा कर ग्राम की पूज्य देवी के मन्दिर में या गंगा के किनारे गाँव के नाई से ही मुण्डन कराया जाता है। मुण्डन के अवसर पर भी माता का भाई पियरी भेजता है और बच्चे के लिये वस्त्राभूषण। बच्चे को गोद में लेकर माता पास-पड़ोस की औरतों के साथ देवी के मन्दिर पर या गंगा जी के किनारे जाती हैं। स्त्रियाँ देवी के गीत तथा मुण्डन के गीत गाती हुईं जुलूस बनाकर जाती हैं और घर आते समय भी मार्ग में सोहर गाती जाती हैं। सरिया भी प्रायः घर लौटने पर या तुरन्त मुण्डन के बाद गाई जाती है।

शाम को फिर जोरों से गाना बजाना होता है, जिसमें सोहरों की संख्या अधिक होती है। देवी के गीत गाये जाते हैं तथा अन्त में साँझ मनाने वाला गीत गाया जाता है। साँझ मनाने वाला गीत प्रायः सभी उत्सवों में सब गीतों के बाद गाया जाता है। इस प्रकार संध्या को आमंत्रित करके गीतों का गाना बन्द कर दिया जाता है।

मुण्डन के संबंध में अन्य विस्तार गीतों की टिप्पणी में दिये गये हैं। आगे कुछ मुण्डन के गीत दिये जाते हैं।

छेदन के गीत भी मैंने इसी प्रकरण में सम्मिलित कर दिये हैं क्योंकि ऐसे गीतों की संख्या भी बहुत कम है और मुण्डन के गीतों में भी कुछ जोड़-घटा कर काम चला लिया जाता है। विशेष रूप से तो सोहर और सरिया ही इन अवसरों में गाये जाते हैं।

मुण्डन

(१)

ओ जीजी हो ललना का मूंड़न ॥ १ ॥
सासु अइहैं चरुआ चढ़ैइहैं, ओ जीजी हो कँकना दै देबे ॥ २ ॥
जीजी अइहैं पिपरी बुकिहैं, ओ जीजी हो छागल दै देबे ॥ ३ ॥
ननदी अइहैं छठिया धरिहैं;
ननदी अइहैं अँखियाँ रँजिहैं; ओ जीजी हो कठवति दै देबे ॥ ४ ॥
देवर अइहैं बंसी बजइहैं, ओ जीजी हो घड़िया दै देबे ॥ ५ ॥
सखियाँ अइहैं मँगल गइहैं, ओ जीजी हो गोला दै देबे ॥ ६ ॥
देना लेना कुछौ न अखरै, ओ जीजी हो कठवति हमें साले ।
लिल्ली घोड़ी राजा का पठइबे, ओ जीजी हो कठवति मँगवइबै ॥ ७ ॥

ओ जीजी आज ललना (पुत्र) का मुण्डन है ।। १ ।।

सासु आयेगी तो चरुआ चढ़ायेगी उनको में कंगन दे दूंगी ।। २ ।।

जीजी (जेठानी) आयेंगी तो पिपरी पीसेंगी, उनको छागल दे दूंगी ।। ३ ।।

ननद आयेगी तो छठी रखेगी, पुत्र की आंखों में काजल लगायेगी, उसको कठौती (लकड़ी का बर्तन) दे दूंगी ।। ४ ।।

देवर अयेगा तो बंशी बजायेगा, उसको घड़ी दे दूंगी ।। ५ ।।

सखियां आयेंगी, सोहर गायेंगी, उनको गरी के गोले दे दूंगी ।। ।।

और देना लेना नहीं अखर रहा है केवल कठौती देना अखर रहा । राजा को लिल्ली घोड़ी पर भेजूंगी और कठौती वापस मंगवा लूंगी ।। ७ ।।

मुण्डन लड़के के अनेक संस्कारों में से दूसरा महत्त्वपूर्ण संस्कार है । कात्यायान गोत्र वालों के यहाँ, जो गार्गी पूजन करते हैं, मुण्डन बड़ी धमधाम से मनाया जाता है । इतनी धूमधाम अन्य लोगों के यहाँ मुण्डन में नहीं मिलती है ।

पुत्र का जो भी कार्य प्रथम होता है उसको शुभ दिन में कुटुम्बी तथा ग्रामवासियों के साथ धूमधाम से मनाया जाता है जिससे उसके भविष्य के जीवन

में उस कार्य में कोई दुख और बाधा न हो। अन्नप्राशन का उल्लेख किया जा चुका है।

जन्म के तीसरे वर्ष में मुण्डन हो जाना चाहिये ऐसी प्रथा है। मुण्डन के पूर्व बालों की एक लट का भी काटना अपशकुन माना जाता है। उस समय तक के बालों को झालर कहते हैं। झालर की बड़ी सतर्कता के साथ रक्षा की जाती है। ऐसे झालर वाले बच्चे को गभुआरा बच्चा कहा जाता है। ऐसे बच्चों की विशेष हिफाजत की जाती है। ऐसे गभुआरे बच्चे की माँ के लिए अनेक प्रकार के निषेध हैं जिनका अगले गीतों में उल्लेख है।

मुण्डन सदैव किसी शुभ दिन मान्य ग्राम देवी के मन्दिर में या गंगा के किनारे या जहाँ की मनौती मानी हो, वहाँ कराया जाता है। माँ बच्चे को गोद में लेकर अपने भाई की भेजी पियरी (पीली साडी) पहिन कर टोले-मुहल्ले और परिवार की सभी स्त्रियों के जुलूस के साथ देवी के मन्दिर को प्रस्थान करती है। मार्ग में स्त्रियाँ सोहर तथा गङ्गा एवं देवियों के गीत गाती हुई जाती हैं। गाँव का ही नाई मुण्डन करता है। लड़के की बुआ के हाथ में आटे की बड़ी लोई रहती है जिसमें वह समेट कर सब बालों को रख लेती है। एक भी बाल को वह इधर-उधर नहीं छोडती। इसके बाद बालों की वह लोई गंगा या अन्य नदी में विसर्जित कर दी जाती है। इसके लिए बुआ को नेग मिलता है। आगे तीन गीत और दिए गए हैं।

पुत्र का कोई भी कार्य जब पहिली बार होता है तब शुभ मुहूर्त के साथ और पूजा और उत्सव के साथ, लड़की का भी मुण्डन इसी प्रकार होता है केवल उत्सव के विस्तार में जो कुछ अभाव होता है।

(२)

जल भरौं हिलोरि-हिलोरि रेसम की डोरिया।
रेसम रसरिया तब सोहै, जब सोने का घइला होय।

सोने का घइला तब सोहै, जब रूपे इँडुरिया होय।
रूपे इँडुरिया तब सोहै, जब गोदी होरिलवा होय।

गोदी होरिलवा तब सोहै, जब गंगा पै मूँडन होय।
गंगा पै मूँडन तब सोहै, जब गाँउइ का नाऊ होय।

गाँउइ का नाउ तब सोहै, जब बुआ लटुरिया लेय।
बुआ लटुरिया तब सोहै, जब दुइसौ के डाली होय।

दुइ सौ के डाली तब सौहै, जब पानसौ बिदा के होय।
वोहि के ऊपर अँगूठी होय।

रेसम की डोर से जल हिलोर-हिलोर कर भरूँगी।
रेशम की रस्सी तब शोभा देती है जब सोने का घड़ा हो।
सोने का घड़ा तब शोभा देता है जब चांदी की एंडुरी हो।
और चांदी की एंडुरी तब शोभा देती है जब गोदी में बेटा हो।
गोदी में बेटा तब शोभा देता है जब गंगा जी पर मुण्डन हो।
गंगा जी पर मुण्डन तब शोभा देता है जब गांव का ही नाई हो।
गांव का नाई तब शोभा देता है जब बुआ उसकी झालर लेती हो।
बुआ झालर तब लेगी जब दो सौ रुपये नेग मे देने को हों।
दो सौ का नेग तब शोभा देता है जब पांच सौ बिदा के लिए हों।
और उसके ऊपर एक अगूंठी देने को हो।

इस गीत में प्राचीन व्यवस्था की ओर एक संकेत मिलता है। मुण्डन की शोभा तभी होगी जब मुण्डन करने वाला नाई गांव का ही हो। यह संकेत गांव के सहयोगपूर्ण जीवन के प्रति पूर्ण वफादारी प्रदर्शित करता है। गांव का काम एक दूसरे के सहयोग से ही होना चाहिए। अपने कार्य की पूर्णता के लिए गांव के लोगो के अतिरिक्त किसी की सहायता वांछनीय नहीं है। यह ग्राम की आत्मनिर्भरता का द्योतक है।

(३)

झलरिया मोरी पाहुनि, झलरिया मोरी लाड़ली।
तुम्हरी तो झलरी कवन रामा, असिकै जोगयों केस ॥ १ ॥

काहे ते पोसे कवन रामा, काहे ते पोसे ई केस ?
घिय गुरु पोसे कवन रामा, तेलु फुलेल पोसे केस ॥ २ ॥

भँटवाँ, कुम्हड़वा न खायों, मैं असिकै जोगयों ।
कोलिया छँड़िया न भाँक्यों, मैं असिकै जोगयों ॥ ३ ॥

लाल पियर नहिं पहिन्यों, मैं असिकै जोगयों ।
रतुली पलँगिया न सोयों, मैं असि कै जोगयों ॥ ४ ॥

नउआ तौ चलिभा बनारस, बाँभन चले हैं कुरुछेत
को मोरे परछै केस ? ॥ ५ ॥

लौटो न लौटो ओ नउआ सोने टका देहौं तोहिं ।
घोड़वा पै लादौं कवन रामा, बहिनि चलन तुम जाहु
उइ मोरे परछैं केस ॥ ६ ॥

झालर मेरी मेहमान हैं, मेरी प्यारी हैं । तुम्हारी झालर कवन रामा (मुण्डन होने वाले बच्चे का नाम) मैंने भली भाँति सुरक्षित रखी है ।। १ ॥

अमुक रामा तुमने किस चीज से अपने बालों का पोषण किया । घी-गुड़ से अपने केशों का पालन और तेल-फुलेल से पोषण ।। २ ॥

तुम्हारे बालों की सुरक्षा मैंने इस प्रकार की कि बैंगन और काशीफल नहीं खाया; संकरी गलियों तक में मैं नहीं निकली इतना ध्यान रखा ।। ३ ।।

लाल पीले वस्त्र नहीं पहिने, अपने पति के साथ पलंग पर नहीं सोई । तुम्हारे बालों की इतनी रक्षा की ।। ४ ॥

नाई तो बनारस के लिये चल दिया और ब्राह्मण कुरुक्षेत्र के लिये तैयार है अब कौन मेरे बाल काटेगा ? ।। ५ ।।

मेरे नाई लौट आओ मैं तुम्हें सोने का टका दूंगी। (जब यह प्रार्थना स्वीकार हो जाती है) कवन रामा अपनी बहन बच्चे की बुआ को बिदा कराने के लिये भेजा जाता है। अब नाई मेरे बाल काटेगा ।। ६ ॥

(४)

जो मैं जनत्यों मैं कवन रामा मूड़न तुम्हार ।
सोना का छुरवा गढ़ावैं तौ बाबा तुम्हार ॥ १ ॥

जो पूता होत्यो बारे अरु गभुआरे।
मचिया बैठि खेलावै तौ आजी तुम्हारि।
कनिया लै दुलरावै तौ चाची तुम्हारि ॥ २ ॥

जो पूता होत्यो बारे अरु गभुआरे।
भँटवा कुम्हड़ा न खाये तौ माया तुम्हारि।
माँसु मछरिया न खाये तौ माया तुम्हारि।
कोलिया छँड़िया न हेरै तो माया तुम्हारि।
रतुली पलँगिया न सोवै तो माया तुम्हारि ॥ ३ ॥

जो पूता होत्यो बारे अरु गभुआरे।
लाल पिअर नहिं पहिनै तौ माया तुम्हारि।
मइके ते पेरी मँगावैं तौ माया तुम्हारि।
दूरि से ननद बोलावैं तौ माया तुम्हारि।
रूठा गोत्रु मनावैं तौ बप्पा तुम्हार।
सब रस गगरी भरावै तौ माया तुम्हारि ॥ ४ ॥

अमुक राम जो मैं जानती कि तुम्हारा मुण्डन है तो तुम्हारे बाबा सोने का छुरा (अस्तुरा) बनवाते ॥ १ ॥

जो पुत्र तुम छोटे होते और गभुआरे होते तो मचिआ पर बैठ कर तुमको आजी खेलाती। कनिया (गोद) में लेकर तुम्हारी चाची तुम्हें दुलराती ॥२॥

जो पुत्र तुम छोटे और गभुआरे हो तो तुम्हारी माँ बेंगन और काशीफल न खाये, माँस मछली न खाये, संकरी गलियों में न घूमे, पति के पलँग पर न सोये ॥ ३ ॥

जो पुत्र तुम छोटे और गभुआरे हो तो मायके से तुम्हारी माँ पियरी मँगवाए और दूर देश में ब्याही ननद को बुलवाये।

तुम्हारा बाप रूठे गोत्र को मनाये और रस की गागर तुम्हारी माँ भरवाये ॥ ४ ॥

इस गीत में गभुआरे बच्चे की माँ के लिये अनेक निषेध बताये गये हैं यदि इन निषेधों का पालन किया जाये तो पुत्र और माँ का स्वास्थ्य कभी न बिगड़े।

विशेष रूप से पति के साथ न सोने का निषेध तो आज के (Family planning) संतति-नियमन के कार्य को बड़ी सरलता से प्रतिपादित कर सकती है। एक पुत्र के मुण्डन होने के पूर्व दूसरे पुत्र के जन्म को हमारे यहाँ बहुत अच्छी निगाह से नहीं देखा जाता। किन्तु अपनी प्राचीन मान्यताओं का निरादर करने वाली अनेक स्त्रियों को तिरस्कृत होना पड़ता है। यही निषेध 'छेदन' के समय दुहराये जाते हैं। छेदन का संस्कार बालक के छठें वर्ष में होता है। इस प्रकार दूसरी सन्तानोत्पत्ति में छः वर्ष का व्यवधान रखा गया है। यहाँ हमारे समाज के विकास की योजना लोकगीतों द्वारा प्रस्तुत की गयी है।

छेदन

छेदन के अवसर पर भी मुण्डन के गीतों में से कुछ गीत गाये जाते हैं परन्तु मुण्डन के स्थान पर छेदन कहा जाता है। यह भी एक महत्त्वपूर्ण उत्सव होता है। उसी प्रकार किसी मान्य देवी के मन्दिर में गाँव का सुनार कान छेदता है। जिस समय बच्चे के कान छेदे जाते हैं उस समय बच्चे को पीड़ा होती है तो उस समय उसको बहलाये रखने के लिये पुत्र की बुआ पूड़ी और बताशे खिलाती जाती है। इसका भी उसे नेग मिलता है। लड़की के छेदन में उसकी नाक भी उसी समय छेद दी जाती है। महाराष्ट्र में तो छेदन पैदा होने के दो दिन के भीतर ही कर दिया जाता है। किन्तु महाराष्ट्र में छेदन को उत्सव के रूप में नहीं मनाते। मुण्डन वाला यह गीत छेदन में इस प्रकार गाया जाता है:—

जो मैं जनत्यों कवन रामा छेदन तुम्हार,
सोने कै सूजिया गढ़ावैं तौ बाबा तुम्हार।

"छुरवा गढ़ावैं" के स्थान पर सूजिया (सुई) गढ़ाना कहा जाता है। इसके अतिरिक्त पूरा गीत ज्यों का त्यों छेदन में भी गाया जाता है। साथ-साथ सोहर-सरिया तो गाई ही जाती है। छेदन के अवसर पर गाया जाने वाला एक गीत दिया जाता है जो छेदन के उत्सव पर ही गाया जाता है।

छेदन

(१)

को मोरे छेदनु करावै तो जाँघा बैठारे ?
को मोरे खर्चे दाम लालन केरा छेदनु ? ॥ १ ॥

बाबा उनके जाँघा बैठारे छेदनु करावैं ।
आजी मोरे खर्च दाम तो छेदनु करावैं ॥ २ ॥

को मोरे सुजिया गढ़ावै तो मोतिया पुहावै;
धरै सोनरवा के हाथ छेदावै, गभुआरे ॥ ३ ॥

आजी उनके जाँघा बैठारे छेदनु करावैं ।
सोने का टकवा उतारै तो मामा तुम्हारि
धरै सोनरवा के हाथ ॥ ४ ॥

कौन छेदन करावेगा और जाँघ पर बिठायेगा और रुपये खर्च करेगा लालन (पुत्र) का छेदन है ? ॥ १ ॥

उनके बाबा जाँघ पर बिठायेंगे और छेदन करावेंगे और मेरी आजी रुपये खर्च करेंगी और छेदन करावेंगी ॥ २ ॥

कौन बाली गढ़वायेगा (बनवायेगा) और मोती पुहावेगा और सोनार के हाथ में देकर छेदन करावेगा ॥ ३ ॥

उनकी आजी जाँघ पर बिठायेंगी छेदन करावेंगी । उनका मामा सोने का टका (रुपया) निछावर उतार कर सोनार के हाथ पर रखेगा ॥ ४ ॥

छेदन के अवसर पर विशेष रूप से यह गीत गाया जाता है। इसको 'सुजिया' कहते हैं। मुण्डन वाला गीत भी छेदन के योग्य बना कर गाया जाता है। इसके अतिरिक्त सरिया-सोहर तो गाये ही जाते हैं।

पंचम प्रकरण

जनेऊ

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य के लिए जनेऊ विवाह के अतिरिक्त दूसरा प्रधान संस्कार है। जनेऊ को यज्ञोपवीत कहते हैं और उस कृत्य को उपनयन-संस्कार कहते हैं। शूद्रों के लिए जनेऊ का विधान शास्त्रों में नहीं है। इसीलिए उपनयन-संस्कार तक बालक की गणना शूद्रों में की जाती है। उपनयन-संस्कार होने पर ही मनुष्य द्विज होता है। जनेऊ के रूप में मनुष्य को उपनयन प्राप्त होते हैं। इस संस्कार के उपरान्त ब्रह्मचारी अथवा यज्ञोपवीत धारण करने वाले को कुछ विधि निषेधों का पालन करना पड़ता है।

यज्ञोपवीत की महत्ता को हृदय में बिठाने के लिए यह श्लोक प्रत्येक ब्रह्मचारी को रटा दिया जाता है :—

"यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात।
आयुष्यमग्रयं प्रति मुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः ॥

परन्तु हमारा आज का दुर्भाग्य है कि जनेऊ केसमय हमें इतनी भी संस्कृत नहीं आती कि इस श्लोक का अर्थ समझ सकें। आयु, बल, तेज प्रदान करने वाला, प्राचीन काल में ब्रह्मा के साथ पैदा होने वाला, परम पवित्र यज्ञोपवीत आज एक अच्छा तमाशा बन गया है।

गायत्री मंत्र भी जनेऊ धारण करने वाले को कंठस्थ करना पड़ता है। परन्तु अधिकांश ब्राह्मणों को इस मंत्र का अर्थ तक नहीं मालूम और कितने ब्राह्मणों अथवा द्विजों के कंठ के नीचे यह मंत्र उतर सका है कहना कठिन है। इस मंत्र के समान ऊँचा अर्थपूर्ण मंत्र नहीं और जो हमारे द्विजों को 'तथा-

कथित द्विज' बनाये हुए है परन्तु उसका अर्थ तक लोगों को नहीं मालूम। मनुष्य के लिए इससे अच्छा मंत्र नहीं जो केवल न्याय बुद्धि के प्रचोदन की ही ईश्वर से प्रार्थना करता है। मनुष्य की विशेषता बुद्धि है और विशेष बुद्धि की प्राप्ति ही मनुष्य का उद्देश्य है। और यही गायत्री मंत्र का उद्देश्य है। परंतु यज्ञोपवीत अब केवल द्विजत्व की झंडी है। और इसीलिए आजकल इसी झंडी को लगा कर शूद्र भी द्विज बन रहे हैं। सामाजिक साम्य के स्थापन की यह सुन्दर भूमिका है। जनेऊ दीर्घायु बल और तेज प्रदान करने वाला है। जनेऊ के तीन तागे तीन ऋणों का भार लेकर कंधे पर विराजमान रहते हैं। मनुष्य पर तीन ऋण हैं जिनसे उसे उऋण होना है। ऋषि-ऋण, देव-ऋण तथा पितृऋण। इनसे उऋण होने के लिए क्रमशः ब्रह्मचर्य-व्रत धारण करके ऋषि-मुनिरचित ग्रन्थों का अध्ययन करने, यज्ञ करने तथा सन्तानोत्पत्ति करने का विधान है। इन ऋणों का सदैव स्मरण दिलाने के लिए यज्ञोपवीत हृदय के ऊपर से होकर बाम स्कन्ध पर पहिनाया जाता है।

यज्ञोपवीत के ९६ अंगुल का होने के सम्बन्ध में पं० रामनरेश त्रिपाठी ने एक श्लोक उद्धृत किया है :—

"तिथिर्वारश्च नक्षत्रं तत्वं वेदा गुणत्रयम्।
कालत्रयञ्च मासाश्च ब्रह्मसूत्रञ्च षण्णव॥"

"तिथि १५, वार ७, नक्षत्र २८, तत्व २४, वेद ४, गुण ३, काल ३, मास १२, कुल मिलाकर ९६ हुए। नियम निबाहने के लिए प्रतिज्ञाबद्ध होने के प्रमाणस्वरूप ९६ अंगुल का सूत्र पहना जाता है। कुछ विद्वानों का कथन है कि ९६ अंगुल का यज्ञोपवीत वेद के ९६००० मन्त्रों के अध्ययन का एक प्रमाण है।"

जनेऊ को मल-मूत्र त्याग के समय कान में लपेट लिया जाता है। कदाचित् ऐसा करने मे कान से खूंटी का कार्य लिया जाता है।

जनेऊ संस्कार के समय आचार्य अनेक प्रकार की प्रतिज्ञाएँ ब्रह्मचारी से दुहरवाता है। कुछ प्रतिज्ञाएं ब्रह्मचर्य-पालन सम्बन्धी हैं और कुछ सामान्य लोकाचार संबन्धी। आजकल ब्रह्मचर्य सम्बन्धी और लोकाचार सम्बन्धी प्रतिज्ञाओं का पालन करने वाला कदाचित् ही कोई प्राप्त हो।

आजकल जनेऊ भी धूमधाम करने का संस्कार है। इसमें द्विज बनाने की भावना कम और परम्परा-पालन या वैभव-प्रदर्शन की भावना प्रमुख रहती है। जो ब्राह्मण गरीब हैं उन्हें अपने पुत्रों का यज्ञोपवीत-संस्कार सम्पन्न करना अत्यधिक कठिन हो गया है। जनेऊ ने एक कठिन आर्थिक समस्या का रूप धारण कर लिया है और मध्यवित्तीय लोगों को चौथे ऋण से भी उऋण होने की आवश्यकता पड़ जाती है।

यज्ञोपवीत संस्कार जो एक प्रकार से ब्रह्मचारी के विद्याभ्यास के लिए धन एकत्र करने का साधन था वह धन के अपव्यय का हेतु बन गया है। जो ब्रह्मचारी इस प्रकार समाज की भिक्षा पर विद्याभ्यास करने जाता था उसे विद्याभ्यास के उपरान्त समाज की सेवा में जीवन व्यतीत करना पड़ता था। उसी ब्रह्मचारी के नाम पर धन तो टिकावन के रूप में लिया जाता है परन्तु न तो उसे इतना योग्य बनाने की चेष्टा की जाती है कि वह समाज-सेवा कर सके और न उसमें समाज-सेवा की प्रेरणा ही भरी जाती है। ब्रह्मचारी तो आजकल घड़ी तथा अन्य फैशन की चीजों को प्राप्त करने के लिए उत्सुक रहता है।

'गोबर जनेऊ' जो भोजपुरी प्रदेश में जनेऊ के एक दिन पूर्व आदत डालने के लिए किया जाता है अवध प्रदेश में नहीं होता है।

यज्ञोपवीत संस्कार के निमित्त जो यज्ञ होता है उसी यज्ञ-अनुष्ठान की पूर्ति के लिए स्तम्भ की स्थापना होती है। उसी दिन चाकी-कांड़ी होती है और यज्ञोपवीत के लिए अन्य तैयारियाँ प्रारम्भ हो जाती ह। चाकी-कांड़ी की प्रथा का तात्पर्य है यज्ञोपवीत में लगने वाले अनाजों का छाँटना, कूटना, पीसना आदि प्रारम्भ करना। उस दिन प्रथम देवियों के गीत गाये जाते हैं, माँड़व के गीत गाये जाते हैं। मातृ-पूजन के दिन पियरी के गीत गाये जाते हैं। इसीलिए प्रथम देवी के गीत गाये जाते हैं और जिस दिन जनेऊ होता है उस दिन जनेऊ के गीत गाये जाते हैं।

जनेऊ के लिए तैयारियाँ कुछ दिनों पूर्व से प्रारम्भ हो जाती हैं। पंडित से शुभ मुहूर्त निकलवा कर ये तैयारियाँ शुरू होती हैं। इसी प्रारम्भ को

देवी के गीत

(१)

जालिपा त्रिभुवन रानी, राखु-राखु गुसाँइनि मैया। टेक ॥ १ ॥
जाप कीन्हेन्हि, थाप कीन्हेन्हि, दियना बारेनि घिय का " " ॥
मुण्डा माला कात सेवा, पहिरि निकली जालिपा " " । २ ॥

मइया हिरि झिरि हिरि झिरि नदिया बहति है " " ॥
तहना सातों बहिनी बइठि नहायँ " " ॥ ३ ॥

मैया निकरत देवी सहरैं पइठीं, नग्र पइठीं " " ।
कौनु बाबा रामा दुआर, कौनु चाचा रामा दुआर " " ॥ ४ ॥

ऊँचे से कँगुरवा निहले दुअरवा हथिया झुकै दरवाज " " ।
वहै बाबा रामा द्वार, वहै चाचा रामा द्वार " " ॥ ५ ॥

जालिपा देवी त्रिभुवन की रानी गोसाईन हम पर कृपा रखो ।

तुम्हारा जाप किया, तुम्हारी स्थापना की और घी का दिया जलाया। मुण्डमाल पहिन कर जालिपा महारानी निकलीं ॥ २ ॥

हे मैया! हिरि-झिरि नदी बहती है तहाँ सातों बहनें (सप्तमाता) बैठी नहा रही हैं ।। ३ ॥

निकल कर देवी मैया शहर में घुम गईं और कौन बाबा के दरवाजे पर कौन से चाचा के दरवाजे पर पहुँच गईं ॥ ४ ॥

ऊंचे कंगूरे और नीचे दरवाजे हैं जहाँ पर हाथी आकर झुकते हैं। वही बाबा का दरवाजा है, वही चाचा का दरवाजा है ।। ५ ।।

(२)

आवनि की बलिहारी मैया तेरे, आवन की बलिहारी ॥ १ ॥
उइ देवी निकसी हाथ लीन्हे, बढ़नी सहस कलस सिर भारी। टेक
लाल घँघरिया मइया पेरी ओढ़निया, वोहि माँ लागि किनारी " " ॥२॥

सेतुआ राब कुआँरिन खावा, बुढ़ियन खाँड़ सोहारी " " ।
बासी भात चहूँ जग पूजा, ऊपर सिखरन ढारी " " ॥ ३ ॥

लँगुरे नाँव खेइ लइ आवौ, बूड़त नाव हमारी " " ।
सात सुपारी मैया धजा नारियल, यह लैओ भेंट हमारी " " ॥ ४ ॥

मैया तुम्हारे आने पर मैं बलिहार निछावर हूँ ॥ १ ॥

वह देवी हाथ में झाड़ू और सिर पर सहस्रों भारी कलश लिये निकलीं। मैया लाल घँघरा, पीली ओढ़नी जिसमें किनारी लगी है पहिने-ओढ़े हैं ॥ २ ॥

सत्तू और राब (कुवाँरियों) ने खाया और बुढ़ियों ने शक्कर और पूड़ी खाई। और बासी भात सभी ने पूजा उसमें ऊपर से मट्ठा डाला गया ॥ ३ ॥

लंगूरो, मेरी नाव को खे कर पार ले आओ वह डूबी जा रही है। मैया सात सुपारी, ध्वजा और नारियल की मेरी भेंट स्वीकार करो ॥ ४ ॥

(३)

दरसन देओ माय, मोर मनु लागो दरस कइहाँ ॥ १ ॥
मैया छाँह तौ नीकी नींबि केरी जहाँ जुड़ली बयार। टेक
मैया छाँह तौ नीकी बबुर केरी जहाँ चुअत हेवारु " " ॥ २ ॥

मैया बिछुआ तौ नीके भरतपुर के, पायल झंकार " " ।
मैया पेरी तौ नीकी हरद केरी, लालन लिहें गोद " " ॥ ३ ॥

मैया ! दर्शन दो, मेरा मन तुम्हारे दर्शन के लिए व्यग्र है ॥ १ ॥

मैया ! नीम की छाँह अच्छी होती है जहाँ ठंडी हवा चलती है। मैया ! बबूल की छाँह अच्छी होती है जहाँ बर्फ टपकता है ॥ २ ॥

मैया ! भरतपुर के बिछुआ अच्छे होते हैं जिनकी पायलों से झंकार निकलती है। मैया ! हल्दी में रँगी हुई पेरी और गोद में पुत्र लिये स्त्री सुन्दर लगती है ॥ ३ ॥

(४)

उठहु संकठा हाथ मुँह धोत्र्यो लै बीरा मुँह खावौ माय ॥ १ ॥ टेक
कैसे का जात्री हाथ मुँह धोवौं, कैसे का बीरा खाऊँ ? माय ।
जन हमरे एकु गाढ़ परा है, तुरतै गाढ़ उतारौ " " ॥ २ ॥

काहे की मैया तोरी नाव नवैया, काहे की पँचडोरि " " ।
अगरु चन्दन की नाव नवैया, रेसम की पँचडोरि " " ॥ ३ ॥

धरर्मा धरमी पार उतरिगे, पापी बहैं मझधार " " ।
पापी औ धरमी विनती करति हैं, पापिऊ लगाओ पार " " ॥ ४ ॥

पापी और धरमी पार उतरिगे, जय जय होति तुम्हारि " "
पान सुपारी मैया धजा नारियल, यह लेओ भेंट हमारि " " ॥ ५ ॥

'संकठा देवी उठो ! हाथ-मुँह धोओ और पान का बीड़ा मुँह में खाओ।।१।।

"यात्री ? कैसे हाथ मुँह धोऊँ, कैसे बीड़ा खाऊँ; हमारे एक भक्त पर विपत्ति पड़ी है उसकी विपत्ति का तुरन्त ही निवारण करूंगी" ॥ २ ॥

"मैया तेरी नाव काहे की बनी है और पांचडोरी काहे की है ?" अगरु-चन्दन की मेरी नाव है और रेशम की डोर है ।। ३ ॥

जो धर्मी लोग थे वे पार उतर गए और पापी मंझधार में बह चले । पापी और धर्मी विनती करते हैं कि पापियों को भी पार लगाओ ।। ४ ।।

पापी और धर्मी पार उतर गए और सब लोग जै जैकार कर रहे है । पान, सुपारी, ध्वजा और नारियल की भेंट मैया स्वीकार हो ।। ५ ।।

(५)

जोगिनि है बनु सेयों री दाता मोरी जोगिनि है बनु सेयों ।
काहे के कारण जात्री यह बनु सेयो काहे की आस लगायो
री जात्री मोरी ॥

दूधा के कारण मैया यह बनु सेयों, पूत की आस लगायों
री दाता मोरी।

महल दुमहला मइया मनहिं न भावै, टुटही झोपड़िया मनु लाग्यो री ॥
साल दुसाला मइया मनहिं न भावै, फटही गुदरिया मनु लाग्यो री ॥

खाँड़ चिरौंजी मइया मनहिं न भावै, सूखो भँवरिया मनु लाग्यो री ॥
दूधु लै लोटिया, पूत लै कनिया, हँसत खेलत घर जायो री जात्री।

पान सुपारी मैया धजा नारियल, यह लेओ भेंट हमारी
तुम सातो बहिनी ॥

जोगिनि हो कर, मेरे हे ईश्वर, मैंने इस वन का सेवन किया। "यात्री, किस कारण से इस वन का सेवन किया किस चीज की आशा लगा रखी है ?

"दूध के कारण मैया मैंने इस वन का सेवन किया है और पुत्र की आशा लगा रखी है"।

"मैया महल-दुमहले अच्छे ही नहीं लगते, टूटी झोपड़ी में मन लगा हुआ है"।

"शाल और दुशाले अच्छे नहीं लगते, फटी गुदड़ी में मन लगा है।"

"शक्कर और चिरौंजी अच्छी ही नहीं लगती है, सूखी भंवरी (गरम राख पर भूनी हुई बाटी) में मन लग गया है।"

"दूध लोटे में लो और पुत्र गोद में लो और हँसते-खेलते घर जाओ।"

"मैया पान, सुपारी, ध्वजा और नारियल की हमारी भेंट स्वीकार करो।

(६)

यह जग माँ दुर्गा महारानी ॥ १ ॥
ऊँचा सा मंडिल बना दुर्गा का लाल ध्वजा फहराय। महारानी०
दीपकु बारि धरेनि मठ भीतर, जोति चहूँ जग जाहिर,
तीन लोक उजियारी ॥ २ ॥

अँधरन आँखी मैया।कोढ़िनि काया, बाँझिनि लाल खेलावै ।
जो कोऊ ध्यान धरै दुर्गा का दूध पूत दुर्गा बरदानी ॥ ३ ॥

इस संसार में दुर्गा महरानी (सबसे बड़ी हैं) ॥१॥

उनका मन्दिर ऊँचा बना हुआ है और उस पर लाल ध्वजा फहरा रही है। दीपक जलाकर मठ के भीतर रखा, उनकी ज्योति चारों दिशाओं में प्रकाशित है—तीनों लोक प्रकाशित हैं ॥२॥

अंधों को आँखें, कोढ़ियों को शरीर और बन्ध्या को पुत्र देती हैं। जो कोई दुर्गा महारानी का ध्यान करेगा उसे वर देने वाली दुर्गा दूध और पुत्र देंगी ॥३॥

(७)

देवी पिछवारे बाँझिनि एकु बिनवै औ बिलखाय हो माय ॥ १ ॥
की बाँझिनि तोरे अनुधनु थोरा कि तोरे हरि परदेस हो माय ।
ना मइया मोरे अनुधनु थोरा न मोरे हरि परदेस हो माय ॥ २ ॥

मइके जाओं रहन नहिं पावों, ससुरे माँ बाँझ कहाओं हो माय ।
सासु ससुर के बहुत पिआरी, सैंया बाँझ कहि बोलावैं हो माय ॥ ३ ॥

कहो तो बाँझिनि अँगुरी लगाय देवों, कहो गोद भरि देवों हो माय ।
अँगुरी लगाये मैया मोल के कहावैं, (बिराने कहावें)
गोदी के अपने कहावें हो माय ॥ ४ ॥

दूधु लेव लुटिया, पूतु लेहु कनिया, हँसत खेलत घर जाओ हो माय ।
नवएँ महीना बाँझिनि फलु पावै, वैसे सबका देओ हो माय ॥ ५ ॥

बाजत आवै मइया ढोल मँजीरा, नाचत आवै वह बाँझ हो माय ।
जस परसन मइया बाँझ बंझिनिया, वैसे सबका होयों हो माय ॥ ६ ॥

देवी के मन्दिर के पीछे एक बंध्या विनती कर रही है और बिलख रही है ॥१॥

"बाँझिन क्या तेरे अन्न-धन कम है या तेरे पति परदेश में हैं" ॥१॥

"मैया न तो मेरे अन्न-धन की कमी है और न मेरे पति ही परदेश में हैं" ।।२।।

"मायके जाती हूँ तो रहने नहीं पाती हूं और समुराल में बांझ कहलाती हूं। सासु-ससुर की मैं बहुत प्यारी हूं मेरे पति मुझे बांझ कह कर पुकारते है" ।।३।।

"तो बांझिन कहो तो एक पुत्र तुम्हारी उंगली में पकड़ा दूं या कहो तो गोद में दे दूं ।" उंगली में पकड़ाने से मेरा पुत्र मोल का कहलायेगा, दूसरे का कहलायेगा । मैं चाहती हूं कि गोदी में हो और अपना कहलाये ।।४।।

"लोटे में दूध लो और गोद में पुत्र और हंसती-खेलती घर जाओ। जैसा फल नवएं महीने बांझिन को मिला वैसा ही सबको दो ।।५।।

ढोल, मंजीरा बजता हुआ आ रहा है और वहीं बांझ नाचती हुई आ रही है । जैसे मैया ने उस बांझ को दिया वैसा ही सबको दें ।

इस गीत में बंध्या स्त्री की मानसिक वेदना का चित्रण किया गया है जिससे मालूम होता है कि बन्ध्या होना कितनी बड़ी विडम्बना है। दूसरी बात इस गीत में देवी का माहात्म्य वर्णन है कि देवी दूध-पूत देती हैं।

———

उबटन

उबटन का लगाना प्रथा के अन्तर्गत है । जिस दिन जनेऊ करने का अनुष्ठान किया जाता है उसी दिन गीत निकलता है । गीत निकलने का तात्पर्य है कि उस दिन से औपचारिक रूप से जनेऊ-संबंधी सभी कार्य प्रारम्भ किये जाते हैं । टोले-मुहल्ले की स्त्रियाँ एकत्र होती हैं और खूब गीत गाये जाते हैं जिनमें देवी के गीत विशेष होते हैं । उस समय सभी स्त्रियाँ कूटने, पीसने, पछोरने के कार्य की प्रथा को सम्पन्न करती हैं । उस दिन जनेऊ में लगने वाली चीजों का बनना प्रारम्भ हो जाता है । इस प्रकार के समारोह के साथ जनेऊ के कार्य का सूत्रपात किया जाता है ।

जनेऊ (यज्ञोपवीत) भी जीवन के एक महत्त्वपूर्ण संस्कार एवं उच्चतम अनुष्ठान का एक यज्ञ है । इस यज्ञोपवीत के यज्ञ के अनुष्ठान को सम्पन्न करने के संकल्प के दिन यज्ञयूप गाड़ा जाता है । यह यूप—स्तम्भ—ग्राम की लकड़ी का होता है । स्तम्भ की स्थापना करने के उपरान्त संकल्प-पूर्ति की सहायता के लिए देवताओं का आह्वान किया जाता है । (तेलु) और स्तम्भ पूजा होती है ।

उबटन

(१)

उबटनु दलिया मलिया मैलु छुटावै ।
बोलावो न बाबा कइहाँ, यह सुखु देखैं आय ।
अरे उबटै हैं दुलहै कवन रामा हो ।

उबटन मल मल कर लगाने से मैल छटता है ।
बाबा को बुलाबो न, यह सुख का दृश्य आकर देखें ।
अरे अमुक रामा के उबटन लगाया जा रहा है ।

तेल

(१)

अरी आनिनि बानिनि तेलिनि रानी,
कहाँना का तेलु संचार्यो आय।
तिल केरा तेल सरस केरी घानी,
अरे तेलु चढ़ावैं कवन देई रानी।
जो भाँट्या भँटवरिया दीख्यों,
उइ भाँटा उठि हाट बजार,
जिनि कवन रामा ख्यालत देख्यों
उइ रे कवन रामा चौक बैठि।

अरी 'बानिन' (बनिये की पत्नी), तेलिन रानी तुमने यहाँ पर कहाँ का तेल चलाया है। अर्थात् प्रचलित किया है ?

सरस सुन्दर घानी का पिरा हुआ तिल का तेल अमुक देवी रानी चढ़ाती हैं।

जैसे जिन बेंगनों को बेंगनों की बाड़ी में देखा था वे उठ कर बाजार में पहुँच गये।

उसी प्रकार जिन अमुक रामा को खेलते देखा था वही आज चौक पर बैठे हैं।

तेल चढ़ाने की प्रथा जनेऊ और विवाह दोनों में सम्पन्न होती है। बरुआ या वर के मातृ-पूजन के दिन तेल चढ़ाया जाता है। कुँआरी कन्याएँ दूब (दूर्वादल) से तेल चढ़ाती हैं। ब्रह्मचारी को तेल मर्दन का निषेध है। अतएव जनेऊ के एक दिन पूर्व तेल आखिरी बार अच्छी तरह लगा दिया जाता है, यहाँ तक कि बरुआ तेल में नहा जाता है। इसी मातृ पूजन को स्त्रियों की भाषा में 'माई मन्तरा' या मायन कहते हैं। माई मन्तरा मातृ-निमंत्रण का रूपान्तर है। इस दिन समस्त पुरखाओं का नान्दी मुख श्राद्ध होता है। और सभी प्राचीन माताओं का आह्वान होता है। उनकी पूजा की जाती है। इस प्रकार सभी पुरखाओं तथा माताओं के आशीर्वाद को प्राप्त करके महान् अनुष्ठानों को सम्पन्न करने का आत्मविश्वास ग्रहण किया जाता है।

इसी समय पुरखाओं के नान्दी मुख श्राद्ध के लिए कुल की सधवाएँ उर्द की दाल पीसती हैं। इसी दाल की बरियाँ या पिण्ड बनाकर उनका श्राद्ध किया जाता है। कुल के समस्त पुरखाओं के श्राद्ध के लिए कुल की समस्त सधवाओं का सक्रिय सहयोग नितान्त आवश्यक है। दाल पीसने की इस प्रथा को सिलपोहनी कहा जाता है। दाल पीसने के लिए स्त्रियाँ अपने मायके से प्राप्त सुन्दर रेशमी वस्त्रों को धारण करती हैं और बड़े औपचारिक ढंग से सिलपोहने की प्रथा को सम्पन्न करती हैं। इस समय काफी मनोरंजन होता है। इस समय आगे दिया हुआ गीत गाया जाता है।

———

सिलपोहनी का गीत

(१)

सिल पोहु बउहर सिल पोहु पहिरि मैके केरा चीरु
सुहागिनि सिल पोहु।
कहाँना यह सिल उपजी को यह लादन जायँ,
सुहागिनि सिल पोहु।
मैके माँ यह सिल उपजी कवन रामा लादन जाय,
सुहागिनि सिल पोहु।

बहू ! मायके के वस्त्र पहिन कर सिल पोहो, सौभाग्यवती, सिल पोहो।

यह सिल कहाँ पैदा हुई और कौन लेने गया है ? सौभाग्यवती सिल पोहो।

मायके में यह सिल पैदा हुई है और अमुक रामा (सौभाग्यवती के पति का नाम) लेने जाते हैं, सौभाग्यवती सिल पोहो।

जिस समय सुहागिन (सधवाएँ) इस प्रकार सिल पर उर्द की दाल पीस रही होती हैं यह गीत गाया जाता है। इसके साथ-साथ हास्य-विनोद भी चलता रहता है। कुछ स्त्रियाँ उस समय पुरोहित या पंडित तथा सुहागिन के भाई का मजाक करती हैं और निम्नलिखित गीत गाती हैं :—

(२)

सिल सरकति है सरकावति है ।
वह तो पंडित का देखि बिरावति है ।
वह तो भइया का देखि बिरावति है ।

सिल सरकती है और पीसने वाली को भी सरकाती है और पंडित को देख कर उसका मुँह चिढ़ाती है; भैया को देख कर मुँह चिढ़ाती है ।

विवाह में भी मातृ-पूजन के समय यह सिलपोहनी की प्रथा सम्पन्न की जाती है ।

माँड़व के गीत

(१)

माड़ौ तो बड़ा सुन्दर न जान्यों कौने गुनु रे।
एहो न जान्यो तम्बोली के छइबै, न जान्यों पानन गुनु रे ॥ १ ॥
खम्भ तौं भलु सुन्दर ना जान्यों कौने गुनु रे।
न जान्यों बढ़ई के गढ़िबै, ना जान्यों चनन गुनु रे ॥ २ ॥
चौक तौ भलि सुन्दर, ना जान्यों कौने गुनु रे।
न जान्यों पंडित के पुरिबे, ना जान्यों मोतिन गुनु रे ॥ ३ ॥
कलसु तो भल सुन्दर, न जान्यों कौने गुनु रे।
न जान्यों बुआ के गोठिबे, न जान्यों ऐपन गुनु रे ॥ ४ ॥
दीपकु तो बड़ा सुन्दर, न जान्यों कौने गुनु रे।
न जानै कुम्हारवा के भँइबे, न जान्यों माटी गुनु रे ॥ ५ ॥
बरुओ तो भल सुन्दर, न जान्यों कौने गुनु रे।
न जान्यों माया के जइबे, न जान्यों बाबा गुनु रे ॥ ६ ॥

मंडप तो बहुत सुन्दर है न मालूम किस कारण। नहीं मालूम तम्बोली के छाने के कारण या पानो के अच्छे होने के कारण ॥ १ ॥

स्तम्भ तो बहुत सुन्दर है नहीं मालूम किस कारण। नहीं मालूम बढ़ई के गढ़ने के कारण या चन्दन की लकड़ी होने के कारण ॥ २ ॥

चौक तो बहुत सुन्दर है नहीं मालूम किस कारण। नहीं मालूम पंडित के पूरने के कारण या मोतियों के कारण ॥ ३ ॥

कलश तो बहुत सुन्दर है; नहीं मालूम किस कारण। नहीं मालूम बुआ के रंगने के कारण या ऐपन के कारण ॥ ४ ॥

दीपक तो बहुत सुन्दर है; नहीं मालूम किस कारण। नहीं मालूम कुम्हार के बनाने के कारण या मिट्टी के कारण ॥ ५ ॥

बरुआ भी तो बहुत सुन्दर है; नहीं मालूम किस कारण। नहीं मालूम माता के उत्पन्न करने के कारण या बाबा के कारण ॥ ६ ॥

यह गीत खम्भ गाड़ने के समय गाया जाता है। उस समय मंडप, खम्भ, चौक, कलश, दीपक इत्यादि आवश्यक सामग्री हैं; साथ ही बरुआ भी। खम्भ की जड़ में धरती पर चौक पूरी जाती है और वहीं कलश रखा जाता है, कलश पर दिया जलाया जाता है और तब बरुआ से पूजा कराई जाती है।

कलश को ऐपन (हल्दी का लेप) से बुआ रंगती है और खम्भ में हाथ से सात छापे भी लगाती है।

(२)

धाउरे नउआ धाउरे बरिया, हमरी अजोध्या लगे जाहुरे।
हमरी अजोध्या मा पान बहुत हवैं, पानन मॉडव छवाव ॥ १ ॥
काहे रामजी बिनती करति हौ, लछिमन चिरिया हमारि।
मानुस देह पान कहाँ पावौं, तिनवन मॉडव छवाव ॥ २ ॥

धाउरे नउआ धाउरे बरिया, हमरी अजोध्या लगे जाहुरे।
हमरी अजोध्या मा मोतियों बहुत हवैं, मोतियन चौक पुराव ॥ ३ ॥
धाउ रे नउआ धाउ रे बरिया, हमरी अजोध्या लगे जाहुरे।
हमारी अजोध्या मा सोनवा बहुत हवै, सोने कलसा गढ़ावौं ॥ ४ ॥

काहे राम जी बिनती करत हैं काहे लछिमन चेरिया हमारि।
मानुस देहिं सोनु कहाँ पइहौं, माटी का कलसु धरावौं ॥ ५ ॥
धाउ रे नउआ धाउ रे बरिया, हमरी अजोध्या लगे जाहुरे।
हमरी अजोध्या मा चननु बहुत हवै, चनन का खम्भ गढ़ाव ॥ ६ ॥

काहे राम जी विनती करत हैं, काहे लछिमन चेरिया हमारि।
मानुस देहिं चननु कहाँ पइहौ, आम्बे का खम्भु गढ़ावो ॥ ७ ॥

नाई दौड़ो बारी दौड़ो—हमारी अयोध्या तक जाओ। हमारी अयोध्या में पान बहुत है—पान से मंडप छवाओ ॥ १ ॥

रामजी क्यों हमारी विनती करते हो, लक्ष्मण तुम क्यों हमारी चिरौरी (प्रार्थना) करते हो ? हम मनुष्य हैं इतने पान हम कहाँ पाएंगे ? तृणों से मंडप छवाओ ॥ २ ॥

नाई दौड़ो बारी दौड़ो—हमारी अयोध्या तक जाओ। हमारी अयोध्या में मोती बहुत हैं मोतियों से चौक पुरावो ॥ ३ ॥

नाई दौड़ो बारी दौड़ो—हमारी अयोध्या तक जाओ। हमारी अयोध्या में सोना बहुत है सोने के कलशे बनवाओ ॥ ४ ॥

रामजी मुझसे क्यों विनती करते हैं और लक्ष्मण क्यों मुझसे प्रार्थना करते हैं—हम मनुष्य हैं सोना कहाँ मिलेगा। मिट्टी का कलश बनवाओ ॥ ५॥

नाई जाओ, बारी जाओ—हमारी अयोध्या तक जाओ। हमारी अयोध्या में चन्दन बहुत है—चन्दन का खम्भा बनवाओ ॥ ६ ॥

रामजी मुझसे क्यों विनती करते हो लक्ष्मण मुझसे क्यों प्रार्थना करते हो ? हम मनुष्य हैं चन्दन कहाँ पायेंगे—आम का ही खम्भ बनवाओ ॥ ७ ॥

जनेऊ उत्सव में चन्दन के खम्भ, सोने के कलश और पान के मंडप की व्यवस्था सर्वसाधारण के लिये असंभव है अतः साधारण व्यवस्था ही ठीक है।

जनेऊ गीत

(१)

अरी अरी आजी दुलहिन देई नन्हा सूतु कतावहु हो।
नन्हा सा सूतु कताइ कै वोहि कै धोती बिनावहु हो॥
वोहिकै धोती बिनाय कै, ढिग पाट लगावहु हो।
ढिग और पाटु लगाई कै, वोहि कै पेरी रँगावहु हो॥
सो पेरी पहिने कवन रामा, बाँभन होइ जइहैंहि हो।

अरी आजी दुलहिन देवी पतला सूत कताओ।
पतला सून कतवा कर उसकी धोती बिनवाओ।
उसकी धोती बिनवा कर उसमें किनारी और पाट लगवाओ।
किनारी और पाट लगवा कर उसकी पेरी रँगवाओ।
अमुक रामा उसको पहिन कर ब्राह्मण होने जायेंगे।

इस गीत में सूत कातने का स्पष्ट उल्लेख है। अंग्रेजों के आने के पूर्व हमारे देश में घर-घर चर्खे चलते थे। उस सूत को कोरी बिन कर कपड़े के रूप में परिणत कर देता था। बिनाई के लिए कोरी को अनाज दिया जाता था। सूत कातने की बात आजी से ही कही गई है जिसका तात्पर्य यह है कि अधिकांश बूढ़ी औरतें चरखा काता करती थीं। युवा स्त्रियाँ अधिक शारीरिक श्रम वाले कार्य करती थीं। बरुआ के लिए और भी अधिक बारीक सूत कात कर पतली धोती बनवाने की इच्छा की गई है।

(२)

लिल्ल घोड़ी मुख रातुलि, पुँछिया चितकाबरि हो।
वोहि घोड़ी चढ़िगे बाबा उनके, हिरना का मारहिं हो।
हाथ जोड़ हारिनी खड़ी, मोरा हिरना ना मारहु हो।
तुमका न मरिबै हरिनिया, तोरे हिरना का मारब हो।
हमरे घर बरुआ कवन रामा, मृगछाला पहिनहिं हो।
बँसवन धोतिया सुखति हवै, मोरवा चुँगत हवे।
बाजनन भई झंकार, कवन रामा बरु भये।

लिल्ली घोड़ी का मुँह लाल है और पूंछ चितकबरी है।
उस घोड़ी पर उनके बाबा चढ़कर हरिन मारने चले।
हरिनी हाथ जोड़े खड़ी है मेरे हरिन को मत मारो।
हरिनिया तुमको नहीं मारूंगा तुम्हारे हरिन को मारूंगा।
हमारे घर में बरुआ अमुक रामा मृगछाला पहिनेंगे
बांसों में धोती सुख रही है मोर चुंग रहे हैं।
बाजे बज उठे हैं अमुक रामा बरुआ (वर) हुए।

इस गीत में जहाँ बाबा है उस स्थान पर, चाचा, काका, भइया इत्यादि एक के बाद दूसरे का उल्लेख किया जाता है। इस प्रकार गीत काफी लम्बा हो जाता है। अन्तिम दो पक्तियां अनेक गीतों के बाद दुहराई जाती हैं।

जिसका जनेऊ होता है उसको "बरुआ" कहते हैं। यह शब्द 'वर' का रूपान्तर है। बरुआ को ब्रह्मचारी का रूप दिया जाता है। प्राचीन गुरुकुलों और ऋषि-मुनियों के आश्रमों मे विद्याध्ययन करने वाले विद्यार्थी अधिकतम प्राकृतिक जीवन व्यतीत करते थे। पहिनने-बिछाने के लिए मृगचर्म का ही बहुधा उपयोग होता था। अतएव जनेऊ मे बरुआ को मृगछाला पहिनाई जाती है। अब यह बिलकुल प्रथा के ही रूप में रह गया है। अधिकतर जनेऊ कराने

वाला पंडित अपने पास एक मृगचर्म की पट्टी सी रखता है उसको वह बरुआ के दाहिने कंधे में डाल देता है।

(३)

को मोरे जइहै वृन्दाबनु लइहै फरस दण्डु।
को मोरे खेले अहेरिया, मृगछाला चाहिअ।
बाबा मोरे जइहैं वृन्दाबन लइहैं फरद दण्डु औ मृगछाला।
आज मोरे नाती का जनेऊ फरस दण्ड चाहिअ।

मेरे वृन्दावन कौन जायेगा और पलाश-दण्ड लायेगा। और मेरे कौन आखेट करेगा, मृगछाला चाहिये।

मेरे बाबा वृन्दावन जायेंगे और पलाश-दण्ड तथा मृगछाला लायेंगे।

आज मेरे नाती का जनेऊ है पलाश-दण्ड चाहिए।

बाबा के स्थान पर काका, चाचा इत्यादि का भी नाम लेकर यह गीत गाया जाता है। ब्रह्मचारी को पलाश-दण्ड धारण करने का नियम है।

(४)

करौ न माया मोरी सतुआ औ करो लड्डुआ।
कासी बनारस जाब, बेदु पढ़ि आउब॥ १॥
काहे का पूता जइहौ कासी, औरु बनारस।
घरिही माँ बाबा तोरे बेदिया, बेदु पढ़ि लीन्हेउ॥ २॥
मँड़ये माँ ठाढे कवन रामा फिरि फिरि चितवैं पलक नहिं भाँजैं।
कहाँ गई हैं आजी हमारि, भिच्छा लई डारौं॥ ३॥
छिनु एकु बेलमौ पलक तुम भाँजौ,
कइ लेओं सोरहो सिंगार भिच्छा मैं डारौं॥ ४॥
सातौ सूप सजाओं, भिच्छा लई डारौं।
मान्यन पाँय पखारौं, भिच्छा लई डारौं॥ ५॥

मेरी माँ ! सत्तू बना दो और लड्डू बना दो मैं काशी बनारस वेद पढ़ने जाऊँगा ।। १ ।।

पुत्र ! काशी बनारस क्यों जाओगे, घर ही में तुम्हारे बाबा वेदपाठी हैं उन्हीं से वेद पढ़ लो ।। २ ।।

मँडप के नीचे अमुक रामा खड़े हैं इधर-उधर देख रहे हैं । पलक नहीं मारते । आजी मेरी कहाँ हो ? भिक्षा डालो आकर ।। ३ ।।

"एक क्षण भर के लिये तुम ठहर जाओ, पलक मारो, मुझे सोलहों शृंगार कर लेने दो, मैं अभी भिक्षा डालती हूँ ।

सातों सूप सजा कर मैं अभी भिक्षा डालती हूँ । मान्यों के पादप्रक्षालन कर लूँ अभी भिक्षा डालती हूँ ।। ५ ।।

प्राचीन काल में विद्याध्ययन के लिये कुछ विशेष केन्द्रों में जाना पड़ता था । उन विद्याध्ययन के केन्द्रों में काशी का विशेष महत्त्व था और आज भी है । और विद्याध्ययन के लिये जाने वाले को प्रथम यज्ञोपवीत धारण करना पड़ता था और तब से भिक्षा पर ही जीवन निर्वाह करना पड़ता था । इस प्रकार भिक्षा से प्राप्त अन्न-धन से ब्रह्मचारी अपना विद्याभ्यास सम्पन्न करता था । वही प्रथा यज्ञोपवीत के संस्कार के समय पूरी की जाती है; यद्यपि अब ब्रह्मचारी न तो विद्याध्ययन के लिये काशी ही जाता है और न उस दिन के बाद भिक्षा ही माँगता है ।

इस गीत में दो अन्य महत्त्वपूर्ण प्रथाओं की ओर संकेत मिलते हैं : प्रथम भिक्षा डालने की प्रथा की ओर संकेत है । सात सूपों मे भिक्षा-सामग्री सजाकर भिक्षा डालना जिससे ब्रह्मचारी को भिक्षा देने का उत्साह प्रकट होता है; और दूसरे मान्यों के पादप्रक्षालन की प्रथा । जितने रिश्ते की दृष्टि मे मान्य होते हैं उनके पैर पखारे जाते हे और उनको उसके लिये कुछ धन दिया जाता है । इसके साथ ही भिक्षा के पूर्व आचार्य के भी पैर पखारे जाते हैं । जिस समय पैर पखारे जाते है उस समय यह गीत गाया जाता है :—

हरेहे पाट केरी जाजिम, झारि बिछावहि ।
बैठे मान्य सब झारि, चरन छुवैं रानी ।

गंगा से जलु मँगवाइन, चरन पखारिन ।
देव कवन रामा दानु चहूं जग जाहिर ।

(५)

को मोरे चाउर बेसाहै, गैया दुहावै,
को मोरे खिरिया बनावै, तो बरुआ जेआँवैं ॥ १ ॥

बाबा मोरे चाउर बेसाहैं, तौ गइया दुहावैं,
आजी मोरी खिरिया बनावैं, तौ बरुआ जेआँवैं ॥ २ ॥

कौन चावल खरीदेगा, कौन गाय दुहावेगा और मेरे कौन खीर बनायेगा और बरुआ को खिलायेगा ।। १ ॥

बाबा मेरे चावल खरीदेंगे और गाय दुहावेंगे और आजी मेरी खीर बनावेंगी तो बरुआ को खिलायेंगी ॥ २ ॥

अन्तिम पद, बाबा, आजी के अतिरिक्त काका, अम्मा, चाचा-चाची के नाम से भी गाया जाता है ।

(६)

मँजवा के खेतवा कवन रामा, मचली करति हैं,
लेबै बाबा मूँज का जनेउ, मूँज भली हरी हरी ॥ १ ॥

सभियाँ माँ बैठे बाबा उनके, नाती समुझावैं ।
देबै नाती सोने का जनेऊ, मूँज का करिहौ ॥

मूँज के खेत में अमुक रामा मचल रहे हैं—बाबा मूँज का जनेऊ लूंगा मूँज खूब हरी-हरी है ॥ १ ॥

सभा में उनके बाबा बैठे हैं और नाती को समझा रहे हैं—नाती सोने का जनेऊ दूँगा, मूँज का जनेऊ क्या करोगे ।। २ ।।

यह गीत भी बाबा से लेकर काका, चाचा वगैरह के नाम से गाया जाता है। इस गीत में बरुआ के मूँज के जनेऊ लेने के लिये मचलने की बात कही गई है। यह मूँज-मेखला की ओर संकेत है। ब्रह्मचारी को मूँज की मेखला भी धारण करनी पड़ती है।

(७)

ऊँची तिदवारी नेहले खम्भा, तेहि पर मानिक दिया बरै हो।
वोहि ओढ़कैली उनकै आजी, अपने स्वामी ते मनु करै हो ।। १ ।।

सुनहु धना सुनहु धना लोनी एकु अरज हमारिउ हो।
जो कुछ बारे ते जोगयो सोई लइ खरचौ हो ।। २ ।।

इतना सुनि कै आजी उनकी स्वावैं धौरहारे हो।
कुस कासन केरा मँड़यो तेहि तरे वेदी रचना लागी हो ।। २ ।।

वेदी माँ वैठे बाबा उनके अपने नाती का बोलावहिं हो।
वेदी माँ हम नहिं अइबै मोरी आजी बिना सूना लागे हो ।। ४ ।।

एतना सुनि कै बाबा उनके अपनी धना का जगावैं हो।
सुनहु धना, सुनहु धना लोनी धना एकु अरज हमारिउ हो ।। ५ ।।

असिल खेत जोताइ कै वोहि माँ गोहुँआ बोवाउब हो।
गोहुँआ कै मैदा पिसाइ कै, वोहि के माठ बनाउब हो ।। ६ ।।

वोहि कै माठ बनाइ कै, सातौं सूप सजाउब हो।
सातौं सूप सजाइ कै, भिक्षा लई डारौं हो ।। ७ ।।

बरुहर खेत जोताय कै वोहिमाँ लहिला बोआउब हो।
लहिला के दयूल दराय कै, वोहि का बेसन पिसाउब हो ।। ८ ।।

बेसने की बूँदी छुटाइ कै, वोहि के लडुआ बनाउब हो।
बड़े-बड़े लडुआ बनाइ कै सातौं सूप सजाउब हो ।। ९ ।।

सातौं सूप सजाइ कै, भिक्षा लई डारौं हो।
पँच रतननि थारु सजाई कै, भिक्षा डारौं हो ।। १० ।।

पेरी पेरी मोंहरें भँजाय कै, दस बरण कराउब हो।
माननि पाँय पखारि कै, अच्छे कै दच्छिना देवाउब हो ॥ ११ ॥

तिद्वारी (तिदरी) ऊँची और खम्भे नीचे हैं उस पर मोती का दिया जल रहा है। उसी के सहारे बैठी हुई उनकी आजी अपने पति से विवाद कर रही हैं ॥ १ ॥

नोट—आजी से लेकर काकी चाची आदि के नाम से यह पद गाया जाता है। उसी के अनुसार बाबा के स्थान की भी पूर्ति होगी।

मेरी सलोनी स्त्री, हमारी भी एक विनती सुनो। जो कुछ बचपन से संचित किया है वही लेकर खर्च करो ॥ २ ॥

इतना सुन कर उनकी आजी धौरहारे में जा कर सो गईं (रूठ गईं) कुश का मण्डप बना कर उसके नीचे यज्ञ की वेदी रची गई ॥ ३ ॥

वेदी पर बैठे हुए उनके बाबा बरुआ को बुला रहे हैं "वेदी पर मैं नहीं आऊँगा; मेरी आजी के बिना सूना लगता है" ॥ ४ ॥

इतना सुन कर उनके बाबा अपनी स्त्री को जगाते हैं (मनाते हैं) "मेरी सलोनी स्त्री मेरी भी एक विनती सुनो" ॥ ५ ॥

अच्छा खेत जोतवा कर उसमें गेहूँ बोवाऊँगी। गेहूँ का मैदा पिसवा कर उसके मठ (मठोलिया; पकवान) बनवाऊँगी ॥ ६ ॥

उसके मठ बनवा कर सातों सूप सजाऊँगी। सातों सूप सजा कर भिक्षा डालूँगी ॥ ७ ॥

"बालूदार मिट्टी वाले खेत को जोतवा कर उसमें चना बोवाऊँगी। और चना की दाल बनवा कर उसका बेसन बनवाऊँगी ॥ ८ ॥

बेसन की बूँदी (छोटे-छोटे सेव) निकलवा कर उसके लेड़ुआ (लड्डू) बनवाऊँगी और बड़े-बड़े लेड़ुआ बनवा कर सातों सूप सजाऊँगी ॥ ९ ॥

सातों सूप सजाकर भिक्षा डालूँगी। पाँच रत्नों से थाल सजा कर भिक्षा डालूँगी ॥ १० ॥

पेरी (स्वर्ण) की मोहरें को भुनवा कर (छुट्टा लेकर) दस वर्ण कराऊंगी । मान्यों के पैर पखार कर खूब दक्षिणा दूंगी ।। ११ ।।

नाती के हृदय में अपनी आजी के प्रति कितनी ममता है कि उनकी अनुपस्थिति में वह जनेऊ नहीं कराना चाहता है । जब बाबा आजी में सुमति (मेल) हो जाती है तभी वह जनेऊ के लिए तैयार होता है । अन्तिम पांच पदों में पकवान का वर्णन है जो सूपों में अनिवार्य रूप से रखा जाता है ।

दस वर्ण—मान्यों के पांव पूजने के कार्य को दसवर्ण कराना कहते हैं इसमें पैर पूज कर दक्षिणा दी जाती है ।

(८)

गंगा किनारे मधु पीपर बरुआ पुकारै ।
पठै देओ बाबा मोरे नाव बरुआ चले आवैं ।। १ ।।
न हिंया नाव नवैया न दूसर खेवैया ।
जेहि जनेए केरी साध, पैरि जलु आवै ।। २ ।।
भीजै मेरा मूँड़ मुरैठा, छतिया केरा चन्दनु ।
भीजै मेरी कुलही कमान, जनेए केरे कारन ।। ३ ।।
बँसवन धोतिया सुखति हवै, मोरवा चुगत हवैं ।
बाजनन भई झंकार कवन रामा बरु भये ।। ४ ।।

गंगा के किनारे पीपल के वृक्ष के नीचे बरुआ पुकार रहा है । "बाबा नाव भेज दो मैं बरुआ चला आऊँ" ।। १ ।।

न तो नाव नवैया है और दूसरा खेने वाला है जिसको जनेऊ की इच्छा हो वह तैर कर चला आवे ।। २ ।।

मेरे सिर का साफा भीग रहा है, और छाती का चन्दन भी । मेरी कुलही कमान भी इसी जनेऊ के कारण भीग रही है ।। ३ ।।

बांसों पर धोती सूखती है, मोर चुग रहे हैं बाजों का बजना शुरू हो गया है, अमुक रामा बरुआ हुए ।। ४ ।।

इस गीत में जनेऊ के लिये उत्सुकता प्रदर्शित की गई है। बालक जनेऊ के लिये यहाँ तक उत्सुक है कि नदी तैर कर आता है।

(९)

गलिन गलिन पंडितु फिरैं हाथ धोतिया लीन्हे, बगल पोथिया लीन्हे,
है कोई नगरी मा पंडितु जनेऊ देवावै ॥ १ ॥
चाचा तो उनके कवन रामा, चाची उनकी दुलहिन देई,
उई मेरा जनेऊ देवावैं, भिच्छा लई डारैं ॥ २ ॥
ददुली तो हमरे कवन रामा, माया दुलहिन देई,
उई मेरा जनेऊ देवावैं भिच्छा लई डारैं,
सातौं सूप सजावैं, भिच्छा लई डारैं ॥ ३ ॥
पँचरतनिन थारु सजावैं भिच्छा लई डारैं,
मान्नि न पाँय पखारैं, तो दच्छिना देवावैं ॥ ४ ॥

हाथ में धोती लेकर बगल में पुस्तकें लेकर पंडित गली-गली घूम रहे हैं। कोई ऐसा पंडित है जो जनेऊ करावेगा ॥१॥

अमुक रामा उनके चाचा और चाची दुलहिन देवी मेरा जनेऊ करावेंगे—और भिक्षा डालेंगे ॥२॥

अमुक रामा हमारे पिता—और माता दुलहिन देवी मेरा जनेऊ करावेंगे। भिक्षा लेकर डालेंगे—सातो सूप सजा कर भिक्षा डालेंगी ॥३॥

पाँचरत्नों से थाल सजाकर भिक्षा डालेंगी—मान्यों के पैर पखार कर दक्षिणा देंगी ॥४॥

(१०)

अरे अरे देउता सुरिजमनि बदरे छिपि रहत्यो रे।
सात बरस के कवन रामा, घामे कुम्हिलाने हो ॥ १ ॥

बाबा तौ उनके सबै जनै, सोने छत्रु छावावैं हो।
आजी तौ उनकों दुलहिन देई, अँचरे मुँहु पोंछैं हो ॥ २ ॥
दादुली तो उनके कवन रामा, सोने छत्रु छवावैं हो।
माया तौ उनकी दुलहिन देई, अँचरे मुँहु पोंछैं हो ॥ ३ ॥

अरे सूर्यमनि देवता बादल में छिपकर रहते; सात वर्ष के अमुक रामा धूप में कुम्हला गये हैं ।।१।।

उनके बाबा सभी जने सोने का छत्र (मंडप) छवाते हैं और उनकी आजी दुलहिन देवी अपने अँचल से मुँह पोंछती हैं ।।२।।

अमुक रामा उनके पिता सोने का छत्र छवाते हैं और उनकी माता दुलहिन देवी अपने अँचल से मुँह पोछती हैं ।।३।

(११)

स्वावो कि जागौ बाबा मोरे स्वावो कि जागौ हो।
तोरे अँगना बरुआ जो ठाढ़े तो माँगत दूधु ॥ १ ॥
न हमरे लागनि गैया, नाहिन मोरे दूधु।
जाइ पुकारौ चाचन घरै उन घरै दूधु ॥ २ ॥
स्वावो कि जागौ चाचा मोरे स्वावो कि जागौ हो।
तोरे आँगना बरुआ जो ठाढ़े तो माँगत दूधु ॥ ३ ॥
न हमरे लागनि गैया नाहिन मोरे दूधु।
जाइ पुकारो मामन घरै उन घर दूधु ॥ ४ ॥
स्वावो कि जागौ मामा मोरे स्वावो कि जागौ हो।
तोरे अँगना बरुआ जो ठाढ़े तो माँगत दूधु ॥ ५ ॥
हमरे घरै लागनि गैया हमरे घरै दूधु।
हम भइने जनेऊ देवैबे, भिक्षा लै डारब ॥

मेरे बाबा सो रहे हो या जाग रहे हो ? तुम्हारे आँगन में बरुआ खड़ा दूध माँग रहा है ।।१।।

न तो मेरे दूधारू गाय है और न दूध ही। चाचा के घर जाकर पुकारो उनके घर में दूध है ।। २ ।।

मेरे चाचा सो रहे हो या जाग रहे हो ? तुम्हारे आँगन में बरुआ खड़ा दूध माँग रहा है ।। ३ ।।

न तो मेरे दूधारू गाय है और न दूध ही। तुम मामा के यहाँ जाकर पुकारो उनके यहाँ दूध है ।। ४ ।।

मेरे मामा सो रहे हो या जाग रहे हो ? तुम्हारे आँगन में बरुआ खड़ा दूध माँग रहा है ।। ५ ।।

हमारे घर में दूधारू गाय है—हमारे घर दूध है; भाञ्जे हम तुमको जनेऊ दिलायेंगे और भिक्षा डालेंगे ।। ६ ।।

जनेऊ में दूध की आवश्यकता इसलिये पड़ती है कि जनेऊ के दिन प्रातः काल बरुआ अन्य बिना यज्ञोपवीत वालों के साथ बासी भात दूध से खाता है। आजकल दूध के स्थान पर मिखरन-छाँछ का भी जिकर है। संभव है कि दूध के अभाव की पूर्ति छाँछ से की गई हो। दूसरी महत्त्वपूर्ण बात है कि यदि घर के बाबा, काका, बाबा जनेऊ करने में असमर्थ हैं तो मामा यह उत्तरदायित्व बड़ी खुशी से लेता है और जनेऊ कराता है। अन्यथा जनेऊ में भी मामा का विशेष महत्त्व है।

(१२)

मँड़ये माँ ठाढ़े कवनरामा दूरि फिरि चितवैं: पलक नहिं मारैं।
है कहूँ बाबा हमार तौ जनौ देवावै ।। १ ।।
सभवा से उठिभे बाबा रामा, उई उठि बोले,
हौं भइया बाबा तुम्हार, तौ जनौ देवाउब।
देबै सोने का जनेऊ, जनेऊ बड़ा उत्तिम ।। २ ।।
मँड़ये माँ ठाढ़े बबुआ, हिरि फिरि चितवैं, पलक नहिं मारैं।
है कहूँ आजी हमारि, भिच्छा लई डारौ ।। ३ ।।
भितरा ते उठी आजी उनकी, उई उठि बोलीं,
हौं भइया आजी तुम्हारि, तौ भिच्छा लै लेओ ।। ४ ।।

अमुक रामा मँडप में खड़े हैं और दूर तक इधर उधर देख रहे हैं; पलक भी नहीं मारते। कहीं मेरा बाबा है जो मुझे जनेऊ दिलाये ।। १ ।।

सभा से उठकर बाबा रामा बोले—मैं तुम्हारा बाबा हूँ, तुम्हें जनेऊ दिलाऊँगा। सोने का जनेऊ दूंगा, यज्ञोपवीत बहुत उत्तम है ।। २ ।।

मँडप में बबुआ खड़े हैं और इधर उधर देख रहे हैं पलक नहीं मारते। कहीं आजी मेरी है जो भिक्षा लेकर डाले ।। ३ ।।

भीतर से आजी उठकर आई और बोलीं—मैं तुम्हारी आजी हूँ तो भिक्षा ले लो ।। ४ ।।

(१३)

को यह मुँजिया बवइहै, वोहिका कौन रानी चिरिहैं।
कौने बरुआ ऐसे दुलरुआ, मुँजिया तरे लोटहिं ।। १ ।।
बाबा रामा मुँजिया बवइहैं, आजी रानी चिरिहैं।
कवन रामा ऐसे दुलरुआ, तो मुँजिया तरे लोटहिं ।। २ ।।
बाबा रामा झारेनि पोंछेनि, जाँघ बैठारिनि।
देहौं पोता सोने का जनेऊ, जनेऊ बड़ा उत्तिम ।। ३ ।।

कौन यह मूंज बोवायेगा और कौन रानी उसको चीरेंगी ? कौन बरुआ ऐसे प्यारे हैं जो मूंज के नीचे लेटेंगे ।। १ ।।

बाबा रामा बोवायेंगे और आजी चीरेंगी। अमुक रामा ऐसे प्यारे हैं जो मूंज के नीचे लेटेंगे ।। २ ।।

बाबा रामा ने झाड़ा पोंछा और जाँघ पर बैठाया। पोता, मैं सोने का जनेऊ दूंगा; जनेऊ बड़ा उत्तम होता है ।। ३ ।।

मूंजमेखला की आवश्यकता पर बल देने के कारण बाबा को मूंज बोनी पड़ी, आजी को चीरनी पड़ी। बरुआ को न केवल उसकी मेखला धारण करनी पड़ी प्रत्युत उसी के वृक्ष के नीचे लेटना तक पड़ा।

(१४)

चैत से बरुआ चले वैसाख पहुँचे आई ।
जावौं मैं जावौं वोहि घर जहाँ बाबा कवन होय ॥ १ ॥
आपनि विद्या देवाइ कै, मोरे बाबा बाँभन कई लेओ ।
सातों सूप सँवारि कै, मोरी आजी भिच्छा लै डारौ ॥ २ ॥

चैत में बरुआ चले और वैसाख में आकर पहुंचे । मैं उस घर जाऊंगा जहाँ अमुक रामा बाबा हों ॥ १ ॥

बाबा अपनी विद्या दिलाकर मुझे भी ब्राह्मण बना लो । सातों सूप सजा कर मेरी आजी भिक्षा डालो ॥ २ ॥

यज्ञोपवीत के साथ विद्याप्राप्ति के लिये बालक की तीव्र इच्छा इस गीत से प्रकट होती है ।

(१५)

बाबा रामा ऊँच मँड़उना हरे बाँस छावा है हो ।
तेहि तरे ठाढ़ी दुलहिन आजी, और पिया पंडित हो ॥ १ ॥
सात बरस के लालन भये जनौ कई डरतिउँ हो ।
हँसि हँसि पूछैं बाबा रामा, धना काका चाहिए हो ॥ २ ॥
चाहिए पिया चाहिए अमृतफल नरियल हो ।
आठ कुम्भ नौगइयाँ, दस बरन देवौतिहुँ हो ॥ ३ ॥
सोने-रूपे जनेऊ मढ़ाई कै, बँभनन दै देतिहुँ हो ।
बेलन खिचरी भराइकै भिच्छा लै डरतिहुँ हो ॥ ४ ॥

बाबा रामा का ऊंचा मंडप है और हरे बांसों से छाया हुआ है । उसके नीचे दुलहिन आजी और पति पंडित (बाबा) खड़े हैं ॥ १ ॥

सात बरस के लालन हो गये हैं जनेऊ कर डालती ? बाबा रामा हंस कर पूछते हैं—पत्नी ! क्या-क्या चाहिए ॥ २ ॥

प्रिय अमृतफल नारियल चाहिए। आठ घड़े (कलसे) नौगांव के बने हुए चाहिए—दस वर्ण करवा देती ।। ३ ।।

सोने और चांदी में जनेऊ को मढ़वा कर ब्राह्मण को दे देती। कटोरों में खिचड़ी भरा कर भिक्षा डालती ।। ४ ।।

यज्ञोपवीत की उम्र के संबंध में यह नियम है कि ब्राह्मण बालक का ८ वर्ष की अवस्था में, क्षत्रिय बालक का ११ वर्ष और वैश्य का १२ वर्ष की अवस्था में जनेऊ होना चाहिए। परन्तु शुभ कार्यों में पूर्ण संख्या शुभ नही मानी जाती है अतएव सात की अथवा नौ को संख्या को जनेऊ के लिये अधिक उपयुक्त मानते है। अब तो १५ और १७ वर्ष तक ब्राह्मण का जनेऊ होता है।

(१६)

अरी अरी अकला कलोरिया, काहे तुम अनमन।
की तोरा बछरा हेरान, कि अहिर सतावँई ॥ १ ॥
ना मोरा बछरा हेरान न अहिर सतावँई।
रचा है बाबा रामा जनौ तो गइया घिउ चाहिए ॥ २ ॥
घिउ संचौ आजी मोरी घिउ संचौ, कनिक मैदा संचौ।
रचा है बाबा रामा जनौ तौ गइया घी चाहिए ॥ ३ ॥

अरी सुन्दर कलोर (प्रथम बियाने वाली गाय) गाय, तुम क्यों उदास हो? क्या तेरा बछड़ा खो गया है या अहिर सताते है ।। १ ।।

न मेरा बछड़ा खो गया है न अहीर सताते है। बाबा रामा ने जनेऊ रचा है तो उनको घी चाहिए ।। २ ।।

मेरी आजी घी संचय करो—आटा घी और मैदा संचय करो; बाबा ने जनेऊ रचा है तो गाय का घी चाहिए।

गाय का घी यज्ञ के लिये आवश्यक होता है। अतएव यज्ञोपवीत के यज्ञ को सम्पन्न करने के लिये गाय का घी अनिवार्य है।

(१७)

इन्द्र घटा घन घेरिये, इन्द्र बरसन आये हैं हो।
अँथइयाँ त उठिभे दसरथ राजा दोनों कर जोरहिं हो ॥ १ ॥

हाथ जोरि विनती करौं, सुनो इन्द्र विनतिउ हो।
आजु दिवस जनि बरसहु, मोरे बरुआ रामचन्द होंय ॥ २ ॥
भितरा ते निकसीं कौसिल्या रानी दोनों कर जोरहिं हो।
हाथ जोरि विनती करैं, सुनो इन्द्र विनती हमारि हो।
आज दिवस जिन बरसहु, मोरे बरुआ रामचन्द होंय ॥ ३ ॥

इन्द्र घनी घटा घेर कर बरसने आये हैं। सभा से उठकर राजा दशरथ दोनों हाथ जोड़ रहे हैं ॥ १ ॥

"हाथ जोड कर विनती करता हूँ इन्द्र ! मेरी विनती सुनो। आज के दिन मत बरसो, मेरे रामचन्द बरुआ हो रहे हैं" ॥ २ ॥

भीतर से रानी कौशिल्या निकलीं और दोनों हाथ जोड़ती हैं। "हाथ जोड़ कर विनती करती हूं इन्द्र ! मेरी विनती सुनो। आज के दिन मत बरसो, रामचन्द बरुआ हो रहे हैं" ॥ ३ ॥

पौराणिक धारणा के अनुसार, कि इन्द्र देवता पानी बरसाते हैं, यहाँ इस गीत में बादल के स्थान पर इन्द्र कहा गया है। 'Personification' अलंकार ने कथन में चमत्कार पैदा कर दिया है और साथ ही राजा दशरथ तथा रानी कौशिल्या की विनती को स्वाभाविक बना दिया है। बादल के स्थान पर इन्द्र के होने के कारण उनकी विनती के स्वीकृत होने की संभावना पैदा हो जाती है। और इस प्रकार गीत स्वभाव के भोलेपन को प्रकट करता हुआ भावनाओं को बहुत समीप से स्पर्श करता है।

गहरी घटाएँ घिर कर बरसने के लिए आ गई हैं। राजा दशरथ घबरा कर अपनी बैठक से उठकर इन्द्र देवता से हाथ जोड़कर प्रार्थना कर रहे हैं, कि आज के दिन पानी न बरसे क्योंकि पुत्र रामचन्द्र का जनेऊ है। कौशिल्या रानी अन्तःपुर से निकल कर चिन्तित हो इन्द्र देवता से हाथ जोड़कर प्रार्थना कर रही है कि आज के दिन पानी न बरसे क्योंकि पुत्र रामचन्द्र का आज जनेऊ है।

भले ही राजा दशरथ के लिए जनऊ के दिन पानी का बरसना इतना अधिक कष्टसाध्य न हो, लेकिन फिर भी जब राजा दशरथ ऐसे अवसर

पर पानी का बरसना नहीं चाहते तो कोई साधारण व्यक्ति ऐसे अवसर पर आसानी से कैसे जनेऊ के संस्कार को निर्विघ्न समाप्त कर सकता है। पानी का बरसना शुभ कार्य में विघ्न है इसलिए संस्कार के प्रारम्भ में ही वर्षा के देवता की प्रार्थना कर ली गई है। कड़ाही में खाने-पीने पर बच्चों को डांटते हैं कि ऐसा करने से जनेऊ या विवाह में पानी बरसेगा अर्थात् बाधाएँ उत्पन्न होंगी। जनेऊ तथा विवाह के लिये उत्सुक बच्चे कढ़ाई का चाटना बन्द कर देते हैं।

जनेऊ में मान्यों के पद-प्रक्षालन के समय

(१)

हरेहे पाट केरी जाजिम, झारि बिछावहिं ।
बैठे मान्य सब झारि, चरन छुवैं रानी ॥ १ ॥
गंगा से जलु मँगवाइन, चरन पखारिन ।
देत कवन रामा दान चहूँ जग जाहिर ॥ २ ॥

हरे पाट की जाजिम झाड़ कर बिछाते हैं । उस पर सब मान्य बैठे हैं और रानी चरण स्पर्श करती हैं ।। १ ।।

गंगा से जल मंगवा कर पैर पखारे और अमुक रामा खूब दान देते हैं जो सारे संसार में विदित है ।। २ ।।

भिक्षा डालने के लिए मंडप में आने वाली स्त्री पहिले गंगा जल से मान्यों के पैर पखारती है तब भिक्षा डालती है । पैर पखार कर वह कुछ दान अपने मान्यों को देती है । मान्यों का इस प्रकार प्रत्येक बार पैर पखारना यह प्रकट करता है कि प्रत्येक क्षण हम मान्यों का अधिक से अधिक सम्मान करते हैं । बिना मान्यों को इस प्रकार सम्मानित किये कार्य नहीं हो सकता । वे हमारे विशेष अतिथि होते हैं जिन्हें 'Guest of honour कहा जा सकता है । वे देवता हैं उनकी शुभकामनाओं के बिना यह शुभ कार्य पूरा नहीं हो सकता ।

जनेऊ में भिक्षा के समय

(१)

भिक्षा दे माता आसीस दे मैं तो बरुआ ब्राह्मन हो।
एही भिक्षा केरे कारन हम चलेन बनारस ॥ १ ॥
तुम कस जइहौ बनारस, जेहिके दादुली कवन रामा।
आपन लाखु भँजाई कै, बाँभनु करि लेहैं हो।
आपनु बेद पढ़ाई कै, पंडितु करि लेहैं हो ॥ २ ॥

"माता ! भिक्षा दो आशीष दो, मैं तो बरुआ ब्राह्मण हूं। इसी भिक्षा के कारण मैं बनारस जा रहा हूं" ॥ १ ॥

तुम कैसे बनारस जाओगे जिसके अमुक रामा पिता हैं। अपने लाखों रुपयों को भुना कर ब्राह्मण बना लेंगे। अपना वेद पढ़ा कर पंडित बना लेंगे ॥ २ ॥

जनेऊ में स्नान के समय

(१)

को यह सगरु खोदावा, को घाटु बँधावा।
केहि के भरैं कहार, दुलहै अन्हवावैं ॥ १ ॥
बाबा रामा सगरु खोदावा, अरे घाटु बँधावा है।
बाबा के भरैं कहार, दुलहै अन्हवावैं ॥ २ ॥

यह सागर (तालाब) किसने खुदवाया और किसने इस पर घाट बँधवाया है ? और किस के कहार पानी भर-भर कर दुलहे को नहलाते हैं ? ॥ १ ॥

बाबा ने तालाब खुदवाया है और घाट बँधवाया है। और बाबा के कहार पानी भरते हैं और दुल्हे को नहलाते हैं ॥ २ ॥

जनेऊ देने के पूर्व बालक का चूड़ाकर्म-संस्कार होता है। इस संस्कार में बालक के बाल उस्तरे से काट दिये जाते हैं। केवल चोटी और चोटी के चारों तरफ बालों का फेरवा या चूड़ा छोड़ दिया जाता है। तत्पश्चात् बालक को स्नान करवा कर वेदी पर लाया जाता है और जनेऊ की विधियाँ प्रारम्भ होती हैं। यज्ञोपवीत संस्कार के समाप्त होने पर समावर्तन संस्कार होता है और वह बालों का फेरवा (चूड़ा) भी काट दिया जाता है।

वस्त्र धारण

(१)

मैं तुम पूछौं दुलरुआ, मउरु कहाँ पायौ ।
मोरे बाबा का सेवक मलियवा, ढोय लइ आवै ॥ १ ॥
मैं तुम पूछौं दुलरुआ, मोती कहाँ पायौ ।
हमरे दादुली का सोनरवा, मोती लइ आवै ॥ २ ॥
मैं तुम पूछौं दुलरुआ, सुरमा कहाँ पायौ ।
हमरी बुअन के बिसतिवा, सुरमा लइ आये ॥ ३ ॥
मैं तुम पूछौं दुलरुआ, बिरिया कहाँ पायौ ।
हमरी भउज के तम्बोलिया, बिरिया लइ आये । ४ ॥
मैं तुम पूछौं दुलरुआ, जामा कहाँ पायौ ।
हमरे भइयन के दरजीवा, जामा लइ आये ॥ ५ ॥
मैं तुम पूछौं दुलरुआ, पटुका कहाँ पायौ ।
हमरी अम्मन के बजजवा, पटुका लइ आये ॥ ६ ॥
मैं तुम पूछौं दुलरुआ, जूता कहाँ पायौ ।
हमरी ननिन के चमरवा, जूता लइ आये ॥ ७ ॥
मैं तुम पूछौं दुलरुआ, डोला कहाँ पायौ ।
हमरी माइनि के कहरवा, डोला लइ आये ॥ ८ ॥

'मैं तुमसे पूछती हूँ दुलरुआ, तुम्हें मौर कहाँ मिला ।" मेरे बाबा के यहाँ माली है वह ढोये लिये चला आ रहा है" ॥ १ ॥

"मैं तुमसे पूछती हूँ दुलरुआ तुम्हें मोती कहाँ से मिले ।" "हमारे पिता के सोनार हैं वे मोती ले आये" ॥ २ ॥

"मैं तुमसे पूछती हूँ दुलरुग्रा, तुमने सुरमा कहाँ पाया ?" "मेरी बुग्राग्रों के विसाती हैं वे ही सुरमा ले ग्राये" ।। ३ ।।

"मैं तुमसे पूछती हूँ दुलरुग्रा, तुमने पान कहाँ से पाया ?" "मेरी भावज के तम्बोली हैं वे ही ले ग्राये" ।। ४ ।।

"मैं तुमसे पूछती हूँ दुलरुग्रा, तुमने जामा कहाँ पाया ?" "मेरे भाइयों के दरजी ह वे ही ले ग्राये" ।। ५ ।।

"मैं तुमसे पूछती हूँ दुलरुग्रा, तुमने पटका (कमर में बाँधने का कपड़ा) कहाँ से पाया ?" "हमारी ग्रम्मा के बजाज हैं वे ही ले ग्राये" ।। ६ ।।

"मैं तुमसे पूछती हूँ दुलरुग्रा कि तुमने जूते कहाँ से पाये ?" "मेरी नानी के चमार हैं, वे जूता ले ग्राये" ।। ७ ।।

"मैं तुमसे पूछती हूँ दुलरुग्रा तुमने डोला (पालकी) कहाँ से पाया ?" "हमारे भाइयों के कहार हैं वे ही डोला ले ग्राये" ।। ८ ।।

जनेऊ पहिन कर ब्रह्मचारी बन कर जब काशी के लिये तैयार होता है तो सभी कुटुम्बी, पुरजन सम्बन्धी उसके मार्ग-व्यय तथा ग्रध्ययन-व्यय के लिये कुछ धन एकत्र करते हैं । सभी लोग ग्रपनी सामर्थ्य के ग्रनुसार इस कोष में रुपया देते हैं । इस दान के रूप को टिकावन कहते हैं ।

जब ब्रह्मचारी धन तथा कुछ पाथेय लेकर काशी के लिये दरवाजे की ग्रोर दो-चार कदम उठाता है तभी उसका मामा उसको कुछ दे कर रोक लेता है । उसको समझाया जाता है कि उसके विद्याध्ययन की व्यवस्था यहीं पर कर दी जायेगी । इस पर ब्रह्मचारी वापिस लौट ग्राता है तब उसका समावर्तन संस्कार किया जाता है । उसके सिर की चोटी के चारों तरफ बनाये फेरवे (चूड़ा) को भी मूंड दिया जाता है । उसी समय नाखुर होता है जिसका गीत नाखुर शीर्षक से दिया गया है । तदुपरान्त फिर से स्नान कराया जाता है ग्रौर वस्त्र पहिनाये जाते हैं । इस समय तक बालक का ब्रह्मचारी रूप समाप्त हो जाता है । इसीलिये उसको विवाह के लिये जाने वाले श्रीवर दूल्हे की भाँति सजाया जाता है । मौर जो केवल विवाह के समय पहिनाया जाता है इस समय भी वह पहिनता है । सुरमा काजल जिसका ब्रह्मचारी के लिये निषेध है उसकी ग्राँखों में लगाया जाता है ग्रनेक प्रकार के ग्राभूषण पहिनाये जाते हैं, पान खिलाया जाता है ग्रौर उसको जूते पहिनाकर पालकी पर बिठा कर देवी की पूजा के लिये जाया जाता है । इस प्रकार प्रथा के ग्रनुसार

प्राचीन कालीन चूड़ाकर्म यज्ञोपवीत वेदारम्भ तथा समावर्तन जो चार पृथक् संस्कार थे, जो भिन्न-भिन्न समय पर किये जाते थे, उसी एक दिन में सम्पन्न कर दिये जाते हैं।

अतः विद्याध्ययन के लिये जाने वाला विद्यार्थी ब्रह्मचर्य व्रत और ब्रह्म-विद्या के आदर्श की ओर उन्मुख न हो विवाह के रूप के द्वारा संसार की ओर खींच लाया जाता है। और आगे विवाह के गीतों से, जिनमें १२ वर्ष के वर को सुन्दर माना गया है, प्रकट है कि ब्रह्मचर्य आश्रम ही समाप्त हो गया है। यह हमारे देश का दुर्भाग्य है।

माईं अथवा मँड़वा विसर्जन के उपरान्त घर लौटते समय

(१)

भइया हथिनि झुकाव देव बरगदिया के तरे ॥ १ ॥
कोई बेंचै ऐंगन बैगन, कोऊ बेंचै बेर।
कौऊ अपनी बहिनी बेंचै, लेओ कुँजरवौ मोल ॥ २ ॥
काछी बेंचै ऐंगन बैगन, कुँजरा बेंचै बेर।
कवन रामा अपनी बहिनी बेंचै लेओ कवन रामा मोल ॥ ३ ॥

भैया, बरगद के नीचे हथिनी झुका देओ ॥ १ ॥

कोई ऐगन बेंगन बेचता है और कोई बेचता है बेर। कोई अपनी बहिन बेचता है। कुंजड़ों, मोल ले लो ॥ २ ॥

काछी ऐगन बेंगन बेचते हैं और कुंजड़े बेचते हैं बेर। अमुक रामा अपनी बहिन बेचते हैं अमुक रामा मोल लेओ।

मंडप का अवशिष्ट किसी नदी या तालाब में विसर्जित करने के लिये स्त्रियों का जुलूस निकलता है। स्वभाव के अनुसार वे गीत गाती हुई जाती हैं और गीत गाती हुई लौटती हैं। परन्तु यह ऐसा अवसर होता है जब कि जनेऊ अथवा विवाह ऐसे बड़े कार्य से उनको अवकाश प्राप्त होता है। उस समय एक निश्चितता का वातावरण होता है। तब वे खूब खुश और उद्दण्ड हो जो भी जी में आता है मजाक करती हैं तथा गाती हैं। यह गीत भी स्त्रियों की उसी मानसिक निश्चितता (mood) का प्रदर्शन करता है। इस प्रकार के गीत अनेक हैं परन्तु (फूहड़) अश्लील होने से नहीं दिये जाते।

छठा प्रकरण

पेरी

पसनी (अन्न प्राशन), मुण्डन, छेदन, जनेऊ, विवाह कोई भी अवसर हो—सभी अवसरों पर भाई का 'पियरी' लाना नितान्त आवश्यक है। इसी पियरी को पहिन कर बहिन पूजा करती है। बिना पियरी के काम नहीं चल सकता वह भी भाई की दी हुई। किसी के भाई न होने पर जरूर वह घर ही में रँग ली जाती है परन्तु भाई का न होना, ऐसे अवसर पर और भी विशेष दुखदाई हो जाता है। अपने भाई की भेजी हुई पियरी पहिन कर पुत्र को गोद में लेकर या उसका स्पर्श करके पूजा की चौक पर बैठती है और तब पूजा करती है। भाई बहिन को स्नेह के दृढ़ सूत्र में बांधे रखने के लिये यह एक सुन्दर प्रथा है।

इस प्रथा की जड़ें बहुत गहरी हैं। जो भाई बहिन को पियरी पहिना कर विवाह में विदा कर आता है वही भाई अन्य शुभ कार्यों में पियरी दे तो अन्य कार्य भी उसके स्नेह और सहयोग से विवाह की भाँति निर्विघ्न सम्पन्न हो सकेंगे ऐसा विश्वास है। पियरी न आने पर कुछ अनिष्ट होने का भय बराबर लगा रहता है। ऐसी स्थिति बड़ी अशुभ मानी जाती है।

विवाह में विदा करने के समय भाई ही सबसे अधिक दूर तक बहिन के डोले (पालकी) के साथ जाता है। बहिन के संतोष के लिये एक बार पालकी घुमवाता है और इस प्रकार विदा कर देता है। विदा होती हुई लड़की के मन में जो अन्तिम चित्र आता है उसी को सोचती बिसूरती वह चली जाती है। इस प्रकार भाई को और भी विशेष स्नेह प्राप्त हो जाता है। अतएव किसी कामकाज में वह लड़की अपने भाई को नहीं भूल सकती। भाई के हाथ लगने से ही उसका विवाह जैसा महत्त्वपूर्ण कार्य सम्पन्न हुआ तो अन्य कार्य भी स्नेह और सहयोग की प्रतीक पियरी के कारण निर्विघ्न हो जायेंगे। अतएव

पियरी की आवश्यकता अनिवार्य है। यह पितृगृह और श्वसुरगृह के अच्छे सम्बन्ध का भी द्योतक है।

पेरी

(१)

आवन-आवन होई जाजमऊ के घाट।
पिअरी दिवैया बीर नहिं आये नहिं आये बीर हमार ॥ १ ॥
की घर भौजी बुरौ, की घर भये नन्दलाल।
पिअरी दिवैया बीर नहीं आये, नहिं आये बीर हमार ॥ २ ॥
न घर भौजी बुरौ, न भये घर नन्दलाल।
हरदी बेसाहन बीर गये, पिअरो रँगत भई साँझ।
पिअरी दिवैया बीर आइ गये, भरिगा है मँड़वा हमार ॥ ३ ॥

जाजमऊ के घाट पर आने की प्रतीक्षा हो रही है। पियरी (पीले रंग की साड़ी) देने वाले हमारे भाई नही आये हे ॥ १ ॥

या तो भावज के घर म कुछ बिगाड़ हो गया है या घर में पुत्र ने जन्म लिया होगा। पियरी देने वाले हमारे भाई नहीं आये हैं ॥ २ ॥

न तो भावज के घर में कुछ बिगाड़ पैदा हुआ है और न पुत्र हुआ है। हल्दी लेने भाई गये हैं और पियरी रंगाने में शाम हो गई है। पियरी देने वाले बीर (भाई) आ गये मेरा मंडप भर गया ॥ ३ ॥

पुत्र के प्रत्येक सांस्कारिक अवसर पर माँ भाई की लाई हुई पियरी पहिन कर ही पूजा पर आती है। इस पियरी के न आने पर अशुभ की आशंकाएं होने लगती हे। पियरी के अनेक गीत हैं। जिस समय माँ अनुष्ठान सम्पन्न करने के लिये तैयार होती है उस समय से कुछ पहिले पियरी के गीत गाये जाते हैं। ऐसा सभी अवसरों पर होता है। मायके से भाई द्वारा लाई गई पियरी सभी संस्कारों में अनिवार्य रूप से पहनी जाती है।

(२)

अरी-अरी कारी कोइलिया, आँगन मोरे आवौ।
आजु मोर पहिला है काजु, नेवतु दई आवौ॥ १॥
नेउत्यों मैं अरगन-परगन, झारि नेनाउरु।
एक न नेउत्यों बीरन भइया, जिनसे मैं रूठी हौं रे॥ २॥
मइके के लोग सब आवत, ससुरे कुटुम्ब सब।
एकु न आये बीरन भैया, जिनसे मैं रूठ्यउँ रे॥ ३॥
अरी अरी सासु ननदिया, करइहा न चढ़ाओ।
आजु मेरा जियरा बिरोग, बिरन नहिं आये॥ ४॥
अरी अरी देवर जिठनियाँ, रसोइयाँ न चढ़ायो।
आजु मोरा जियरा उदास, बिरन नहिं आये॥ ५॥
अरी अरी नाउनि धेरिया, बोलौवा जनि दीन्ह्यो।
आजु मोरा जियरा बिरोग, बिरन नहिं आये॥ ६॥
अरी अरी लहुरी ननदिया, ऊँचे चढ़ि हेरौ।
आजु मेरा जियरा बिरोग, बिरन नहिं आये॥ ७॥
आगे आगे आवै दौरि चंगेरिया, तो पिअरी गहबरि।
लीले घोड़े भइया असवार, तो डोलिया भौजि आपनि॥ ८॥
भौजी की गोदी भतिजवा, तो जिया कै जुड़ावन।
कहाँ धरौं दौरी चंगेरिया तो पिअरी गहबरि॥ ९॥
कहाँना बैठारौं बिरन भैया, तो कहांना भौजि आपनि।
कहाँ ले बैठों भतिज आपन तो जिया कै जुड़ावन॥ १०॥
मँड़ये धरौं दौरी चगेरिया औ पिअरी गहबरि,
पलँग बैठारौं बिरन भैया, तो ओबरी भौजरानी।
गोदी लै बैठो भतिजवा, तो जिया कै जुड़ावन॥ ११॥
अरी अरी सासु ननदिया, करइहा तुम चढ़ावौ।
आजु मोरा जियरा आनन्द, बिरन भैया आये॥ १२॥
अरी अरी देवर जेठनियाँ, रसोइयाँ तुम चढ़ावौ॥
आजु मोरा जियरा आनन्द, बिरन भैया आये॥ १३॥

अरी अरी नाउनि धेरिया, बोलौवा दई आवौ।
आजु मोरा जियरा आनन्द, बिरन भैया आये ॥ १४ ॥
जिओ जागो बिरन भैया, भौजी सुहागिनि।
जो भयो माया के जाये, अवसरु मेरा आयो है रे ॥ १५ ॥

अरी अरी काली कोयल मेरे आंगन में आओ। आज मेरे यहाँ पहिला शुभ अवसर आया है, निमंत्रण दे आओ ॥ १ ॥

मैंने सब परिजन पुरजन को निमंत्रण दिया है। ननिहाल के सभी लोगों को बुलाया है। केवल भैया को मैंने निमंत्रण नहीं दिया है जिनसे मैं रूठी हूँ ॥ २ ॥

मायके के सब लोग आ रहे हैं, और ससुराल के कुटुम्ब के सभी लोग आ रहे हैं। केवल मेरे भैया नहीं आये जिनसे मैं रूठी हूँ ॥ ३ ॥

अरी अरी सासु और ननद, कड़ाही मत चढ़ाना आज मेरा जी उदास है मेरे भैया नहीं आये ॥ ४ ॥

अरी देवरानी और जेठानी रसोई मत चढ़ाना। आज मेरा जी उदास है मेरे भैया नही आये ॥ ५ ॥

अरी नाईन बुलौवा (निमंत्रण) मत देना। आज मेरा जी उदास है मेरे भैया नहीं आये है ॥ ६ ॥

अरी छोटी ननद ऊपर चढ़ कर देखो आज मेरा जी उदास है मेरे भैया नहीं आये हैं ॥ ७ ॥

आगे-आगे डलियाँ और टोकरियाँ आ रही है और खूब चटक पीले रंग की पियरी। लिल्ली घोड़ी पर सवार भैया और पालकी पर चढ़ कर भौजाई आ रही है ॥ ८ ॥

भौजाई की गोद में भतीजा (उनका पुत्र) है जो चित को प्रसन्न करने वाला है। कहाँ डलियाँ टोकनियाँ रखी जायें और कहाँ पियरी रखी जाये ॥ ९ ॥

कहाँ पर भैया को बैठाएं और कहाँ पर अपनी भौजाई को और कहाँ अपने जी को प्रसन्न करने वाले भतीजे को लेकर बैठूं ॥ १० ॥

मंडप में डलियां टोकरियां रखो और बटक पीले रंग की पियरी भी। पँलग पर भैया को बैठाओ और भीतर कमरे में भोजाई को। और गोदी में जी को प्रसन्न करने वाले भतीजे को लेकर बैठो ॥ ११ ।

अरी सासु और ननद, कड़ाही चढ़ाओ। आज मेरा चित्त प्रसन्न है मेरे भैया आये हैं ॥ १२ ॥

अरी देवर जिठानी, तुम रसोई चढ़ाओ। आज मेरा चित्त प्रसन्न है मेरे भैया आये हैं ॥ १३ ॥

अरी नाइन बुलौवा (निमंत्रण) दे आओ। आज मेरा चित्त प्रसन्न है मेरे भैया आये हैं ॥ १४ ॥

मेरे भैया चिरंजीव हो, भाभी सुहागिन रहें माता के उत्पन्न किये हुए हो, आज मेरा अवसर आया है ॥ १५ ॥

(३)

तुम्हारा तौ माँड़ौ रानी हमें न सुहाय, धना के बीरन नहिं आये।
लाओ न रानी मोरी कलमा दुआइति चिठिया लिखावौं तुम्हारे
बीर का ॥ १ ॥

तुम्हारे देश राजा गंगा बहति हैं हमरे बिरन कैसे आवैं।
घाटन घाटन धना नैया डरैहौं, तुम्हरे बीरन चले आवैं ॥ २ ॥

तुम्हरे देस राजा बनु जो बहुत हैं, हमरे बीरन कैसे आवैं।
मलिया बोलाय रानी बगिया लगवइहौं, धना के बीरन
चले आवैं ॥ ३ ॥

तुम्हरे देस राजा भूख लगति है, हमरे बीरन कैसे आवैं।
बनिया बोलाय रानी हटिया लगइहौं, खात पिअत चले आवैं ॥ ४ ॥

भइया जो आये अपनी बहिनि के, रानी के बिरन चले आवो।
बहिनि ते भइया पूछन लागे, का का चाहिए बहिनी माँड़ये ॥ ५ ॥

सासू कारे भइया लहगा लुगरा ननदी कुसुम रंग चूनरी।
तुम्हरे बहनोइया का पाँचौं कपड़े हमका हरद रंग पिअरी ॥ ६ ॥

जेहि केरे बहिनी इतना न होय, सो कैसे आवै तुम्हरे माँड़ये।
जेहि केरे, भइया मोरे, इतना न होय, हाथ पिअरि कई आवै, हरदी
गाँठ लैके आवै ॥ ७ ॥

कपड़ा खोलि भइया मँड़ये माँ बैठे, मानो बजाज जी के पूत हैं।
मुहरन की थैली लैके भइया जो बैठे, मानो सराफ जी के पूत हैं।
सासू की चोरी ससुर जी की चोरी, खरचा चलावहुँ अपने
बीर का ॥ ८ ॥

"रानी, तुम्हारा मंडप मुझे अच्छा नहीं लगता, तुम्हारे भैया नहीं आये। रानी मेरी कलम दवात लाओ। तुम्हारे भैया को चिट्ठी लिखवा दूं" ॥ १ ॥

"राजा तुम्हारे देश में गंगाजी बहती हैं मेरे भैया कैसे आवें"। "प्रत्येक घाट पर मैं नाव डलवा दूंगा तुम्हारे भैया चले आवें" ॥ २ ॥

"राजा तुम्हारे देश में जंगल बहुत हैं मेरे भैया कैसे आवें।" "रानी माली बुलवा कर बाग लगवा दूंगा तुम्हारे भैया चले आवें" ॥ ३ ॥

"राजा तुम्हारे देश में भूख लगती है मेरे भैया कैसे आवें।" "रानी बनियों को बुलवा बाजार लगवा दूंगा खाते-पीते चले आवे" ॥ ४ ॥

अपनी बहिन के भैया, रानी के भैया आ गये। बहिन से भैया पूछने लगे तुम्हारे मंडप में क्या-क्या चाहिए ॥ ५ ॥

भैया सासु के लिये लहँगा ओढ़नी, ननद के लिये कुसम रंग की चुनरी और तुम्हारे बहनोई के लिये पाँचों कपड़े और मेरे लिये हल्दी के रंग की पियरी ॥ ६ ॥

"और बहिन जिसके इतना न हो वह तुम्हारे मंडप में कैसे आवे ?" भैया मेरे ! जिसके इतना न हो वह केवल हाथ पीले करके चला आवे हल्दी की गाँठ लेकर आये ॥ ७ ॥

कपड़े खोल कर भैया ऐसे बैठे हैं जैसे बजाज के पुत्र हों। मोहरों की थैली लेकर भैया बैठे हैं जैसे सराफ के पुत्र हों।

(गरीब भाई के पास इतना धन था कहाँ कि वह सब कुछ देने योग्य

दे सकता इसलिए) सासु और ससुर से चुरा कर बहिन स्वयं अपने भाई का खर्चा चला रही है ।। ८ ।।

यह गीत भाई और बहिन के प्रेम का एक सुन्दर उदाहरण है । अपने भाई की असमर्थता के कारण बहिन उसका अपयश और अपमान नहीं देख सकती । और अपने पास से भाई को रुपये देकर भाई की कीर्ति को बढ़ाती है । दुनिया तो यह जान जाती है कि बहू के भाई ने खूब उत्साह से अवसर पर रुपया खर्च किया । गीत की अन्तिम पंक्ति सुन्दर सांकेतिक शब्दों में सारी बात धीरे से प्रकट कर देती है । यह इसलिये कि जो प्रथाएं हैं उनकी पूर्ति होनी ही चाहिये । बहिन को पियरी चाहिए, बहनोई को पाँचों कपड़े, सासु को लँहगा लुगड़ा इत्यादि बहू के भाई को देने ही चाहिए ।

भातु

(४)

अब को पहिरावै भात, बिरन बिनु सूनी चौक परी है ।
मेरी सासु के भइया आये, अरु वोऊ न लाये भातु ।। १ ।।
मेरी जेठानी के भइया आये , अरु वोऊ न लाये भातु ।
मेरी दिवरानी के भइया आये, अरु वोऊ न लाये भातु ।। २ ।।
मेरी सखिन के भइया आये, अरु वोऊ न लाये भातु ।
अब मेरे भइया आये, तो उई लै आये भातु,
तो हरी-हरी चौक भई है ।। ३ ।।

अब कौन भात (पियरी) पहिनावे भैया के बिना चौक सूनी पड़ी है । मेरी सासु के भैया आये परन्तु वह भी पियरी नहीं लाये ।। १ ।।

मेरी जिठानी के भाई आए और वह भी पियरो नहीं लाए । मेरी दिव-रानी के भाई आए और वह भी पियरी नहीं लाए ।। २ ।।

मेरी सखियों के भइया आए और वह भी पियरी नहीं लाए । अब मेरे भैया आए तो वह पियरी लेकर आये, मेरी हरी-हरी चौक भर गई ।। ३ ।।

पश्चिमी जिलों के कुछ भागों में पियरी को ही 'भातु' कहते हैं। 'ब्रजलोक साहित्य का अध्ययन' ग्रन्थ में डा० सत्येन्द्र ने भातु के महत्त्व को प्रकट किया है। पश्चिमी प्रदेशों से आनेवाली स्त्रियों ने इस गीत को चलाया होगा।

पेरी

(५)

एक साध जिया उपजी, जो विधि पुरवऊ।
राजा हमरे नैहर लगे जाउ, तौ पिअरी लै आओ ॥ २ ॥

तुम्हारा तो नैहर दूरि बसै, कोसवन को चलै।
रानी वरही माँ पिअरी रँगावौ, चौक लई पहिरऊ ॥ २ ॥

तुम्हरी तो पिअरी नित कैरी, नित उठि पहिरब।
राजा विरना के पेरी सगुन केरी, पहिली चौक केरी ॥ ३ ॥

बरहीं बरस जब बहुरे, मलिनि घर उतरे हैं।
मालिनि केहि घर बजत बधैया, केहि घर सोहर रे ॥ ४ ॥

तुम्हरी बहिनिया के लाला भे हैं, तुम्हरे भइने भे हैं।
राजा उन घर बजत बधैया, उनहि घर सोहर रे ॥ ५ ॥
जौ मैं अस कुछ जनत्यों कि बहिनी के लाला होइहैं,
हमरे भइने होइहैं।
मालिनि बेंचत्यों मैं ढलतलवरिया, पिअरी लई जात्यें ॥ ६ ॥

लहँगा तो लाये अतलस केरा, चुनरी कुसुम केरी।
एहो अँगिया लै आये फुलझारि चौक मेरी भरि गई ॥ ७ ॥

'एक इच्छा मन में पैदा हुई जो ईश्वर पूरी कर दे। राजा! मेरे मायके तक चले जाओ और 'पियरी' ले आओ" ॥ १ ॥

"तुम्हारा मायका तो दूर है कोसों कौन चले। रानी घर ही में 'पियरी' रँगवा दूँगा चौक में लेकर पहिनो" ॥ २ ॥

तुम्हारी 'पियरी' तो हमेशा की है हमेशा ही पहनूँगी। राजा भाई की 'पियरी' सगुन की है पहिली चौक की है ॥ ३ ॥

बारहवें वर्ष जब आये तो मालिन के घर पर डेरा डाला। "मालिन, किसके घर बधाई बज रही है, किसके घर सोहर हो रहे हैं ?" ।। ४ ।।

"तुम्हारी बहिन के पुत्र हुआ है और तुम्हारे भाञ्जा हुआ है, उन्हीं के घर बधाई बज रही है और उन्हीं के यहाँ सोहर हो रहे हैं" ।। ५ ।।

"जो मैं ऐसा जानता कि बहिन के लड़का हुआ है और मेरे भाञ्जा हुआ है तो मालिन मैं अपनी ढाल तलवार बेंच डालता और 'पियरी' लेकर जाता" ।। ६ ।।

लहँगा अतलस का लाये, और कुसुम ऐसी चुनरी फूलों टँकी (चिकन) चोली लेकर पहुँच गये। "मेरी चौक भर गई" ।। ७ ।।

सभी शुभ अवसरों पर भाई को 'पियरी' लानी पड़ती है।

———

सातवाँ प्रकरण

नाखुर

नाखुर को नहछू भी कहते हैं। नाखुर में महावर लगाने के पहिले पैर के नाखून काटे जाते हैं। जनेऊ तथा विवाह में नाखुर की प्रथा का पालन किया जाता है। जनेऊ में जब ब्रह्मचारी को काशी जाने से रोक लिया जाता है तब उसके बाल तथा नाखून काटे जाते हैं और तब स्नान कराकर पैर में महावर लगाया जाता है। और विवाह में मातृ-पूजन के दिन श्रीवर का नाखुर होता है तब महावर लगाया जाता है और इसके बाद विवाह के लिए घर से प्रस्थान किया जाता है। उसी समय नाखुर के गीत गाये जाते हैं। नाखुर कन्याओं का भी होता है परन्तु नाखुर के गीत नहीं गाये जाते।

तुलसीदास ने भी अपनी पुस्तक 'रामलला नहछू' में इसी प्रकार के नाखुर के गीत लिखे हैं जिनमें शृंगार की भावना विशेष है।

नाखुर

(१)

हरे हरे बँसवा कटइहौं, तौ भूरे भूरे रूख।
पनवन माँड़ौ छवइहौं, तम्बोली का पूत॥ १॥

घर घर फिरहि नउनियाँ, तौ गोतिनी बोलावहि।
आज राम जी का नाखुर, सब कोऊ आवौ॥ २॥

तौ कोऊ दीन्ह चुटुक मुँदरिया, कोऊ दीन्ह हारु।
कोऊ दीन्ह रतन पदारथ, तौ भरि गा है थारु।

कैकेयी दीन्ह चुटुक मुँदरिया, सुमित्रा रतन पदारथ।
कौसिल्या देन्हेन्हि कँकना तौ भरि गा है थारु॥ ४॥

मँड़ये माँ झगरै नउनियाँ बहुत कुछु लेबै ।
लेबै कोसिल्या गरे हारु, हारु हम लेबै ॥ ५ ॥

पतरी पतरी अँगुरियाँ, तौ नाउनि गोरि ।
देखि राम जी का बदन, हँसै मुख मोरि ॥ ६ ॥

कौन तपस्या तुम कीन्ह्यो, चरन छुयौ राम के ।
आठ माह, नव कातिक, दस बैसाख ।
बरत रहन एतवार, चरन छुयों राम के ॥ ७ ॥

तुलसीदास प्रभु बोले, वोऊ हँसि बोले ।
चलौ अवधपुर साथ, हुँआ हारु देबै हिया कहाँ पाई ॥ ८ ॥

कुछ स्थानों में निम्नलिखित पंक्तियाँ गाई जाती हैं :

*मँडये माँ झगरै नउनियाँ नाखुर नहि काटै ।
लेहौं अयोध्या जी कै राज्य, रामजी का नाखुर ॥ ५ ॥

द्वारे ते आये राजा दसरथ, नाउनि हँसि बोली ।
राजा लेहौं अयोध्या कै राज्य, तबहीं नाखुर देहौं ॥ ६ ॥

हँसि कै बोले राजा दसरथ, सुनहु मोरी नाउनि ।
देबै अयोध्या जो कै राज्य, रामजी के निछावर ॥ ७ ॥

हरे-हरे बाँस कटवाऊँगा और सूखे वृक्ष और तम्बोली के पुत्र के द्वारा पानों से मडप छवाऊँगा ॥ १ ॥

नाउन घर-घर घूम रही है और गोत्रवालों को बुला रही है। 'आज रामजी का नाखुर है सब लोग आओ' ॥ २ ॥

किसी ने चुटुक और अंगूठी दी, किसी ने हार दिया। तो किसी ने रत्न-पदार्थ दिये कि थाल भर गया ॥ ३ ॥

केकई ने चुटुक और अँगूठो दी और सुमित्रा ने रत्न-पदार्थ दिये। कौशल्या ने कंगन दिया है कि थाल भर गया है ॥ ४ ॥

मंडप में नाउनि झगड़ रही है कि बहुत कुछ लूँगी। मैं कौशल्या के गले का हार लूँगी ॥ ५ ॥

नाउन की पतली-पतली अंगुलियाँ हैं और वह स्वयं गोरी है। रामजी के मुख को देख कर मुँह घुमा कर हँस रही है।। ६ ।।

तुमने कौन सी तपस्या की थी जो राम के चरण छुये ? आठ महीने और नवाँ कार्तिक और दसवाँ वैसाख— मैंने रविवार का व्रत किया था जिससे राम के चरण छुये ।। ७ ।।

तुलसीदास प्रभु कहते हैं कि वह भी हँस कर बोले कि अवधपुर साथ चलेंगे वहीं हार देंगे यहाँ हार कहाँ रखा है ।। ८ ।।

शायद रामजी का नाखुर जनकपुरी में हुआ था ।

* मंडप में नाउन झगड़ती है नाखुर नहीं काटती है। वह कहती है कि रामजी के नाखुर में अयोध्या का राज्य लूंगी ।। ५ ।।

बाहर से राजा दशरथ आये । नाउन हंस कर बोली—'राजा अयोध्या का राज्य लंगी तभी नाखुर करूंगी' ।। ६ ।।

राजा दशरथ हँस कर बोले, नाउन मेरी बात सुनो। मैं रामजी की निछावर में अयोध्या का राज्य दूंगा ।। ७ ।।

इस गीत के दो रूप मैंने सुने हैं अतएव दोनों पाठ मैंने प्रस्तुत कर दिये हैं ।

(२)

आदि सारदा गणपति चरण मनाइये ।
रामचन्द्र केरा नाखुर गाइ सुनाइये ।। १ ।।

रामचन्द्र उर नायक सिरोमणि भाखिये ।
कीन्ह कपिल बहु भाँति, सुनत मन लाइये ।। २ ।।

कोटिक बाजन बजाइ दसरथ गेह ।
देवलोक मुनि धरि नर देह ।। ३ ।।

हरे बाँस केरा मँड़वा, पनिगर छाइये ।
मोतिन झालरि लागि, चहुँ दिसा फूलिये ।। ४ ।।

मानिक दीपक जगामग, बरत कलस पर ।
मनमुक्ता मनहीरा, चऊक पुराइये ।। ५ ।।

कंचन कलस धराई नव दीपक बारिये ।
कटकइ चीरु नउनियाँ, नव छाता तानिये ।। ६ ।।

चन्द बदन मृगलोचिनी, सबै रस खानिये।
झाँवा परस पथरिया, प्रभु पद माँजिये ॥ ७ ॥
देखु नउनिया का रूप महलु कहुँ लागिये।
कनक चुनी मों लसत नहन्नोहों माँ नह ॥ ८ ॥
काटति मुसक्याति महाउर देति में नह पर।
लसत महाउर बरनि न जाइये ॥ ९ ॥
पदुम रंग मन मानिक साँवल गात है।
साँवले बदन लोहरवा दोऊ कर जोरिये ॥ १० ॥
केसर परिमल लाग सुगन्धन बोरिये।
माली बदन सोमाली कोमल गात है।
कनक रतन सिर मौर लिये कर हाथ में ॥ ११ ॥
सुभ्र बरण तम्बोली बीरा हाथ में।
जाकी ओर बिलोकत मन हरि लेत हैं ॥ १२ ॥
मोची बदन सँकोची हीरा हाथ में रामचन्द्र केरी।
जूती सबद नल लागिये ॥ १३ ॥
होय लाग निछाउरि गोतिनि कड़ाकई।
बरसई सवा केरे बूँद स्याम घन गरजई ॥ १४ ॥
कोऊ दीन्हा चुटुक मुंदरिया, कोउ दीन्हा रूपेरे।
कोऊ दीन्हा रतन पदारथ, भरिगे हैं सूप ॥ १५ ॥
आहरिन हाथ दहेंड़ी तो सगुन देखाइये।
उमगत जोवन जात, नृपति मन मोहै ॥ १६ ॥
काहे रामचन्द्र साँवरि लछिमन गोरे हैं।
न जानौं रानी कौसिल्या पड़ी मृख भूलि से ॥ १७ ॥
कौसिल्या की जेठी किन औसान किया।
कैकयी, सुमित्रा तिनिउपुर, काम से मँड़ये माँ झगड़ै नउनिया ॥ १८ ॥
यह सब थोड़ा है रामचन्द्र न्योछावर माँ लेहौं मैं छोड़िये
नाखुर ॥ १९ ॥
नाखुर करो नऊनियाँ घूँघट पट खोलि कै।
राम ब्याहि घर अइहैं, देहौं मैं घोड़िये ॥ २० ॥
जो यह मंगल गावहिं गाय सुनाव।
तरि बैकुंठे जायँ, सुनैया फलु पावै ॥ २१ ॥

आदि सरस्वती गणपति के चरण मनाते हैं। रामचन्द्र का नाखुर गा कर सुनाते हैं ।। १ ।।

हृदय में बसने वाले रामचन्द्र शिरोमणि हैं। कपिल ने अनेक प्रकार से वर्णन किया है, सुनने में मन लगता है ।। २ ।।

दशरथ के घर कोटियों बाजे बजते हैं। देवता लोग तथा अनेक मुनियों ने नर रूप धारण किया है (यह दृश्य देखने के लिए) ।। ३ ।।

हरे बाँस का मंडप पानों से छाया हुआ है। मोतियों की झालर लगी हुई है और चारों तरफ फूल लगे हुए हैं ।। ४ ।।

माणिक का दीपक कलश पर जगमग हो रहा है। चौक मुक्तामणि और हीरामणि से पूरी गई है ।। ५ ।।

सोने का कलश रखवा कर उस पर दिया जलाया गया है। उस पर नाइन चीरा अपने लिये लेकर तब छाता तानती है ।। ६ ।।

चन्द्रबदन मृगलोचनी सभी रस की खान है। पारस पत्थर का झाँवा लेकर रामचन्द्र के पैर माँजे जाते हैं ।। ७ ।।

नाइन का रूप देख कर मैल आ जाता है। नहन्नी में भी नाखून सोने के टुकड़ों की भाँति मालूम देते हैं ।। ८ ।।

नाउन काटती जाती है और मुस्कराती जाती है तथा नखों में महाउर लगाती जाती है। महाउर इतना अच्छा लगता है जिसका बर्णन नही किया जा सकता है ।। ९ ।।

कमल के समान रंग, मोती ऐसा मन और सांवला शरीर है। और सांवले रंग का लोहार हाथ जोड़ता है ।। १० ।।

केशर की परिमल लगी हुई है और सुगन्ध में डूबा हुआ है; माली का शरीर सुकोमल है। वह हाथ में सोने का रत्नों से जड़ित मौर लिये खड़ा है ।। ११ ।।

गोरे रंग का तम्बोली हाथ में बीड़ा लिये खड़ा है, बीड़ा खाकर जिसकी ओर देखते हैं मन हर लेते हैं ।। १२ ।।

मोची सकुचाते हुए हाथ में रामचंद्र के लिए हीरा जटित जूता लिये खड़ा है ।। १३ ।।

जोरों के साथ गोत्रियों की निवछावर हो रही है। काले बादल गरज कर मघा की सी बड़ी-बड़ी बूँदों से बरस रहे हैं ।। १४ ।।

किसी ने चुटुक मुँदरिया दी और किसी ने चाँदी दी। किसी ने रत्नों के पदार्थ दिये हैं कि सूप भर गये हैं ।। १५ ।।

अहिरिन हाथ में दही की दहेंड़ी लिये खड़ी सगुन दिखा रही है। उठता हुआ यौवन राजा के मन को मोहित करता है ।। १६ ।।

रामचन्द्र साँवले और लक्ष्मण गोरे क्यों हैं? यह तो रानी कौशल्या ही जाने। भूल से वृष पड़ गया है ।। १७ ।।

कौशल्या की जेठी ने कौन सा अहसान किया। कैकेयी, सुमित्रा अपने अन्तःपुरी में हैं और मण्डप में नाइन झगड़ा कर रही है ।। १८ ।।

रामचन्द्र! "यह सब थोड़ा है मैं निछावर नहीं लूँगी; मैं नाखुर छोड़ती हूँ" ।। १९ ।।

नाइन घूँघट खोल कर नाखुर करो। जब राम बिवाह कर घर आयेंगे तो मैं घोड़ी दूँगी ।। २० ।।

जो यह मङ्गल गाये और गाकर सुनावे वह तर कर बैकुण्ठ जायेगा, और सुनने वाला फल पायेगा ।। २१ ।।

साँझ मनाना

प्रत्येक उत्सव में सांझ मनाई जाती है। जब सभी गीत समाप्त हो जाते हैं तब अन्त में यह गीत गाकर संध्या का आह्वान किया जाता है।

साँझ मनाना

(१)

साँझ कहै हम वोहि घर जाओं, जो हमें माँझि मनावन जाय।
दूधु कहै हम वोहि घर जाओं, जो हमें छानि चढ़ावन जाय।
पूतु कहै हम वोहि घर जाओं, जो हमें लालु बुलावन जाय।
*हाथ गेड़ुआ कुसन केरी डाभ, साँझ मनावै बाबा उनके जायँ।
*हाथ सेंधौरा मोतिन भरि माँग, साँझ मनावै आजी उनकी जायँ।
साँझ गोसाँइन देओ असीस, बाढ़ै श्रीबर लाख बरीस।

सांझ (शाम) कहती है कि मैं उसके घर जाऊँगी जो हमें मनाने आयेगा।

दूध कहता है कि मैं उसके घर जाऊँगा जहाँ हमें छान कर चढ़ाया जायेगा।

पुत्र कहता है कि मैं उस घर जाऊँगा जहाँ हमें लालु बुलाने जायेगा।

हाथ में गेड़ुआ और हरे कुश लेकर उनके बाबा सांझ मनाने जाते हैं।

हाथ में सेंधौरा (सिन्दूर रखने वाला लकड़ी का बर्तन) और मोतियों से माँग भर कर उनकी आजी साँझ मनाने जाती हैं।

साँझ गोसाँइन आशीष देओ, कि श्रीवर लाख वर्ष के हों।

इस गीत को जिस राग से गाया जाता है वास्तव में वह इतना मादक है कि मालूम देता है कि साँझ झमती-झामती झुकती चली आ रही है। अवसरों के पूर्व और पश्चात् जब तक प्रतिदिन शाम को गीत गाये जाते हैं तब तक सबसे अन्त में यही गीत गाया जाता है।

*बाबा-आजी के स्थान पर काका-काकी, चाचा-चाची आदि के नाम से यही गीत काफी देर तक गाया जाता है।

आठवाँ प्रकरण

विवाह (अ)

"वेदानधीत्य वेदौ वा वेदं वापि यथाक्रमम् ।
अविप्लुतब्रह्मचर्यो गृहस्थाश्रममाविशेत ॥"
मनु० [३ । २]

अर्थात्—'यथाक्रम वेदों अथवा वेद को साङ्गोपाङ्ग पढ़कर जिसका ब्रह्मचर्य न खण्डित हुआ हो, वह गृहस्थाश्रम में प्रवेश करे।' मनुस्मृति के अनुसार विवाह का अधिकार उसी व्यक्ति को है जो यथाविधि आचार्यानुकूल ब्रह्मचर्य का पालन कर चुका है। इस सम्बन्ध में ऋग्वेद का एक मंत्र बहुत समीचीन है :—

"युवा सुवासाः परिवीत आगात्स उ श्रेयान्भवति जायमानः ।
तं धीरासः कवय उन्नयन्ति स्वाध्यो मनसा देवयन्तः ॥"
ऋग्वेद [मं० ३ । सू० ८ । मं० ४]

अर्थात्—'जो पुरुष यज्ञोपवीत एवं ब्रह्मचर्य एवं उत्तम विद्या से युक्त, सुन्दर वस्त्र धारण किये हुए, पूर्ण युवा होकर गृहस्थाश्रम में आता है वही अतिशय शोभा युक्त मंगलकारी होता है। स्वाध्याय विद्या-वृद्धि की कामना युक्त, धैर्य-युक्त विद्वान् लोग उसी पुरुष को उन्नतिशील करके प्रतिष्ठित करते हैं। उत्तम शिक्षा के बिना तथा बाल्यावस्था में विवाह करने से स्त्री-पुरुष अपने को नष्ट-भ्रष्ट करते हैं।'

इसका भी आशय यही है कि ब्रह्मचर्य व्रत के विधिवत् पालन तथा स्वाध्याय के उपरान्त ही किसी पुरुष को विवाह की आज्ञा है। मनुस्मृति के निम्नलिखित श्लोक के अनुसार गुरु की आज्ञा के अनुसार ही विवाह होना चाहिए। यथा:—

"गुरुणानुमतः स्नात्वा समावृत्तो यथाविधि ।
उद्वहेत द्विजो भार्यां सवर्णां लक्षणान्विताम् ॥"

अर्थात्—'गुरु की आज्ञा ले स्नान कर गुरुकुल से अनुक्रमपूर्वक आकर ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य अपने वर्णानुकूल सुन्दर लक्षण-युक्त कन्या से विवाह करें।

कन्या के सम्बन्ध में भी मनुस्मृति में विवाह के समय का उल्लेख है :—

"त्रीणि वर्षाण्युदीक्षेत कुमार्यृतुमती सती।
ऊर्ध्वं तु कालादेतस्माद्विन्देत सदृशं पतिम॥"

मनु० [९ । ९०]

अर्थात्—'कन्यायें रजस्वला होने के तीन वर्ष के बाद अपने तुल्य पति को प्राप्त करें।' आशय यह है कि कन्या के रजस्वला होने के तीन वर्ष के बाद विवाह करना चाहिए परन्तु इसके पूर्व नहीं। इस प्रकार कन्या लगभग १६ वर्ष की अवस्था में विवाह योग्य होती है। इसके पूर्व विवाह करने से संतति में अनेक प्रकार की शारीरिक एवं मानसिक विकृतियाँ हो जाती हैं। जिस प्रकार २५ वर्ष तक ब्रह्मचर्य पालन के उपरान्त ही पुरुष विवाह के योग्य होता है उसी प्रकार कन्या भी १६ वर्ष के पूर्व विवाह योग्य नहीं होती। मुनिवर धन्वन्तरि जी अपनी सुश्रुत में उचित आयु से कम स्त्री-पुरुष को गर्भाधान के लिए निषेध करते हुए लिखते हैं :—

"ऊन षोडशवर्षायाम् प्राप्तः पंञ्चविंशतिम्।
यद्याधत्त पुमान् गर्भं कुक्षिस्थः स विपद्यते॥
जातो वा न चिरञ्जीवेज्जीवेद्वा दुर्बलेन्द्रियः।
तस्मादत्यन्त बालायां गर्भाधानं न कारयेत॥"

अर्थात्—'सोलह वर्ष से कम आयु वाली कन्या और पच्चीस वर्ष से कम आयु वाला पुरुष जो गर्भाधान करे तो वह कुक्षिस्थ होता है अर्थात् पूर्णकाल के पूर्व ही जन्म ग्रहण कर लेता है। और उत्पन्न होगा तो चिरकाल जीवित नहीं रहेगा—जीवित रहेगा तो दुर्बलेन्द्रिय रहेगा अतएव बाल्यावस्था वाली स्त्री में गर्भ-स्थापन न करे।'

इतने विधि निषेधों के होते हुए भी हमारे समाज में बाल-विवाह की कुप्रथा प्रचलित हो गई। और बारह वर्ष का 'दुलरुआ' आदर्श वर बन गया। इसके कुपरिणामों के वर्णन की आवश्यकता नहीं। हमारे समाज से ब्रह्मचर्य आश्रम का लोप ही हो गया है। यही कारण है कि आज यहाँ प्राचीनकाल की भाँति अनेक प्रतिभा-सम्पन्न महापुरुष जन्म नहीं लेते और बाल-मृत्यु का प्रतिशत बढ़ता जाता है।

बाल-विवाह के अतिरिक्त हमारी दूसरी समस्या है असमान आयु वालों का विवाह। प्रायः ऐसा देखा जाता है कि पुरुष की आयु चालीस-पैंतालिस से अधिक है परन्तु कन्या चौदह या सोलह वर्ष की ही है। हमारे यहाँ सौभाग्य से इसके विपरीत अधिक आयु वाली स्त्रियों का कम आयु वाले पुरुषों से विवाह नहीं होता। यह समस्या पुरुष की प्रथम स्त्री के निधन के कारण उत्पन्न हो जाती है। इस प्रकार विधुर की आयु कुछ भी हो परन्तु वह विवाह के योग्य है। दहेज की प्रथा के कारण अनेक लोग योग्य वर न पाकर इसी प्रकार के विधुरों से अपनी कन्या का विवाह कर देते हैं जिनकी आयु में बहुत अन्तर होता है। आर्य-समाज के प्रयत्नों के बावजूद विधवा-विवाह प्रचलित न हो सका। विधुरों का पुनर्विवाह विधवाओं के साथ ही होना चाहिए। इस प्रकार असमान विवाह की समस्या समाप्त हो जायेगी और गरीब कन्याओं का कुछ कल्याण होगा।

विवाह सम्बन्धी तीसरी कठिन समस्या है दहेज। दहेज-प्रथा की चक्की में हमारा समाज पिसा जा रहा है। इसी दहेज-प्रथा के कारण ही हमारे समाज में कन्या का अनादर होता है। इनके पैदा होते ही घर में उदासी छा जाती है जैसे कोई बड़ी भारी दुर्घटना हो गई हो। सोहर गाने के लिए आई हुई स्त्रियाँ चुपचाप उठकर चली जाती हैं। फूल की थाली और ढोलक पर एक भी चोट नहीं पड़ती जैसे लड़की होने पर प्रसूता को मनोरंजन की आवश्यकता ही नहीं। सास का मुँह फूल जाता है और मौके-कुमौके पुत्री-प्रसूता को व्यंगबाण सहने पड़ते हैं। बड़े होने पर न तो लड़की की शिक्षा-दीक्षा की ओर ध्यान दिया जाता है और न स्वास्थ्य की ओर ही। लड़की के बीमार पड़ने पर उसकी सेवा और रक्षा भगवान ही करता है। मैंने तो यहाँ तक लोगों को कहते सुना है "लड़की है; मरेगी नहीं।" कन्या के प्रति यह लापरवाही और तिरस्कारपूर्ण प्रवृत्ति बहुत ही घातक है। यह घातक मनोवृत्ति केवल विवाह में दहेज देने की प्रथा के कारण है; नहीं तो किसे अपनी पुत्री प्यारी नहीं है। दहेज की प्रथा और भी कड़ी होती जा रही है; और वर का मूल्य इस दूसरे युद्ध के बाद बहुत बढ़ गया है और बढ़ता ही जा रहा है। यदि कोई अपनी लड़की को पढ़ावे भी तो उसके लिये शिक्षित वर भी चाहिए, और शिक्षित वर का मूल्य बहुत ही ज्यादा होता है।

दहेज की प्रथा की कठोरता का एक कारण यह भी है कि लड़की वाले कुलीन घर में ही विवाह करना चाहते हैं। और तथाकथित कुलीन अशिक्षित

श्रौर गरीब होने पर भी अपनी कुलीनता को मँहगे दामों में बेचते हैं। कुलीनता के सम्बन्ध में ऊपरी कट्टरता तो बहुत कम हो गई है परन्तु विवाह के समय वह ब्याज सहित सामने आती है। कुलीनता के कारण वरक्षेत्र और भी संकुचित हो जाता है। अतएव यदि इस दहेज प्रथा से छुटकारा पाना है तो कुलीन-अकुलीन पर ध्यान न देकर विवाह प्रारम्भ कर दिया जाये तो झूठमूठ की कुलीनता के आधार पर दहेज लेने वाले घट जायेंगे। इस समस्या का सबसे आसान हल है कि नवयुवक और नवयुवतियाँ कुछ त्याग करें और दहेज वाले विवाह से इन्कार कर दें। यह कार्य नवयुवक, युवतियों की अपेक्षा, अधिक सरलता से कर सकते हैं। परन्तु दुख तो यह है कि नवयुवक भी प्राय: दहेज के मामले में अपने पिता के समकक्ष होते हैं। जिस देश के नवयुवकों में इतना लोभ और नैतिक पराभव है उस समाज का कल्याण ईश्वर ही कर सकता है। अनेक गीत ऐसे दिए गए हैं जिनमें दहेज और विवाह की कठिनाइयों के विस्तृत वर्णन प्राप्त होते हैं।

विवाह सम्बन्धी चौथी समस्या है वैभव प्रदर्शन के लिए बड़ी-बड़ी बारातों का ले जाना और चार-चार दिन तक लड़की वालों की छाती छरना। लड़की वालों की प्रार्थना के बावजूद हाथी, घोड़े-गाड़ियाँ और सैकड़ों आदमी लेकर वर-पक्ष वाले पहुँच जाते हैं और माँगों और हुक्मों का ताँता बाँध देते हैं। बेचारा लड़की वाला अपने को लड़की का पिता होने पर कोसता हुआ अपने दुर्भाग्य को रोता है। 'रेशन' के जमाने में कुछ तो सीमा बंधी थी परन्तु अब फिर वही विस्तार दिखाई देता है। विवाह के इस ढंग में परिवर्तन की नितान्त आवश्यकता है।

और सबसे दुखदाई बात तो हमारे समाज की यह है कि पुरुष अपनी स्त्री को प्राणी नहीं, मिल्कियत (Property) समझता है। और सासु का बहू के प्रति दुर्व्यवहार नवागता को नरक का जीवन व्यतीत करने पर विवश कर देता है। इस प्रकार बेचारी स्त्री को जीवन-पर्यन्त अभावमय और संकटपूर्ण समय व्यतीत करना पड़ता है। शास्त्रों और धर्म की दुहाई देने वाले हिन्दू इस प्रकार न जाने कितना अहिन्दू कार्य कर रहे हैं कि समाज, जो व्यक्ति की उन्नति तथा विकास का साधन था, रसातल की ओर जा रहा है। मनु के आधार पर स्त्री पर अत्याचार करने वाले पुरुष और मनु को गालियाँ देने वाली स्त्रियों को मनु महाराज के निम्नलिखित श्लोकों को देखना चाहिये :—

"यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता:।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राऽफला: क्रिया:॥

शोचन्ति जामयो यत्र विनश्यत्याशु तत्कुलम् ।
न शोचन्ति तु यत्रैता वर्द्धते तद्धि सर्वदा ॥" – मनु-स्मृति

अर्थात्—'जिस घर में स्त्रियों का सत्कार होता है वहाँ देवता निवास करते हैं। जहाँ स्त्रियों का सत्कार नहीं होता उस घर में सब क्रियाएँ निष्फल हो जाती हैं। जिस घर में स्त्रियाँ शोकातुर होकर दुख पाती हैं वह कुल नष्ट-भ्रष्ट हो जाता है। और जिस घर में स्त्रियाँ आनन्द, प्रसन्नता कौर उत्साह से भरी रहतो हैं वह कुल सर्वदा बढ़ता रहता है।'

विवाह हिन्दुओं में एक धार्मिक कृत्य है। पुरुष अपने पितृ-ऋण से उऋण होने के लिए विवाह करके सन्तानोत्पत्ति करता है। प्रत्येक सवर्ण मनुष्य पर तीन ऋण होते हैं। उनमें से एक पितृ-ऋण होता है, जिससे उद्धार केवल सन्तानोत्पत्ति से होता है। अतएव प्रत्येक सवर्ण हिन्दू ब्रह्मचर्य धारण करके, ऋषियों के ग्रन्थों का स्वाध्याय करके ऋषि ऋण से मुक्त होता है और यज्ञ करके देव-ऋण से तथा अनुकूल वर्ण तथा गुण वाली स्त्री से विवाह करके सन्तानोत्पत्ति करके पितृ-ऋण से उऋण होता है। इन तीनों ऋणों से उऋण होने पर व्यक्ति संन्यास ग्रहण करता है जो कि जीवन का तीसरा आश्रम है। और तीनों ऋणों के भार से मुक्त हो जाने के कारण संन्यासी यज्ञोपवीत का त्याग कर देता है क्योंकि यज्ञोपवीत तीनों ऋणों की याद दिलाने के लिए पहिना जाता है। विवाह का उद्देश्य धार्मिक है वह सामाजिक ठेका नहीं है।

एक बार एक केथोलिक पादरी ने हिन्दूविवाह-पद्धति पर आश्चर्य प्रकट करते हुए मुझसे पूछा था—

"आप के यहाँ विवाह के पूर्व 'Courtship' नहीं होता ?" मैंने कहा, "होता है परन्तु विवाह के पश्चात, पूर्व नहीं।"

तात्पर्य यह कि विवाह के पूर्व स्त्री को अपने प्रति अनुरक्त करने की पद्धति हमारे यहाँ नहीं है। हमारे यहाँ विवाह धर्म के लिए होता है। विवाह का उद्देश्य केवल उस स्त्री-पुरुष का सम्बन्ध हो जाना ही अलम नही है, इस संबंध का भी निश्चित उद्देश्य है। अतएव उस उच्च धार्मिक उद्देश्य की पूर्ति के लिए विवाह होता है, रूप और ऐश्वर्य के लिए नहीं। विवाह करके पति-पत्नी अपने धार्मिक उद्देश्य की पूर्ति में रत होकर जीवन में परमानन्द प्राप्त करते हैं।

मनुस्मृति में आठ प्रकार के विवाहों की चर्चा है :—

"ब्राह्मो दैवस्तथैवार्ष प्राजापत्यस्तथाऽसुरः।
गान्धर्वो राक्षसश्चैव पैशाचश्चाष्टमोऽधमः ॥ मनु-स्मृति

अर्थात्—'विवाह आठ प्रकार के होते हैं, पहिला ब्राह्म, दूसरा दैव, तीसरा आर्ष, चौथा प्राजापत्य, पाँचवाँ आसुर, छठा गान्धर्व, सातवाँ राक्षस और आठवाँ पैशाच।

आजकल के हमारे विवाह का रूप मिश्रित है। वर्तमान विवाह-पद्धति में ब्राह्म, दैव और प्राजापत्य तीनों प्रकार के विवाहों के लक्षण प्राप्त हैं।

ब्राह्म—वर-कन्या दोनों यथावत् ब्रह्मचर्य से पूर्ण हों, विद्वान धार्मिक एवं सुशील हों, उनका प्रसन्नता के साथ विवाह करना ब्राह्म विवाह है।

दैव—विस्तृत यज्ञ में ऋत्विक कर्म करते हुए जामाता को अलंकार-युक्त कन्या का देना ैव विवाह है।

प्राजापत्य—दोनों का विवाह धर्म की वृद्धि अर्थात् प्रजा-वृद्धि के लिए होता है उसे प्राजापत्य विवाह कहते हैं।

इन्हीं तीनों का मिश्रण ही वर्तमान विवाह है।

आजकल विवाह ने बहुत विस्तृत रूप धारण कर लिया है। विवाह में प्रति दिन आडम्बर बढ़ते ही जाते हैं। जो गीत प्रस्तुत किये गये हैं उनमें प्राप्त संकेतों से विवाह सम्बन्धी अनेक आवश्यक-अनावश्यक विस्तारों की कल्पना की जा सकती है। संक्षेप में विवाह की रूप-रेखा इस प्रकार प्रस्तुत की जा सकती है—

प्रथम कन्या का पिता या अन्य अभिभावक कन्या के लिए वर खोजने निकलता है। पहिले नाई, बारी और ब्राह्मण ही वर-देखी के लिए जाते थे और वे ही विवाह पक्का कर आते थे। परन्तु अब घर के ही योग्य जानकार व्यक्ति इस विशेष उत्तरदायित्वपूर्ण कार्य को सम्पादित करते हैं। वर-निरीक्षण के उपरान्त दोनों पक्षों के सहमत होने पर वर के हाथ में वरीक्षा का एक रुपया रख दिया जाता है; कहीं पर अधिक भी। यह तो सर्वविदित ही है कि विवाह का प्रत्येक कार्य ज्योतिषी के कथनानुसार ही होता है।

विवाह निश्चित हो जाने के बाद शुभ दिन और शुभ समय में कन्या-पक्ष वाला वर-पक्ष को तिलक भेजता है। उस तिलक में रुपये, मिठाइयाँ,

सुपारी, नारियल, हल्दी आदि सामान भेजा जाता है। इसको फलदान भी कहते हैं। फलदान के साथ एक कागज में विवाह की लग्न भी भेजी जाती है। इसी लग्न में विवाह की तिथि तथा समय लिखा रहता है उसी के अनुसार विवाह के अन्य कृत्य प्रारम्भ हो जाते हैं। दोनों पक्षों में सभी कार्य एक साथ ही होते हैं।

तिलक के बाद स्तम्भ-स्थापन होता है। उस दिन से वर तथा कन्या की लग्न लग जाती है। अनेक विधि-निषेध दोनों पर लागू हो जाते हैं। इसी स्तम्भ-रोपण के दिन से कुटाई-पिमाई आदि कार्य प्रारम्भ हो जाते हैं। कन्या-पक्ष में कन्या-पक्ष के शीर्षक से दिये गीत गाये जाते हैं। इन गीतों के गाने के साथ किसी प्रकार के बाजे नहीं बजते—ढोलक और मंजीरें भी नहीं। स्त्रियाँ काम करती जाती हैं, गाती जाती हैं। गीत गाते समय स्त्रियों के कण्ठ अवरुद्ध होने लगते हैं, आँसू बहने लगते हैं। गाना रुक जाता है सिसकियाँ बँध जाती हैं; और किसी कोने में बैठी अकिंचन कन्या फूट-फूट कर रो उठती है। ये विवाह के गीत प्रतिदिन संध्या के समय गाये जाते हैं। इसके बाद विवाह का दिन आता है। माता अपनी पुत्री को लेकर घर-घर सोहागिनें न्योतने जाती है। उस समय सोहाग के गीत गाये जाते हैं। स्त्रियों के उमड़ते हुए जुलूस की भाँति सोहाग उमड़ चलता है और धूरिया (सूखा) सेन्दुर सुहागिनों की माँगों से कन्या के माथे पर चढ़ने लगता है। वह भी आज सुहागिन बनने जा रही है।

उधर वर-पक्ष में एक उत्साह की आँधी सी चलती रहती है। वातावरण में प्रसन्नता मचलती रहती है। बराती नये-नये कपड़े सिलवाते हैं; हाथी-घोड़ों का प्रबन्ध करते हैं; रथ-बहलें सजाई जाती हैं। बैलों को चार दिन पहिले से बिठाकर दुगुना दाना खिलाया जाता है। बाजे बजते हैं, नाच-नौटंकी का प्रबन्ध किया जाता है और पालकी में श्रीवर बैठ कर व हाथियों, घोड़ों, रथों, बहलों के लम्बे जुलूस के साथ आगे-आगे कन्या के घर की ओर अभियान करता है।

बारात कन्या के घर के समीप पहुँचती है। कन्या-पक्ष के सब लोग उसका स्वागत करते हैं और तब बारात कन्या के दरवाजे पर आती है। कन्या का पिता श्रीवर की पूजा करता है और तब बारात जनवासे में टिका दी जाती है। अब पहले बारात जनवासे में टिका दी जाती है।

तब वर का दुर्गा जनेऊ होता है अर्थात् कन्या जो दुर्गा है, शक्ति है उसके कर्तव्यों का भार भी वर ग्रहण करता है। तत्पश्चात् चढ़ाव भेजा जाता है। और वर कन्या के घर में मण्डप के नीचे जाकर विवाह की प्रथा पूरी करता है। उस समय यज्ञ होता है और मप्तपदी होती है। सप्तपदी को भाँवर भी कहते है।

इसके पूर्व कन्या आमंत्रित सुहागिनों से मंडप के नीचे सुहाग प्राप्त करती है। इस समय सोहाग के गीत गाये जाते हैं। भांवरों के पडने के समय "लाई डारौ भैया लाई डारौ" वाला गीत गाया जाता है। जितनी भाँवरें पड़ती जाती हे उसी गणना के अनुसार गीत भी चलता है। इस समय वातावरण में इतना अवरोध होता है कि मालूम देता है कि रात्रि का शान्त वायुमण्डल तन कर टूट जायेगा। सातवीं भांवर के पड़तें गाने वालियों के गले घसक जाते हैं और फुसकने की ध्वनि सुनाई देने लगती है। इम समय भी गीतों के साथ ढोलक नहीं बजती। कभी-कभी सोते से जाग कर वर-पक्ष के बाजे वाले हाहाकार बैण्ड बजाकर गम्भीर मौन भंग कर देते हैं।

भाँवर के बाद श्रीवर तथा कन्या को कोहबर ले जाया जाता है जिसे ज्यूति भी कहते हैं। वहाँ पर कन्या की सखियाँ तथा भावज श्रीवर से अनेक प्रकार के हास्य-विनोद करती हे। यहीं पर बत्ती (ज्योति) मिलाई जाती है, जूता देवी की पूजा श्रीवर से करवाई जाती है, और पाँसा (जुआ)—जीवन का पाँसा खिलाया जाता है।

तीन रोज तक अनेक प्रकार की दावनें चलती रहती हें। लड़के को 'कलेवा' पर बुलाया जाता है। उस समय खूब हासपरिहास के गीत गाये जाते हैं। इतने दिनों के बाद लड़की के यहाँ ढोलक बजती है, स्त्रियों के मुखों पर हँसी झलकती है वातावरण में विनोद लहरें मारने लगता है।

चौथे रोज चतुर्थी होती है जिस दिन कन्या तथा श्रीवर एक दूसरे के कंगन छोरते हे, जीवन का जुआ खेलकर एक दूसरे पर अपने अधिकार की भविष्य-वाणी प्राप्त करते हैं। फिर बर्तानी होती है जिसमें सभी बर्तारातियों को तिलक लगा कर और पैर पूज कर कुछ द्रव्य दिया जाता है, और बारात विदा होती है। कन्या क्यों विदा होतो है मानो घर की श्री विदा होती है। चारों ओर रुदन और सिसकियाँ, सिसकियाँ और रुदन ही सुनाई देता है। अनेक स्थानों पर विदा के करुण गीत गाये जाते हैं। परन्तु गीत गाने का होश कितनों को रहता है!

ग्रौर बारात विजेताओं की भाँति वापस लौटती है ।

आगे विवाह प्रकरण के अन्तर्गत अनेक प्रकार के गीत दिये गये हैं। उन्हीं गीतों के साथ आवश्यक टिप्पणियाँ जोड़ दी गई हैं। गीतों की संख्या अनन्त हैं। मैंने कुछ गीत उदाहरण के लिए रख दिये हैं।

जिस समय बारात कन्या के पिता के यहाँ दावतें खाती होती है उस समय वर-पक्ष में विशेष रूप से रात्रि में खूब गाना-बजाना होता है जिसे नकटौरा या खोइया भी कहते हैं। बारात के आने पर बहू की परछन होती है। वर-बधू गाँठ बाँध कर देवीपूजन करते हैं और अपने पुरखाओं के घर पूजते हैं तब अपने घर में प्रवेश करते हैं।

विवाह के बाद वर की माँ या भाभी आदि खुशी में घोड़ी बनरे के गीत करवाती हैं।

गीतों में अनेक प्रकार के भावों को व्यक्त किया गया है जिनका आनन्द गीतों के पाठ से ही मिल सकेगा।

विवाह (ब)

वर तथा कन्या दोनों के तेल चढ़ता है और यह गीत गाया जाता है—

तेलु

(१)

हरदी हिरदय हुलास अनन्दित गाइये ।
जो सुमिरै सिधि होय तौ मंगल गाइये ॥ १ ॥
धनि तुम रोचन तिलकु तुम्हैं कि जाइये ।
तुम विनु सकल सिंगारु, जगत मन भाइये ॥ २ ॥
धन्नि नछत्तर हरदी तो उपजी उजागर दुइ कुल मंगल ।
चारि तौ भाग सोहाग भरी ॥ ३ ॥
पेरे वरन सरसौं तेल चराफर कवन नाम सकल गुणागर ।
चल उन सखियाँ सहेलरी तो अड़धक जाइये ॥ ४ ॥
निरमल नीर कलस भरि लाइये ।
आजु लड़ी लड़ी का तेलु तौ सिरहिं लगाइये ॥ ५ ॥

हल्दी हृदय में उल्लास भरने वाली है आनन्दित होकर गाइये । जिसके स्मरण से सिद्धि प्राप्त हो उसके मंगल गीत गाइये ॥ १ ॥

धन्य है तुम्हें रोचना या तिलक तुम्हीं जाते हो (?) तुम्हारे बिना सारा शृंगार क्या जगत के मन को अच्छा लगने वाला है ? ॥ २ ॥

वह नक्षत्र धन्य है जिसमें हल्दी (लड़की) पैदा हुई दोनों कुल मंगलमय हो जाते हैं । उसके चार भाग तो सोहाग से भरे हुए हैं ॥ ३ ॥

पीले रँग के सरसों का चरफर (तेज) तेल अमुक नाम सर्वगुण सम्पन्न हैं। उनके यहाँ बेधड़क सखियाँ जाती हैं ।। ४ ।।

कलश में निर्मल जल भरवा कर—आज लाड़ली का तेल है तो सिर में लगाओ ।। ५ ।।

जनेऊ के सिलसिले में तेल के सम्बन्ध में चर्चा की जा चुकी है। विवाह में भी मातृपूजन के दिन लड़की के तेल चढता है। गीत निकलने के बाद से या स्तम्भ-प्रस्थान के उपरान्त लड़की और लड़के दोनों ओर एक से कर्म-काण्ड होते हैं। उसी दिन लड़के के भी तेल चढ़ता है। विवाह के पूर्व तेल का चढ़ाया जाना अधिक सकारण मालूम देता है। उबटन के बाद तेल का मर्दन अनिवार्य हो जाता है, इससे शरीर बिलकुल स्वच्छ हो जाता है। लड़की के तो रोज छरपुरिया का उबटन लगाया जाता है। छरपुरिया के उबटन लगाने से शरीर में कान्ति आती है और शरीर सुगन्धित हो जाता है जिसकी सुगन्धि महीनों तक शरीर से आती है।

लड़के के तेल चढ़ाने के सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि ब्रह्मचर्य आश्रम से निकलने के बाद जब विवाह होता है तब वह प्रथम बार तेल लगाता है। अब ब्रह्मचारी श्रीवर दूल्हा होने जा रहा है, अब उसका सभी प्रकार से शृंगार किया जायेगा। इस प्रकार उबटन और तेल का लगाना समावर्तन संस्कार की प्रथम प्रक्रिया है। यहाँ पर पहुँच कर ब्रह्मचर्य आश्रम की समाप्ति की औपचारिक घोषणा सी की जाती है। यह लड़के के शृंगार का प्रथम सोपान है। यही बात कम-बेश लड़की के सम्बन्ध में भी ठीक उतरती है।

———

विवाह कन्या-पक्ष

लड़की के विवाह के अवसर पर गाये जाने वाले गीत—

विवाह

(१)

बाबा सोवैं लाली चौपरिया, आजी जगावन जायँ।
ऐसे बाबन का नींद भलि आवै, जेहि घर नातिनि कुँआरि ॥ १ ॥

हाथु जो कम्पै पाँयु जो कम्पै, कम्पै कुसुम केरी डार।
अब कस कम्पो बेटी के दादुलि, आई धरम केरी बेर ॥ २ ॥

की पति राखैं राम रमैया की पति राखैं भगवान।
की पति राखैं भइया कवन रामा, जो मोरी दहिनी बाँह ॥ ३ ॥

हरि ये सेन्दुर मँहग भा है, दादुलि चुनरी भई अनमोल।
ये हैं सेन्दुरा के कारण दादुलि, छाड़यों मैं देसु तुम्हार ॥ ४ ॥

आटनु छाँड़यों मैं पाटनु छाँड़यों, छाँड़यों मैं देस सब झारि।
भइया का छाँड़यों मैं लाखु दोहइया, भौजी का राम रसोंय ॥ ५ ॥

माया ने दीन्हा है नौ मन सोनवा, दादुली ने लहरपटोर।
भइया ने दीन्हा है अलिल बछेड़वा, भौजी ने चुटकी सोहाग ॥ ६ ॥

मैया का सोनवा मैं नौ दिन खइहौं, फटि जइहै लहरपटोर।
भइया का घोड़वा मैं नम्र खोदइहौं, बेहसे सेन्दुर भरि माँग ॥ ७ ॥

माया के रोइबे छतिया फटति है, दादुली के रोइबे नदी नार रे।
भइया के रोइबे मा पटुका भीजत है, भौजी के आवा न आँसु;
भौजी का जिअरा आनन्द ॥ ८ ॥

माया कहै बेटी नित उठि आयो, दादुली कहैं छठे मास रे।
भइया कहै बहिनी कामे औ काजे, भौजी कहै कौन काज ? ॥ ६ ॥

बाबा लाल चौपाल में सो रहे हैं, आजी उनको जगाने जाती हैं। ऐसे बाबा को नींद भी खूब आती है जिसके घर कुँआरी नातिन है ॥ १ ॥

हाथ काँप रहे हैं, पैर काँप रहे हैं और कुसुम की डाल काँप रही है। बेटी के पिता अब क्यों काँप रहे हो अभी तो धर्म का समय आया है ॥ २ ॥

लाज या तो राम रखेंगे या भगवान रखेंगे या लाज भैया अमुक रामा रखेंगे जो मेरी दाहिनी बाँह हैं (बड़े सहायक हैं) ॥ ३ ॥

हे पति ! सेन्दुर महँगा हो गया है और दादुलि (पिता), चुनरी अनमोल हो गई है। इसी सेन्दुर के कारण हे पिता ! मैं तेरा देश छोड़ती हूँ ॥ ४ ॥

मने आटन पाटन छोड़ दिये और सब देश छोड़ दिये। भैया की मैंने लाखों दुहाइयाँ छोड़ दीं और भाभी की सुन्दर रसोई भी छोड़ दी ॥ ५ ॥

माता ने नौ मन सोना दिया है और पिता ने लहर-पटोर (लँहगा-दुपट्टा) भैया ने नई घोड़ी दी है और भाभी ने चुटकी भर सोहाग (माँग में सेन्दुर) दिया है ॥ ६ ॥

माता का दिया सोना मैं नौ दिन खाऊँगी और लहर-पटोर फट जायेगा। भैया के घोड़े को मैं नगर भर में भेजूँगी (यश होगा) पर सेन्दुर से भरी हुई माँग सदा बिहँसती रहेगी ॥ ७ ॥

माता के रोने से छाती फटती है, और पिता के रोने से नदी-नार भर गये हैं। भैया के रोने से केवल पटुका गीला होता है और भाभी के आँसू भी नहीं आया; भाभी का जी बहुत खुश है ॥ ८ ॥

माता कहती है बेटी ! तुम नित्य उठ कर आना। पिता कहते हैं कि छठे महीने में। भैया कहते हैं कि बहिन तुम काम-काज में आना, भाभी कहती है कि कोई जरूरत नहीं आने की ॥ ९ ॥

यह बिलकुल ठीक है कि जिसके घर में ब्याहने योग्य कन्या होती है उसके घर वाले चैन की नींद कैसे सो सकते हैं। विवाह का समय आने पर लड़की का पिता घबड़ा रहा है। अनेक विचार उसके चित्त में आलोड़ित-विलोड़ित हो

रहे हैं -'विवाह हो जाने के बाद मेरी बेटी मुझसे दूर चली जायेगी।' दूसरा चित्र यहाँ पर लड़की की ओर से प्रेम के भाव का खींचा गया है। सबसे अधिक माता, फिर पिता और बाद में भैया का प्रेम होता है। ननद-भाभी के कलहपूर्ण पक्ष का यहाँ भी दिग्दर्शन है। लेकिन यह विचार रूढ़ अधिक है यथार्थ कम। बेटी के विदा का समय पत्थर को रुला देता है फिर भाभी ही कैसे इतनी हृदयहीना हो सकती है कि वह ऐसे अवसर पर ननद के चले जाने की खुशी मनावेगी। किसी प्रकार का रक्त-सम्बन्ध न होने के कारण संभव है भाभी को इतना दुख न लगे जितना भैया को लग सकता है।

(२)

कहाँना के सेंदुरइया तो सेन्दुरु महँग ब्योंचौ रे।
कहाँना की चतुर कमिनियाँ तो सेन्दुरी का मोलु करै रे॥ १॥
कनउज की सेन्दुरइया, तो सेन्दुरी महँग ब्योंचौ रे।
एहो 'सिपुरी' की अच्छी कमिनियाँ सेन्दुरी का मोलु करैं रे॥ २॥
मँडए माँ ठाढ़ी कवन देई, बाबा का बोलावहिं रे।
बाबा करौ सेन्दुरी का मोलु, सेन्दुर हम लेबे। ३॥
हाथे मा लीन्हेन्हि सेन्दुरइया, तो माथे चढ़ावहिं रे।
आजी येही सेन्दुरइया के कारन, भयूँ परदेसिन रे॥ ४॥

"तुम कहाँ के सेंदुरैया हो ? बड़ा महँगा सेन्दुर बेचते हो।" "तुम कहाँ की चतुर स्त्री हो जो सेन्दुर का मोल कर रही हो" ॥ १॥

"कन्नौज के तुम सेन्दुरैया हो तो सेन्दुर महँगा बेचते हो" "शिवपुरी (जिस गाँव की लड़की होती है उसी का नाम लिया जाता है) की सुन्दर स्त्री है जो सेन्दुर का मोल कर रही है" ॥ २॥

मंडप में अमुक देवी खड़ी बाबा को बुला रही है—"बाबा सेन्दुर का मोल करो मैं सेन्दुर लूँगी" ॥ ३॥

हाथ में सेन्दुरैया लेकर माथे में चढ़ा रही है। अजी इसी सेन्दुर के कारण म परदेशिन हो गई ॥ ४॥

सेन्दुर सोहाग का चिह्न है और सोहाग है पति और पति के ही कारण बेटी को अपने माँ-बाप का घर छोड़ना पड़ता है।

(३)

केहि के हैं ई ऊँच चौतरा, केहि केरी लाली चौपारि रे।
कौन से पंडित ब्याहन आये, हथिअऊ सहित समाज रे ॥ १ ॥
बाबा के हैं ऊँचि चौतरा, चाचन लाली चौपारि रे।
पंडित दुलहै रामा ब्याहन आवैं, हथिअऊ सहित समाज रे ॥ २ ॥
को यह बैठा डारि गलीचा, को यह जाजिम बिछाय रे।
को यह बैठा कुस के कुसासन, को रे बइठ सिर नाँय रे ॥ ३ ॥
समधी बैठा डारि गलीचा, बरतिया जाजिम बिछाय रे।
श्रीबर बैठे कुस के कुसासन, बेटी मोरी माँथ नवाँय रे ॥ ४ ॥
भितरा से निकरी हैं माया दुलहिन देई, सुनौ बेटा बचनु हमार रे।
को मोरी बेटी का उपटहि चुपटहि, को डारै मूड़े तेलु रे ॥ ५ ॥
को मोरी बेटी का भोजनु बनावै, मोरी बेटी जैहैं कुम्हिलाय रे।
इतना बचनु सुनि बोले हैं दुलहरामा, सुनो सासू बचन हमार रे ॥ ६ ॥
नाउनि बिटिया उपटहिं चुपटहिं, वहै डारै मूड़े तेलु रे।
माया हमरी भोजनु बनावैं, तोरी धिया कैसे कुम्हिलाय रे ॥ ७ ॥

"किसके ये ऊँचे चबूतरे हैं और यह किसकी लाल चौपाल है? कौन से पंडित हाथी और समाज के साथ विवाह करने आये हैं?" ॥ १ ॥

"बाबा के ऊँचे चबूतरे हैं और चाचा की लाल चौपाल है। और पंडित 'दुलहे रामा' हाथी और समाज सहित विवाह के लिए आये हैं" ॥ २ ॥

"कौन यह गलीचा और जाजिम बिछाकर बैठा है? और कुश के कुशासन पर यह कौन सिर झुकाये बैठा है?" ॥ ३ ॥

समधी गलीचा डाल कर बैठे हैं और बराती जाजिम बिछा कर। श्रीवर कुश के कुशासन पर बैठे हैं और मेरी बेटी सिर झुकाये बैठी है ॥ ४ ॥

भीतर से माता दुलहिन देवी निकलीं—"बेटा, मेरा वचन सुनो। मेरी बेटी के कौन तेल उबटन लगायेगा और कौन उसके सिर में तेल डालेगा ?" ॥५॥

"और मेरी बेटी के लिए भोजन कौन बनायेगा ? मेरी बेटी तो भोजन बनाने में कुम्हला जायेगी।

इतना सुन कर 'दुलहे रामा' ने कहा कि सासु मेरे वचन सुनो ॥ ६ ॥

"नाउन की बेटी उबटन और तेल लगायेगी और वही सिर में तेल डालेगी। हमारी माँ भोजन बनायेगी तुम्हारी बेटी कैसे कुम्हलायेंगी" ॥७ ॥

पुत्री के लिये माँ को चिन्ता इस गीत में प्रकट होती है। उसकी चिन्ता यही बनी रहती है कि उसकी पुत्री की ससुराल में किस प्रकार की व्यवस्था होगी।

(४)

उइके जोन्हइया जो अथय गई है, सुकवा उए आधी रात।
अँगने के सेजिया भीतर लई डासौ, सोवहि मोरा दुलहू दमाद ॥ १ ॥
दुलहिन दुलहै अस मतु कीन्हा, सुनो दुलहिन मोरी बात।
तुम्हरे दादुली घर सोने का कटोरवा, हम लेवै दइजे लगाय ॥ २ ॥
इतना बचनु सुनि दुलहिन बोली, सुनु दुलहै मोरी बात।
हमारे दादुली घरै सोने का कटोरवा, भइया पियैं कच्चा दूधु।
दुधवा पियत भइया लेल्हरी करति हैं, माँगे प्रभु बहिनि
तुम्हारि ॥ ३ ॥
इतना बचनु सुनि दुलहै रामा, घोड़ी पीठि भये असवार।
जिनकै बहिनी चढ़ि ब्याहन आये, उई माँगैं बहिनि हमारि ॥ ४ ॥
घोड़वा के पग धरे बिनवैं कवन रामा, सुनु बहनोइया मोरी बात।
चन्द सुरिज ऐसी बहिनी जो दीन्हीं, खोरवै कौनि बिसात ॥ ५ ॥

चाँदनी निकल कर डूब गई है और आधी रात में शुक्रोदय हुआ है। आँगन की सेज भीतर लगा दो उस पर मेरा दूल्हा दमाद सोये ॥ १ ॥

दुलहिन-दूल्हा दोनों में ऐसा विवाद हुआ और दूल्हे ने कहा—"दुलहिन मेरी बात सुनो। तुम्हारे पिता के घर सोने का एक कटोरा है उसको हम दहेज में शामिल कर लेंगे" ।। २ ।।

इतना सुन कर दुलहिन बोली—दूल्हे मेरी बात सुनो, हमारे पिता के घर सोने का कटोरा है उसमें भैया कच्चा दूध पीते हैं। और दूध पीते-पीते मजाक करते हुए वे, मेरे स्वामी ! तुम्हारी बहिन माँगते है' ।। ३ ।।

इतना सुन कर दुलहे घोड़ी पर सवार होकर चल दिये। जिनकी बहिन हम यहाँ ब्याहने आये हैं वही हमारी बहिन माँगते है ।। ४ ।।

घोड़े के पैर पकड़े हुए विनती करते हैं कि बहनोई मेरी बात सुनो। जब हमने तुम्हें चाँद-सूरज ऐसी सुन्दर बहिन दे दी तब कटोरे की क्या औकात है (उसे भी ले लीजिये) ।। ५ ।।

यह गीत लड़के वालों की हीन दशा का चित्र उपस्थित करता है। कटोरा माँगने में तनिक विचार न पैदा हुआ परन्तु जब उनसे उनकी बहिन माँगी गई तो रूठ कर चल दिये। तिस पर भैया को विनती करके कटोरा भी देना पड़ा। स्त्री की हाजिरजवाबी का भी सुन्दर उदाहरण इस गीत में मिलता है।

(५)

बार बार मैं बरजौं रे दादुली, जेठ जनि रच्यो बिआहु।
हाथी औ घोड़े पिआसन मरिहैं, श्रीबर जइहैं कुम्हिलाय ।। १ ।।
हाथिन का बेटी सगरू खोदइहौं, घोड़न हरी हरी दूब।
तुम्हरे कुँअर बेटी छत्र छवइहौं, जेठै माँ रचब बिआहु ।। २ ।।
आई बरात दुआरे मा बाजी, बाजनन भई झन्कार।
कोई सखी महलन चढ़ि झाँकैं, कोई किवाँरन ओट।
ऊँचे ऊँच चढ़ि माया उनकी देखैं, धिया दम औरिउ होय ।। ३ ।।
बाजी बरात मंड़ये तरे आई, नौ लख दायज होय।
भितरा के बामन आँगन धरि दीन्हेन्हि, धिया दायज नहीं होय ।। ४ ।।
जो मैं जनत्यों धिया कोखि होइहैं, खातिऊँ मैं बन की मकोय।
डासी सेज उड़ाम मैं डरतिऊँ, प्रभु जीते रहतिऊँ कोहाय ।। ५ ।।

"पिता मैं बार बार मना करती हूँ कि जेठ में विवाह मत करना। हाथी-घोड़े प्यासे मर जायेंगे और श्रीवर कुम्हला जायेंगे" ॥ १ ॥

"हाथियों के लिये बेटी तालाब खुदवाऊँगा और घोड़ों के लिये हरी-हरी दूब का प्रबन्ध करवाऊगा। तुम्हारे कुँअर के लिये बेटी, छत्र छवाऊँगा और जेठ में ही विवाह करूँगा" ॥ २ ॥

बारात दरवाजे पर आई और बाजे बजने लगे। कुछ सखियाँ महल में चढ़ कर झाँक रही हैं और कुछ किवाड़ों की ओट से देख रही हैं। ऊँचे-ऊँचे स्थानों पर चढ़ कर और स्त्रियों के साथ उनकी माता भी देख रही है ॥ ३ ॥

बारात मंडप के नीचे आई और नौ लाख दहेज होगा। भीतर के बर्तन बाहर निकाल कर रख दिये हैं परन्तु फिर भी दहेज पूरा नहीं हो रहा है ॥ ४ ॥

जो मैं जानती कि पेट में लड़की होगी तो मै वन की मकोय (जो जहरीली होनी है) खा लेती। बिछी हुई सेज में उठा डालती और अपने पति से नाखुश हो कर रहती ॥ ५ ॥

दहेज की प्रथा कितनी कष्टदायक है कि माता पेट में लड़की होने की बात जान जाती तो जहर खा लेती अपने पति के पास ही न सोती। दहेज की प्रथा के कारण पुत्री के प्रति भावना विपरीत हो जाती है। यही कारण है कि पुत्री का जन्म माता-पिता को भी दुखदायी हो जाता है और पुत्री के जन्म का स्वागत नही होता।

(६)

सात खूँट मोरे दादुली की बखरिया, सुतली मैं आँचल पसारि।
सोवत सोवत एकु सपनु जो देख्यों, कनउज रचा है विवाह ॥ १ ॥
कनउज कनउज जनि करौ दादुलि, कनउज है बड़ी दूरि।
उइ कनवजिया दायज भल माँगहिं, तुमसे दियो नहिं जाय ॥ २ ॥
कहाँ पइहौ दादुलि सोने कै चिरैया, तौ कहाँ पइहौ लहरपटोर।
कहाँ पइहौ दादुलि बेदनी का फुलवा, देहो कनवजिया मोल ॥ ३ ॥

सोनरा घर पइहौं बेटी सोने कै चिरैया, बजाज घर लहरपटोर।
माली घर पइहौं बेदनी का फुलवा, देबे कनवजिया का मोल ॥ ४ ॥

मेरे पिता की बखरी सात कोने की है अर्थात् बड़ी है। मैं आँचल फैला कर सो गई। सोते-सोते एक स्वप्न देखा कि कन्नौज में विवाह निश्चित किया गया है॥ १ ॥

मेरे पिता कन्नौज कन्नौज मत करो। कन्नौज बड़ी दूर है। और वे कनवजिये दहेज बहुत माँगते हैं तुम इतना दे नहीं पाओगे ॥ २ ॥

मेरे पिता! सोने की चिड़िया कहाँ से लाओगे और कहाँ से लहँगा-दुपट्टा लाओगे? और पिता! कहाँ से बेंदनी का फूल (गूलर का फूल) पाओगे जो कनवजियों को मोल में दोगे? ॥ ३ ॥

सोनार के घर बेटी सोने की चिड़िया मिलेगी और बजाज के घर से लहँगा-दुपट्टा मिलेगा और माली के यहाँ से बेदनी का फूल मिलेगा वही कनवजियों को मोल में दूँगा ॥ ४ ॥

इस गीत में भी दहेज की कठिनाइयों की चर्चा की गई है। दहेज हमारे समाज की सबसे बड़ी कुप्रथा है।

(७)

काह देखि दादुलि आसन मारयो, काह देखि कीन्ह्यो ब्यौहार।
काह देखि दादुलि हमका बियाह्यो, न जान्यो करम हमार ॥ १ ॥
समधी देखि बेटी आसनु मारयों, घरु देखि कीन्ह्यो ब्यौहार।
लरिका देखि बेटी तुमका बियाह्यों, न जान्यों करम तुम्हार ॥ २ ॥
बापन बेटी उलारी दुलारी, पितिअन जाँघ बैठारी।
कौन कौन मुख कीन्ह्यो मोरी बेटी, हमसे कहो समुझाय ॥ ३ ॥
घिउ भल खायों, दूधु भल खायों, पहिरयों लहरपटोर।
आँचरु खोलि दादुलि भुइँया पै लेटिउँ रैनि माँ रह्यों अकेलि ॥ ४ ॥

मरिहहुँ मैं नउआ मरिहहुँ मैं बरिया, मरिहौं बाह्मन जी का पूतु।
जिन मेरी बेटी का विदेस बरु ढूंढ़ा, रैनिउँ मा रहेंहि अकेलि ॥ ५ ॥
काहे मरिहौ नउआ काहे मरिहौ बरिया, काहे बाह्मन जी के पूत।
हमरे करम दादुलि यहै लिखा है, मेटा न मिटै तुम्हार ॥ ६ ॥

"हे पिता तुमने क्या देखकर आसन ग्रहण किया और क्या देख कर व्यवहार किया है ? और तुमने पिता, क्या देख कर विवाह किया—हमारे कर्म तुम नहीं जानते ?" ॥ १ ॥

"समधी को देख कर बेटी मैंने आसन ग्रहण किया, घर देख कर व्यवहार किया। लड़का देख कर बेटी मैंने तुमको व्याहा—मैं तुम्हारे कर्म नहीं जानता" ॥ २ ॥

बेटी बाप की दुलारी प्यारी है, चाचा ने जाँघ पर बिठा कर खेलाया है। बेटी, तुमने कौन-कौन से सुखों का उपभोग किया है मुझे बतलाओ" ॥ ३ ॥

"खूब घी खाया, दूध खूब पिया और लहँगा-दुपट्टा पहिना, आँचल खोल कर निश्चित भूमि पर सोई; रात में अकेली ही रही" ॥ ४ ॥

"मैं नाऊ को मारूंगा, बारी को भी मारूंगा और ब्राह्मण के पुत्र को भी मारूंगा जो वर खोजने और विवाह पक्का करने गया था और जिन्होंने मेरी बेटी के लिये पति परदेश में ढूंढ़ा जहाँ मेरी बेटी रात में भी अकेली रहती है" ॥ ५ ॥

"पिता क्यों नाई को मारोगे, क्यों बारी को मारोगे और क्यों ब्राह्मण के पुत्र को मारोगे ? मेरे कर्म (भाग्य) में यही लिखा है तुम्हारा मिटाया नहीं मिट सकता" ॥ ६ ॥

ऐसा मालूम देता है कि इस गीत की नायिका का विवाह या तो किसी व्यभिचारी व्यक्ति से कर दिया गया है जो रात में घर पर नहीं रहता या किसी अशक्त तथा असमर्थ व्यक्ति से किया गया है जो नायिका के पास रात में सोता भी नहीं। इस गीत में लड़की की करुण शिकायत है जो अन्य पिताओं के लिए चेतावनी का कार्य करती है। इस गीत में व्यक्त नायिका के भाव स्पष्ट और गहरी वेदना से ओतप्रोत हैं। इस गीत को देख कर कोई भी पिता अपनी पुत्री

के लिए उचित वर खोजने में कोई कसर नहीं उठा रखेगा। इसको वह अपना भाग्य का दुर्भाग्य मान कर अन्तर्मुख हो जाती है जो उसके हृदय की छटपटाहट को और भी गहरी कर देती है। अथवा शायद उसका पति परदेश में नौकरी करता है और विवाह के बाद शीघ्र ही अपनी नौकरी पर चला गया है। यह बात अधिक सम्भव प्रतीत होती है।

(८)

आजी ने दीन्हा गगरी घइलना, बाबा ने घुइरी है आँखि।
सगरे पनिया का जनि जायौ बेटी, माती हथिनिया जो ठाढ़ि॥ १॥
पतरी कमर केरे गोरे बेटउना, नाउँ न जान्यों तुम्हार।
अपनी हथिनिया घुमावौ बंजरवा, लेउँ गगरिया मैं बोरि॥ २॥
पतरी कमर केरी गोरी बिटिउवा, नाऊँ न जानौं तुम्हार।
अरे येही हथिनिया मा तुमका चढ़इहों, हमरा श्रीबर नावँ॥ ३॥
हमरे बापन के धोबिया बेटउना, अहिर चरावै सुरागाय।
है कोऊ ऐसा माया का जाया, लेहि हथिनिया उतारि॥ ४॥
काह करै बेटी धोबिया बेटउना, काह करै चरवाहु।
जेहि का हो बेटी बारी बियाही, वोही लिवाये लिये जाय॥ ५॥
गइयन के चरवैया भैया, सुनु भैया मोरी बात।
राम रसोइयाँ मोरी गुड़ियाँ बिसरि गईं धरहिं पेटहरे उठाय॥ ६॥

आजी ने पानी लाने के लिये गागर और घड़ा दिया है—बाबा उसके देने पर नाराज होते हैं। 'तालाब पर पानी के लिये बेटी मत जाना वहाँ मस्त हाथिन खड़ी है" ॥ १॥

"पतली कमर के गोरे लड़के, मैं तुम्हारा नाम नहीं जानती। अपनी हाथिन, ऐ व्योपारी! घुमावो मैं जरा पानी में गागर डुबो लूँ" ॥ २॥

"पतली कमर की गोरी लड़की मैं, तुम्हारा नाम नहीं जानता। अरे इसी हाथिन पर मैं तुमको बैठाऊंगा मेरा श्रीवर नाम है" ॥ ३॥

"मेरे पिता के धोबी के बेटो, सुरा-गाय चराने वाले अहीरो ! है कोई माँ का पैदा किया हुआ पुत्र जो मुझे हाथिन पर से उतार ले" ॥ ४ ॥

"बेटी धोबी का बेटा क्या करे और चरवाहा क्या करे ? जिसको तुम ब्याही गई हो वही तुम्हें लिवाये जा रहा है" ॥ ५ ॥

गायों के चराने वाले भैया, मेरी बात सुनो। राम की रसोईं में मैं अपनी गुड़ियाँ भूल गई हूँ सो उनको इलमारी में, कहना, उठा कर रख दें ॥ ६ ॥

गुड़ियों की बात से यह स्पष्ट है कि जिसका विवाह हुआ है उसकी उम्र बहुत कम है वह गुड़िया खेला करती थी।

नोट—आजो, बाबा के स्थान पर अन्य बड़ों के नाम से यह गीत गाया जाता है।

(९)

मँड़ये के खम्भा लगे ठाढ़ी लड़ी लड़ी, माया भोजनु लीन्हे ठाढ़ि।
जेंई न लेओ मोरी बेटी दुलारी, अबका भोजनु बड़ी दूर ॥ १ ॥
बेटी बिदा कै के आये हैं बाबा, बैठे हैं माथु नँवाय।
यहु मोरी नातिनि का धरा है कलेउना को यह खोलै खाय। २ ॥
बहिनि बिदा कै के लौटे हैं भैया, बैठे हैं माथु नँवाय।
भरि कै पेटहरे मा गुड़िया धरी हैं, को यह ख्यालै आय ॥ ३ ॥

मंडप के खम्भे के नीचे लाड़िली खड़ी है और माता भोजन लिये खड़ी है। "मेरी दुलारी बेटी, भोजन कर लो यह भोजन फिर बहुत दिनों में मिलेगा" ॥ १ ॥

बेटी को बिदा करके बाबा आये और सिर झुका कर बठे हैं। "मेरी नातिन का यह कलेवा रखा है अब इसे कौन खोले और कौन खाये !" ॥ २ ॥

बहिन को बिदा करके भैया लौटे और सिर झुका कर बैठे हैं। "पेटहरा (दीवार के भीतर बनी छोटी सी इलमारी) में गुड़ियाँ भरी हुई हैं अब इनको कौन खेलेगा ?" ॥ ३ ॥

इस गीत में करुणा का जीवित चित्र खड़ा कर दिया गया है। लड़की के बिदा हो जाने पर, उन चीजों को देख कर, जिनसे बेटी का सम्बन्ध था, याद तड़प उठती है और बेकाबू हो जाती है।

(१०)

बेदी पारिनि धरि छिटकारिन छाये हरे हरे बाँस।
सो बेदी बैठे हैं बेटी के बाबा, कित्त दल आवै बरात ॥ १ ॥
नौ लख आवैं अरतिया बरतिया, दस लख झण्डा निसान।
नाचत आवैं समधी की पतुरैं, गरद उड़ै असमान ॥ २ ॥
एतना देखि कै डरपे हैं बाबा, डरपि कै हननि हैं कँवार।
यहि धेरिया मोर पटनु लुटावा, अब बेटी रहऊ कुँआरि ॥ ३ ॥
मँड़ये के खम्भा लगे ठाढ़ी हैं लड़ी लड़ी, सुनो बाबा बचनु हमार।
आधे हैं लोग अरतिया बरतिया, आधे हैं देखनहार ॥ ४ ॥
एतना बचनु सुनि बेटी के दादुलि, खोलि दीन्हेन्हि चनन कँवार।
हम जो ब्याहब आपन बेटी, मोरी बेटी जैहैं परदेश ॥ ५ ॥

वेदी की रचना की गई और खूब विस्तार दिया गया और हरे-हरे बाँसों से मंडप छाया गया। उस वेदी पर बेटी के बाबा बैठे प्रतीक्षा कर रहे हैं--किस समय बारात आयेगी ॥ १ ॥

नौ लाख बाराती आ रहे हैं और दस लाख झण्डे और ध्वजाएँ फहरा रही हैं। समधी की रंडियाँ नाचती आ रही हैं, धूल उड़ कर आसमान में पहुँच गई है ॥ २ ॥

इतना देख कर बाबा डर गये और भयभीत होकर उन्होंने किवाड़े बन्द कर लिये। इस लड़की के लिये मैंने सब कुछ लुटा दिया! अब बेटी, तुम कुँआरी ही रहो ॥ ३ ॥

मंडप के खम्भे के सहारे लड़की खड़ी है—"बाबा मेरी बात सुनो। आधे तो बराती हैं और आधे तमाशबीन" ॥ ४ ॥

इतनी बात बटी के पिता ने सुन कर चन्दन के किवाड़ खोल दिये। मैं अपनी बेटी का विवाह करूँगा मेरी बेटी परदेश जायेगी।

इस गीत में बड़ी-बड़ी बरातें ले जाने की ओर संकेत है। बड़ी बरात का सँभालना लड़की वाले के लिए बहुत कठिन और कष्टदायक होता है। अपना बड़प्पन दिखाने के लिए लड़के वाले प्रायः बड़ी-बड़ी बरातें ले जाकर लड़की वालों को छकाने की चेष्टाएँ करते रहते हैं। यह प्रथा भी दहेज की भाँति ही दुखदायी है।

(११)

बाजत आवै कँकरैली के बाजा, घुमरत आवै निसान।
की नट उतरे कि पतुरे नचावैं, की राजा खेलैं पंसासारि ॥ १ ॥
ना नट उतरे न पतुरै नचावैं, न राजा खेलैं पंसासारि।
आजी ने पाली है सोने की चिरैया, सो परदेसिन होय ॥
माया ने पाली है सोने की चिरैया, सो परदेसिन होय ॥ २
एकै कोखि केरे बहिनी औ भइया, एकै थनु पिया है दूधु।
भइया तो मोरे माता घरैं रहत हैं, हमका दियो है बनबासु ॥ ३ ॥

कंकरैली (स्थान का नाम) के बाजे बजते आ रहे हैं और घुमड़ती हुई पताकाएँ आ रही हैं। क्या नट उतर कर आये हैं या रंडियाँ नाच रही हैं या राजा पंसासारि (पाँसा) खेल रहे हैं ॥ १ ॥

न तो नट आये हैं और न रंडियाँ नाच रही हैं और न राजा पंसासारि (पाँसा) ही खेल रहे हैं। आजी की पाली हुई सोने की चिड़िया (लड़की) परदेश जा रही है। माता की पाली हुई सोने की चिड़िया परदेश जा रही है ॥ २ ॥

एक ही कोख से पैदा बहिन और भाई जिन्होंने एक ही स्तन का दूध पिया है—भैया तो मेरी माता के घर ही रहते हैं और हमको बनबास दे दिया ॥ ३ ॥

(१२)

इँटिया पराश्रो बाबा इँटिया पराश्रो ।
इँटिया पराय बाबा महला उठाश्रो ॥ १ ॥
महल के तरे तरे बसिगे सोनार ।
गढ़ै मोरी बेटी का सोलहौ सिंगार ॥ २ ॥
आजी गढ़ै कंकन माया गले हारु ।
चाची दुलारी का सोरहो सिंगार ॥ ३ ॥
बुश्रा गढ़ै कंकन बहिनि गले हारु ।
भौजी दुलारी का सोरहौं सिंगार ॥ ४ ॥
नानी गढ़ै कंकन माई गले हारु ।
मौसी दुलारी का सोलहौ सिंगार ॥ ५ ॥
इतना पहिरि बेटी चौकै जाय ।
बिजली के लपकत श्रीवरु दीख ॥ ६ ॥
आँखी मूँदौ श्रीबर आँखी मूँदि लेश्रो ।
हमरी बहिनि केर दीठि लगि जाय ॥ ७ ॥
ऐसे वचन कस बोल्यौ मोर सार ।
तुम्हरी बहिनि हमरे प्रानाधार ॥ ८ ॥

बाबा ! ईटें पराश्रो (बनवाश्रो), ईटें परवा कर बाबा महल उठवाना ॥ १ ॥

महल के नीचे सोनार बस गये हैं श्रौर मेरी बेटी के सोलहो शृंगार बना रहे हैं ॥ २ ॥

आजी के लिए कंगन श्रौर माता के गले के लिए हार दुलारी चाची के लिए सोरहो शृंगार बना रहा है ॥ ३ ॥

बुश्रा के लिए कंगना श्रौर बहिन के गले के लिए हार श्रौर दुलारी भावज के लिए सोरहो शृंगार बना रहा है ॥ ४ ॥

नानी के लिए कंगन और मामी के गले के लिए हार और दुलारी मौसी के लिए सोरहो शृंगार बना रहा है ।। ५ ।।

इतना पहिन कर बेटी चौक पर जाती है जहाँ बिजली की सी चमक में श्रीवर दिखाई पड़ जाते हैं ।। ६ ।।

श्रीवर, आँखें बन्द कर लो; हमारी बहिन के नजर लग जायेगी ।। ७ ।।

मेरे साले ऐसे वचन तुम कैसे बोले ? तुम्हारी बहिन तो मेरी प्राणाधार है ।। ८ ।।

(१३)

काहे का तोरा मँड़वा तौ काहे ले छावा।
कौनी मूरति बरु अइहैं तौ सीता बिआहन ।। १ ।।

सोने का मोरा मँड़वा तौ पानन छावा।
राम मूरति बरु अइहैं तो सीता बिआहन ।। २ ।।

अरी अरी आजी दुलाऊन तौ बाबइ जगावौ।
बाबा जल्दी ते देओ कन्यादानु, हमें दूरि जाना ।। ३ ।।

अरी अरी माया हमारि तौ दादुलि जगावौ।
दादुलि जल्दी ते देओ कन्यादानु हमें दूरि जाना ।। ४ ।।

अरी अरी चाची हमारि तौ चाचा जगावौ।
हरबर समुहैं दयजवा, हमें दूरि जाना ।। ५ ।।

अरी अरी भौजी हमारि तौ भइया जगावौ।
भौजी कै देओ न सोरहौ सिंगार, हमें दूरि जाना ।। ६ ।।

अरी अरी बहिनी हमारि तौ जीजै जगावौ।
बहिनी हरबर माजौ पेटरिया, हमें दूरि जाना ।। ७ ।।

अरी अरी माई दुलाऊन तो मामैं जगावौ।
माई हरबर देओ पेरी पँचिया, हमें दूरि जाना ।। ८ ।।

अरी गाँव की नाउनि अरे नगर बोलावौ।
मिलि लेओ सखियाँ सहेलरि हमें दूरि जाना ।। ९ ।।

मायन मिलिबे घरी एकु, दादुली पहरु एकु।
मिलि लेओ सखियाँ सहेलरी बहुरि कब आइये ।। १० ।।

अरे अरे गाँव के डोमरा, बजना बजाओ ।
सुनि लेहिं सहर केरा लोग, हमें दूरि जाना ॥ ११ ॥

एकु बनु नाँघी दूसर बन तिसरे माँ ब्रजबनु,
खोलि ओहार बेटी देखैं तो माया का कोऊ नाहीं ।
मारि कटारी मरि जाब दादुली केरा कोऊ नाहीं ॥ १२ ॥

हथिया चढ़न्ते ससुर रामा उई हँसि बोले ।
बहुआ खाओ, पियो ठंडा पानी, हमहीं तुम्हरे सब कोऊ ॥ १३ ॥

घोड़वा चढ़न्ते जेठ राजा उई उठि बोले ।
बहुआ पियो कटोरवन दूधु, हमहिं तुम्हरे सब कोऊ ॥ १४ ॥

गेंद खेलन्ते देवर राजा उई उठि बोले ।
भाभी चाभौ महोबे के पान, हमहिं तुम्हरे सब कोऊ ॥ १५ ॥

पलकी के राते माते श्रीबर उई उठि बोले ।
रानी खेलौ हमरे संग पंसासारि, हमहिं तुम्हरे सब कोऊ ॥ १६ ॥

काहे का तुम्हारा मंडप है, तो काहे से छाया गया है ? और कौन सी मूर्ति वर के रूप में आयेगी जो सीता के साथ विवाह करे ॥ १ ॥

सोने का मेरा मंडप है और पानों से छाया गया है । राम ऐसी मूर्ति वर के रूप में सीता से विवाह करने आयेगी ॥ २ ॥

अरी सुलक्षणा आजी, बाबा को जगाओ । बाबा जल्दी कन्यादान दो हमें दूर जाना है ॥ ३ ॥

अरो मेरी माता ! पिता को जगाओ--पिता जल्दी कन्यादान दो हमें दूर जाना है ॥ ४ ॥

अरी मेरी चाची ! चाचा को जगाओ--शीघ्र दहेज सम्मुख रख दो हमें दूर जाना है ॥ ५ ॥

अरी मेरी भाभी ! भैया को जगाओ--भाभी मेरा सोरहों शृंगार कर दो दूर जाना है ॥ ६ ॥

अरी मेरी बहिन ; मेरे जीजा को जगाओ--बहिन जल्दी मेरी पेटरिया (आज कल बक्स) सजा दो हमें दूर जाना है ॥ ७ ॥

अरी सुलक्षणा मामी ! मामा को जगाओ, मामी जल्दी पियरी*पंचिया दो हमें दूर जाना है ।। ८ ।।

अरी गांव की नाउन सारे नगर को बुलाओ—सखी सहेलियों से मिल लूं, हमें दूर जाना है ।। ९ ।।

माता से एक घड़ी तक मिलूंगी और पिता से एक प्रहर तक और सखी सहेलियों से मिलूंगी फिर न जाने कब आना हो ।। १० ।।

अरे गांव के डोम ! बाजे बजाओ शहर के लोग सुन लें हमें दूर जाना है ।। ११ ।।

एक वन पार किया, दूसरा भी पार किया, तीसरे में अजवन पहुँच गई । ओहार खोल कर बेटी ने बाहर देखा तो पिता की तरफ का कोई भी न था । मैं कटारी मार कर मर जाऊँगी क्योंकि पिता के यहाँ का कोई भी नहीं है ।। १२ ।।

हाथी पर चढ़े हुए ससुर रामा हँस कर बोले—बहू, खाओ, ठंडा पानी पियो अब हमीं तुम्हारे सब कोई हैं ।। १३ ।।

घोड़े पर चढ़े हुये जेठ रामा बोले—बहू. कटोरों में खूब दूध पियो अब हमीं तुम्हारे सब कोई हैं ।। १४ ।।

गेंद खेलते हुये देवर राजा उठ कर बोले—भाभी महोबे के पान खाओ, हमी तुम्हारे सब कोई हैं ।। १५ ।।

पालकी में आसक्ति रखने वाले श्रीवर ने कहा—रानी हमारे साथ पंसा-सार (पाँसा) खेलो अब हमीं तुम्हारे सब कुछ हैं ।। १६ ।।

इस लम्बे गीत में सारे भाव लड़की की ओर से उपस्थित किए गए हैं । इसी प्रकार विवाह सम्बन्धी अधिकांश गीतों में लड़की को स्वयं ही विवाह के लिए बाबा को प्रेरित करते दिखाया गया है—लड़की स्वयं अनेक प्रकार के विधिनिषेध बताती है और विस्तृत व्यवस्था की योजना बताती है।

गीतों की इस प्रकार की परिस्थिति से पंडित रामनरेश त्रिपाठी ने यह निष्कर्ष निकाला है कि प्राचीन काल में स्त्री को अपने विवाह के संबंध में पूर्ण स्वतन्त्रता थी और उनका कथन है कि—"अल्पवयस्का कन्या ऐसा नहीं कर सकती । इससे प्रकट होता है कि ये गीत हिन्दू समाज में बाल-विवाह प्रचलित होने से पहिले के हैं ।"

---

*पाँच हाथ मलमल का कपड़ा जिससे पति के साथ गाँठ बाँधी जाती है ।

परन्तु इन गीतों को ध्यान से जाँचने पर विदित होता है कि इन गीतों में अभिव्यक्त कन्या के विचार कन्या द्वारा कथित नहीं हैं। ये भाव तो अन्य वयस्क अनुभवी स्त्रियों के हैं जिनको कन्या की ओर से व्यक्त किया गया है। यह ठीक हो सकता है कि इन गीतों में से अधिकांश बाल-विवाह की प्रथा के पूर्व के गीत हों परन्तु इस निष्कर्ष का यह आधार कि ये विचार कन्या ने स्वयं प्रकट किये हैं और अल्पवयस्का कन्या ऐसा नहीं कह सकती सर्वथा भ्रामक है। ये भाव अन्य अनुभवी स्त्रियों के हैं जिन्होंने कन्या को प्रथम पुरुष में रखकर प्रकट किये हैं। इसके अतिरिक्त अनेक गीतों में १२ वर्ष का श्रीवर आदर्श दूल्हे के रूप में प्राप्त होता है। इस शैली से गीतों में अधिक प्रभावोत्पादकता पैदा हो गई है।

इस गीत की विस्तृत योजना जो मानसिक वेदना से भरी हुई है, वह कन्या के ब्रजवन पहुँचने पर—पिता के घर के किसी व्यक्ति को न पाकर—आत्म-हत्या करने के भाव में फूट पड़ता है। इस गीत में गहरी वेदना घुमड़ रही है।

(१४)

घोंघचिल ऐसी बेटी सुन्दरि, दादुलि घामु देखे कुम्हिलाय।
अरु बरु देख्यो फुलगेंदवा की नाईं नम्र बलि-बलि जाय ॥ १ ॥
ढँढ़यौं मैं आटनु ढँढ़यौं मैं पाटनु, ढँढ़यौं मैं गढ़ गुजरात।
तुम्हरी जोगि बरु नहिं पायौं अब बेटी रहौ कुँआरि ॥ २ ॥
कहाँ ढूँढ़यो आटनि पाटनि, कहाँ ढूढ़यौं देश सब झारिकें।
नम्र अजोध्या माँ दुइ बर सुन्दर, एक लछिमन एकु राम ॥ ३ ॥
उइ दून्हो बर बेटी अचँहड़ पँचहड़, हाथिनी दुआर की चार।
उइ दून्हो बर बेटी लंका का दायजु, मोरे बूते दीन्ह न जाय ॥ ४ ॥
जेहि के न होय दादुलि अँचहड़ि पचहड़ि, हथिनी दुआर की चार।
जेहि के न होय दादुलि लंका का दायजु, वह यरु ढूँढ़ै चरवाहु ॥५॥

घोंघचिल (लाल होती है) की भाँति बेटी सुन्दर है। वह धूप को देख

कर ही कुम्हला जाती है। गेंदा के फूल की भाँति सुन्दर वर देखना जिस पर सारा नगर बलि बलि जाये ।। १ ।।

मैंने ग्राटन पाटन में ढूंढ़ा ग्रौर गुजरात में ढूंढ़ा परन्तु बेटी तुम्हारे योग्य वर नही मिल सका । ग्रब बेटी कुँग्रारी ही रहो ।। २ ।।

तुमने कहाँ ग्राटन पाटन ढूंढ़ा ग्रौर सारे देश कहाँ ढूंढ़े ? ग्रयोघ्या नगर में दो सुन्दर वर हैं एक लक्ष्मण दूसरे राम ।। ३ ।।

बेटी, उन दोनों वरों को ग्रचँहड़-पँचहड़ (ग्रनेक बर्तन) ग्रौर द्वारचार में हाथी देने पड़ेंगे । उन दोनों वरों को बेटी, लंका की समस्त सम्पत्ति दहेज में देनी पड़ेगी जो मेरी शक्ति से परे है ।। ४ ।।

पिता ! जिसके ग्रचँहड़-पँचहड़ न हो ग्रौर द्वारचार में देने को हाथी न हो ग्रौर जिसके लंका का दहेज न हो तो क्या वह वर चरवाह ढूंढ़े ।। ५ ।।

(१५)

मोरे पिछवारे लौंग का बिरवा, लौंग चुऐ ग्राधी राति ।
लौंग बिनि बिनि ढेरु लगाइँनि, लादि चले बंजार ।। १ ।।

लादि चले बंजरवा बेटउना, लादि चले पिया मोरि ।
हमहूँ का डोलिया फँदावौ बंजरवा, हमहूँ चलब तुम्हरे साथ ।। २ ।।

हमरे साथ धना भूखन मरिहौ; पिग्रासन मरिहौ,
पान बिनु जैहौ कुम्हिलाय ।
कुस की सथरी रानी डासन पैहौ, ग्रंग छिलि छिलि जाय ।। ३ ।।

भँखौ सहिबे पिग्रासौ सहिबे, पनवा मैं डरिबे बिसराय ।
तुम्हरे साथ प्रभु जोगिन होइबे, ग्रंगु रहै चाहे जाय ।। ४ ।।

एकु बनु नाँघी दूसर बनु नाँघी, तिसरे माँ लागी पिग्रास ।
बूँद एकु पनिया पियावौ बंजरवा, मोरा तोरा जुरा सनेहु ।। ५ ।।

की तोरे बाप ने सगरु खोदावा, की भैये बँधावा पक्का घाटु ।
कहाँना से पनिया पियावौं मोरी रानी, मोरा तोरा जुरा रे सनेहु ।। ६ ।।

उत्तर दिसा दादुली कुग्राँ खोदावा, भैये बँधावा पक्का घाटु ।
हुग्रँनै ते पनिया पियावौ बंजरवा, मोरा तोरा जुरा सनेहु ।। ७ ।

मेरे घर के पिछवारे लौंग का वृक्ष है लौंग आधी रात टपकती है। लौंगों को बिन बिन का ढेर लगाया और लाद कर व्यापार के लिये चल दिये ।। १ ।।

व्यापारी के पुत्र लाद कर चल दिये हैं—मेरे पति लाद कर चल दिये हैं। हमारे लिए भी पालकी का प्रबन्ध करो हम भी तुम्हारे साथ चलेंगी ।। २ ।।

हमारे साथ, मेरी प्यारी, तुम भूखों मर जाओगी—प्यास से मर जाओगी —पान के बिना कुम्हला जाओगी। रानी कुश का बिछावन बिछाने को पाओगी उसमें तुम्हारे अंग छिल जायेंगे ।। ३ ।।

भूख सहूँगी, प्यास भी सहूँगी, पान खाना भी भुला दूँगी। तुम्हारे साथ स्वामी मैं जोगिनी हो जाऊँगी शरीर चाहे रहे या जाये ।। ४ ।।

एक वन पार किया दूसरा वन पार किया तीसरे में प्यास लगी—व्यापारी एक बूँद पानी पिलवा दो मेरा तुम्हारा स्नेह का बंधन हो गया है ।। ५ ।।

क्या तुम्हारे बाप ने तालाब खोदाया या भैया ने पक्का घाट बँधाया है ? रानी, कहाँ से पानी पिलाऊंगा ? यह ठीक है कि मेरा तुम्हारा स्नेह का बंधन हो गया है ।। ६ ।।

पिता ने उत्तर दिशा में कुंआ खुदाया है और भैया ने पक्का घाट बँधवाया है। व्यापारी कहीं से पानी पिलाओ मेरा तुम्हारा स्नेह का बधन हो गया है ।। ७ ।।

इस गीत में बिवाह के बाद की एक झांकी है। स्त्री अपने पति के साथ सर्वदा रहना चाहती है यहाँ तक कि अपने सारे सुख भुला देने के लिए तैयार है।

(१६)

इँटिया पराय बाबा महलु उठावैं, बिच बिच खिरकी लगाय रे।
महला ऊपर दुई मोरवा चुँगति हैं, बोलत श्री भगवान ।। १ ।।
आई बरात दुआरे मा बाजी, बाजनन भई झंकार रे।
सब कोऊ निहारै बरतिया बरतिया, श्रीबर शबद ओनाँय ।। २ ।।

इतना देखि कै श्रीबरु बोले, सुनौ सारे बचनु हमार।
तुम्हरे महल दुइ मोरवा चुँगत हैं, हम लेबे दइजै लगाय ॥ ३ ॥
इतना बचनु सुनि सारे जो बोले, सुनु बहनोइया मोरी बात।
ई मोरवा मोरे बाबा के पाले, नहिं देबे दइजै लगाय ॥ ४ ॥
एतना बचनु सुनि बहनोइया जो बोले, हम नहिं करब बिश्राहु।
अपनी बहिनि कँहा घर ही मा राखौ, हम घरै जइबै आजु ॥ ५ ॥
मँड़ए के खम्भा लगे ठाढ़ीं लड़ी लड़ी, सुनौ भैया बचनु हमार।
सासु कै चिरिया ससुर जी को बिनती, मोरवा देहौं लौटाय ॥ ६ ॥
एतना बचनु सुनि भइया जो बोले, सुनौ बहिनी बचनु हमार।
सोने का मोरवा गढ़ाय के देबै, जैहैं बहनोइया के देस ॥ ७ ॥

ईटें बनवा कर बाबा महल बनवावें उसमें खिड़की लगवावें। महल के ऊपर दो मोर चुगते ? जो 'श्री भगवान' बोलते है ॥ १ ॥

बरात दरवाजे पर आई और बाजे बजने लगे। सब कोई तो बरातियों को देख रह हैं और श्रीवर शब्द सुनने की कोशिश कर रहे हैं ॥ २ ॥

इतना देख कर श्रीवर बोले—साले ! मेरी बात सुनो, तुम्हारे महल में दो मोर चुगते हैं उनको हम दहेज में सम्मिलित कर लेंगे ॥ ३ ॥

साले ने इतना सुन कर कहा कि बहनोई ! मेरी बात सुनो। ये मोर मेरे बाबा ने पाले हैं दहेज में नहीं दूंगा ॥ ४ ॥

इतना वचन सुन कर बहनोई बोले कि मे विवाह नहीं करूंगा। अपनी बहिन को घर ही में रखो में आज ही घर लौट जाऊंगा ॥ ५ ॥

मंडप के खम्भे के पास लाड़ली खड़ी कहती हैं मेरे भैया ! मेरी बात सुनो। सासु से में विनती करूंगी और ससुर से में प्रार्थना करूंगी कि मोर लौटा दिये जायें ॥ ६ ॥

इतना सुन कर भैया बोले, बहिन मेरी बात सुनो। सोने के मोर मैं बनवा दूंगा वे बहनोई के देश जायेंगे ॥ ७ ॥

(१७)

ऊँची औ नेहली अँटारी, महल चितसारी।
तेहितर ठाढ़ी हैं लड़ी लड़ी, तौ श्रीबरु माँगैं ॥ १ ॥
"की बेटी जइहौ जनकपुर की अवधपुर।
की बेटी पइठौं पताल, जहाँ सेनी आइयु ॥ २ ॥
"न हम जैबे जनकपुर न रे अवधपुर।
बाबा हम तो रहिबे अजिन घर, जहाँना जलमु लीन्ह" ॥ ३ ॥
आई बरात श्री प्रभु जी दुआरे मा बाजी।
अब कस करिहौ तीनुउ दल ओनये ॥ ४ ॥
एकु दलु ओनवा मैके दुसर दल ससुरे।
तीसर दलु ओनए, ननिआउर, तीनू दल ओनये ॥ ५ ॥
हाथु जो कम्पै पाँव जो कम्पै, कम्पै कुसुम केरी डार।
अब कस करिहौ दादुलि मोरे, आई धरम केरी बेर ॥ ६ ॥
आजिन अस घिया जोगइनि जैसे घिया गागरि।
बाबन अस दई दीन्ह जैसे जल मछरी ॥ ७ ॥
मायन मिलिबे घरी एकु दादुली पहर एकु,
मिलि लेहौं सखियाँ सहेलरि बहुरि कब अइये ॥ ८ ॥

ऊंची और नीची छतें हैं और उस महल में चित्रसारी (चित्रशाला) है। उसी के नीचे खड़ी लाड़िली श्रीवर मांगती है ॥ १ ॥

बेटी जनकपुर जाओगी कि अवधपुर या पताल जाओगी जहाँ से तुम आई हो ॥ २ ॥

बाबा, न तो में जनकपुर जाऊँगी और न अवधपुर ! में तो बाबा ! आजी के घर ही रहूँगी जहाँ पैदा हुई हूँ ॥ ३ ॥

बारात आकर दरवाजे पर खड़ी हुई—अब कैसे क्या किया जाये तीनों दल घेर आये हैं ॥ ४ ॥

एक दल मायके का है, दूसरा ससुराल का है और तीसरा दल ननिहाल का, तीनों ने घेर रखा है ॥ ५ ॥

हाथ कांप रहे हैं पैर कांप रहे हैं—और कुसुम की डाल कांप रही है। मेरे पिता अब कैसे करोगे धर्म का समय आ गया है ।। ६ ।।

आजी ने इस प्रकार घी संचित किया है जैसे घी की गागर। बाबा ने ऐसे दे दिया जैसे जल मे मछली निकाल कर दे दी हो ।। ७ ।।

माता से एक घड़ी मिलूंगी और पिता से एक प्रहर तक मिलूंगी। सखियों और सहेलियों से भी मिल लूंगी न जाने कब वापिस आना हो ।। ८ ।।

इस गीत में महल की चित्रमारी की ओर संकेत है। गांवों में ऐसा कोई घर नहीं जहाँ दीवारों में चित्र अंकित न हों—भले ही महल न हो परन्तु चतुर्दिक दीवारों पर चित्र अंकित रहते हैं। ग्रामों में चित्रकला धनाढ्यों की बपौती नहीं है वह तो प्रत्येक घर की सम्पत्ति है।

दूसरा संकेत विवाह के समय की कठिनाइयों की ओर है। विवाह के समय सभी ओर के रिश्तेदार एकत्र होते हैं; जितने बराती आते हैं उससे अधिक तो घराती हो जाते हैं। ऐसी दशा में भोजन तथा अन्य प्रकार की व्यवस्थाएँ पूरी कर पाना बहुत ही कष्टसाध्य हो जाता है। और इसीलिए लड़की का विवाह कन्यापक्ष वालों के लिए एक दुर्भाग्य सा है। यदि कन्या और कन्यादान के साथ समाज के उच्च आदर्शों की पवित्रता न सम्मिलित हो तो कन्या की क्या दशा होगी उसकी कल्पना नहीं की जा सकती। दहेज, करार, बड़ी बारातों का ले जाना, और विवाह में प्रदर्शन आदि ऐसी कुप्रथाएँ हैं कि एक उच्च एवं पवित्र धार्मिक अनुष्ठान और पुण्यकार्य कन्या-पक्ष के लिए बहुत दुखदायी हो जाता है।

विवाह (स)

गौर्याही नेवताने के गीत

(१)

जैसे सेन्दुरइया मा सेन्दुर लपकै, वैसे गंगाजल पानी ना।
मँड़ये माँ लपकै बेटी दुलारी, अपने पिया संग साथै ना। ॥ १ ॥
अंग पसीजे चूनरि भीजै, श्रीबर बेनियाँ डोलावौ ना।
कैसे का बेनियाँ डोलावौं सलोनी धना, मँड़ये बैठे तोरे बाबा ना।
जूता चढ़ाइ बाबा श्रीबर ढूँढ़ेनि, तब हम लाज गँवायों ना। ॥ २ ॥

लाल होने के कारण जैसे सेन्दुरैया में सेन्दुर लपकता है, वैसे ही गंगा जी का पानी भी। मंडप में दुलारी बेटी अपने पति के साथ लपक रही है, सौन्दर्य के कारण शोभा दे रही है।

अंग पसीज रहा है, चूनर भीग रही है—'श्रीवर पंखा झलो न।" "मेरी सुन्दर स्त्री ! मै पंखा कैसे झलूँ ? मंडप में तुम्हारे बाबा बैठे हैं।" "जूता पहिन कर जब बाबा श्रीवर ढूँढ़ने गए थे तब मैंने लाज नहीं गंवाई ?" (अब तुम्हारे पंखा झलने में क्या शरम की बात है ?) ॥ २ ॥

ये सोहाग के गीत हैं। जिस दिन विवाह-यज्ञ के स्तम्भ की स्थापना कन्या-पक्ष के घर में होती है उसी दिन से सोहाग के गीत गाये जाते हैं। उस दिन से कन्या की लग्न लग जाती है, उस दिन से कन्या को अनेक प्रकार के निषेधों का पालन करना पड़ता है, उस दिन से वह एकान्त में रहने लगती है। टोले-मुहल्ले की स्त्रियाँ उसके पास मिलने के लिए रोज आने लगती हैं। उस कन्या से यह अपेक्षा की जाती है कि वह रोये। और इस प्रकार रोने का क्रम विदा तक

चलता रहता है। कन्या के न रोने पर अन्य स्त्रियाँ बुरा तक मान जाती हैं। उसी गीत के दिन कन्या की चूड़ियाँ निकाल दी जाती हैं और सभी गहने भी निकाल दिये जाते हैं। ये सोहाग के गीत विवाह-पर्यन्त प्रतिदिन गाये जाते हैं।

जिस दिन बारात आने वाली होती है और रात को भँवरें पड़ने वाली होती हैं उसी दिन प्रातःकाल टोले-मुहल्ले की स्त्रियाँ कन्या को लेकर गाती हुई गहुरानी न्योतने निकलती हैं। कन्या के सिर पर लाल खारुए का कपड़ा आजी या माता छत्र के रूप में या वरदहस्त के रूप में रख कर घर-घर ले जाती हैं। इस समय प्रत्येक घर की एक सुहागिन अपनी माँग से उसके माथे में धूरिया या सूखा सेन्दुर लगाती हैं। जिस घर की जो स्त्री कन्या के माथे म सेन्दुर लगाती है वह उस दिन उपवास करती है और रात को फिर जब वे मंडप के नीचे जाती हैं तब फिर कन्या की माँग में सेन्दुर लगाया जाता है। तत्पश्चात् उन गहुरानियों का भोजन से सत्कार किया जाता है। भोजन में अधिकतर गुड़ ही परोसा जाता है। सम्भव है कृषि प्रधान भारत में यही सबसे शुद्ध मिठाई समझी जाती रही हो। जब प्रातःकाल स्त्रियाँ घर-घर जाती हैं तब यही सोहाग के गीत गाती हैं। इन सभी गीतों में एक विचित्र प्रकार का वातावरण होता है। और इन गीतों का क्रम कभी टूटता नहीं है।

जब कन्या के माथे में अन्य सुहागिनें सेन्दुर लगाती हैं उस समय विशेष रूप से यह गीत गाया जाता है। प्रातःकाल भी और सायंकाल भी :—

चलो चलहु रे धतूरवा कवन रामा केरे पासा।
दुलहिन देई का सोहाग मोरी चन्द बदनिये लागा।
मोरी बाबा दुलारी के लागा।
हमहूँ का जानती सोहागु बरसन लागा; तम्बोल बरसन लागा।

इस गीत में कवन के स्थान पर किसी भाई का नाम रखा जाता है।

(२)

तरतारी के ऊपर बारिये, जहाँ उपजी है लौंग सुपारिये।
जहाँ रतुली पलँगु बिछाइये, हुँआ सोवैं बेटी देई लड़ी लड़ै॥ १॥

बेटी सोय मोय जब जागिये, अपने बाबन से बरु माँगिये।
फूफा हाथी चढ़ै बरु ढूँढ़िये, बेटी लपकि कै चढ़िउ अँटारिया।
बेटी खिरकी खोलि बरु देखिये ।। २ ।।

बाबा एकु साध मोरे मन रही।
बाबा हम जो गोरी बरु साँवरे ।। ३ ।।

बेटी जनि करौ मन पछिताव।
बेटी गया गजाधर साँवरे ।। ४ ।।

बेटी मथुरा के बेनीमाधव साँवरे।
बेटी आजी गोरी बाबा साँवरे ।। ५ ।।

तरतारी पर सब कुछ निछावर करता हूं जहां लौंग सुपारी पैदा हुई है। जहां सुन्दर पलंग बिछा हुआ है वहां लाड़ली बेटी सोती है ।। १ ।।

बेटी सोकर जब जागी तो अपने बाबा से वर मांगने लगी। फूफा हाथी में चढ़ कर वर खोजते हैं, बेटी लपक कर छत पर चढ़ गई; बेटी खिड़की खोल कर वर देख रही है ।। २ ।।

बाबा ! मेरे मन में एक इच्छा है कि बाबा, मैं गोरी हूं और वर सांवला है ।। ३ ।।

बेटी, मन में पछताव मत करो। बेटी, गया के गजाधर भी सांवले हैं ।। ४ ।।

बेटी मथुरा के बेनीमाधव सांवले हैं। बेटी तुम्हारी आजी गोरी है और मैं सांवला हूँ ।। ५ ।।

नोट—फूफा, बाबा, आजी के स्थान पर अन्य कुटुम्बियों के नाम लेकर यह गीत गाया जाता है।

(३)

मैं तुम पूछूँ बेटी दुलारी तुम कस बनरा बुलायौ ना।
खेलत रहिऊँ बाबा चौपरिया रूप देखि बरु आयौ ना।

"मैं तुमसे पूछता हूं बेटी दुलारी ! तुमने वर क्यों बुलाया ?" "मैं बाबा की चौपाल में खेल रही थी मेरा रूप देख कर वह आगया।"

नोट—बाबा के स्थान पर अन्य नामों को रख कर यह गीत गाया जाता है।

(४)

फुलगेंदवा का मचली लड़ी लड़ी।
फुलगेंदवा तुम काहे न लै आइये ॥ १ ॥
समधी एकु अरज मोरी मानिये।
फुलगेंदवा ढूँढ़े नहिं पाइये ॥ २ ॥
मैं तो ढँढ़्यौं हाट बजरिया,
मैं तो ढँढ़्यौं माली फुलवरिया।
फुलगेंदवा ढूँढ़े नहिं पाइये ॥ ३ ॥
माली गली होइकै आइये,
चढ़ाये कै मौरी लै आइये,
फुलगेंदवा ढूँढ़े नहिं पाइये ॥ ४ ॥
मैं तो सोनरा गली होइकै आइये,
चढ़ाये का गहना लै आइये,
फुलगेंदवा ढूँढ़े नहिं पाइये ॥ ५ ॥
मैं तो मनहरि गली होइकै आइये,
चढ़ाये की चुरिया लै आइये,
फुलगेंदवा ढूँढ़े नहिं पाइये ॥ ६ ॥
मैं तो बनिया गली होइकै आइये,
मैं तो सेन्दुर मनपुर लै आइये,
फुलगेंदवा ढूँढ़े नहिं पाइये ॥ ७ ॥
मैं तो पटवा गली होइकै आइये,
मैं तो तरकी, तागु पटु लाइये,
फुलगेंदवा ढूँढ़े नहिं पाइये ॥ ८ ॥
मैं तो बजाज गली होइकै आइये,
मैं तो चढ़ाये की चुनरी लै आइये,
फुलगेंदवा ढूँढ़े नहिं पाइये ॥ ९ ॥
मैं तो दर्जी गली होइकै आइये,
मैं तो चढ़ाये की झुलिया लै आइये,
फुलगेंदवा ढूँढ़े नहिं पाइये ॥ ॥

लाड़ली गेंदे के फूल के लिये मचल रही हैं। गेंदे का फूल तुम क्यों नहीं लाये ।। १ ।।

समधी, एक विनती मेरी मानो गेंदे का फूल ढूंढ़े नहीं मिलता ।। २ ।।

मैंने हाट और बाजार में ढूंढ़ा, माली की फुलवारी में ढूंढ़ा लेकिन गेंदे का फूल नहीं मिला ।। ३ ।।

मालो की गली होकर आया, चढ़ाये की मौरी ले आया परन्तु गेंदे का फूल नही मिला ।। ४ ।।

मैं तो सोनार की गली होकर आया—चढ़ाये का गहना ले आया परन्तु गेंदे का फूल नही मिला ।। ५ ।।

मैं तो मनिहार की गली से आया, चढ़ाये की चूड़ियाँ ले आया परन्तु गेंदे का फूल नहीं मिला ।। ६ ।।

मैं तो बनिये की गली होकर आया, मैं तो सतपुर और सेन्दुर ले आया, परन्तु गेंदे का फूल नहीं मिला ।। ७ ।।

मैं तो पटवा की गली होकर आया, मैं तो तरकी (कानों की) ताग और पाट ले आया परन्तु गेंदे का फूल नहीं मिला ।। ८ ।।

मैं तो बजाज की गली होकर आया, चढ़ाये की चुनरी ले आया, परन्तु गेंदे का फूल नहीं मिला ।। ९ ।।

मैं तो दर्जी की गली होकर आया, चढ़ाये की मुलिया (चोली बन्द वाली) ले आया परन्तु गेंदे का फूल नहीं मिला ।। १० ।।

लड़की के विवाह में वर का पिता 'चढ़ावा' लाता है। उसमें अनेक प्रकार के गहने, कपडे इत्यादि चीजें होती हैं। अर्थात् संसार की सभी कीमती चीजें हो सकती हैं—मिल सकती हैं परन्तु गेंदे के फूल जैसी सुन्दर लड़की नहीं मिल सकती। इस गीत में इस प्रकार धन-दौलत, आभूषण इत्यादि से अधिक महत्त्व लड़की को दिया गया है जो बहुत सन्तोषप्रद है।

(५)

केहि के हैं गजमत्त हाथी, कजरी के बन डोलैं ना।
केहि केरी नातिनि सरब सुन्दरी, सिंघासनु बैठे बरु माँगै ना ।। १ ।।

कवन रामा के हैं गजमत्त हाथी कजरी के बन डोलैं ना।
बाबा रामा नातिनि सरब सुन्दरी, सिंघासनु बैठे बरु माँगै ना।

किस के मस्त हाथी हैं जो कजरी के वन में घूम रहे हैं ? किनकी नातिन सर्वसुन्दरी है जो सिंहासन बैठ कर वर मांग रही है ।। १ ।।

अमुक के मस्त हाथी हैं जो कजरी के वन में घूम रहे हैं। बाबा की नातिन सर्वसुन्दरी है जो सिंहासन पर बैठे वर मांग रही है ।। २ ।।

(६)

सोहाग के बादर ओंनये, सोहाग की नन्हीं नन्हीं बूँदियाँ।
सोहागु झिमिकि झरि लागिये ।। १ ।।
सोहागु ओरौतिनि बहि चला, सोहाग पनारन बहि चला।
सोहागु लड़ी लड़ी की माँगिया, सोहाग दुलारी की माँगिया ।। २ ।।

सोहाग के बादल घिर आये हैं और सोहाग की नन्हीं-नन्हीं बूँदें बरस रही हैं। सोहाग रिमझिम झरने लगा ।। १ ।।

सोहाग ओरौतिन (छप्पर के किनारों से) से बह चला और बह कर पनारों तक पहुंच गया। सोहाग लाड़ली की मांग में, सोहाग दुलारी की मांग में ।।२।।

सोहाग की अधिकता की ऐसी कामना है जो कन्या के लिये कभी कम न हो।

(७)

झुकि आईं दुलारी की आँखियाँ, झुकि आँईं लड़ी लड़ी की आँखियाँ।
उनके बाबन जाँघ बैठारिये, उनके चाचन जाँघ बैठारिये।
उनकी आजिन बेनिया डोलाइये, उनकी चाचिन बेनिया डोलाइये।

दुलारी की आँखें झुक गई हैं, लाड़ली की आँखें झुक गई हैं (लज्जा के कारण)।

उनके बाबा जाँघ पर बैठाते हैं; उनके चाचा भी जाँघ पर बैठाते हैं।

उनकी आजी पंखा झलती हैं; उनकी चाची पंखा झलती हैं।

यदि कन्या छोटी न होती तो उस प्रकार जाँघ पर बिठाने की चर्चा न की जाती। अर्थात् विवाह के समय कन्या की आयु बहुत कम होती है।

(८)

भइया कवन रामा यह जसु लेहु।
सोहाग कै बाग सींचि हमैं देहु ॥ १ ॥
भैया भरैं भौजी सींचन जायँ।
सींचि बढ़ावैं सोहाग केरी बाग ॥ २ ॥
एतना सोहाग बेटी करिहौ का। *
टोला परोसिनि बायनु देब ॥ ३ ॥

भैया अमुक रामा ! यह यश लो सोहाग की बाग हमें सींच कर दो ॥१॥

भैया पानी भरें और भावज सींचे—और सींच कर सोहाग का बाग बढ़ावें ॥ २ ॥

"इतना सोहाग बेटी क्या करोगी ?" "टोले पड़ोसे में बायन की भाँति बाँट दूँगी" ॥ ३ ॥

कन्या को सोहाग देने का सौभाग्य विशेष रूप से भावज को प्राप्त है।

(९)

कैलास ते उतरे महादेव, दस हाथ नरियरा लै चले ॥ १ ॥
सेजरिया ते उतरी गौरा देई, बन्दन केरी डिबिया हाथ।
बेटी लड़ी लड़ी का दइ चलीं, बन्दन केरी डिबिया हाथ ॥ २ ॥
महलिया ते उतरे बाबा उनके दस हाथु नरियरा लै चले।
सेजरिया ते उतरी आजी उनकी, बन्दन केरी डिबिया हाथ।
बेटी दुलारी का दइ चलीं ॥ ३ ॥

महादेव कैलाश से उतर कर दस हाथ नारियल लेकर चले ।। १ ।।

सेज से गौरा देवी बन्दन (रंगीन कच्चा धागा) की डिब्बी लेकर चलीं और लाड़ली बेटी को बन्दन की डिब्बी देकर चली गईं ।। २ ।।

उनके बाबा महल से उतर कर दस हाथ नारियल लेकर चले । सेज पर मे उनकी आजी बन्दन की डिब्बी लेकर उतरीं और दुलारी बेटी को देकर चली गईं ।। ३ ।।

प्रत्येक शुभ कार्य में नारियल और बन्दन (कलावे—एक प्रकार की रक्षा) की अनिवार्य आवश्यकता है ।

(१०)

चलो चलहु रे धतूरवा कवन रामा केरे पासा ।
दुलहिन देई का सोहाग मोरी चन्द्र बदनियै लागा ।
मोरी बाबा दुलारी के लागा ।
हमहूँ का जानती सोहागु बरसन लागा,
तम्बोल बरसन लागा ।

धतूरवा (कन्या) चलो चलो अमुक रामा के पास । (कवन के स्थान पर भाई का नाम रहता है)

दुलहिन देवी का सोहाग मेरी चन्द्रबदनी बेटी को लगे, मेरी बाबा की दुलारी के लगे ।

हमे भी क्या मालूम—सोहाग बरसने लगा—पान बरसने लगे ।

इस गीत को उस समय गाया जाता है जब सुहागिन स्त्रियाँ उसके माथे पर, गौरहानी के न्योतने के समय प्रातःकाल और सन्ध्याकाल में गौरहानी बैठने के समय सेन्दूर लगाती हैं अथवा कुमारी कन्या की प्रथम बार माँग भरी जाती है जो सोहाग का चिह्न है ।

(११)

आज सोहाग की रात चन्दा तुम उइहौ
चन्दा तुम रइहौ।
आज भोर मत करियो, सुरुज जनि उइहौ
चन्दा तुम रइहौ।
चलिये सुगंध बयार धीरज मन धरियो
चन्दा तुम रइहौ।
झिलमिल तारे चमकियो सुरुज जनि उइहौ
चन्दा तुम रइहौ।
कलियाँ आज चटकियो,
घूँघट पट खोलियो, सजन मन भरियो।
चन्दा तुम रइहौ।

आज सोहाग की रात है; चाँद तुम निकलना, चाँद तुम रहना।

आज सबेरा मत करना—सूर्य मत निकलना, चाँद तुम रहना।

सुगंध वायु चल रही है; मन में धैर्य रखना, चाँद तुम रहना।

तारो! तुम झिलमिल चमकना; सूर्य तुम मत निकलना, चाँद तुम रहना।

कलियो! आज तुम खिलना, घूँघट-पट खोलना और साजन को हृदय से लगाना, चाँद तुम रहना।

सोहाग की रात में अपने पति को पास रखने की तीव्र आकांक्षा से नायिका प्रकृति से प्रार्थना कर रही है कि रात ही बनी रहे। इस दोहे में वही भाव रखा हुआ है—

सजन सकारे जायेंगे नैन मरेंगे रोय।
बिधिना ऐसी रैन कर कि भोर कबहुँ ना होय॥

विवाह

[टोना]

(१)

लाओ न चक कै माटी, झूमरिया का पानी ना।
कारे कौआ केरि चोंच मँगाईंनि औ मिरगा की आँखी ना॥ १॥
तीस रूख कै पाती मंगाईंनि, बत्तीस कुअँन का पानी ना।
इन सबहिन कै जन्त्र बनाइंनि बाँधौं दुलहे के हाथे ना॥ २॥
हाथे के बाँधे जुआँरी होइहैं, बाँधौं दुलहे के पाँयें ना।
पाँयें के बाँधे बिदेसी होइहैं, बाँधौ दुलहे की पीठी ना॥ ३॥
पीठी के बाँधे सेज न सोइहैं, बनरी के अंग लागै ना।
बाँधौ दुलहे की छाती ना।
छाती के बाँधे सेज पै सोइहैं, जलमु सुफल होइ जाई ना॥ ४॥
टोना पढ़ावन गई हैं कवन दई एतवार मंगल की राती ना।
टोना पढ़ाय घरै जब लौटीं, माया बहिनि घर जागै ना॥ ५॥
बोलावौ न उन आजी दुलहिन देई, उई कुछु अधिक सयानी ना।
उनके हैं 'मैके' के टोना अगर भये परिवाना ना॥ ६॥
और के टोना ऐसे तैसे—आजी के जगत बखाने ना।
औरे के टोना हालैं डोलैं, उनके धरि धमकावैं ना॥ ७॥

चक की मिट्टी लाओ—झूमरिया (गडुआ; झारी) का पानी लाओ। काले कौआ की चोंच मंगाई और मृग की आँखें मँगाई॥ १॥

तीस वृक्षों की पत्ती मँगवाई और बत्तीस कुओं का पानी मँगाया। इन सब को मिला कर जन्त्र बनाया। इसको दूल्हे के हाथ में बाँधो॥ २॥

हाथ के बाँधने से जुआरी होंगे, दूल्हे के पावों में बाँधो। और पावों के बाँधने से विदेशी होंगे इसलिये दूल्हे की पीठ से बाँध दो॥ ३॥

पीठ के बाँधने से सेज पर नहीं सोयेंगे अतएव बनरी (ब्याही जाने वाली कन्या) के अंग से नहीं लग सकेंगे इसलिए दूल्हे की छाती से बाँधो। छाती के बाँधने से सेज पर सोयेंगे जिससे जन्म सुफल हो जायेगा ।। ४ ।।

अमुक देवी रविवार और मंगल की रात टोना पढ़ाने गई हैं। टोना पढ़ा कर जब घर लौटीं तब माता और बहिन सब जाग रही थीं ।। ५ ।।

आजी देवी को बुलाओ। वह कुछ अधिक उम्र वाली हैं अर्थात् चतुर हैं। और उनके अपने मायके के टोना बहुत प्रवीण (सफल) सिद्ध हो चुके हैं ।।६।।

और लोगों के टोना साधारण हैं—आजी के टोना संसार में प्रसिद्ध हैं। और लोगों के टोने में शंका रह सकती है परन्तु उनके टोना पूरा प्रभाव करते हैं ।। ७ ।।

हमारे ग्रामीण जीवन में टोना-टोटका पर असीम विश्वास है। एक प्रकार से हमारा जीवन इसी प्रकार के अनेक विश्वासों पर चल रहा है जिनके सम्बन्ध में समुचित ज्ञान नहीं है। इन्हीं विश्वासों या अन्धविश्वासों से हमारा जीवन, विशेष रूप से ग्रामीण जीवन परिचालित होता है। प्रत्येक दुख का निराकरण देवी-देवताओं के द्वारा कराया जाता है; प्रत्येक आशंका का शमन टोनों-टोटकों से करवाया जाता है। नजर लगने का भय ग्रामों में विशेष रूप से होता है। कहीं दूल्हे के नजर न लग जाये इस भय से टोना तैयार करवाया जाता है और उसे दूल्हे की छाती में बाँधने का प्रस्ताव होता है जिससे उनकी लाड़ली बेटी का विवाहित जीवन सफल हो। वशीकरण, उच्चाटन भी इसी प्रकार के टोने हैं। यह गीत भी सुहागों के बाद गाया जाता है। इससे वातावरण में कुछ हलकापन आ जाता है जिससे स्त्रियों की थकावट भी दूर होती है और पर्याप्त मनोरंजन होता है।

विवाह

[द्वारचार]

(१)

जब रघुबर गलियन आइये।
उनके ससुरन गलियाँ भराइये ॥ १ ॥

जब रघुबर गोंइड़े मा आइये।
उनके सारेन घोड़वा खोंदाइये।
उनके सारेन लीन अगवानियाँ ॥ २ ॥
जब रघुबर द्वारे मा आइये।
उनके ससुरन आरती उतारिये।
उनकी चेरिया कलसु लीन्हें ठाढ़ी हैं ॥ ३ ॥
जब रघुबर मँड़ए मा आइये।
तब कन्या सेंधौरा लीन्हे ठाढ़ी हैं ॥ ४ ॥
जब रघुबर ज्यूतिनि आइये।
उनकी सरहज खेलावैं पंसासारिया ॥ ५ ॥
धन्नि धन्नि ससुर रामा भागि है,
धन्नि भइया रामा भागि है।
जिनके द्वारे पै रघुबर आइये ॥ ६ ॥

जब रघुवर गली में आये तो उनके ससुर ने गलियाँ साफ करवाईं ॥ १ ॥

जब रघुवर गोंईड़े (मकान के परकोटे) में आये तब उनके साले ने घोड़ा दौड़ाया; उनके साले ने अगवानी की अर्थात् आगे बढ़ कर स्वागत किया ॥ २ ॥

जब रघुवर दरवाजे पर आये तब उनके ससुर ने आरती उतारी और उनकी नौकरानियाँ कलश लिये दरवाजे पर खड़ी हैं ॥ ३ ॥

जब रघुवर मंडप में आये तो कन्या सेन्धौरा लिये खड़ी है ॥ ४ ॥

जब रघुवर ज्यूति पर आये तो उनकी सरहज उनको पंसासारी खेलाती हैं ॥ ५ ॥

ससुर रामा का भाग्य धन्य है; भैया रामा का भाग्य धन्य है जिनके दरवाजे पर रघुवर आये।

यह गीत उस समय गाया जाता है जब बारात की अगवानी हो जाती है और बारात कन्या के दरवाजे पर आ जाती है। उस समय दरवाजे पर शुभ

शकुन के लिये तथा स्वागतार्थ दो नौकरानियाँ सिर पर कलश लिये, जिन पर दीपक जला करते हैं, खड़ी रहती हैं। श्रीवर की पालकी बिलकुल दरवाजे पर लगा दी जाती है तब कन्या का पिता श्रीवर की आरती उतारता है। अन्य बरातियों को मिठाई, ठंडाई आदि से जलपान कराया जाता है। इस प्रकार स्वागत के उपरान्त बराती जनवासे चले जाते हैं जहाँ बारात के ठहरने का प्रबन्ध कन्या-पक्ष वाले करते हैं। अगवानी में कन्या-पक्ष के सम्बन्धी, कुटुम्बी ग्रामवासी तथा अन्य सभी बारात का स्वागत करने घर से बाहर जाते हैं। प्रायः यह अगवानी कन्या के ग्राम की सीमा पर की जाती है। वहाँ सभी लोग एकत्र हो कर बरातियों का स्वागत करते हैं। उस समय आतिशबाजी की जाती है और अधिकतम वैभव का प्रदर्शन किया जाता है। अगवानी के प्रकरण ने बड़ा ही रोचक रूप ग्रहण कर लिया है। दोनों पक्ष के लोग एक-एक कदम चलते हैं वह भी बिचवानी के आग्रह पर। यहाँ तक कि कन्या-पक्ष वाले भी दौड़ कर उनका स्वागत नहीं करते—वे भी धीरे-धीरे चलते हुए बरातियों के निकट पहुँचते हैं। तब कन्या-पक्ष वाले बरातियों के हाथ जोड़, पैर छू स्वागत करते हुए कन्या के दरवाजे पर ले आते हैं तभी द्वारचार होता है। ये सभी कार्य विशेष समय लेते हैं। इस समय ग्राम और कुलरीति के अनुसार कन्या भी श्रीवर का स्वागत करती है। अनेक स्थानों में गोरहानियों की जूठी पत्तलें श्रीवर पर कन्या के द्वारा फिंकवाई जाती हैं।

(२)

एकु माँगनु सीता माँगैं, जो सीता माँगे पावैं।
सीता माँग अजोध्या के राज, सरजू जी के दरसन॥ १॥
दूसर माँगनु सीता माँगैं, जो सीता माँगे पावैं।
सीता माँगैं कौसिल्या ऐसी सासु, ससुर राजा दसरथ॥ २॥
तीसर माँगैं सीता माँग, जो सीता माँगे पावैं।
बरु माँगनु भगवान्, देवर राजा लछिमन॥ ॥
हमतो कही बेटी अनुधनु मँगिहैं;
मोरी बेटी चतुर सयानि, सबै कुछु माँगिनि।
बेटी माँगैं अजोध्या के राज, सरजू जी के दरसन॥ ४॥

एक मांग सीता मांगती हैं जो मांगने से मिल जाये ! सीता अयोध्या जी का राज्य मांगती हैं और सरयू जी के दर्शन चाहती हैं ।। १ ।।

दूसरी मांग सीता मांगती हैं जो मांगने से मिल जाये ! सीता कौशल्या ऐसी सासु और राजा दशरथ ऐसे ससुर मांगती हैं ।। २ ।।

तीसरी मांग सीता मांगती हैं जो मांगने से मिल जाये ! श्री भगवान को वर के रूप में और लक्ष्मण को देवर के रूप में मांगती हैं ।। ३ ।।

हमने तो सोचा था कि बेटी अन्न-धन मांगेगी परन्तु बेटी बहुत चतुर हैं उन्होंने सब कुछ मांग लिया । बेटी ने अयोध्या का राज्य और सरयू जी के दर्शन मांगे ।। ४ ।।

यह गीत यद्यपि द्वारचार से सीधा सम्बन्ध नहीं रखता परन्तु इसी गीत के भाव--अयोध्या, राजा दशरथ तथा रामचन्द्र के नाम लेने से अधिक गम्भीर पवित्र तथा उच्च हो जाते हैं, जो बहुत प्रभावपूर्ण होते हैं । द्वारचार के समय कहीं-कहीं पर इसे भी गाया जाता है ।

विवाह

[विवाह के समय देवी-वन्दना]

(१)

गलियाँ की गलियाँ फिरैं भवानी, कोलियन पूछैं बात ।
केहि की दुलारी की जज्ञ रची है, जज्ञ देखन हम जाब ।। १ ।।
आवौ भवानी बैठौ मोरा अँगना, देहौं सतरँगिया बिछाय ।
घिय गुरु का हम होम करैबे, जो जज्ञ पूरन होय ।। २ ।।
जो तुम घी गुरु का करैहौ होम, देहौ सतरंगियाँ बिछाय ।
सोने का मौरु धरि ब्याहैं घर अइहैं, बार न बाँकु तुम्हार ।। ३ ।।

भवानी (देवी) गली-गली घूम रही है । कोलियों-कोलियों (छोटी गलियों) में पूछती ह—किसकी दुलारी का यज्ञ होने वाला है ? मैं यज्ञ देखने जाऊंगी ।। १ ।।

भवानी, आओ मेरे आँगन में बैठो। मैं तुम्हारे बैठने के लिये दरी बिछाये देती हूं। घी और गुड़ का हवन कराऊँगी। जो यह विवाह-यज्ञ पूर्ण हो जाये ॥ २ ॥

जो तुम घी-गुड का हवन कराओगी और बैठने के लिये दरी बिछा दोगी तो सोने का मौर रखकर तुम्हारे घर विवाह करने आयेंगे और तुम्हारा बाल भी बांका न होगा ॥ ३ ॥

इस गीत में यज्ञ की निर्विघ्न पूर्ति होने के लिये भवानी की प्रार्थना की गई है। विवाह इतना बड़ा कार्य है कि इसके निर्विघ्न पूर्ण हो जाने के सम्बन्ध में शंका बनी ही रहती है। ऐसी दशा में कार्य के प्रति उत्साह बनाये रखने के लिये देवी-देवताओं की पूजा अनिवार्य हो जाती है। और कन्या की मां अपनी देवी की मनौती मानती है।

विवाह (द)

[भाँवर]

(१)

लाई डारौ भइया लाई डारौ, मैं तो बहिनि तुम्हारि ।
पहिली भँवरिया के घुमतैं, भइया अबहूँ तुम्हारि ।
दुसरी भँवरिया के पैठत, दादुलि अबहूँ तुम्हारि ।
तिसरी भँवरिया के पैठत, भइया अबहूँ तुम्हारि ।
चौथी भँवरिया के पैठत, भइया अबहूँ तुम्हारि ।
पाँचवीं भँवरिया के पैठत, दादुलि अबहूँ तुम्हारि ।
छठी भँवरिया के पैठत, दादुलि अबहूँ तुम्हारि ।
सतवीं भँवरिया के पैठत, दादुलि भइनि परारि ।

भाई ! लाई डालो, लाई डालो में तुम्हारी बहिन हूँ ।
पहिली भांवर के घूमने पर भी भैया मैं तुम्हारी हूँ ।
दूसरी भांवर के घूमने पर मैं अब भी, पिता, तुम्हारी हूँ ।
तीसरी भांवर के घूमने पर मैं, भैया अब भी तुम्हारी हूँ ।
चौथी भांवर के पड़ते ही मैं, भैया, अब भी तुम्हारी हूँ ।
पांचवीं भांवर में घूमते ही, पिता, मैं अब भी तुम्हारी हूँ ।
छठी भांवर के घूमते ही, पिता, मैं अब भी तुम्हारी हूँ ।
सातवीं भांवर के पड़ते ही पिता मैं दूसरों की हो गई ।

भांवरें जिस समय पड़ती हैं उस समय यह गीत गाया जाता है । जैसे-जैसे भांवरें पड़ती जाती हैं उसी संख्या के अनुसार गीत गाया जाता है । परिस्थिति

के अनुसार वातावरण इतना शुभ परन्तु कन्या-पक्ष वालों के लिये अत्यधिक गम्भीर होता है। गाने के ढंग में भी वह अकुलाहट होती है कि गाने वाली स्त्रियाँ तक रोने लगती हैं। रात्रि की अपेक्षाकृत शान्ति में चतुर्दिक घूमती हुई गीत की लहरें सिसकियाँ भरती प्रतीत होती हैं। भाँवरों के लिये यही एक महत्त्वपूर्ण गीत है।

विवाह

[बाती]

(१)

बैठे बीत गई सारी राती, लालु तुम काहे न टारौ बाती।
कठिन धनुष शिवशंकर जी को तोरयो मारयो ताड़का घाती॥ १॥
बाती देखि जिय संका भई है, लिख्यो, मातु जी का पाती।
की जलनी भगिनी सिखलावा, का बाती लागें ताती॥ २॥
की बाती लै जइहौ अयोध्ये, मातु कौसिल्या काती।
न जलनी भगनी सिखलावा, न बाती लागें ताती॥ ३॥
माता हमरी कतनै न जानै, रघुबंसिनि की जाती।
चारि सखी ऐसे उठि बोलीं यह हमरे कुल रीती॥ ४॥
बाती टारौ नेगु चुकावौ, लेओ थारु भरि मोती।
ऐसो हठी कौसिल्या जायो, सब सखियाँ अलसातीं॥ ५॥
द्वार से आये राजा जनक जी, दियो हारु पहिराई।
बाती टारौ नेगु चुकावौ, लोग कुटुम्ब सब साथी॥ ६॥
यह बाती उनहो का सोहती, जो हमरे संघ जाती।
तुलसीदास भजौ भगवानै, सीता बियाह घर जाती॥ ७॥

"सारी रात बैठे बीत गई—लालु! तुम बत्ती क्यों नहीं मिलाते? शिवशंकर का कठिन (कठोर) धनुष तोड़ा और घात करने वाली ताड़का को मारा"॥ १॥

"बत्तियों को देख कर दिल में शंका हो गई है—इसलिए माता जी को चिट्ठी लिखी। क्या माता और बहिन ने सिखाया है या बत्ती गर्म मालूम होती है?" ॥ २ ॥

"क्या बत्ती अयोध्या ले जाओगे या बत्ती तुम्हारी माता कौशल्या की काती हुई है? न तो माँ और बहिन ने सिखाया है और न बत्ती गर्म लगती है" ॥ ३ ॥

"मेरी माता कातना ही नहीं जानती, रघुवंशी की जाति है। चार सखी इस प्रकार उठ कर बोलीं—यह हमारे कुल की रीति है" ॥ ४ ॥

बाती मिलाओ, नेग लो और थाल भर मोती लो। कौशल्या ने ऐसा हठी पुत्र पैदा किया है—सब सखियों को आलस लग रहा है ॥ ५ ॥

बाहर से राजा जनक जी आये और हार पहिना दिया। बत्ती मिलाओ? नेग पूरा करो—लोग कुटुम्ब सब साथ में हैं ॥ ६ ॥

यह बत्ती उन्ही को शोभा देती है जो हमारे संघ में जाती। तुलसीदास प्रभु भगवान का भजन करो—सीता का विवाह करके राम घर चले ॥ ७ ॥

इस गीत मे एक महत्त्वपूर्ण प्रथा की चर्चा की गई है। विवाह हो जाने के बाद अर्थात् सप्तपदी या सातों भाँवरों के हो जाने के बाद वर और कन्या को उस कोठरी या कक्ष में ले जाया जाता है, जहाँ घर की देवी दुर्गा होती हैं और मातृपूजन के दिन मातृ स्थापना की जाती है। वहाँ एक दीपक जलाया जाता है उसमें पृथक्-पृथक् दो बत्तियाँ जला करती हैं। कन्या की भावजें वर से इन दोनों ज्योतियों के मिलाने की प्रार्थना करती हैं। ज्योतियों के मिलाने के लिए सोने की शलाका प्रस्तुत की जाती है। साधारणतया वर कुछ अधिक प्राप्ति के लिए ज्योतियों के मिलाने से इन्कार करता है और अपनी माँग पेश करता है। यदि सम्भव हुआ तो सामर्थ्य के अनुसार उस माँग की पूर्ति उसी समय की जाती है अथवा वायदा कर दिया जाता है। वर इस पर ज्योतियों को मिला कर एक कर देता है उसी प्रकार आत्मा की दो ज्योतियाँ सदा के लिए एक हो जाती हैं। इस बीच में खूब हँसी मजाक होता है। बहू वर को और वर बहू को अपने हाथों से शरमाते हुए मिठाई खिलाते हैं। इसको लँहकौरि खिलाना कहते हैं। इसी समय द्यूत-क्रीड़ा की व्यवस्था की जाती है। और सरहजें कपड़े की गेंद बना कर जिसमें कुछ जेवर रखे जाते हैं सात बार उछालती हैं जो अधिक बार लोक लेता है उसका अधिकार दूसरे पर रहेगा ऐसा समझा जाता है। इस प्रकार की अनेक क्रीड़ाएँ होती हैं और हास्य-विनोद होता है।

विवाह

[जूता-पूजन]

(१)

लालु इन देवी के लागौ पाँव ।। १ ।।
ई देवी कुल पूज्य तुम्हारी, हिंया उचित है आई ।
ई देवी हैं साधु संत की, कलयुग पूजा पाई ।। २ ।।
प्रभु मुस्काये, कैसी देवी बैठी हैं बदन छिपाई ।
क्रोध प्रसन्न जानि कैसे पाये, बिना स्वरूप दिखाई ।। ३ ।।
कोई सखी मुख मोरि हँसी है, कोई सरमुख आई ।
आओ लाल तुम खेलौ सिया संग, तुम हो पढ़े पढ़ाये ।। ४ ।।
इन देवी चुनरी की छोरि रामजी ने पकड़ौं, तुम मेरी पनहीं चुराई ।
तुलसीदास भजौ भगवानै, रघुवंसिनि केरी जाती ।। ५ ।।

लालु, इन देवियों के पैर छुओ ।। १ ।।

ये देवी तुम्हारी कुल-पूज्य है यहाँ उचित समझ कर आई है । ये देवी साधु संतों की है कलयुग में इन्हीं की पूजा होती है ।। २ ।।

प्रभु मुस्कराये, ये कैसी देवी है जो अपना मुख छिपाये बैठी है ? क्रोधित है या प्रसन्न बिना स्वरूप देखे कैसे मालूम हो ।। ३ ।।

कोई सखी मुँह घुमा कर हँसी और कोई सम्मुख आ गई । आओ लालु तुम सीता के साथ खेलो, तुम सब सिखे पढ़े हो ।। ४ ।।

रामजी ने चुनरी को खोल कर सखी को पकड़ लिया—तुमने कैसे मेरे जूते चुराये ? तुलसीदास कहते हैं कि भगवान का भजन करो ये रघुवंशी जाति के हैं ।। ५ ।।

यह प्रथा बिलकुल हास्य-विनोद के लिए है । छोटी साली श्रीवर के जूते चुरा लाती है और श्रीवर जब बाती टारने पूजा-कक्ष में प्रवेश करते हैं तब उन्हीं जूतों को चुनरी में लपेट कर श्रीवर के सामने रखा जाता है और कहा जाता है कि ये तुम्हारी कुल देवी है इनके पैर छुओ । जिस श्रीवर को पहिले से यह ज्ञात

नहीं होता तो वह उस देवी के पैर छू लेता है जिस पर स्त्रियों के हास्य का अट्टहास गूँज उठता है। परन्तु इस गीत में राम सिखा कर भेजे गये हैं और राम ऊपर से उन्हीं स्त्रियों पर जूता चुराने का 'अभियोग' लगाते हैं। इससे भी खूब विनोद बढ़ता है।

विवाह

[कंगन छुड़ाने के समय का गीत]

(१)

हँसि पूछैं जनकपुर की नारी, कहौ कैसे गज के फन्द छुड़ायो।
गज और ग्राह लड़ैं जल भीतर, गज बूड़न नहिं पायो ॥ १ ॥
गज की टेर सुनी रघुनन्दन, पाँव पियादे धायो।
सेवरी के बेर सुदामा जी के तन्दुल हँसि हँसि भोग लगायो ॥ २ ॥
दुरजोधन घर मावा त्याग्यो साग बिदुर घर खायो।
राजा जनक जी की कन्या कुआँरी चहूँ दिसि पत्र पठायो ॥ ३ ॥
देस देस के भूप जुरे हैं काहू न चाप चढ़ायो।
कर कम्पै रघुनाथ तुम्हारे, मोहि भरोसु न आयो ॥ ४ ॥
सुनियत है तीनों लोक के नायक कैसे का चाप चढ़ायो।
जुरि आई रनिवास जनक की, सिय कंगन उरझायो ॥ ५ ॥
छोरे न छूटे सिया जी को कंगन गाँठी का मरम न पायो।
जल डूबत गजराज उबारयो, संकर चाप चढ़ायौ ॥ ६ ॥
खम्भ फोरि हिरनाकुस मारयो, नरसिंह नाम धरायौ।
तुलसीदास भजौ भगवाने, सीता बियाह घर लायो ॥ ७ ॥

जनकपुर की स्त्रियाँ हँस कर पूछती हैं कि कैसे हाथी को ग्राह के फन्द से छुड़ाया था। हाथी और मगर पानी के भीतर लड़ते रहे परन्तु हाथी डूबने नहीं पाया ॥ १ ॥

हाथी की पुकार रघुनन्दन तुमने सुनी तो नगे पाँवों दौड़े गये। सेबरी के बेरों और सुदामा जी के चावलों का हँस-हँस कर भोग लगाया ॥ २ ॥

दुर्योधन के घर का अच्छा भोजन त्याग कर बिदुर के घर में सूखा साग

खाया । राजा जनक जी की कन्या कुआँरी है चारों दिशाओं में चिट्ठी भेजी है ।। ३ ।।

अनेक देश के प्रतापी राजा एकत्र हुए हैं, परन्तु कोई भी धनुष न चढ़ा सका । तुम्हारे हाथों को काँपते देख कर मुझे विश्वास नहीं हुआ ।। ४ ।।

सुनते हैं तीनों लोक के स्वामी तुमने कैसे धनुष चढ़ा दिया ? जनक के रनिवास की रानियाँ एकत्र हो गई और सीता का कंगन उलझा दिया ।। ५ ।।

अब सीता जी का कंगन छुड़ाये नहीं छूटता, गाँठ का मर्म समझ में ही नहीं आता । डूबते हुए हाथी को बचाया और शंकर के धनुष को चढ़ाया ।।६।।

खम्भे को फाड़ कर हिरण्यकश्यप को मारा और नरसिंह के नाम से प्रख्यात हुए । तुलसीदास प्रभु कहते हैं, कि सीता को विवाह कर घर लाये।।७।।

इस गीत में धनुष तोड़ने वाले राम, हाथी को उबारने वाले भगवान की परीक्षा सीता, विवाह के समय अपने ढंग से ले रही हैं । सीता जी ने कंगन उलझा दिया है और राम नहीं खोल पा रहे हैं। इससे स्त्रियो का खूब विनोद होता है वह कहती हैं कि यही तुम्हारी बहादुरी है । और स्त्रियाँ खूब मजाक बनाती हैं ।

कंगन खोलने की प्रथा है । चतुर्थी के दिन अर्थात् विवाह के चौथे दिन जब विवाह की लगभग सभी प्रथाएँ समाप्त हो जाती हैं तब लग्न लगने के समय बाँधा हुआ कंगन भी छोड़ दिया जाता है और इस प्रकार कन्या पूर्ण-रूपेण पति की हो जाती है । इस कंगन के छुड़ाने में एक सुन्दर लोक-मान्यता छिपी हुई है। सर्वसाधारण का, विशेष रूप स्त्रियों का, ऐसा विश्वास है कि जितनी ही आसानी से पति कंगन खोल लेता है उतनी ही आसानी से वह पत्नी के स्नेह पर अधिकार प्राप्त कर लेता है; और प्रगाढ़ प्रेम होता है। इस समय पत्नी भी पति के हाथ में बंधे कंगन को खोलती है ।

विवाह

[गालियाँ]

विवाह में कलेवा के समय गाये जाने वाले हास-परिहास के गीत । इन्हें 'गालियाँ' कहते हैं ।

(१)

साँझ भई दिन अथवन लागा राधा ने सेज बिछाई जी ।
आधी रात निखण्ड का पहरा श्री कृष्ण चोरी का जाई जी ।। १ ।।

दुलरी चुरावैं तिलरी चुरावैं बाजूबन्द हाथ लगाई ।
भोर भई पौ फाटन लागी राधा उतर घर आई ॥ २ ॥
मातु जसोदा पूछन लागीं कस बहुआ बदन मलीन जी ।
काह कहौं मोरी सासू लाज सरम केरी बात है ।
ऐसा चोर मोर महलें आवा लैगा मोरी दुलरी चुराई ॥ ३ ॥

साँझ भई दिन अथवन लागा कृष्ण ने सेज बिछाई ।
आधी रात निखण्ड का पहरा राधा चोरी का जाई ॥ ४ ॥
मुकुट चुरावैं कुण्डल चुरावैं और बंसी मा हाथ लगाई ।
भोर भयो पौ फाटन लागी कृष्ण उतर घर आये ॥ ५ ॥

मातु जसोदा गोदी बैठाई कस पूता बदन मलीन ।
का कहौं माता कहिये न जाई लाज सरम केरी बात ॥ ६ ॥
ऐसा चोर मोरे महलन आया लैगा है बंसी उठाई ।
जेहि कर पूता तुम दुलरी चुराई वोहि तोरी बंसी चुराई ॥ ७ ॥
हम तो कही अम्मा लाहे के दुलरी तौ कौआ के गरे पहिराई ।
हम तो कही अम्मा बांस की बंसी तौ चूल्हे मा दीन लगाई ॥ ८ ॥

शाम हुई दिन डूबने लगा, राधा ने सेज बिछाई । आधी रात का समय था, सख्त पहरा था श्रीकृष्ण चोरी के लिये चले ।। १ ।।

दुलरी तिलरी चुराते-चुराते बाजूबन्द मे हाथ डाला । पौ फटने पर राधा महल मे उतर कर घर आई ।। २ ।।

माता जसोदा पूछने लगी, 'बहू तुम उदास क्यों हो ?' मेरी सासु में क्या कहूं लाज-शर्म को बात है । मेरे महल में एक ऐसा चोर आया कि मेरी दुलरी चुरा ले गया ।। ३ ।।

शाम हुई दिन डूबने लगा, कृष्ण ने सेज बिछाई । आधी रात का समय था, सख्त पहरा था और राधा चोरी के लिये चलीं ॥ ४ ॥

राधा मुकुट चुराती है, कुण्डल चुराती हैं और बंशी में भी हाथ लगाया । भोर हुआ, पौ फटने लगी, श्रीकृष्ण उतर कर घर आये ।। ५ ।।

माता जशोदा ने गोदी में बिठा कर पूछा, "बेटा क्यों उदास हो ?" क्या कहूं माता ! कहते नहीं बनता लाज-शर्म की बात है ।। ६ ।।

"मेरे महल में ऐसा चोर आया कि बंशी ही उठा कर ले गया ।" "जिसकी पुत्र तुमने दुलरी चुराई उसी ने तुम्हारी बंशी चुराई है" ।। ७ ।।

"मैं तो अम्मा समझा दुलरी लाख की है इसलिए कौए के गले में पहिना दी ।" "मैं तो अम्मा समझी कि बंशी बांस की है इसलिए चूल्हे में लगा दी" ।। ८ ।।

(२)

चलौ रे लरिकवौ वोहि बन जैये जहाँ बसै माया तुम्हारि ।
रामचन्द्र लवकुश जी से पूछैं कहाँ बसै माया तुम्हारि ।। १ ।।
बन मा मुनिन की बसत मड़ैया हुँए रहै माया हमारि ।
आगे हैं राम पीछे हैं लछिमन लव-कुश दून्हो भाई ।। २ ।।
काढ़ौ न अम्मा लम्बे लम्बै घंघटा कि आवत कन्त तुम्हारि ।
कन्त तुम्हारे माया पिता हमारे संघ मा लछिमन भाई ।। ३ ।।
तब सीता लरिकन ते बोलीं केहिका लायो लेवाई ।
जिनसे मैं पूता मोरे बोलहिऊ न चाहौं उनका लायो लेवाई ।। ४ ।।
जेठ वैसाख की जरत दुपहरी जियत दिहिनि बनवासु ।
ई बातें माया मन मा न लावौ चलौ अजोध्या बसावौ ।। ५ ।।
माता कौसिल्ला बाट निहारें कब अइहैं बहुआ हमारि ।
अब न अजौध्यै जैबे रे पूता हमैं अजोध्या न भावै ।। ६ ।।
रामचन्द्र मोरे बहुत पियारे आँखिन के रहैं तारे ।
गुन अवगुन कुछहू न जानिनि हमका दिहिन बनवासु ।। ७ ।।

लड़को ! चलो उस वन चलें जहाँ तुम्हारी माता निवास करती है । रामचन्द्र लव-कुश से पूछते हैं कि तुम्हारी माता कहाँ रहती है ? ।। १ ।।

मुनि के वन में बनी हुई मड़ैया (झोपड़ी) है वहीं मेरी माता निवास करती हैं । आगे राम, पीछे लक्ष्मण और लव-कुश दोनों भाई ।। २ ।।

अम्मा, लम्बा घूंघट काढ़ो तुम्हारे पति आ रहे हैं। तुम्हारे पति हैं और हमारे पिता हैं और साथ में लक्ष्मण भाई हैं ॥ ३ ॥

तब सीता लड़कों से बोलीं कि तुम किसको लिवा आये। मेरे पुत्र, जिनसे मैं बोलना भी नहीं चाहती तुम उन्हीं को बुला लाये ॥ ४ ॥

बैसाख-जेठ महीने की जलती दुपहरी में मुझे वनवास दिया। "माता, ये बातें मन में मत लाओ चलो अयोध्या चल कर बसाओ" ॥ ५ ॥

"माता कौशल्या तुम्हारी राह देख रही हैं कि मेरी बहू कब आती है।" "पुत्र, अब अयोध्या नहीं जाऊंगी, मुझे अयोध्या पसन्द नहीं है" ॥ ६ ॥

"रामचन्द्र मुझे बहुत प्यारे हैं मेरी आंखों के तारे हैं। मेरे गुण अवगुण कुछ भी न जाना और मुझे वनवास दे दिया ॥ ७ ॥

इस गीत में सीता की विद्रोही भावनाओं को बड़ी ईमानदारी के साथ प्रस्तुत किया गया है। राम की भांति अपनी पत्नी से व्यवहार न करने के लिये इस गीत में सीख भी है।

(३)

नन्हीं नन्हीं बुँदियन मेंह बरसि गयो आँगन परिगै काई जी।
तहाँ ना कवन बहिनी रपटि परी हैं मैं जान्यों नजरानी जी ॥ १ ॥
है कोऊ रसिया वैदवा देखै पतुरिया की नारी जी।
हमरे कवन रामा मेहरी के दुखिया उइ भल देखैं नारी जी ॥ २ ॥
नारी देखत पहुँचा धरि लीन्हेनि चलो धना सेज हमारी जी।
जब धर दीन्हेनि एकु ठई कौड़ी कूकुरि ऐसी बुँबुआनी जी ॥ ३ ॥
जब धरि दीन्हेनि लौंगन का बटुआ लौंग खाओ मेरी प्यारी जी।
जब धरि दीन्हेनि पानन का डिब्बा पान खाओ मेरी प्यारी जी।
जब धरि दीन्हेनि मोहरन के थैली रहस गरे लपिटानी जी ॥ ४ ॥

नन्हीं बूंदों में पानी बरस गया और आंगन में काई पड़ गई। वहां अमुक की बहिन फिसल पड़ी हैं मैंने समझा नजर लग गई है ॥ १ ॥

कोई रसिया वैद्य है जो इस पतुरिया (रंडी) की नाड़ी देखे ? हमारे अमुक रामा औरतों के दुखी हैं वह नाड़ी अच्छी तरह देखते हैं ।। २ ।।

नाड़ी देखते-देखते पहुँचा (बाँह) पकड़ लिया 'धना मेरी सेज चलो' । और जब केवल एक कौड़ी ही दी तब कुतिया की भाँति भूँकने लगी ।। ३ ।।

और जब लौंगों का डिब्बा रख दिया—मेरी प्यारी लौंग खाओ । और पानों का डिब्बा रख दिया—मेरी प्यारी पान खाओ । और जब मोहरों की थैली रख दी तो लपक कर गले से लिपट गई ।। ४ ।।

(४)

काहे के कोठरिया हो काहे के केंवार लगे ।
सोने कै कोठरिया हो चन्दन के केंवार लगे ।। १ ।।
वोहि कोठरी के भीतर हो नेवार का पलँग बिछा हो ।
वोहि पलंगे ऊपर हो अमुक बहिनी लेटति हो ।। २ ।।
वोही पलँगे ऊपर हो रसिया अमुक रामा लेटन हो ।
हमसे जनि बोलो हो राजन की हम बेटी ।। ३ ।।
घूंघट जनि खोलो हो राजन की हम बेटी ।
पैंया लागौ तुम्हारी हो गेंसी ते तुम उठि जाओ ।। ४ ।।
सकुचौ जनि प्यारी हो बहुत कुछ तुम्हें देब ।
हमैं कुछ न चाहिए हो हियाँ ते तुम चले जाओ ।। ५ ।।
मथुरा के पेड़ा हो तौ प्यारी खाय लेओ ।
गुस्सा जनि होओ हो तौ तोब मैं तुम्हार ।। ६ ।।

काहे की कोठरी है और काहे के किवाड़ लगे हैं ? सोने की कोठरी है और चन्दन के किवाड़ लगे हैं ।। १ ।।

उस कोठरी के भीतर निवाड़ का पलँग बिछा है उस पर अमुक की बहिन सो रही है ।। २ ।।

उसी पलँग पर रसिया अमुक रामा भी लेटते हैं । "मुझ से मत बोलो मैं राजा की बेटी हूँ ।। ३ ।।

घूँघट मत खोलो, मैं राजा की बेटी हूँ मैं तुम्हारे पैर पड़ती हूँ तुम यहाँ से चले जाओ ।। ४ ।।

प्यारी, संकोच मत करो मैं तुम्हें बहुत कुछ दूँगा । मुझे कुछ नहीं चाहिए तुम यहाँ से चले जाओ ।। ५ ।।

प्यारी, मथुरा के पेड़ा हैं खा लो । गुस्सा मत हो, मैं तुम्हारे ताबे में (कब्जे) हूँ ।। ६ ।।

इन सभी परिहास के गीतों में श्रीवर की बहन को गालियाँ दी जाती हैं। वैसे तो समधिन इत्यादि सभी के साथ परिहास किया जाता है परन्तु कलेवा में, क्योंकि श्रीवर ही अपने छोटे भाइयों के साथ होता है इसलिए, उसकी बहन के प्रति ही परिहास प्रकट किया जाता है। इसी प्रकार परिहास के गीत भात और बढ़ार की दावतों में गाये जाते हैं जिनमें समधिन के प्रति परिहास के भाव प्रकट किये जाते हैं । बाद में एक गीत में इन गालियों का बुरा न मानने की प्रार्थना भी कर ली जाती है—

"इन गारिन के अनख न मन्यो गारी अजब पियारी" सचमुच ससुराल में इस प्रकार गाली सुनने का अवसर बार-बार नहीं आता ।

विवाह

विदा

यह गीत प्रायः कहीं-कहीं कन्या की विदा में गाया जाता है । बहुत जगहों पर विदा का गीत बिलकुल ही नहीं गाया जाता ।

(१)

देखौ री छबि नैनन भरि होत बरात विदा रघुबर की ।
काम काज सब त्यागन करिके ऊँच महल चढ़ि देखन चलिए ।। १ ।।
जलम जलम के पाप कटति हैं आपन जल्मु सुफल करि लेव री ।
धन्नि अवधपुर धन्नि मिथिलापुर धन्नि सरजू को निरमल जल है ।।२।।
धन्नि भूप जिनके दून्हों बालक धन्नि धन्नि कौसिल्ला माई ।
धन्नि धन्नि वोहि मन्दिर की है धन्नि सिया जिन येहु बरु पाई ।। ३ ।।

दोऊ कर जोरे ठाढ़े जनक जी सुनौ न लोगों बात हमारी।
अबको बार सिया न पठैहौं फेरि आवैं रघुपति रघुराई ॥ ४ ॥
जनकपुर से ब्याही चले हैं नगर अयोध्या मा बजत बधाई।
तुलसीदास भजो भगवानै हरि के चरन पर ध्यान लगाई ॥ ५ ॥

सब आँखें भर-भर देख लो, रघुबर की बारात विदा हो रही है। सब कार्य छोड़ कर ऊँचे महलों पर चढ़ कर देखने चलो ॥ १ ॥

जन्मों के पाप कट जाते हैं अपना जन्म सफल कर लो अवधपुर और मिथिला धन्य है और धन्य है सरयू-जल ॥ २ ॥

वह राजा धन्य है जिनके ये दोनों पुत्र हैं और धन्य कौशल्या माता हैं। वह मन्दिर धन्य है और सीता जी धन्य हैं जिन्होंने ऐसा वर पाया ॥ ३ ॥

जनक जी दोनों हाथ जोड़े खड़े हैं, लोगों मेरी बात सुनो। इस बार सीता को नहीं भेजूँगा। रघुपति रघुराई फिर विदा कराने आवें ॥ ४ ॥

जनकपुर से विवाह करके चले हैं और अयोध्या नगर में बधाई बज रही है। तुलसीदास जी कहते हैं कि हरि के चरणों में ध्यान लगा कर भगवान का भजन करो ॥ ५ ॥

बिदा के और भी गीत हैं जो बारात की बिदा के समय गाये जाते हैं।

———

विवाह (इ)

[वरपक्ष]

तिलक के अवसर पर

(१)

नउआ तो आवा तिलकु लैके बरिया लगन लैके।
कौनु बाबा का दरवाजु मैं तिलकु चढ़ैहौं।
कौनु चाचन का दरवाजु मैं तिलकु चढ़ैहौं ॥ १ ॥
ऊँचे ऊँचे कँगुरवा तो नेहले दुअरवा,
वहै बाबन दरवाजु तौ तिलकु चढ़ावौ।
वहै चाचन दरवाजु तौ तिलकु चढ़ावौ ॥ २ ॥

नाई तिलक लेकर और बारी लग्न लेकर आया है। बाबा का कौन सा घर है मैं तिलक चढ़ाऊँगा ? चाचा का कौन सा घर है ? मैं तिलक चढ़ाऊँगा ॥ १ ॥

जिसमें ऊंचे-ऊंचे कंगूरे हैं और नीचे दरवाजे हैं वही बाबा का दरवाजा है तुम तिलक चढ़ाओ, वही चाचा का दरवाजा है तुम तिलक चढ़ाओ ॥ २ ॥

जब वरीक्षा हो जाती है अर्थात् जब लड़का पक्का हो जाता है तो उस समय १ रुपया श्रीवर के हाथ में दिया जाता है। इसको बैसवाड़ी में छिदना भी कहते हैं। यह वर पक्का करने का एक प्रकार का, भोंड़ी भाषा में, बयाना है।

वरीक्षा हो जाने पर शुभ मुहूर्त में तिलक भेजा जाता है। तिलक को फलदान भी कहते हैं। फलदान में नारियल, हल्दी, सुपारी वगैरह जरूर होती हैं। इसी के साथ कन्या-पक्ष से लग्न भी आती है जिसमें विवाह की तिथि, नक्षत्र,

समय आदि सभी विस्तार से दिये रहते हैं उसी के अनुसार विवाह होता है। उस लगन के पीले कागज में पीले चावल, सुपारी तथा हल्दी रखी जाती है और उसे मोड़ कर कच्चे पीले धागे या बन्दन या कलाव से बाँध दिया जाता है; उस पर स्वस्तिक का चिह्न रहता है।

विवाह

वर यात्रा के गीत

निकासी (निकरौसी) के गीत

विवाह की यात्रा पर चलने के समय ये गीत गाये जाते हैं।

वर-यात्रा के गीत

(१)

साजौं साजौं होइ रहा संग साथी कोऊ नहिं होय रे।
साथी तो होइ हैं बाबा उनके जिनका नाती बिआहन जाय।

साजो साजो की पुकार हो रही है परन्तु साथ में चलने के लिये कोई नहीं है। उनके साथ तो उनके बाबा जायेंगे जिनका नाती विवाह करने जा रहा है।

मातृपूजन के दिन श्रीवर जब घर से विवाह करने के लिये निकलता है और देवी पूजने, खेत पूजने और कुँआ पूजने के लिये चलते हैं तब पालकी के साथ चलने वाला स्त्रियों का जुलूस इसी प्रकार के गीत गाता हुआ उमड़ता चलता है। इस गीत में बारात में शामिल होने के लिये एक प्रकार का चुनौती भरा हुआ न्यौता है।

नोट—बाबा के स्थान पर अनेक अन्य कुटुम्बी तथा सम्बन्धी जनों के नाम लगा कर गीत गाया जाता है जिससे गीत खूब देर तक चलता रहता है।

(२)

कारी औ पीरी बदरिया बदर तुम जनि बरसहु आजु रे।
आजी के उमँह दुलरुआ, उइ तौ चलौचलौ करें आजु रे॥ १॥

घोड़वा का नाँव कुमइता, असवरवा कोऊ नहि होय रे।
असवरवा तौ होइ हैं बाबा उनके, जिनके नाती बिआहन
जाय ॥ २ ॥

ओ काले पीले बादल, आज तुम मत बरसो। आजी के दुलरुआ उत्साहित हो कर चलो चलो कर रहे हैं ॥ १ ॥

उनके घोड़े का नाम कुमैता है उस पर कोई सवार ही नहीं होता। उनके बाबा उस पर सवार होंगे जिनका नाती विवाह करने जा रहा है ॥ २ ॥

नोट—इस गीत में भी आजी के स्थान पर माता, चाची आदि तथा बाबा के स्थान पर काका, चाचा, फूफा आदि लगा कर गाया जाता है।

(३)

को यह सागरु खोदावा, को बँधावा पक्का घाटु रे।
दुलहे निहुरि निहुरि पूजैं पक्का घाटु रे ॥ १ ॥
बाबन सागरु खोदावा, दादुलि बँधावा पक्का घाटु रे।
दुलहे निहुरि निहुरि पूजैं पक्का घाटु रे ॥ २ ॥

किसने यह तालाब खुदवाया और किसी ने पक्का घाट बनवाया? दूल्हा झुक-झुक कर पक्का घाट पूजता है ॥ १ ॥

बाबा ने तालाब खुदवाया और पिता जी ने पक्का घाट बनवाया। दूल्हा झुक-झुक कर पक्का घाट पूजता है ॥ २ ॥

यह गीत कुआँ पूजते समय गाया जाता है। कुआँ पूजने का ढंग बड़ा रोचक है। इस प्रकरण को कुँआ का व्याहना कहा जाता है। श्रीवर आगे, उसके पीछे उसकी माँ और उसके पीछे उसकी भावज और अन्य सात सुहागिनें (सौभाग्यवती स्त्रियाँ) कुआँ के सात फेरे डालती हैं। तत्पश्चात् माँ कुएँ में पाँव डाल कर "मैं कुएँ में कूदती हूँ" कह कर बैठ जाती है। पुत्र पाँव छूकर उनको मानता है और जीवन पर्यन्त-माता की रक्षा की प्रतिज्ञा करता

है। इसके बाद माँ अपने स्तन से दूध पिलाती है जिसका अर्थ है कि मेरे दूध की लाज रखना और अपनी प्रतिज्ञा पूरी करना।

(४)

"तुम तौ पूता मोरे चलिभ्यो बिग्राहन, मोरे दुधवा का मोलु
दीन्हे जाव।"
"गइया का मोलु, भइँसिया का मोलु, माता तुम्हारा मोलु
कैसे होय।"

मेरे पुत्र तुम तो विवाह के लिए चल दिये मेरे दूध का मूल्य चुकाये जाओ। गाय का मूल्य होता है, भैंस का मूल्य होता है, माता तुम्हारा मूल्य कैसे हो सकता है?

इस गीत में विवाह के लिये जाने वाले पुत्र को माता के प्रति उसके ऋण की याद दिलाई जाती है। विवाह होने के बाद संभव है कि पुत्र माता के प्रति अपने कर्त्तव्यों को भुला दे। उस समय पुत्र के मन में यह भाव बैठा दिया जाता है कि माता के ऋण से वह कभी उऋण नहीं हो सकता।

विवाह

लड़के के विवाह में गाये जाने वाले गीत

(१)

कहँाना उपजी है जिरिया जवाँइनि, कहँाना बेलहरे के पान।
केहि कोखि उपजे हैं दुलहे दुलरुआ, कहँाना बिग्राहन जायँ॥ १॥
खेतवे उपजी है जिरिया जवाइनि, भिटवा बेलहरे के पान।
माया कोखी उपजे हैं दुलहे दुलरुआ, सहर बिग्राहन जायँ॥ २॥
केहि हाथ पठवौं मैं खैर सुपरिया, केहि हाथ बँगला के पान।
केहि हाथ पठवौं मैं थन केरा दुधवा, दूध बिनु जैहैं कुम्हिलाय॥ ३॥
बनिया हाथे पठवौं मैं खैर सुपरिया, तम्बोली हाथे बँगला के पान।
बाबा हाथे पठवौं मैं थन केरा दुधवा, दूध बिनु जैहैं कुम्हिलाय॥ ४॥

ऊँचे चढ़ि चढ़ि माया जो देखैं, सहरु है कितनी दूरि।
हमरे दुलरुआ बिआहन गे हैं, दूध बिन जैहैं कुम्हिलाय ॥ ५ ॥
हिंयना ते समधिन चिट्ठी लिखि भेजा, धर्‌यो समधिनि का हाथ।
हमरे दुलरुआ का दूध पियाओ, अँचरे कै कीन्ह्यो बयारि ॥ ६ ॥
हुँअना ते समधिनि चिट्ठी लिखि भेजिनि, मोर दुलरुआ कि तुम्हार।
अपने दुलरुआ का दूध पिअइबै, अँचरे कै करिबे बयारि ॥ ७ ॥

जीरा और अजवाइन कहाँ पैदा हुई है, और बेलहरे (पान रखने के लिए बाँस की बन्द हो सकने वाली डिब्बी) वाले पान कहाँ पैदा हुए हैं? किस कोख से दूल्हे रामा पैदा हुये हैं और विवाह के लिए कहाँ जा रहे हैं? ॥ १ ॥

खेत में जीरा अजवाइन पैदा हुई है और भीट में बेलहरे के पान? माता की कोख से दूल्हे दुलरुआ रामा पैदा हुए हैं जो शहर विवाह के लिए जा रहे हैं ॥ २ ॥

किसके हाथ में कत्था-सुपारी भेजूँ और किसके हाथ बँगला पान भेजूँ? किसके हाथ में स्तन का दूध भेजूँ? दूध के बिना कुम्हला जायेंगे ॥ ३ ॥

बनिया के हाथ कत्था-सुपारी भेजूँगी और तम्बोली के हाथ पान। और बाबा के हाथ स्तन का दूध भेजूँगी—दूध के बिना कुम्हला जायेंगे ॥ ४ ॥

ऊँचे पर चढ़ कर माता देख रही हैं कि शहर कितनी दूर है। मेरे दुलारे विवाह के लिए गये हैं—दूध के बिना कुम्हला जायेंगे ॥ ५ ॥

यहाँ से समधिन चिट्ठी लिख कर भेजी—समधिन का हाथ पकड़ा। मेरे दुलरुआ को दूध पिलाना और आँचल से हवा करना ॥ ६ ॥

वहाँ से समधिन ने चिट्ठी लिख कर भेजी कि दुलरुआ मेरा है या तुम्हारा? अपने दुलरुआ को दूध पिलाऊँगी और आँचल से हवा करूंगी ॥ ७ ॥

यह गीत बाल-विवाह की ओर संकेत करता है। माता अपने पुत्र से दो-चार दिन के लिए भी जुदा होने पर चिन्तित और व्यग्र हो सकती है परन्तु स्तन के दूध की बात नहीं कर सकती। इसके अतिरिक्त कुआँ पूजने के समय विवाह के लिए जाने वाले पुत्र को स्तनपान कराना भी इसी तथ्य की ओर संकेत करता है। इन दोनों कथनों का समाधान किया जा सकता है। समधिन को चिट्ठी

लिख कर भेजना कि मेरे दुलरुग्रा को दूध पिलाना यह स्त्रियों का परिहास हो सकता है। ग्रधिक से ग्रधिक इसका यह ग्रर्थ हो सकता है कि दुलरुग्रा की ठीक से देखभाल करना। कुग्राँ पूजने के समय का स्तनपान प्रतीकात्मक है जिससे पुत्र को माता के प्रति कर्तव्यों की याद दिलाई जाती है। परन्तु फिर भी इन बातों की चर्चा एवं प्रथापूर्ति के लिए स्तनपान यह प्रदर्शित करता है कि पुत्र निश्चय ही ग्रायु में कम होगा।

इस गीत से दूसरी बात यह प्रकट होती है कि विवाह में जाने वाला दूल्हा ससुराल में प्रथम बार ही ग्रधिक दिन टिकते थे। लड़की के विवाह के कुछ गीतों में ऐसे संकेत हे जिनमे पति-पत्नी वही लड़की के घर साथ सोते हे। लड़की ग्रपने वर को बुलाती है मेरी सेज पर ग्राग्रो। श्रीवर कहता है तुम्हारी माता ग्रौर बहिन ग्राड़ में नहीं हें इत्यादि।

(२)

लाल गाई केर लाल बछड़ा चरत हरी हरी दूब।
दुबिया चरत बछड़ा लेल्हरी करत है, मांगन मगरू खोदाग्रो ॥ १॥
माया के दुलरूग्रा दुलहे रामा, पियत कटोरवन दूधु।
दूधा पियत बेटा लेल्हरी करत हैं मांगन मौरु गढ़ाग्रो ॥ २॥
लागे देव कनउज मा हटिया बजरिया, बसै देव सुघरमी नारि।
सोने का मौरु गढ़ाव मोरे दुलहे, ससुर गलिया फहराय ॥ ३ ॥

लाल गाय का लाल बछड़ा है जो हरी दूब चर रहा है। दूब चरते-चरते बछड़ा खेलता है ग्रौर कहता है कि—तालाब खोदाग्रो ॥ १ ॥

उसी प्रकार माता के दुलारे दुलरुग्रा कटोरों दूध पीते हें। दूध पीते-पीते बेटा खेल करते हे ग्रौर कहते हें कि मौर बनाग्रो ॥ २ ॥

कन्नौज में हाट बाजार लगने दो ग्रौर सुन्दर स्त्री को बस जाने दो। सोने का मौर मेरे दूल्हे गढ़ाग्रो जो ससुर की गली में फहराये ॥ ३ ॥

इस गीत से भी श्रीवर का छोटा होना सिद्ध होता है।

(३)

मैं तुमसे पूछौं नदिया गोसाइनि कौने गुन डभइल पानी ।
की तोरा पनिया मछरी हिलोरा, की तोरा गिरा है कगार ॥ १ ॥
न मोरा पनिया मछरी हिलोरा, न मोरा गिरा है कगार ।
ये ही बाट आये हैं दुलहे के बाबा, वोही गुनु डभइल पानी ॥ २ ॥
येही बाट आये हैं हाथी औ घोड़, गरद उठी असमान ।
नाचत आवैं समधी की पतुरैं, वोही गुनु डभइल पानी ॥ ३ ॥

मैं तुमसे पूछती हूँ नदी गोसाइन ! कि किस कारण तुम्हारा पानी गन्दा है ? क्या तेरे पानी को मछली ने हिलोर दिया है या तुम्हारा कगार गिर गया है ? ॥ १ ॥

न तो मछलियों ने मेरा पानी हिलोरा है और न कगार गिरा है । इसी रास्ते से दूल्हे के बाबा आये हैं इसी से पानी गन्दा है ॥ २ ॥

इसी रास्ते से हाथी और घोड़े आये हैं जिससे धूल आकाश तक उठी है । समधी की रंडियाँ नाचती आयी हैं इसीलिये पानी गन्दा है ॥ ३ ॥

इस गीत में सुन्दर आलंकारिक ढंग से बारात का वैभव प्रकट किया गया है ।

(४)

झिरि झिरि झिरि झिरि नदिया बहति है, बैठे दुलहिन देई न्हाय ।
दुलहे दुलरुआ चिट्ठी लिखि भेजा, अरे हारु नदी न बहि जाय ॥ १ ॥
हारु तौ धरा मोरी आजी की पिटरिया, मोतियन भरी मोरी माँग ।
तुम प्रभू आपन मौरु सँभारौ, घामु देखे कुम्हिलाय ॥ २ ॥
दस मोरे आगे दस मोरे पाछे, बाबा चाचा मोरे साथ ।
भइया सबै जने जबरै चलति हैं, मौरु धूमिल कस होय ॥ ३ ॥

नदी धीरे-धीरे बहती है और वहीं दुलहिन देवी बैठी नहा रही हैं। दूल्हे दुलरुआ ने चिट्ठी लिख कर भेजी कि सँभालना कहीं हार न बह जाये ।।१।।

हार तो मेरी आजी की पिटारी में रखा है और मेरी माँग मोतियों से भरी है। तुम प्रभु, अपना मौर सँभालो वह धूप देखने से कुम्हला जाता है।। २ ।।

दस मेरे आगे और दस ही मेरे पीछे और बाबा चाचा मेरे साथ हैं। सभी भाई पास ही चलते ह—मौर धूमिल (कान्तिहीन) कैसे होगा ।। ३ ।।

(५)

मोरे पिछवारे सुपरिया का बिरवा अलग विलग वोहि के डार।
तेहि तरे ठाढ़ें हैं दुलहै दुलरुआ, तूरैं सुपरिया कै डार ।। १ ।।
सभिया मा बैठे हैं बाबा सबै जने, मालिनि ओरहनु देय।
बरजौ न पंडित अपने दुलरुआ, तूरैं सुपरिया कै डार ।। २ ।।
बारे होंय तौ बरजौं री मालिनि, छैलु बरजि नहिं जाय।
बारह बरस के दुलहे दुलरुआ, मोर बूते बरजि न जाय ।। ३ ।।

मेरे घर के पिछवारे एक सुपाड़ी का वृक्ष है उसकी डालें पृथक्-पृथक् हैं। उसके नीचे दूल्हा दुलरुआ खड़े सुपाड़ी की डाल तोड़ रहे हैं ।। १ ।।

सभा में बाबा और सभी लोग बैठे हुए हैं। मालिन उलाहना देती है। पंडित अपने दुलरुआ को डाँटो वह सुपाड़ी की डाल तोड़ता है ।। २ ।।

अरी मालिन यदि छोटे हो तो डाँटूँ—छैला को डाँटा नहीं जा सकता। बारह वर्ष के दूल्हे दुलरुआ को मैं डाँटने में असमर्थ हूँ ।। ३ ।।

सुपारी के वृक्ष में डालें नहीं होतीं और वह बहुत ऊंचा होता है। हाथ से उसके नीचे खड़े होकर कोई सुपारी नहीं तोड़ सकता। अतएव यह एक सांकेतिक भाव से ओतप्रोत गीत है जिसमें सुपाड़ी के तोड़ने की बात कह कर उसे छैला घोषित किया है। स्तनों का प्रारम्भिक रूप सुपाड़ी के आकार का होता है। यही इस गीत का संकेत है इसलिये अब इसका विवाह कर देना चाहिए।

(६)

माली सोवै लाली चौपरिया, मालिनि जगावन जाय।
उठहु न मलिया भोरु भयो है, अँगने श्रीबर ठाढ़ि ॥ १ ॥
नैन खोलि जब देखै मलिया, अँगने श्रीबर ठाढ़ि।
कौन गरज तुम्हें लागि रे दुलहै, आयहु बड़े भिन्सार ॥ २ ॥
एतना बचनु सुनि बोले श्रीबर, सुनु मलिया बचनु हमार।
मौर गरज हमैं लागि रे मलिया, आयेन बड़े भिन्सार ॥ ३ ॥
लागै देओ हटिया लागे देओ बजरिया, बसै देओ सुघर सोनार।
सोने का मौरु गढ़ावहुँ रे दुलहै, ससुर गलिया फहराय ॥ ४ ॥

लाल चौपाल में माली सो रहा है—मालिन जगाने जाती है। "माली, सबेरा हो गया है श्रीवर आंगन में खड़े हैं उठो न" ॥ १ ॥

आंखें खोल कर जब माली देखता है तो आंगन में श्रीवर खड़े हैं। "कौन सा काम, दूल्हेराजा, तुम्हारा आ पड़ा कि बड़ी सुबह आये हो?" ॥ २ ॥

इतना सुन कर श्रीवर बोले—"माली मेरी बात सुनो। माली मुझे मौर की आवश्यकता है इसीलिए इतने सबेरे आया हूँ" ॥ ३ ॥

"हाट बाजार लगने दो और सुघर सोनारों को बस जाने दो। रे दूल्हे सोने का मौर गढ़ दूंगा जो ससुर की गली में फहरायेगा" ॥ ४ ॥

मौर पर कटाक्ष करते हुए आजकल प्रायः लोग उसे monkey cap के नाम से पुकारते हैं। बाँस की खपाचों के ढाँचे पर चमकीले कागज तथा नकली मोती लगा कर मौर बनाया जाता है। मातृपूजन के पश्चात् जब निकासी होती है तब से यह मौर श्रीवर के सिर पर रखा रहना चाहिए।

(७)

मैं तुमसे पूँछौं दुलरुआ कौने गुन रह्यो कुँवार ॥ १ ॥
अँखियाँ तो तुम्हरी आम केरी फाँकैं भौंहें चढ़ी कमान।
बँहियाँ तो तुम्हरी कुड़ेले की भाँई कौने गुनु रह्यो कुँआर ॥ २ ॥

बाबा हमरे देसनी के ठाकुर, पितियऊ दर के देवान ।
माया हमरी नैहरवा कै मातीं, यहि गुन रह्यों कुआँर ॥ ३ ॥
छाँड़ि देओ दादुलि देसनी की ठकुरई, पितियउ दर के देवान ।
माया हमरी घरै चलि आवहु, हिलि मिलि रचहु बिआहु ॥ ४ ॥

दुलरुआ मैं तुमसे पूछती हूं कि तुम कुंआरे कैसे रह गये ? ॥ १ ॥

आँखें तो तुम्हारी आम की फांकों के समान हैं और भौंहें कमान की तरह चढ़ी हैं । और बाहें जैसे कुम्हार के चाक में बनाई गई हों, इतनी सुन्दर हैं फिर भी तुम कुंआर कैसे रहे ? ॥ २ ॥

हमारे बाबा देशों के ठाकुर—स्वामी हैं, चाचा राजा के दीवान हैं । मेरी माता नैहर में ही मस्त रहती है इसी से मैं कुंआर रह गया ॥ ३ ॥

पिता देशों की ठकुराई (स्वामित्व) छोड़ दो और चाचा दीवानी छोड़ दो। मेरी माता घर चली आओ और हिलमिल कर विवाह करो ॥ ४ ॥

(८)

को मोरे राम कै पगिया सँवारै को मोरे साजै बरात ।
को मोरे राम का छरपुरिया बनावै, महकत चलहिं बरात ॥ १ ॥
दसरथ राम कै पगिया सँवारैं लछिमन साजैं हैं बरात ।
माता कौसिल्या छरपुरिया बनावैं महकत चलहिं बरात ॥ २ ॥

मेरे राम की पगिया कौन सँवारे और कौन बरात सजावे । और मेरे राम के लिये कौन छरपुरिया बनावे कि बरात सुगंधि फैलाती चले ॥ १ ॥

राजा दशरथ पगिया सँवारें और लक्ष्मण बरात सजावें; माता कौशल्या छरपुरिया बनावें जिससे बरात सुगन्धि फैलाती चले ॥ २ ॥

(९)

मायन ललना बोलाइनि जाँघ बैठाइनि ।
पूता कहौ ससुरारी के हाल तो कौनि जुगुति ते । १ ॥
जबहिं गयन वोहि की गलियन सुनो मोरी माता ।
माँ तो ससरन गलियन फराग्रा तो बहुत जगति ते ॥ २ ॥

माँ तौ सारेन घोड़वा खोंदावा तो बहुत जुगुति ते ।
माँ तौ सारेन लीन्ह् अगवानी तो बहुत जुगुति ते ॥ ३ ॥

जबहिं गयेन वोहि द्वारे, सुनौ मोरी माया ।
माया चेरिया कलस लीन्हे ठाढ़ीं तो मानिक दिया बरैं ।
माया ससुरन आरती उतारी तो बहुत जुगुति ते ॥ ४ ॥

जबहिं गयेन वोहि के भीतर, सुनो मोरी माया ।
माया सासु परछि घर लेंहि तौ मोतियन माँग भरे ॥ ५ ॥

जबहिं गयेन वोहि के मँड़ये, सुनो मोरी माया ।
माया कन्या सेंधौरा लीन्हे ठाढ़ि, तौ पंडित वेदु पढ़ैं ॥ ६ ॥

जबहिं गयेन वोहि की ज्यूति, सुनो मोरी माया ।
माया सरहज खेलावैं पसासारी तो मोतियन माँग भरे ॥ ७ ॥

जबहिं गयेन वोहि की सेज, सुनो मोरी माया ।
माया नाजो ने हिरदय लगाया तो बहुत अरज करै ॥ ८ ॥

माँ ने अपने पुत्र को बुलाया और जांघ पर बैठाया । पुत्र अच्छी तरह से ससुराल के समाचार सुनाओ ॥ १ ॥

मेरी बात सुनो—जभी मैं उनकी गली में गया तो ससुर ने अच्छी तरह गलियाँ साफ करवाई ॥ २ ॥

माँ ! साले ने खूब घोडा दौड़ाया और साले ने अच्छी तरह अगवानी की ॥ ३ ॥

मेरी माँ सुनो—जभी मैं उनके दरवाजे पर गया, उनकी नौकरानियाँ कलश लिये खड़ी थीं जिन पर मोतियों के दिये जल रहे थे । और ससुर ने आरती उतारी ॥ ४ ॥

मेरी माँ सुनो--जब मैं उसके भीतर गया । तो मोतियों से माँग भरे सासु पकड कर घर ले गई ॥ ५ ॥

मेरी माँ सुनो—जबी मैं उनके मंडप में गया तो वहाँ कन्या सेन्धौरा लिये खडी थी और पंडित वेद पढ रहे थे ॥ ६ ॥

मेरी माँ सुनो--जभी मैं उनकी ज्यूति (द्यूतक्रीड़ा स्थल) में गया तो वहाँ पर सरहजों ने (साले की पत्नी) मोतियों से माँग भरे हुए, पंसासारि खेलाया ॥ ७ ॥

ग्रौर मेरी माँ सुनो, जभी में उसकी सेज पर गया तो नाजो (पत्नी) ने हृदय से लगाया ग्रौर बहुत बिनती करने लगी ।। ८ ।।

इस गीत में संक्षेप में उन सबी बातों का वर्णन किया गया है जो विवाह के अवसर पर पुत्र की ससुराल में होती हैं। अन्तिम पंक्ति में व्यक्त विचार आजकल यथार्थ में कहीं नहीं मिलते । ससुराल में विवाह के अवसर पर ऐसा कोई मौका नहीं आता जब दूल्हा अपनी पत्नी की सेज पर जा सके । संभव है किसी समय इस प्रकार की प्रथा रही हो; परन्तु अनेक प्रकार की कठिनाइयों ग्रौर व्यस्तताओं के बीच में यह संभव न रह गया होगा कि पति-पत्नी को मिलाया जाये । इससे भविष्य में अनेक प्रकार की उलझनें भी पैदा हो सकती हैं । शायद इसीलिये इस प्रथा को बन्द कर दिया गया होगा ।

उस समय विवाह कन्या को देख कर उसके सौन्दर्य के आधार पर न होता था ग्रौर विवाह पूर्णरूपेण एक धार्मिक कृत्य माना जाता था ग्रौर उसी प्रकार आचरण भी किया जाता था । किसी प्रकार के भी कुरूप, विकलांग वर-वधू को अपने कर्तव्य का पालन करना होता था । जब तक यह धारणा निश्चल रही तब तक वर-वधू का विवाह के समय सेज पर जाना, मिलना अनिष्टकारक नहीं हो सकता । परन्तु इस प्रकार की आस्था के शिथिल होने पर विवाह के समय ही श्रीवर के अपनी कुरूप अथवा नापसद पत्नी से रूठ कर चल देने की संभावना उत्पन्न हो गई होगी ग्रौर कुछ इस प्रकार की घटनाएँ हो गई होंगी । अतएव ऐसी दुखद एवं दुर्भाग्य पूर्ण परिस्थिति की संभावना को समाप्त करने के लिए इस प्रथा को उठा दिया गया होगा । परन्तु परम्परा से चलते आये ये गीत वैसे ही बने रहे ।

(१०)

माया के दुलरुआ दुलहै सबै जनै दूरि खेलन जनि जाहु ।
खेलत मेलत एकु सुअना जो पाइनि, लीन्हेन्हि घोड़वा चढ़ाय ॥ १ ॥
सखियाँ माँ बैठे बाबा सबै जनै, सुअनहि आरी पसारि ।
हमहूँ का मौर गढ़ाओ मोरे बाबा हमहू बराते जाब ॥ २ ॥
सखियाँ माँ बैठे हैं चाचा सबै जनै, सुअनहि आरी पसारि ।
हमहूँ का कुण्डल गढ़ावो मोरे चाचा, हमहूँ बराते जाब ॥ ३ ॥
सखियाँ माँ बैठे दादुली सबै जनै, सुअनहि आरी पसारि ।
हमहूँ का जामा सियाओ मोरे दादुली, हमहूँ बराते जाब ॥ ४ ॥

सबियाँ माँ बैठे भइया सबै जने, सुअनहि आरी पसारि ।
हमहूँ का माला मँगाओ मोरे भइया हमहूँ बराते जाब ॥ ५ ॥
बाजी बरात नगर नगिच्यानी, बाजनन भई झंकार ।
कोई सखी महलन चढ़ि देखैं, कोऊ कँवाड़न ओट ॥
ऐस दुलरुआ में कतहूँ न देख्यों कि सुअना बरातै जाय ॥ ६ ॥
एतना बचनु सुनु बोले हैं सुअना, सुनो सासू बचनु हमार ।
लहुरी सारी सासू हमका बियाहौ, हम तोरे लहुरे दमाद ।
एतना बचनु सुनि सासु जो बोलीं, सुनु सुअना मोरी बात ।
डार के सुअना डारैं उड़ि जइहौ, मोरी धिया रहैं कुँआँरि ॥ ८ ॥

माता के प्यारे दुलरुम्रा सभी जने दूर खेलने मत जाम्रो । खेलते में एक तोता मिला उसको भी घोड़े पर बिठा लिया ॥ १ ॥

सभा में बाबा और सभी लोग बैठे हैं, तोते ने मुख खोला । "हमारे लिये भी बाबा मौर बनवाओ मैं भी बरात जाऊँगा" ॥ २ ॥

सभा में चाचा और सभी लोग बैठे हैं तोते ने मुँह फैलाया "मेरे चाचा, मेरे लिये भी कुण्डल बनवाओ मैं भी बरात जाऊँगा ॥ ३ ॥

सभा मे पिता और सभी लोग बैठे हैं, तोते ने मुँह फैलाया "पिता मेरे लिये भी जामा मिलवाओ मैं भी बरात जाऊँगा" ॥ ४ ॥

सभा में भैया और सभी लोग बैठे हैं, तोते ने मुँह फैलाया "मेरे भैया, मेरे लिये भी माला मँगवाओ मैं भी बरात जाऊँगा ॥ ५ ॥

बरात चली और नगर के निकट पहुँची--बाजे बजने लगे । कुछ सखियाँ महल पर चढ़ कर देखने लगी और कुछ किवाड़ों की ओट से ।

ऐसा दूल्हा मैंने कही भी नही देखा कि तोता भी बरात में लाये ॥ ६ ॥

इतना सुन कर तोता रामा बोले—सासु मेरी बात सुनो । छोटी साली का मुझसे विवाह कर दो मैं तुम्हारा छोटा दमाद हूँ ॥ ७ ॥

इतना सुन कर सासु बोली —"तोते, मेरी बात सुनो, तुम डाल के तोते हो डाल पर उड़ जाओगे मेरी कन्या कुआँरी ही रह जायेगी" ॥ ८ ॥

इस गीत में विनोद के लिये एक तोते को सम्मिलित कर लिया गया है ।

(११)

हाथी चढ़े गरजैं बाबा उनके ठाढ़े दुलहै रामा रे।
नाती हमना बरातै जाब घामु मोरे लागे ॥ १ ॥
लंका ते सोनवा मँगइहौं मैं छत्रु छवैहौं रे।
मोरे बाबा के सिर पर घुमरै, घामु कैसे लागे ॥ २ ॥

हाथी पर चढ़े हुए बाबा अपने दूल्हे रामा से पुकार कर कह रहे हैं--"नाती मैं बरात में नहीं जाऊँगा मुझे धूप लगेगी" ॥ १ ॥

"लंका से सोना मँगाऊँगा और छत्र बनवाऊँगा वह सदैव मेरे बाबा के सिर पर रहेगा--धूप कैसे लगेगी ॥ २ ॥

विवाह

चढ़ाव

(१)

जाजमऊ केरी हाटिया, चुनरीऊ अजब बिकाय रे।
उठिकै बाबा उनके मोलु करैं, मोरी बहुआ का चढ़ा है चढ़ाव ॥ १ ॥
जाजमऊ केरी हाटिया, सेन्दुरा अजब बिकाय रे।
उठिकै दुलहै रामा मोलु करैं, मोरी रनिया का चढ़ा है चढ़ाव ॥ २ ॥
जाजमऊ केरी हाटिया, जहाँ गहना अजब बिकायं रे।
उठिकै चाचा उनके मोलु करैं, मोरी बहुआ का चढ़ा है चढ़ाव ॥ ३ ॥
जाजमऊ केरी हाटिया, जहाँ मतपुर अजब बिकायं रे।
उठिकै दादुलि उनके मोलु करैं, मोरी बहुआ का चढ़ा है चढ़ाव ॥ ४ ॥
जाजमऊ केरी हाटिया, चुरियऊ अजब बिकायँ रे।
उठिकै भइया उनके मोलु करैं, मोरी लहुरी का चढ़ा है चढ़ाव ॥ ५ ॥
जाजमऊ केरी हाटिया, जहाँ लहँगा अजब बिकाय रे।
उठिकै जीजा फूफा मोलु करैं, मोरी सरहज का चढ़ा है चढ़ाव ॥ ६ ॥

जाजमऊ केरी हाटिया, जहाँ चोलिऊ अजब बिकाय रे।
उठिके भइया उनके मोलु करैं, मोरी भौजी का चढ़ा है चढ़ाव ।। ७ ।।
जाजमऊ केरी हाटिया, जहाँ तरकिउ अजब बिकाय रे।
उठिकै नाना मामा मोलु करैं, मोरी बहुआ का चढ़ा है चढ़ाव ।। ८ ।।

जाजमऊ के बाजार में चुनरी सुन्दर बिकती है। बाबा उनके मोल कर रहे हैं—मेरी बहू का चढ़ाव चढ़ा है ।। १ ।।

जाजमऊ के बाजार में अच्छा सेन्दुर बिकता है। दूल्हे रामा मोल कर रहे हैं – मेरी रानी का चढ़ाव चढ़ा है ।। २ ।।

जाजमऊ के बाजार में गहना अच्छा बिकता है। उनके चाचा मोल कर रहे हैं—मेरी बहू का चढ़ाव चढ़ा है ।। ३ ।।

जाजमऊ के बाजार में सतपुर (सात चीजें) अच्छा बिकता है। उनके पिता मोल कर रहे हैं—मेरी बहू का चढ़ाव चढ़ा है ।। ४ ।।

जाजमऊ के बाजार में सुन्दर चूड़ियाँ बिकती हैं। उनके भैया मोल कर रहे हैं—मेरी लहुरी (छोटे भाई की पत्नी) का चढ़ाव चढ़ा है।। ५ ।।

जाजमऊ के बाजार में लहँगा अच्छा बिकता है। उनके जीजा फूफा मोल कर रहे हैं—मेरी सरहज का चढ़ाव चढ़ा है ।। ६ ।।

जाजमऊ की बाजार में सुन्दर चोली बिकती है। उनके भाई मोल कर रहे हैं—मेरी भावज का चढ़ाव चढ़ा है ।। ७ ।।

जाजमऊ के बाजार में तर्की (कान में पहिनने की) भी सुन्दर मिलती है। उनके नाना मामा मोल कर रहे हैं—मेरी बहू का चढ़ाव चढ़ा है ।।८।।

चढ़ाव का विशेष महत्व है। जब वर-पक्ष की ओर जनवासे में वर का दुर्गा जनेऊ हो जाता है और इधर कन्या-पक्ष में कन्या के माथे में धोबिन और अन्य सुहागिनों गोरहानियों द्वारा सेन्दुर चढ़ जाता है तब वर का बड़ा भाई कन्या के घर चढ़ाव लेकर जाता है। चढ़ाव में आये वस्त्राभूषण को कन्या धारण करती है और उसी रूप में भाँवरें पड़ती हैं। चढ़ाव में दो, तीन प्रकार के गहने होते हैं। लँहगा, चुनरी, सतपुर, चूड़ियाँ, झुलिया (चोली), सेंधौरा इत्यादि सामान होता है। वरपक्ष का यही एक अवसर है जब विशेष खर्च किया जाता है या नही तो अधिकांश अवसरों पर कन्या-पक्ष को ही देना पड़ता है।

उसी समय नारियल और वरीक्षा का सदैव घूमने वाला रुपया (चाँदी का सिक्का) कन्या के कोंछे में डाला जाता है।

इस गीत में, चढ़ाव में जितनी चीजें आवश्यक होती हैं उनकी चर्चा है। विभिन्न चीजों का प्रबंध विभिन्न कुटुम्बी जनों को करना पड़ता है। इस नियम का पालन अब नहीं किया जाता। आजकल तो सभी चीजें उसे खरीदनी पड़ती हैं जिसका लड़का होता है या जो लड़के की ओर से कमाऊ पुरखा होता है। बाबा को चुनरी, दूल्हे को सेंदुर (सेंधौरा), चाचा को गहने, पिता को सतपुर, बड़े भाई को चूड़ियाँ, जीजा फूफा को लहँगा, छोटे भाई (बहू के देवर) को चोली और नाना मामा को तरकी (कान में पहिनने की खजूर के पत्ते और लकड़ी से बने कर्णफूल) का प्रबंध करना पड़ता था। इस प्रकार के सहकारी सहयोग के आधार पर सारी चीजों का प्रबंध सरल हो जाता है। जिस व्यक्ति को जो चीज लाने का काम सौंपा गया है वह रिश्ते के अनुसार है। दूसरा व्यक्ति उसको नहीं कर सकता। परन्तु अब इस व्यवस्था का पालन नहीं होता। हाँ ये सब चीजें जरूर होनी चाहिए।

———

विवाह (फ)

परछन और बनरा

बनरा शब्द का संबंध संस्कृत के 'वर' तथा 'वरण' शब्द से है। इसी का स्त्रीलिंग रूप बन्नी अथवा बनरी हो गया है।

बनरा से विवाह के लिये जाने वाले व्यक्ति का अर्थ निकलता है और बनरी से उस कन्या का अर्थ निकलता है जिसका विवाह होने वाला है।

जहाँ विवाह के उपलक्ष में गाने के लिये कन्या-पक्ष की ओर 'विवाह' सोहाग आदि के गीत हैं और वर-पक्ष में अनेक प्रकार के गीतों की व्यवस्था है वहाँ बनरा गीत भी अपनी विशिष्टता रखते हैं। बनरा की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि ये जनेऊ में भी गाये जाते हैं। समावर्तन संस्कार के सम्मिलित हो जाने से जनेऊ न केवल यज्ञोपवीत धारण, वेदारम्भ तथा ब्रह्मचारी का संस्कार रह गया है परन्तु साथ ही उसकी समाप्ति भी कुछ क्षणों में हो जाती है। ब्रह्मचारी के विद्याध्ययन के लिये काशी जाने का अभिनय कुछ रुपयों में समाप्त हो जाता है और ब्रह्मचारी डयोढ़ी से वापिस लौट आता है और तब तुरन्त ही उसका ब्रह्मचारी रूप उतार कर जामा इत्यादि पहिना कर सिर पर मौर रख कर आँखों में काजल लगवा कर और पान का बीड़ा खाकर वह बनरा हो जाता है और डोले या घोड़े पर चलता है। इस प्रकार वह बनरा अधिक और ब्रह्मचारी कम होता है। अतएव जनेऊ के समय भी बनरा गीत खूब खुल कर गाये जाते हैं।

बनरा गीतों में अधिकांश बनरा की वेशभूषा का विस्तृत वर्णन होता है। इस वेशभूषा में मुसलमानी और अँग्रेजी पोशाक का भी समावेश हो गया है—

क्रमशः जामा और मोजे । ये गीत निश्चित रूप से बनरा के रूप-प्रशंसा के लिये हैं । इनमें कहीं-कहीं थोड़ा विनोद भी सम्मिलित कर दिया गया है अन्यथा ये गीत वर्णनात्मक विशेष हैं ।

विवाह

बहू के विदा होकर ससुर के द्वार पर आने के बाद सासु परछन करके, पानी ढार करके गृह प्रवेश कराती है ।

परछन

(१)

येहि विधि सबहिं देत सुख, रघुबर अवधपुरी के घर नियराई ॥ १ ॥
मुदित मातु परछन हित आई, बधुन समेत कुमारन लाई ।
बधुन समेत देखि सुतचारी, दशरथ हिरदै रहे सुखु पाई ॥ २ ॥
दशरथ कहैं सुनो सब रानी, बड़े भाग्य यह औसर आई ।
बधू लरकिनी पर घर आई, राखौ नैन पलक की नाई ॥ ३ ॥
नेग माँगि मुनिनायक लीन्हा, चीरचार भूखन पहिराई ।
गुरु प्रसन्न जान्यौ जब राऊ, दीजे रामहि राज गोसाई ॥ ४ ॥
निज दासन को पार करौ, प्रभु सुदिन सुमंगल होय रजाई ।
तुलसीदास भजौ भगवानै, सीता बियाहि अवधपुर आई ॥ ५ ॥

इस प्रकार सबको सुख देते हुए रघुबर गृह के समीप आ गये ॥ १ ॥

माता प्रसन्न होकर परछन के लिये आईं और बहुओं के साथ अपने पुत्रों को लाईं । बहुओं के समेत चारों पुत्रों को देखकर राजा दशरथ को अतिशय आनन्द हुआ ॥ २ ॥

दशरथ कहते हैं सब रानियों सुनो—यह अवसर बड़े भाग्य से प्राप्त हुआ है । दूसरे की लड़कियाँ बहू होकर अपने घर आई हैं इनको इस कार रखो जैसे पलकें आँखों को रखती हैं ॥ ३ ॥

मुनिनायक ने नेग माँग कर लिया अनेक प्रकार के वस्त्र भूषणादि मिले । गुरु ने जब राजा को प्रसन्न देखा तो कहा कि राम को राज्य दे दो ॥ ४ ॥

अपने सेवकों को पार लगाओ, सुदिन और शुभमंगल कार्य की आज्ञा हो। तुलसीदास—"भगवान का भजन करो सीता विवाहित होकर अवधपुर आ गई ॥ ५ ॥

इस गीत की भाषा प्राञ्जल है। ऐसा मालूम देता है कि तुलसीदास के नाम किसी अन्य कवि ने यह गीत प्रचलित किया है। इस प्रकार तुलसीदास के नाम से अनेक गीत हैं। बहू जिस समय आती है तो परछन करके उसको लड़के की माता सस्नेह घर ले जाती है। यह गीत सासों के लिये आदर्श होना चाहिए।

विवाह

बनरा

(१)

चलो देखें राम बने बनरा।
सिर सोने का मौर बिराजै, बड़े-बड़े नैन सोहैं कजरा।
अंग केसरिया जामा सोहै, गुंजै गोफ गले गजरा।
राम सिया की होति भाँवरी तुलसीदास करैं झगरा।

चलो देखें राम बनरा बने हैं।

सिर पर सोने का मौर है और बड़ी आँखों में काजल शोभा देता है।

शरीर पर केसरी रंग का जामा शोभा देता है और गले में घोंघचिल के गुच्छो के गजरा हैं।

सीता और राम की भाँवरे होती हैं तुलसीदास झगड़ा करते हैं।

(२)

अच्छे बने हो आजु रघुनायक।
चारि दिसा चारिउ खम्भ गड़े हैं, पानन फूलन माड़व छायो है।
अँइये सिन्धौरा लीहें ठाढ़ी सीतलादेई, भौंरी फिरन को राम खड़े हैं।

राम सिया की होत भाँवरी, ब्रह्मा वेद पढ़ाइ रहे हैं।
तुलसीदास भजौ भगवाने, राम सिया की जोड़ी बनी है।

रघुनायक आज अच्छे बने हो।

चारों दिशाओं में चार खम्भ खड़े हैं, पान और फूल से मंडप छाया है। मंडप में सीता देवी सेंधौरा लिये खड़ी हैं और राम भाँवरे फिरने के लिये खड़े हैं।

राम और सीता की भाँवरें होती हैं। ब्रह्मा वेद पढ़ रहे हैं।

तुलसीदास कहते हैं भगवान को भजो—राम और सीता की जोड़ी बनी है।

ये बनरा के गीत विवाह में समय-समय पर कन्या-पक्ष तथा वर-पक्ष दोनों स्थानों पर गाये जाते हैं। येही बनरा के गीत जनेऊ में भी गाये जाते हैं यद्यपि इनका सीधा संबंध विवाह से है।

(३)

बनो भाई दसरथ को बना।
बाग बनी है, बगीचा बने हैं, खूब बनी वाकी फुलवारी।
हाथी बने वाके घोड़ बने हैं, खूब बनी वाकी असवारी।
महल बने हैं दुमहला हैं, खूब बनी वाकी चितसारी।
राम बने लछिमन बनिआये, खूब बने वाके चारो भाई।

दशरथ का बनरा (वर) खूब बना है।

हाथी घोड़े और उसकी बहुत अच्छी सवारी बनी है।

महल और दुमहला अच्छे बने हैं और उनकी चित्रसारी (चित्रशाला) बहुत अच्छी है।

राम सुन्दर हैं, लक्ष्मण भी सुन्दर हैं और उनके चारों भाई खूब बने हैं।

(४)

राम जी के नैना रसीले, राम पै जदुआ किन्ने डारी ।
बड़े बड़े भूप जनकपुर आये, केहू न तोड़ा धनुआ ।
जनकपुर की नारी सयानी, चितवैं रामजी की ओर ।
लै जैमाल सिया जी निकलीं, राम के गले पहनाई ।
राम सिया की होत भाँवरी, तुलसीदास गुणगाई ।

राम जी की आँखें रसीली हैं राम पर किसने जादू डाला ।
जनकपुर में अनेक प्रतापी राजा आये परन्तु कोई धनुष न तोड़ सका ।
जनकपुर की स्त्रियाँ होशियार हैं वे राम जी की ओर देख रही हैं ।
जैमाला लेकर सीता जी निकली और राम के गले में पहना दी ।
राम-सीता की भाँवरें हो रही हैं तुलसीदास गुण गाते हैं ।

(५)

केसरी रंग बोरे आये बना ।
बन्ना अपने बाबन के लाड़िले ।
बन्ना अपने चाचन के लाड़िले ।
आजी के दुलराये आये बना ।
चाची के रिझाये आये बना ।
बन्ना अपनी दादुली के लाड़िले ।
बन्ना अपने भैयन के लाड़िले ।
माया के दुलराये आये बना ।
भाभिन के खेलाये आये बना ।
बन्ना गाँव गलिन के लाड़िले ।
सखियन के दुलराये आये बना ।
गोइयन के खेलाये आये बना ।

केसरी रंग में डूबे हुये श्रीवर आये ।
श्रीवर अपने बाबा के दुलारे हैं ।
श्रीवर अपने चाचा के प्यारे हैं ।
आजी के दुलारे हुए श्रीवर आये ।
चाची के प्यार किये हुए श्रीवर आए ।
श्रीवर अपने पिता के दुलारे हैं ।
श्रीवर अपने भाई के दुलारे हैं ।
माता के दुलराए श्रीवर आये ।
भाभी के दुलराये श्रीवर आये ।
श्रीवर गाँव और गलीवालों के दुलारे हैं ।
सखियों के दुलराये श्रीवर आये ।
साथियों के साथ खेले श्रीवर आये ।

(६)

मेरा केसरिया वाला बनरा
दुआरे के चार बन्ना हाथी माँगैं, हौदा माँगैं सोने का बनरा ।
बाग भीतर बन्ना तम्बू माँगैं, डोरी माँगैं रेसम की बनरा ।
गोंइड़े की चालु बन्ना घोड़ा माँगैं—जीन माँगैं रेसम की बनरा ।
मँडये माँ बन्ना बनरी माँगैं, दान माँगैं मोतिन के बनरा ।
जुइति के आगे बन्ना सरहज माँगैं, खेल माँगैं फूलन का बनरा ।

मेरा श्रीवर केसरिया वाला है ।
दरबार में श्रीवर हाथी माँगते हैं और सोने का हौदा माँगते हैं ।
बाग के भीतर श्रीवर तम्बू माँगते हैं और डोरी रेशम की माँगते हैं ।
गोंइड़े की चाल में (अगवानी) श्रीवर घोड़ा माँगते हैं और जीन रेशम की माँगते हैं ।

मंडप में श्रीवर कन्या मांगते हैं और दान मोतियों का मांगते हैं। ज्यूति के सामने श्रीवर सरहज मांगते हैं और फूलों का खेल मांगते हैं।

गोंइड़े की चाल तो कहावत हो गई है जिसे जनवासे की चाल कहते हैं धीमेपन के कारण इस चाल को विशेषता प्राप्त हो गई है। यह चाल अगवानी के समय चली जाती है जब दोनों पक्ष के व्यक्ति एक कदम से अधिक नहीं चलते।

फूलों का खेल पति-पत्नी के बीच ज्यूति-पूजन के समय होता है।

(७)

तेरी कलगीं माँ लागे हीरालाल बनरा लाड़िला ॥ १ ॥
बनरा जो पूछै अपने ससुर से, हमै आपनि बाग दिखा दे।
हमरी बाग को क्या देखो बनरे, जहाँ नीबूँ नरंगी अनार ॥ २ ॥
बनरा जो पूछै अपने सारेन ते, हमें आपनु सहर दिखा दे।
हमरे सहर को क्या देखो बनरे, जहाँ बसत महाजन लोग ॥ ३ ॥
बनरा जो पूछै अपनी सासु ते, हमें आपनु महल दिखा दे।
हमरे महल का क्या देखो बनरे, जहाँ खिरकी लगी चहूँ ओर ॥ ४ ॥
बनरा जो पूछैं अपनी सरहज तें, हमें अपनी ननद दिखा दे।
हमरी ननद का क्या देखो बनरे, जैसे छिटिक चाँदनी रात ॥ ५ ॥

प्यारे श्रीवर तुम्हारी कलंगी में हीरा और लाल लगे हैं ॥ १ ॥

श्रीवर अपने ससुर से पूछते हैं कि मुझे अपना बाग दिखा दो। मेरा बाग श्रीवर क्या देखोगे वहाँ नीबू, नारंगी और अनार है ॥ २ ॥

श्रीवर अपने सालो से पूछते हैं कि मुझे अपना शहर दिखा दो। हमारे शहर को श्रीवर क्या देखोगे यहाँ महाजन लोग रहते हैं ॥ ३ ॥

श्रीवर अपनी सासु से पूछते हैं कि मुझे अपना महल दिखा दो। हमारे महल को श्रीवर क्या देखोगे वहाँ चारों ओर खिड़कियाँ लगी हैं ॥ ४ ॥

श्रीवर अपनी सरहजों से पूछते हैं कि मुझे अपनी ननद (मेरी पत्नी) दिखा दो। हमारी ननद को श्रीवर क्या देखोगे वह तो छिटकी चाँदनी की भाँति है ।। ५ ।।

(८)

बाजा नगाड़ा प्रेम का बन्ना बागै आये। हरियाले बन्ना बागै आये।
मालिनि गजरा लीन्हे ठाढ़ी री बन्ना बागै आये। हरियाले बन्ना,
कुअँना आये।
महरी गड़आ लीन्हे ठाढ़ी री बन्ना कुअनै आये, महल आये री
हरियाले बन्ना महलै आये।
सरहज सेज बिछाइये बन्नी महलै आये।
मँडये आये री हरियाले बन्ना मँडये आये।
कन्या सिंदौरा लीन्हे ठाढ़ी री बन्ना मँडये आये।
कोहबर आये री हरियाले बन्ना कोहबर आये री।
सरहज खिलावैं पंसासारि बन्ना कोहबर आये।
सेज आये री हरियाले बन्ना सेजै आये री।
नाजो हिरदै लगाइये बन्ना सेजै आये।
हँसि के बोलो री हरियाली बन्नी हमसे बोलो।
कैसे बोलूँ रे हरियाले बन्ना कैसे बोलूँ।
माया बहिन घर जागैं रे बन्ना कैसे बोलूँ।
धीरे बोलो रे हरियाली बन्नी हलके बोलो री।
हम तुम्हारे हो चुके बन्नी हमसे बोलो री।

प्रेम का नगाड़ा बजा, श्रीवर बाग में आये। सुन्दर श्रीवर बाग में आये।

मालिन गजरा लिये खड़ी है श्रीवर बाग में आये। सुन्दर श्रीवर कुँए पर आये।

कहारिन गडुआ लिये खड़ी है श्रीवर कुँए पर आये। सुन्दर श्रीवर महल में आये।

सरहज ने सेज बिछाई बन्नी (कन्या) महल में आई।

सुन्दर श्रीवर मँडप में आये। कन्या सेन्दौरा लिये मंडप में खड़ी हैं।

सुन्दर श्रीवर कोहबर (ज्यूति) पर आये। सरहजें पाँसा खिलाती हैं।

सुन्दर श्रीवर सेज पर आये नाजो (पत्नी) ने हृदय से लगा लिया।

सुन्दर बन्नी (पत्नी) मुझसे बोलो।

सुन्दर श्रीवर मैं तुमसे कैसे बोलूँ माता और बहिन सब जाग रहे हैं।

सुन्दर बन्नी धीरे बोलो, हौले बोलो—मैं तुम्हारा हो चुका, मुझसे बोलो।

(९)

मोरे पिछवारे लौंग का बिरवा लौंग चुए आधी रात। अब सखी। टेक
सो फूल खोंसे रानी के कवन रामा खोंसि चले ससुरारि ॥ १ ॥
हँसि हँसि पूछैं बन्ना की सासू, फूल कहाँ तुम पायो।
हमरे बाबन के मालिया हैं चाकर, फूल लै आये आधी राति ॥ २ ॥
इतना बचनु सुनि बनरे की सासू, मलिया है बापु तुम्हार। मलिया
है सब कोऊ तुम्हार।
इतना बचनु सुनि दुलहे कवन रामा, मँडये ते चले हैं रिसाय ॥ ३ ॥
सासु ननदिया देवर जेठनिया, बनरे का लावौ मनाय।
आवौ न बनरे पलँग चढ़ि बैठो, मलिया है ससुर तुम्हार। मलिया है
सब कोऊ हमार ॥ ४ ॥

मेरे घर के पिछवारे लौंग का वृक्ष है जिससे लौंग आधी रात में टपकती है। वही फूल रानी के अमुक रामा खोंस कर ससुराल चले ॥ १ ॥

बन्ना की सासु हँस-हँस कर पूछती हैं कि "तुमने फूल कहाँ पाया।" "मेरे बाबा के माली नौकर हैं वे ही आधी रात में ले आये।" ॥ २ ॥

इतना वचन सुन कर बनरे की सासु ने कहा कि "माली तुम्हारा बाप है, तुम्हारा सब कोई है।" इतना सुन कर दूल्हे अमुक रामा मंडप से गुस्सा होकर चल दिये ॥ ३ ॥

सासु, ननद, देवर, जेठानी—"आओ बनरे को मना लाओ। आओ बनरे पलँग पर बैठो, माली तुम्हारा ससुर है, माली हमारा सब कोई है ।। ४ ।।

(१०)

जग माँ तिलकु लिलार स्याम सहजादे बनरे ।। १ ।।

चीरा तो तुम्हरा खूब बना, सुन्दर प्यारे बनरे ।
कलँगी लहरैं लेइ, स्याम सहजादे बनरे ।। २ ।।

मोती तो तुम्हरे खूब बना, सुन्दर प्यारे बनरे ।
कुण्डल लहरैं लेइ, स्याम सहजादे बनरे ।। ३ ।।

सुरमा तो तुम्हरो खूब बना, सुन्दर प्यारे बनरे ।
बिरिया लहरैं लेइ, स्याम सहजादे बनरे ।। ४ ।।

जामा तो तुम्हरो खूब बना, सुन्दर प्यारे बनरे ।
पटुका लहरैं लेइ, स्याम सहजादे बनरे ।। ५ ।।

मोजा तो तुम्हरे खूब बने, स्याम सुन्दर प्यारे बनरे ।
मेंहदी लहरैं लेइ, स्याम सहजादे बनरे ।। ६ ।।

घोड़ा तो तुम्हरे खूब बना, सुन्दर सहजादे बनरे ।
चाबुक लहरैं लेइ, स्याम सहजादे बनरे ।। ७ ।।

भइया तो तुम्हरे खूब बने, सुन्दर, प्यारे बनरे ।
महफिल लहरैं लेइ, स्याम सहजादे बनरे ।। ८ ।।

डोला तो तुम्हरा खूब बना सुन्दर प्यारे बनरे ।
परदा लहरैं लेइ, स्याम सहजादे बनरे ।
नाजो लहरैं लेइ, स्याम सहजादे बनरे ।। ९ ।।

जग में माथे पर तिलक स्याम शहजादे बनरे के खूब शोभा देता है ।। १ ।।

सुन्दर प्यारे बनरे चीरा तो तुम्हारा बहुत सुन्दर लग रहा है उस पर कलँगी लहरा रही है ।। २ ।।

सुन्दर प्यारे बनरे मोती तुम्हारे बहुत शोभा दे रहे हैं कुण्डल लहरा रहे हैं ।। ३ ।।

सुन्दर प्यारे बनरे सुरमा तुम्हारे खूब शोभा दे रहा है पान का बीड़ा तुम्हारे मुख पर खूब अच्छा लगता है ।। ४ ।।

मुन्दर प्यारे बनरे जामा तुम्हारा बहुत अच्छा लगता है उस पर पटुका लहरा रहा है ।। ५ ।।

सुन्दर प्यारे बनरे तुम्हारे मोजे बहुत अच्छे बने ह उनसे मेंहदी लहरा रही है ।। ६ ।।

मुन्दर सहजादे बनरे तुम्हारा घोड़ा बड़ा सुन्दर है उसकी चाबुक लहरा रही है ।। ७ ।।

सुन्दर प्यारे बनरे तुम्हारे भैया तो बहुत सुन्दर हैं, सभा में लहर पैदा हो जाती है ।। ८ ।।

मुन्दर प्यारे बनरे तुम्हारा डोला तो बहुत सुन्दर बना है उस पर परदा लहरा रहा है उसमें नाजो (नजाकत से भरी पत्नी) लहरें ले रही है ।। ९ ।।

इस गीत में श्रीवर की वेशभूषा का विस्तृत वर्णन है ।

(११)

रघुनन्दन फूले न समाय, लगन घर आय गई ।
सिर सोहै जारी को चीरा, कलँगी अजब बहार ।। १ ।।

दोऊ भुजन पर परे दुसाला, सिर सोने का मौर ।
कान सोहैं सूरत के मोती, कुण्डल अजब बहार ।। २ ।।

दोऊ भुजन पर परे दुसाला, सिर सोने का मौर ।
नैन सोहैं साँवरिया सुरमा, बिरिया अजब बहार ।। ३ ।।

दोऊ भुजन पर परे दुसाला, सिर सोने का मौर ।
अंग सोहैं केसरिया जामा, पटुका अजब बहार ।। ४ ।।

दोऊ भुजन पर परे दुसाला, सिर सोने का मौर ।
पैर सोहैं लखनउआ मोजा, जूता अजब बहार ।। ५ ।।

दोऊ भुजन पर परे दुसाला, सिर सोने का मौर ।
संग तेरे भइयों की जोड़ी, महफिल अजब बहार ।। ६ ।।

दोऊ भुजन पर परे दुसाला, सिर सोने का मौर ।
संग तेरे लाखों का घोड़ा, चाबुक अजब बहार ।। ७ ।।

दोऊ भुजन पर परे दुसाला, सिर सोने का मौर ।
संग तेरे हरियाला डोला, बनरी अजब बहार ।। ८ ।।

रघुनन्दन फूले नहीं समाते लग्न घर पहुँच गई है। सिर पर जाली का चीरा (पगिया) शोभा दे रही है उस पर कलँगी की अनुपम शोभा है ।।१।।

दोनों भुजाओं में दुशाले पडे हैं सिर पर सोने का मौर है। कानों में मूरत के मोती शोभा दे रहे हैं जिन पर कुण्डलों की अनुपम छटा है ।। २ ।।

दोनों भुजाओं में दुशाले पड़े हैं सिर पर सोने का मौर है। आँखों में सांवरा सुरमा शोभा दे रहा है और पान खाने की अजब बहार है ।। ३ ।।

दोनों भुजाओं में दुशाले पड़े हैं सिर पर मौर है। शरीर पर केसरी रंग का जामा शोभा दे रहा है उस पर पटुका की अनुपम छटा ।। ४ ।।

दोनों भुजाओं में दुशाले पड़े हैं सिर पर मौर है। पांवों में लखनऊ के मोजे शोभा दे रहे हैं जूतों की बहार भी अजब है ।। ५ ।।

दोनों भुजाओं में दुशाले पड़े हैं सिर पर सोने का मौर है। तुम्हारे साथ भाइयों की जोड़ी है जिससे महफिल की शोभा बनी है ।। ६ ।।

दोनों भुजाओं में दुशाले पड़े हैं सिर पर सोने का मौर है। तुम्हारे साथ लाखों का घोड़ा है जिसको सुन्दर चाबुक है ।। ७ ।।

दोनों भुजाओं में दुशाले पड़े हैं सिर पर मौर है। तुम्हारे साथ सुन्दर पालकी है जिसमें बनरी की शोभा अपार है ।। ८ ।।

विवाह

नकटा

मेरे विचार से यह 'नकटा' शब्द नाटक से बना है। जब बारात घर से चली जाती है तो वरपक्ष में रात्रि को खूब धूमधाम रहती है। जब तक बारात वापिस नहीं आती तब तक प्रत्येक रात्रि में टोले-मुहल्ले की स्त्रियां एकत्र होकर बड़े ही मनोरंजक नाटक, स्वांग और प्रहसन करती हैं। ये स्वांग अधिकतर गीतमय होते हैं। प्रायः ये गीत भद्दे प्रकार के हास्य और मनोरंजन से भरे रहते हैं। वास्तव में इन स्त्रियों को किसी प्रकार रात भर जागना चाहिए। इस रात्रि-जागरण के दो कारण हैं एक तो स्त्रियां इन दिनों पूर्ण स्वतंत्र रहती हैं क्योंकि अधिकांश

पुरुष बारात में चले जाते हैं। इस प्रकार की निर्द्वंद्व स्वच्छन्दता भारतीय स्त्रियों के भाग्य की चीज नहीं है। दूसरे पुरुषों के अभाव में स्त्रियां कुछ भयभीत भी रहती हैं कि कहीं चोरी न हो जाये। अतएव प्रायः पूरी चार रातें स्त्रियां इसी प्रकार स्वांगों में व्यतीत कर देती हैं।

जो कुछ भी उन रातों में होता है उन सब को नकटौरा कहते हैं। यह नकटौरा नटकौरा का ही रूपान्तर है। गम्भीर व्यक्तियों के दृष्टिकोण से तो यह नकटौरा सचमुच ही निषिद्ध है और नकटा के गीतों में नाक कटाई के सिवाय कुछ भी नहीं है। परन्तु यह नकटौरा कम ही लोगों को देखने को मिलता है एक तो जहाँ होता है वहाँ के अधिकांश लोग तो बारात में होते हैं और यदि कोई रह भी गया तो उसे देखने को नहीं मिलता। इसी नकटौरा में नकटा के गीत गाये जाते हैं। इस प्रकार के सैकड़ों गीत हैं उनकी अश्लीलता की कोई सीमा नहीं है। परन्तु उस समय स्वतंत्र स्त्रियों को मनोरंजन में कुछ भी अश्लील नहीं दिखाई देता। अधिकतर पुरुषों की नकलें तो बहुत ही सुन्दर और विनोदपूर्ण होती हैं। कुछ उदाहरण देखिये—

नकटा

(१)

पहुँची के संग ककनवाँ, गन्दे नाले मां डारि आई।
हमरे ससुर ने सासू मारी, हम धना चढ़ि गई अँटरिया। गन्दे०
हमरे जेठ ने जिठनी मारी, हम धना ओयरैं चकिया।
हमरे देवर ने देवरानी मारी, हम धना तपत रसोई।
हमरे बलम ने हमहीं मारी, कैसे खवाऊँ फुलकियाँ।

पहुँची के साथ कंगन भी मैं गन्दे नाले मे डाल आई।
मेरे ससर ने सासु को मारा, मैं ऊपर कोठे पर चढ गई।
मेरे जेठ ने जेठानी को मारा मैं चक्की पीस रही थी।
मेरे देवर ने देवरानी को मारा मैं रसोई बना रही थी।
मेरे पति ने मुझको ही पीटा, कैसे रोटी खिलाऊँ ?

(२)

फुलवर मँगवा दो वाहरे बलम।
कलकत्त न जायो, बम्बई न जायो नखलऊ से मँगवा देव वाहरे बलम।
वोहि फुलवर की चोली बनइबै, तुमहू का टोपी वाहरे बलम।
चोली तो सौहै राजा रंगमहल पर, महफिल बिच टोपी वाहरे बलम।

वाहरे बालम फुलवर (फूलों से कढ़ा हुआ चिकन) का कपड़ा मँगवा दो!

कलकत्ते मत जाना, बम्बई मत जाना लखनऊ से मँगवा दो।

उस फुलवर की चोली बनवाऊँगी और तुम्हारे लिये भी टोपी बनवा दूंगी।

चोली की शोभा तो राजा रंगमहल में होती है और सभा में टोपी की शोभा है।

(३)

हाय जिया जरि काहे न जाय राजा गये पटना का।
सासू को लाये सारी, ननद को लाये धोती, हमको लै आये चुनरिया।
सासू ने पहिरी सारी, ननद ने पहिरी धोती, खूँटी पै टाँगी चुनरिया।
सासू को लाये पूरी, ननद को लाये लड्डू, हमको लै आये कचौड़ियाँ।
सासू ने खाई पूरी, ननद ने खाये लड्डू, छीके पै रखी कचौड़ियाँ।
सासू के भया लड़का, ननद के भई लड़की, मैंया के भई बँदरिया।
सासू का लड़का खेले, ननद की लड़की खेले, छज्जों मे कूदे बँदरिया।

हाय जी क्यों न जल जाये राजा तो पटना गये हैं।

सासु के लिये साड़ी लाये, ननद के लिये धोती लाये और मेरे लिये चुनरी ले आये।

सासु ने साड़ी पहिनी, ननद ने धोती परन्तु मेरी चुनरी खूंटी पर ही टंगी रही।

सासु के लिये पूड़ी लाये ननद के लिये लड्डू और मेरे लिये कचौड़ियां लाये।

सासु ने पूड़ी खाई, ननद ने लड्डू खाये, मेरी कचौड़ियां छीके पर रखी रहीं।

सासु के लड़का हुआ, ननद के लड़की हुई और सैंया (पति) के बंदरिया हुई।

सासु का लड़का खेलता है, ननद की लड़की खेलती है और छज्जों से बंदरिया कूद रही है।

(४)

टोपी की झलक दिखाओ रे टोपी वाले साँवरिया।
मोरे ससुर का सोने का बँगला पाँव धरे झन्नाय रे।
हमरे जेठ का कागज का बँगला हवा लगे उड़ि जाय रे।
हमरे देवर का मिट्टी का बँगला, बूँदी प : गलि जाय रे।
हमरे बलम का फूलों का बँगला, धूप लगे कुम्हिलाय रे।

टोपी वाले सांवरिया टोपी की झलक दिखाओ।
मेरे ससुर का बँगला सोने का है पैर रखते ही झन्नाता है।
मेरे जेठ का बँगला कागज का है हवा लगने से उड़ जाता है।
मेरे देवर का बंगला मिट्टी का है बूंदों के गिरने से गल जाता है।
मेरे पति का बंगला फूलों का है धूप के लगने से कुम्हला जाता है।

विवाह

घोड़ी

घोड़ी के गीत भी पचासों है। इन गीतों में घोड़ी का जिक्र तो अवश्य होता है। ये भी अधिकांश रूप में विनोद-पूर्ण होते हैं। जनेऊ या विवाह के समाप्त होने पर घोड़ी के गीत खूब गाये जाते हैं। कभी-कभी तो समर्थ अभिभावक स्त्रियाँ विशेष रूप से घोड़ी के गीत करवाती हैं। उस दिन घोड़ी के

गीत ही अधिक गाये जाते हैं। इसमें भी बनरा के रूप का वर्णन होता है परन्तु बनरा घोड़ी के बिना नहीं होता और इन गीतों में घोड़ी की गुणप्रशंसा भी खूब होती है। प्रायः घोड़ी शब्द सांकेतिक रूप से प्रयुक्त होता है जिसका अर्थ किसी संदर्भ में समधिन और किसी में नई विवाहित स्त्री का होता है। इन गीतों से किसी विशेष प्रकार की परम्परा की ओर संकेत नहीं मिलता परन्तु फिर भी विनोद एवं मनोरंजन के ढंग और रीति के सम्बन्ध में अवश्य कुछ ज्ञातव्य बातें मालूम होती हैं। किस प्रकार भारतीय रमणियाँ अपने गीतों में अपना मनोरंजन ढूंढ़ती हैं यह महत्वपूर्ण है। कुछ घोड़ी के गीतों के उदाहरण आगे देखने को मिलेंगे।

सेहरा

सेहरा के गीतों की भी कमी नही है। सेहरा का बाँधना मुसलमानी प्रथा है। इनके सम्पर्क में विशेष आने वाले कायस्थों के यहाँ सेहरा सम्बन्धी गीत अनेक मिलते हैं। यद्यपि सेहरा का प्रचार बहुत नहीं हुआ परन्तु गीतों में इसका प्रचार खूब हुआ है। मैंने सेहरा के गीतों को उन घरों में भी सुना है जिनके यहाँ सेहरा कभी नही बँधता। सेहरा एक प्रकार की झालर है जिसे वर के माथे मे बाँध दिया जाता है और झालर उसके मुख पर पड़ी रहती है। घोड़ी के गीतों के बाद सेहरा के गीत गाये जाते हैं।

घोड़ी

(१)

घोड़ी एकु नभेलरि रे बना।
सो बना वह तो बाँधी है राजदुआर। वारिउ रे बना॥ १॥

हो बना प्यारे बाँधी वह राजदुआर।
न घोड़ी वह खरु खाय रे बना,
हो बना प्यारे न घोड़ी वह आमनु लेय॥ २॥

दूधु कटोरवन वह पियै रे बना।
हो बना प्यारे चाभै रे वह तो नागर पान॥ ३॥

जीन जड़ाऊ सोने केरा रे बना।
हो बना प्यारे चाबुक रे वोहि कै है मकतूल॥ ४॥

सो घोड़ी चढ़िगे हैं दुलहै कवन रामा रे बना,
बना प्यारे चढ़ि कै रे ससुरारी जायँ ।। ५ ।।
सँकरी गलियन होइ के निकरे रे बना,
बैरिउ रे वह के दलमस जायँ ।। ६ ।।
कौनी आजिन केरे उरु धरयो रे बना,
हो बना प्यारे कौनिउ बुग्रन के हौ रे भतीज ।। ७ ।।
अजी दुलहिन देई के उरु धरयो रे बना,
हो बना प्यारे बुआ कवन देई के हन हम भतीज ।। ८ ।।
कौनी मैयन के उरु धरयों रे बना,
हो बना प्यारे कौनी बहिन के हो राजा बीर ।। ९ ।।
माया दुलहिन देई के उरु धरयो रे बना,
हो बना प्यारे बहिनी कवन देई के हन राजा बीर १० ।।

रे बन्ना एक घोड़ी नवीन है । वह राजदरवाजे पर बँधी है ।। १ ।।

प्यारे बन्ना वह राजदरवाजे पर बँधी है परन्तु वह न तो तृण खाती है और न वह करवट ही बदलती है ।। २ ।।

प्यारे बन्ना वह कटोरों दूध पीती है और नागर पान चबाती है ।। ३ ।

प्यारे बन्ना सोने की जड़ाऊ जीन है और चाबुक मकतूल की है ।। ४ ।।

उस घोड़ी पर अमुक दूल्हे रामा चढ़ गये—प्यारे बन्ना उस पर चढ़ कर समुराल जाते हैं ।। ५ ।।

बन्ना संकरी गलियों में होकर निकले उसके दुश्मन नीचे दब कर पिस जाते हैं ।। ६ ।।

किस आजी के पेट से पैदा हो और प्यारे बन्ना कौन सी बुआओं के भतीजे हो ।। ७ ।।

आजी दुलहिन देवी ने पेट मे धारण किया और अमुक बुआओं का मैं भतीजा हूँ ।। ८ ।।

कौन सी माता ने तुम्हें पेट में धारण किया ? और कौन सी बहिन के राजा भाई हो ।। ९ ।।

माता दुलहिन देवी ने पेट में धारण किया और अमुक बहिन देवी का मैं राजा भाई हूं ॥ १० ॥

(२)

घोड़ी नाचै जमुनिहा बाग माँ ।
बन्ना सिर तेरे चीरा बंधो, मैं तो कलँगी सवाँरन आई । जमुनिहा०
बन्ना कान तेरे मोती बने, मैं तो चुन्नी सवाँरन आई ।
बन्ना नयन तेरे सुरमा बनो, मैं तो जुल्फें सवाँरन आई ।
बन्ना मुख तेरे बीरा बनो, मैं तो लाली सवाँरन आई ।
बन्ना अंग तेरे जामा बनो, मैं तो बन्द सवाँरन आई ।
बन्ना कमर तेरे पटुका बँधो, मैं तो झालर सवाँरन आई ।
बन्ना पैर तेरे जूता बने, मैं तो मोजे सवाँरन आई ।
बन्ना सँग तेरे घोड़ा चलै, मैं तो चाबुक सवाँरन आई ।
बन्ना सँग तेरे भइया बने, मैं तो महफिल सवाँरन आई ।
बन्ना सँग तेरे डोला चलै, मैं तो बनरी सवाँरन आई ।

घोड़ी जामुन के बाग में नाच रही है ।

बन्ना तेरे सिर पर चीरा (पगिया) बंधा है, मैं तो कलँगी सवाँरने आई हूं ।

बन्ना तेरे कानों में मोती अच्छे लग रहे हैं मैं तो चुन्नी (Sapphire) सँभालने आई हूं ।

बन्ना तेरी आँखों में सुरमा शोभा दे रहा है मैं तो बाल सँवारने आई हूं ।

बन्ना तेरे मुंह में बीड़ा अच्छा लगता है, मैं तो लाली सवाँरने आई हूं ।

बन्ना तेरे शरीर पर जामा शोभा दे रहा है मैं तो बन्द (बन्धन, जामा की तनी) सवाँरने आई हूं ।

बन्ना तेरी कमर में पटुका बंधा है, मैं तो झालर सँवारने आई हूं ।

बन्ना तेरे पैर में जूता शोभा दे रहे हैं मैं तो मोजे सवाँरने आई हूं ।

बन्ना तेरे साथ में घोड़ा चलता है, मैं तो चाबुक सवाँरने आई हूं ।

बन्ना तेरे साथ भाई शोभा दे रहे हैं; मैं तो सभा को सँवारने आई हूं ।

बन्ना तेरे साथ में पालकी चल रही है, मैं तो बनरी को सवाँरने आई हूं ।

(३)

एक लिल्ली भै घोड़ी पातर है असवार।
मल्लाहे के ढोटा नैया लै आओ यहि पार ॥ १ ॥
जो हम पार उतरिबे, का उतराई हमें दे हो।
थोरा सोना मैं देहौं, थोरा रूपा मैं देहौं औ गजमोतिनहार ॥ २ ॥
हम सोना न लेबे, हम रूपा न लेबे, लेबे दुलहे केरी आजी।
बन्ना ब्याहि कै आये उतरे चमेलो के बाग माँ ॥ ३ ॥
रानी घूँघट खोलो देखूँ मैं बदन तुम्हार।
तुम्हरे बदन के कारण आजी मल्लाहे का दीन ॥ ४ ॥

लिल्ली घोड़ी है और सवार पतला है। मल्लाह के पुत्र नाव इस पार ले आओ ॥ १ ॥

जो मैं पार उतारूँगा तो उतराई क्या दोगे। थोड़ा सोना मैं दूँगा थोड़ी चाँदी दूँगा और गजमोती का हार दूँगा ॥ २ ॥

मैं सोना नहीं लूँगा मैं रूपा नहीं लूँगा मैं तो दूल्हे की आजी लूँगा। बन्ना विवाह करके आये और चमेली के बाग में ठहरे ॥ ३ ॥

रानी घूँघट खोलो मैं देख लूँ तुम्हारा मुँह। तुम्हारे मुँह के कारण ही मैंने आजी मल्लाह को दे दी ॥ ४ ॥

नोट—आजी के स्थान पर अन्य स्त्रियों के नाम से यह गीत गाया जाता है।

(४)

एकु घोड़ी जो आई मोरे मन भाई चंचल सबद सुनाय।
खोरियन खोरियन खुर, जो सवाँरै तेहि रे दुलहू चढ़ि आये ॥ १ ॥
केहि के हैं नाती केही केरे बेटा, कहाँना तोरी पंडिताय।
कौन सो नन्दु बिआहन जैहैं, सोने झलामलि होय ॥ २ ॥
बाबा के हैं नाती दादुलि के बेटा, सिपुरी मोरी पंडिताय।
कवन रामा बिआहन जैहैं, सोने झलामलि होय ॥ ३ ॥

ब्याहन गे हैं बेहि घर आये; ऊबे हैं पँवरि दुआर।
आजी दुलहिन देई आरती साजो, बउहर परछि घर लाओ ॥ ४ ॥

धनु भल दिहिनि दायजु भल दीन्हेन्हि पँचहड़ि बैल भराय।
गोबरा काढ़न का कन्या जो दीन्ह्यो समधी मैं सेवक तुम्हार ॥ ५ ॥

ऐसे बचन कस बोल्यो तुम समधी काहे माँ हौ तुम हीन।
सब बउहन माँ सिखदारिन दुलहिन देइ, सीझे रामरसोय ॥ ६ ॥

एक घोड़ी जो आई वह मुझे पसन्द है वह चंचल शब्द सुनाती है। गली-गली में वह पैर सँभाल कर रखती है उस पर दूल्हे रामा चढ़े हैं ॥ १ ॥

किसके नाती हो किसके पुत्र हो और तुम्हारी पंडिताई कहाँ है ? किसके यहाँ विवाह के लिये जाओगे सोन की झूल झलमल हो रही है ॥ २ ॥

बाबा का मैं नाती हूं पिता का पुत्र हूं अमुक गाँव में पंडिताई है। अमुक रामा विवाह के लिये जायेंगे सोने की झूल झलमल होगी ॥ ३ ॥

विवाह के लिये गये हैं, विवाह कर घर आये हैं बाहर के दरवाजे बन्द हैं। आजी दुलहिन देवी आरती सजाओ और बहू की परछन (स्पर्श) करके घर ले आओ ॥ ४ ॥

खूब धन दिया, दहेज भी खूब दिया, पँचहड़ (पांच बड़े बर्तन) बैल पर लदा कर भेज दिये हैं। गोबर उठाने के लिए एक कन्या दी है—समधी मैं तो तुम्हारा सेवक हूं ॥ ५ ॥

ऐसी बात समधी तुमने कैसे कह दी किस बात में कम हो। सब बहुओं में यह अधिक सीखी हुई है। राम रसोई बनने लगी ॥ ६ ॥

सेहरा

(१)

मदन मोहन को सेहरा लागो मन मेरे ॥ १ ॥
धनि माई धनि बाप को जिन बेटा जायो।
सोने का मौर धराय कै बेटा ब्याहन आये।
धनि माई धनि बाप जिन बेटी जायो।
मोतिन माँग भराय कै बन्नी चौके आई ॥ ३ ॥
बाजन बाजे सब विधि, बाजे सहनाई।
एकु न बाजे तोरही, बाजे रोशन चौकी ॥ ४ ॥

मदनमोहन का सेहरा मेरे मन में बस गया है ।। १ ।।

माता और पिता धन्य हैं जिन्होंने ऐसा बेटा पैदा किया ।
सोने का मोर रखवा कर पुत्र विवाह को चले हैं ।। २ ।।

माता और पिता धन्य हैं जिन्होंने ऐसी बेटी पैदा की ।
मोतियों से मांग भरवा कर बनरी चौक पर आई ।। ३ ।।

सब प्रकार के बाजे बज रहे हैं और शहनाई भी । केवल तुरही नहीं बज रही है, रोशन चौकी भी बज रही है ।

(२)

सेहरे की गुंधाई में क्या देओगी, मौरे के गुँधाई में क्या देओगी ।
थारु भरि मोती माली लतै नहीं, मांगत है बनरे की आजी ।
आजी तो आपनि न देहौं माली, जो चाहो नानी लै जाओ ।

सेहरे की गुंधाई में क्या दोगी और मौर की बनवाई में क्या दोगी ।
थाल भर मोती माली लेता ही नहीं है वह तो बनरे की आजी मांगता है ।
आजी तो अपनी नहीं दूंगा माली चाहो नानी ले जाओ ।

नोट—इसी प्रकार आजी के स्थान पर अन्य के नाम से भी यह गीत गाया जाता है । और साथ ननिहाल के रिश्ते भी शामिल कर दिये जाते हैं ।

नवाँ प्रकरण

लाचारी

देवी के गीत

(१)

काहे की मैया देहरी औ बाजू, काहे के लगे हैं केंवार हो माय।
सोने की मैया देहरी औ बाजू, चन्दन लगे हैं केंवार हो माय ॥ १ ॥
गह गह ऐपन लह लह सेन्दुर, पूजैं दुलहिन देई रानी हो माय।
ठाढ़े 'सबै जने' विनती करति हैं, हमहूँ का होअ दयालु हो माय ॥ २ ॥

मैया तुम्हारे मन्दिर की देहरी औ बाजू काहे के बने हैं और दरवाजे काहे के लगे हैं? सोने की देहरी और बाजू बने हैं और चन्दन के किवाड़ बने हैं ॥ १ ॥

गहरा ऐपन लगा है सेन्दुर का लाल रंग लहक रहा है दुलहिन देवी, मैया की पूजा कर रही हैं। और सभी लोग विनती कर रहे हैं कि हमारे ऊपर भी दयालु हो ॥ २ ॥

(२)

राखि लेओ पति जनकी। अबला
मैया के भवन एकु फूली फुलवारी, आवै महक बेला की। अबला।
मैया के दुआरे एकु गंगा बहति हैं, नाव परी चन्दन की ॥ १ ॥

मैया के भवन माँ होमु होत है, आवै महक घिय गुर की।
पान सुपारी मैया धजा नारियल, यह लेश्रो भेंट हमारी ॥ २ ॥

देवी हमारी (हम लोगों की) लाज रख लेना। हम अबला हैं।

मैया के भवन एक फुलवारी फूल रही है जिससे बेला की सुगन्धि आ रही है। मैया के दरवाजे गंगा जी बहती हैं उसमें चन्दन की नाव पड़ी है ॥ १ ॥

मैया के भवन में हवन हो रहा है जहाँ से घी-गुड़ की सुगन्धि आ रही है। पान, सुपारी, ध्वजा और नारियल की भेंट मैया स्वीकार करो ॥ २ ॥

(३)

मोरा जिअरा लहरिया लेय देवी तोरे दरसन का ॥ १ ॥
मोरा ससुर जान न देय, देवी तोरे दरसन का।
बहुआ घरहि ते माँगौ बरदान, हाथ जोरि विनती करौ ॥ २ ॥
मोरा जेठ जान न देय, देवी तोरे दरसन का।
बहुआ घरहि ते माँगौ बरदान, हाथ जोरि विनती करौ ॥ ३ ॥
मोरे देवर जान न देय, देवी तोरे दरसन का।
भाभी घरही ते माँगौ बरदान, हाथ जोरि विनती करौ ॥ ४ ॥
मोरे स्वामी जान न देय, देवी तोरे दरसन का।
रानी घरही ते माँगौ बरदान, हाथ जोरि विनती करौ ॥ ५ ॥

मेरे मन में उमंग उठ रही है देवी तुम्हारे दर्शन के लिये।
मेरा ससुर तुम्हारे दर्शन के लिये देवी, जाने नहीं देता ॥ १ ॥
बहू घर ही से वरदान मांगो, हाथ जोड़ कर विनती करो ॥ २ ॥
देवी तुम्हारे दर्शन के लिये मेरा जेठ जाने नहीं देता।
बहू घर से ही वरदान मांगो, हाथ जोड़ कर विनती करो ॥ ३ ॥
देवी तुम्हारे दर्शन के लिये मेरा देवर जाने नहीं देता।
भाभी घर से ही वरदान मांगो, हाथ जोड़ कर विनती करो ॥ ४ ॥

देवी तुम्हारे दर्शन के लिये मेरे स्वामी जाने नहीं देते ।

रानी घर से ही वरदान माँगो, हाथ जोड़ कर विनती करो ।। ५ ।।

इस गीत से एक बात तो स्पष्ट है कि बहू अपने ससुर के घर में पर्दे के प्रतिबंध में फंस जाती है और उसका बाहर आना-जाना बंद हो जाता है। यहाँ तक कि देवी के दर्शन पर भी नियंत्रण लग जाता है। इस गीत में इस प्रकार के प्रतिबंध की ओर संकेत करके बहू की देवी-दर्शन की आकांक्षा को और भी प्रगाढ़ बना दिया गया है ।

(४)

देवी दियना बारैं, अकेली बन माँ ।। १ ।। अकेली बन माँ। टेक ।
काहे का दियना काहे की बाती, काहे का घिरतु जलावैं ।
सोने का दियना कपूर की बाती सुरभी घिरतु जलावैं ।। २ ।।
सोने के थाल माँ जेउँना रचायों देवी जेउँना जेवैं ।
सोने का गेड़ुआ गंगाजल, देवी पनियाँ पियैं ।। ३ ।।
पाँच पान पंचबीरा लगायों, देवी बिरिया रचैं ।
फूल नेवारी की सेज बिछायों, देवी सेजिया सोवैं ।। ४ ।।

अकेली बन में देवी दिया जलाती है ।। १ ।। अकेली वन में । काहे का दिया और काहे की बाती और काहे का घी जलाती है ।

सोने का दिया, कपूर की बाती सुरभी का घी जलाती है ।। २ ।।

सोने के थाले में जेवन सजाया गया और देवी भोजन करती है । सोने के गेड़ुआ से गंगाजल देवी पीती है ।। ३ ।।

पाँच पान का पंचबीड़ा लगाया देवी बहू बीड़ा खाती हैं और नेवार के फूलों की सेज बिछायी उसमें देवी सोवें ।। ४ ।।

(५)

सँझही भँवरवा उगरि चले हैं, मलिनेऊँ चली हैं आधी राति हो माय।
कहाँना मलिनि राति गवाँयौ, कहाँना लगायौ इत्ती देर हो माय।
कजरी के बन माँ मैया फूली फुलवारी, फुलवा बिनत लागी देर हो।
केहि का गूध्यों मालिनि बेला चमेली, केहि का लौंग का हार हो माय।
देवी का गूँध्यों बेला चमेली, लँगुरे लौंग का हारु हो माय।
हारु पहिनि देवी नाचन लागीं, मोंहे सकल देउतान हो माय।
माँगै का होय तौ माँगौ री मालिनि, जो तोरे हियरे समाय हो माय।
अन्नु धन्नु मैया तुम्हरो दियो है, मलिया अमर कई देओ हो माय।
अम्बर नहिं मालिनि पाँचो पण्डवा, मलिया अमर कैसे होय हो माय।
येहि कलयुग माँ तीनि अमर हैं, पानी, पवन, गगन धूरि हो माय।
'पान सुपारी मैया धजा नारियल, यह लिओ भेंट हमारि हो माय।

शाम को भंवरे चल दिये हे परन्तु मालिन आधी रात को चली है।

"मालिन कहाँ तुमने रात गंवाई और कहाँ तुमने इतनी देर लगाई।"

'कजरीवन में मैया फुलवाड़ी फूली है वही फूल बिनने में देर लग गई।"

"मालिन किसके लिये तुमने बेला चमेली का हार गूँथा है और किसके लिये लौंग के फूलों का हार।"

"देवी के लिये बेला चमेली का हार गूँथा है और लंगूरे (हनुमान) के लिये लौंग का हार गूँथा है।"

हार पहिन कर देवी नाचने लगी और सभी देवताओं को मुग्ध कर लिया।

"मालिन तुम्हारे जी में जो आये माँगो।"

"अन्न धन मैया सब कुछ तुम्हारा ही दिया है केवल मैया माली को अमर कर दो।"

"मालिन! अमर तो पाँचों पाण्डव नहीं हैं माली को कैसे अमर कर दूँ।"

"इस कलयुग में तीन ही अमर हैं पानी, पवन और गंगा जी की धूल।"
पान, सुपारी, ध्वजा, नारियल की भेंट मैया स्वीकार करो।

(६)

दरसन देओ माय, मोरा मनु लगो दरस कहाँ। मेरो० ॥ १ ॥
परसन्न हो माय, मोरा मनु लागो दरस कहाँ। मेरो० ॥ २ ॥
अरी ए सहेली कहाँ तुम्हारा जल्मु भयो, कहाँना अवतार। मेरो०।
अरी ए सहेली नीमसार मेरा जल्मु भयो, पाटन अवतार।
अरी ए सहेली जो ध्यावै सो फलु पावै, बिमुख नहिं जाय ॥ ३ ॥

मैया दरशन दो मेरा मन दरशन के लिये व्यग्र है ॥ १ ॥
मैया प्रसन्न हो मेरा मन दरशन के लिये व्यग्र है ॥ २ ॥
अरी ए सखी तुम्हारा जन्म कहाँ हुआ और कहाँ अवतार हुआ।
अरी ए सहेली नीमसार में मेरा जन्म हुआ है और पाटन में अवतार।
अरी ए सहेली जो ध्यान धरेगा सो फल पावेगा निराश कोई न होगा ॥३॥

(७)

कहाँ जइहो ज्वाला, ऐसी गरमिन माँ।
ज्वाला कुइँया खुँदाई, ऐसी गरमिन माँ।
महरा दियो लगवाय ऐसी गरमिन माँ।
ज्वाला बाग लगाई, ऐसी गरमिन माँ।
मलिया दियो लगवाय, ऐसी गरमिन माँ।
फुलवा लियो तुरवाय, ऐसी गरमिन माँ।
ज्वाला तालु खोदाइन, ऐसी गरमिन माँ।
धोबिया दियो लगवाय, ऐसी गरमिन माँ।
कपरा दियो धुलवाय, ऐसी गरमिन माँ।
ज्वाला महला उठायो, ऐसी गरमिन माँ।
खिरकी दियो लगवाय, ऐसी गरमिन माँ।

ज्वाला तुम ऐसी गर्मी में कहाँ जाओगी। ज्वाला ने ऐसी गर्मी में कुआ खुदवाया और कहार लगवा दिया। ज्वाला ने ऐसी गर्मी में बाग लगवाया और उसमें माली लगवा दिया। ज्वाला ने ऐसी गर्मी में फूल तुड़वा लिये। ज्वाला ने ऐसी गर्मी में तालाब खुदवाया और उसमें धोबी लगवा दिया और ऐसी गर्मी में कपड़े धुलवा दिये। ज्वाला ने ऐसी गर्मी में महल बनवा दिये और उसमें खिड़की बनवा दी।

(८)

गढ़ कँगड़े न जइहौं। मोरी अबला।
वोहि गढ़ कँगड़ा दूरि बसत है, मैं तो चल्यू न पइहौं। मोरी अबला।
वोहि गढ़ कँगड़ा का ऊँच चौतरा, मैं तो चढ़्यू न पइहौं। मोरी अबला।
वोहि गढ़ कँगड़ा के ढीठि मलिनिया, मैं तो पूज्यू न पइहौं। मोरी अबला।
वोहि गढ़ कँगड़े की साँवलो मूरति, मैं तो दरस न पइहौं। मोरी अबला।

कांगड़े के किले नहीं जाऊंगी। वह कांगड़े का किला दूर है मैं तो वह तक चल भी नहीं पाऊंगी। उस कांगड़े के किले का चबूतरा बहुत ऊंचा है मैं उस पर चढ़ भी नहीं पाऊंगी। उस कांगड़े के किले की मालिन बड़ी उद्दण्ड है मैं तो पूजा भी न कर पाऊंगी। उस कांगड़े के किले में सांवली मूर्ति है मैं तो दर्शन भी न कर पाऊंगी।

(९)

जँगल माँ मंगल कै रही आनन्दी जालिपा॥ १॥
मैया के दुआरे एकु गंगा बहति है।
वाँन गंगा हहराय रही हैं आनन्दी जालिपा॥ २॥
मैया के भवनु एकु हर हर पीपरु।
कोई लाल धजा फहराय रही आनन्दी जालिपा॥ ३॥

मैया के दुआरे एकु अँधरा पुकारै, कोढ़िया पुकारै।
कोई दियो नैन गोहराय रहे आनन्दी जालिपा।
कोई दियो काया घर जाय आनन्दी जालिपा ॥ ४ ॥
मैया के भवनु एकु दुखिया पुकारै।
कोऊ हरो दुख घर जाय रहीं आनन्दी जालिपा ॥ ५ ॥
मैया के दुआरे एकु बँझिनी पुकारै।
कोऊ देऊ बालकु घर जाय आनन्दी जालिपा ॥ ६ ॥

आनन्दी जालिपा देवी जंगल में मंगल कर रही हैं ॥ १ ॥

मैया के दरवाजे गंगा जी बहती हैं, वह बान गंगा की भाँति हहरा कर तेज बह रही हैं ॥ २ ॥

मैया के भवन में एक हरा-हरा पीपल है उसमें लालध्वजा फहरा रही है ॥ ३ ॥

मैया के दरवाजे एक अंधा पुकारता है, एक कोढ़ी पुकारता है। "नैन दिये" कोई चिल्ला रहा है, और किसी को घर पहुंचने पर सुन्दर शरीर दिया ॥ ४ ॥

मैया के घर एक दुखी पुकारता है—उसका दुख हरने मैया उसके घर जा रही हैं ॥ ५ ॥

मैया के दरवाजे पर एक बाँझ पुकारती है—परन्तु पुत्र देने के लिये जालिपा महरानी उसके घर जा रही हैं ॥ ६ ॥

(१०)

रथु लाओ बनाय, देवी चलीं मधुबन कैहाँ।

मैया हँकरौं मैं नगर के बढ़इन का, रथु लावैं रे बनाय। देवी चलीं।
मैया हँकरौं मैं नगर के दरजिन का, रथु लावैं ओहार।
मैया हँकरौं मैं नगर के बनियन का, लौंगैं दइ जायँ।
मेवा दइ जायँ।

मैया हँकरौं मैं नगर के अहिरन का, दहिया दइ जायँ ।
मैया हँकरौं मैं नगर के कलवारन का, अमृत दइ जायँ ।
मैया हुकरौं मैं नगर के गड़रियन का, भेंड़ दइ जायँ ।
मैया हँकरौं मैं नगर के मलियन का, गजरा दइ जायँ ।
मैया हँकरौं मैं नगर के जत्रिन का, पूजा दइ जायँ ।
मैया हँकरौं मैं नगर के पंडित का, पोथिया बाँचि जायँ ।

रथ सजा कर लाग्रो देवी मधुवन जा रही हैं । मैं शहर के बढ़इयों को बुलवाकर कहूंगी कि रथ बना कर दे जायें । नगर के दरजियों से रथ का ग्रोहार बनवाऊंगी, नगर के बनियों से लौंग, मेवा दे जाने को कहूँगी, नगर के ग्रहीरों से दही मँगवाऊंगी, नगर के कलवारों से शराब मँगवाऊंगी, नगर के गड़रियों से भेंड़ा मँगवाऊँगी, नगर के मालियों से मालाएँ मँगवाऊँगी, नगर के यात्रियों से पूजा चढ़ाने के लिए कहूंगी, ग्रौर नगर के पंडित से वेद पाठ करने के लिए कहूंगी ।

(११)

सुनो राजा बेन, कौने बन छाँड़यो बेटिन कैहाँ ।
जहाँ सींक पात नहिं डोलत हैं, पंछी उड़ैं न उड़ायँ
ओही बन छोड़यों बेटिन कैहाँ ।
सबै बिटींवा सयानी सयानी, सुनो राजा बेन, अलख दुलारी मेरी
बाउरि है ।
मरै भूख पियास, कौने बन छोड़यों बेटिन कैहाँ ?
तब तो रानी मोरी चेत्यो न चेतायो, अब काहे पछिताओ ?

राजा बेन सुनो, "तुमने हमारी बेटी को किस वन में छोड़ दिया है ?"

"जहाँ सींक ग्रौर पत्ते नहीं हिलते ग्रौर पक्षी तक नहीं उड़ते, उसी बन मैंने तुम्हारी बेटी को छोड़ दिया है ।

राजा बेन सुनो, मेरी और बेटी तो होशियार हैं परन्तु दुलारी बेटी तो बिलकुल भोली है। वह भूख प्यास से मर जायेगी, तुमने उसे किस वन में छोड़ दिया।

तब तो रानी कुछ होश न किया अब पछताने से क्या होगा ?

नोट—यह गीत लड़की के विदा का है परन्तु लाचारियों में भी इसे प्रायः गाया जाता है।

(१२)

महरानी मोरी बरदानी, कि धनि बिन्द्राचल रानी ॥ १ ॥
अरी देवा पहाड़ के ऊपर, अरी अम्बे पहाड़ के ऊपर,
देवा का भवनु खाँसा, जहाँ जगतारन को बासा। महरानी ॥ २ ॥
अरी देवा सकल कुँइयन का खारा पानी, पियें मोरी जगतरानी।
अरी अम्बे गंगन का धारा, गंगा का निर्मल पानी नहाय मोरी
आदि जाति रानी ॥ ३ ॥
अरी देवा चन्दन चौकी, चौकी में गड़े हीरा, चलि रहे पानों के
बीरा।
अरी देवा लौंग न पायौं, जोतो की उजियारी, करो बाल बच्चों की
रखवारी ॥ ४ ॥

महारानी मेरी बहुत बरदानी हैं--विन्ध्याचल की रानी को धन्य है। अरी देवी ! पर्वत पर, अरी माता पर्वत पर (निवास किया है) ॥ १ ॥

देवी का भवन बहुत सुन्दर बना है जहाँ जगततारन देवी का निवास है ॥ २ ॥

अरी देवी सभी कुओं का पानी खारा है, मेरी जगत रानी पीती हैं। अरी माता गंगा जी की धारा जिसका पानी निर्मल है उसी में मेरी आदि जाति महारानी स्नान करती हैं ॥ ३ ॥

अरी देवी की चौकी चन्दन की उसमें हीरे जड़े हैं उसी में बैठी पानों के बीड़े खा रही हैं। अरी देवी आशीर्वाद की लौंग नहीं मिली, तुम ज्योतियों से जगमगा रही हो—बाल बच्चों की रखवाली करो ॥ ४ ॥

(१३)

गेगासौं के घाट का का बरनौं जहँ बास कियो संकट हरनी ।
ऐति कैति महादेव बिराजै बीच संकटा हैं जलनी ।
अँधरेन आँखी मैया, कोढ़िन काया, बाँझिनि बलकु खेलावैं जलनी ।
विप्र के फूल गुलाब कै गजरा यह लिओ भेंट हमारि जलनी ।

गेगासों के घाट का क्या वर्णन करूँ जहाँ संकटा महारानी का वास है ।
इधर-उधर महादेव विराजमान हैं बीच में संकटा महारानी हैं ।
अंधरों को मैया आंखें और कोढ़ियों को शरीर और बांझों को पुत्र देती हैं ।
ब्राह्मण के फूल गुलाब के गजरा माता यह हमारी भेंट स्वीकार करो ।

(१४)

देवी दयालु भई आई मोरे अँगना ।
देवी के पाँयन सोने की खरौंहैं, आँगना गोंदि गई । देवी०
देवी के हाथ चन्दनु भरी खोरिया, चन्दना छिनकि गई ।।"
देवी के हाथ फूलन भरी डलिया, फूला बिखेर गई ।"
देवी के हाथ फूला की छड़िया, छड़ियन मारि गई ।"

देवी दयालु हुई है आज मेरे आंगन में आई हैं ।

देवी के पैरों में सोने की खड़ाऊँ हैं वे मेरा आंगन गोंद (पैरों से चल कर) गई ।

देवी के हाथ में चन्दन की कटोरी है उससे चन्दन छिनक गई हैं ।

देवी के हाथ में फूलों से भरी एक डाली है—वे फूल बिखेर गई ।

देवी के हाथ में फूलों की एक छड़ी है उसी (कृपा की) छड़ी से सब को मार गई हैं।

(१५)

माँगौं बरदानु, देवी के मँडिलिवा भीतर।
अरी माँगौं मैं हरी हरी चुरियाँ, सेन्दुरा भरि माँग। देवी के०
अरी माँगौं मैं सात पाँच भइया, बहिनि अकेलि।"
अरी माँगौं मैं सात पाँच देवरा, ननदि अकेलि।
अरी माँगौं मैं सात पाँच लरिका, कन्या अकेलि।"

देवी के मन्दिर के भीतर मे वरदान माँगती हूँ।

अरी में हरी-हरी चूड़ियों और सेन्दुर से भरी माँग (पति की आयु) का वरदान माँगती हूँ।

अरी मे सात-पाँच भैया और अकेली एक बहिन माँगती हूँ।

अरी में सात-पाँच देवर और अकेली एक ननद माँगती हूँ।

अरी में सात-पाँच पुत्र और एक पुत्री माँगती हूँ।

(१६)

माता जाइके बस्रौ जंगल मैहा।
कछु आपु चुनैं; कुछ राम चुनैं, माँगे देत मनुज कँहाँ। टेक
लौंग आपु चुनैं, मेवा राम चुनैं, माता अनुधनु देत मनुज कँहाँ। टेक

माता ने आकर जंगल में निवास किया है।

कुछ आप चुनते हैं कुछ राम चुनते हैं और माता मनुष्यों के माँगने पर देती हैं।

लौंग स्वयं चुनती हैं मेवा राम चुनते हैं और अन्न-धन मनुष्यों को देती हैं।

(१७)

आनन्द रूप भवानी मैं आजु देखेऊँ।
आठ खम्भ नौ दियना जलति हैं, जोतिन जोति सँवारी। मैं आजु०
बाजत ताल मृदंग, झाँझ, डफ झाँझन की झनकारी।"
ठाढ़े सबै जने अरज करति हैं, हम पर होउ सहाँइ।"

भवानी का आनन्द स्वरूप मैंने आज देखा।
आठ खम्भों पर नौ दिये जलते हैं ज्योति से ही ज्योति सँवारी गई है।
ताल, मृदंग, झांझ, डफ बजते हैं और झांझों की झन्कार हो रही है।
सभी लोग खड़े विनती करते हैं कि हम पर कृपालु हो।

(१८)

फूलि रहे गजरा भवन मइँ हाँ।
गंगाजल माता कैसे चढ़ाऊँ, मछली ने डारा है जुठारी। भवन०
धानी के चाउर मैया कैसे चढ़ाऊँ, चिड़ियन डारा है जुठारी।"
गैया दूध मैया कैसे चढ़ाऊँ, बछरा ने डारा है जुठारी।"
गेंदा के फूल माता कैसे चढ़ाऊँ, भौंरा ने डारा है जुठारी।"

भवन में गजरा फूल रहे हैं।
माता गंगाजल कैसे चढ़ाऊँ मछली ने जूठा कर दिया है।
धान के चावल कैसे चढ़ाऊँ चिड़ियों ने जूठे कर दिये हैं।
गैया का दूध कैसे चढ़ाऊँ बछड़े ने जूठा कर दिया है।
गेंदा के फूल माता कैसे चढ़ाऊँ भौंरों ने जूठे कर दिये हैं।

यह गीत आर्यसमाजी प्रभाव के अन्तर्गत बनाया गया मालूम होता है परन्तु परम्परा ने इसे भी भक्ति का गीत बना दिया ।

(१९)

माता तुम मेरो मन मोहि लियो ।
माता तेरे जन को भूख लगति है, माता खाँड़ चिरौंजो मँगाय न लियो । टेक०
माता तेरे जन के प्यास लगति है, गंगा नीर मँगाय न लियो ।
माता तेरे जन के तलब लगति है, पाँच पन बिरिया मँगाय न लियो ।
माता तेरे जन के नींद लगति है, फूलन सेज बिछाइ न लियो ।

माता तुमने मेरा मन मुग्ध कर लिया है ।
माता तुम्हारे भक्त को भूख लगती है, माता शक्कर, चिरौंजी मँगा लो ।
माता तुम्हारे भक्त को प्यास लगती है गंगाजल मँगवा लो ।
माता तुम्हारे भक्त को तलब (व्यसन) लगती है पाँच पान का बीड़ा मँगवा लो ।
माता तुम्हारे भक्त को नींद लगती है, फूलों की सेज बिछा दो ।

(२०)

माया रूपु भवानी मैं आजु देख्यों ।
सिंह चढ़े देवा गरजति आवैं लाल लँगूर अगवानी । मैं आज०
ताती जलेबी मइया भरिकै रखेउँ, अमृत भोगु लगावैं ।"
बैठे सिंहासन देवा धरम करति हैं, छानत दूध औ पानी ।"
अँधरेन आँखी देवा कोढ़िन काया, बाँझिनि गोद खेलावैं ।"
देवा के दुआरे एकु हर हर पीपर लाल धजा फहरावैं ।"

भवानी का माता रूप मैंने आज देखा।

देवी सिंह पर चढ़ी गरजती आती हैं लाल लंगूर उनकी अगवानी करते हैं।

गरम जलेबी माता के लिये भर के रखीं अमृत से भोग लगाया।

सिंहासन पर बैठ कर देवी धर्म करती हैं—दूध और पानी को छानती हैं, अलग-अलग करती हैं।

अंधों को आँखें देती हैं और कोढ़ियों को स्वस्थ शरीर और बाँझों को पुत्र देती हैं।

देवी के दरवाजे पर एक हरा-हरा पीपल का वृक्ष है जिस पर लाल ध्वजा फहरा रही है।

(२१)

आपनु भवनु बतावो जगदम्बे।
माता जी का भवनु बना नौरंगा, तरे बहै गंगा ऊपर
बिन्ध्याबासिनी। जग०
सातों बहिनी झूलैं लँगुरे झुलावैं, हनुमत चँवर डोलावैं। जगदम्बे०
ठाढ़े महादेव आरती सजावें, हाथ लिये आरती पारबती संगा। जग०

जगत की माता अपना भवन बताओ।

माता जी का भवन नौरंग का बना है नीचे गंगा जी बहती हैं और विन्ध्य-वासिनी देवी हैं।

सातों बहिनें (सप्त माता) झूला झूलती हैं—लँगूर झुलाते हैं और हनुमान चँवर डुलाते हैं।

महादेव पार्वती के साथ खड़े हाथ में आरती लिये आरती उतार रहे हैं।

(२२)

भूलिउँ भूलिउँ रे भवानी मैं तुम बिना।
जैसे अँधरा भूला है नैनन बिना, वैसे भूलिउँ रे। भवानी मैं०
जैसे कोढ़ी भूला काया बिना, वैसे भूलिउँ रे। भवानी मैं०
जैसे बाँझनि भूली पुत्र बिना, वैसे भूलिउँ रे। भवानी मैं०

तुम्हारे बिना भवानी में पागल हो रही हूँ।

जैसे अंधा आँखों के बिना पागल सा है उसी प्रकार में भी पागल हो रही हूँ।

जैसे कोढ़ी बिना स्वस्थ काया के भूला रहता है और जैसे बाँझिन पुत्र के बिना पागल रहती है उसी प्रकार मैं भी भूली हुई हूँ अर्थात् बेखबर हूँ।

(२३)

मैं आई देवी सन्तन तारन को।
देवी के दुआरे एकु हर हर पीपर—लाल धजा फहरावन को। टेक।
देवी के दुआरे एकु अँधरा पुकारै, देओ नयन घर जावन को।
देवी के दुआरे एकु कोढ़िया पुकारै, देओ काया घर जावन को।
देवी के दुआरे एकु बाँझिनि पुकारै, देओ बालकु घर जावन को।
मधुमेवा पकवान मिठाई, अमृत भोग लगावन को।
जो जस ध्यावै मैया सो फलु पावै, बिमुख कोऊ न जावन को।

में सन्तों को तारने के लिये आई हूँ।

देवी के दरवाजे पर एक हरा हरा पीपल का वृक्ष है जिस पर लाल ध्वजा फहरा रही है।

देवी के दरवाजे पर एक अंधा पुकार रहा है—घर जाने के लिये आँखें दो।

देवी के दरवाजे पर एक कोढ़ी पुकारता है, घर जाने को स्वस्थ शरीर दो।

देवी के दुआरे एक बांझ पुकारती है, घर जाने के लिये एक पुत्र दो।

मधुमेवा, पकवान, मिठाई और अमृत भोग लगाने के लिये दो।

जो जैसा ध्यान करता है वह वैसा ही फल पाता है—कोई निराश नहीं लौटता।

देवी का झूला

(२४)

झूलें मोरी सितला रहस हिंडोल ॥ १ ॥
अरी देवा काहे के चारिउ खम्भ बने हैं।
काहे केर पलना, काहे लागी डोरि ॥ २ ॥
अरे जत्री चन्दन के चारिउ खम्भ बने हैं।
सोने केरा पलना, रेसम केरी डोरि ॥ ३ ॥
अरी देवा कौने झूले कौन झुलावें।
को यह विनती करै कर जोरि ॥ ४ ॥
अरी जत्री सितला झूल लगुंर झुलावैं।
हनुमति विनती करैं कर जोरि ॥ ५ ॥
अरी मैया सितला झूलैं लँगुर झुलावैं।
आजी उनकी पैयां परैं लट छोरि ॥ ६ ॥

राम हिंडोले में मेरी शीतला देवी झूला झूलती हैं ॥ १ ॥

अरी देवी काहे के चारों खम्भे बने हैं, काहे का पालना और काहे की डोर बनी है ॥ २ ॥

अरे यात्री चन्दन के चारों खम्भे बने हैं, सोने का पालना तथा रेशम की डोर बनी है ।। ३।।

अरी देवी कौन झूलता है और कौन झुलाता है, और कौन हाथ जोड़ कर विनती करता है ।। ४ ।।

अरे यात्री शीतला देवी झूल और लंगूर झुलाते हैं हनुमान हाथ जोड़ कर विनती करते हैं ।। ५ ।।

अरी मैया शीतला देवी झूलती हैं लंगूर झुलाते हैं और उनकी आजी अपने बालों को खोलकर उनके पैरों पड़ती हैं ।। ६ ।।

इसी प्रकार आजी के स्थान चाची, माता इत्यादि को रख कर गाया जाता है ।

दसवाँ प्रकरण

ऋतु सम्बन्धी गीत

सावन, बारहमासा तथा चौमासा

सावन, चौमासे तथा बारहमासे के गीत वर्षा ऋतु के प्रारम्भ होने के साथ गाँवों में शुरू हो जाते हैं। ग्रीष्म ऋतु की तपन से मुक्त होने का संदेश जब आषाढ़ के उमड़ते घुमड़ते बादल लाते हैं तो व्याकुल मनुष्य बादलों की ओर देखकर "काले मेघा पानी दे" की पुकार लगा देता है और मयूर के नृत्य तथा पपीहा की पुकार के साथ ग्राम-बालाएँ भी गा उठती हैं। चारों ओर से अमृत-वर्षा होने लगती है। स्वतंत्र ग्राम-कन्याएँ, उत्साह से पूर्ण, अपने कोकिल-कण्ठ से बारहमासे, सावन के गीत गाती हैं। बधुएँ अपने भाई की प्रतीक्षा करती हुई एक-एक दिन और रात काटती हैं। वे भी चाहती हैं कि उनका भाई आकर उन्हें भी वहाँ ले जाये जहाँ उन्होंने नीम की डाल पर पड़े झूले में बैठकर मुक्त कण्ठ से सैकड़ों सावन और बारहमासे गाये थे। ससुराल का बन्धन-पूर्ण अवगुण्ठित जीवन अब उनके लिये सह्य नहीं है और इसीलिये अनेक सावन-गीतों में 'बीर' भाई के आगमन और मायके जाने की तीव्र इच्छा व्यक्त की गई है। वर्षा ऋतु के सुखद क्षणों में वे बधुएं भी वहाँ होना चाहती हैं जहाँ उनके जीवन की सबसे मधुर स्मृतियाँ बँधी हुई हैं; जहाँ उनका उन्मुक्त अट्टहास गूंज रहा है और जहाँ उनकी सौ-सौ अठखेलियाँ धरती के कण-कण में समाई हुई हैं। इस ऋतु में अनेक तीज त्योहार होते हैं। नागपंचमी लोक-परम्परा के अनुसार गुड़ियों का त्योहार है जिसमें अनेक गाँवों के लड़के तथा लड़कियाँ गुड़िया खेलते हैं, पीटते हैं और गाँव के बाहर जाकर उन गुड़ियों को किसी तालाब में विसर्जित करते हैं। तीजा-हरितालिका का सबसे महत्त्वपूर्ण व्रत इसी ऋतु में होता है जिसमें सभी कुमारी तथा ब्याहता पति के लिये निर्जला व्रत करती हैं। आषाढ़ी, रक्षाबन्धन, बहुरा चौथ, हर छठ, गणेश चौथ, अनंत चौदस जैसे

महत्त्वपूर्ण त्योहार इसी ऋतु में होते हैं। ऐसे अवसरों पर और इस ऋतु में जिस प्रकार प्रकृति स्वतंत्र हो अत्यधिक क्रियाशील हो जाती है उसी प्रकार मानव-जीवन भी अत्यधिक उत्साहपूर्ण, मधुर और प्रेमपूर्ण हो जाता है।

पूर्वी जिलों में कजलियों का बड़ा प्रचलन है। अवधी प्रदेश में भी कजलियां खूब गाई जाती हैं। परन्तु कजलियों की दो आने चार आने की इतनी पुस्तिकाएँ बिकती है और नित्यप्रति कजलियों की रचना हो रही है कि कजलियों के मौखिक लोकगीतों की परम्परा कहीं दिखाई ही नहीं देती। अतएव में कजलियों के उदाहरण नहीं दे रहा हूँ। कुछ थोड़े से, उदाहरण के रूप में, सावन और बारहमासे दे रहा हूं। एक चौमासे का गीत भी प्रस्तुत है।

सावन

(२)

हरे हरे गोबर पेरि माटी, रनियन महल लिपाइये।
महल ऊपर काग बोलै, कागा के बचन सुनाइये ॥ १ ॥
उड़ उड़ कागा त्वै देहौं मैं धागा, सोनवा मढ़इहौं तोरी चोंच रे।
चोंच ऊपर कलमा फिरैहौं, जो रे बीरनु आवै आजु रे ॥ २ ॥
बीर आये कुछहू न लाये सासु ननद मन रूठिये।
जेठानी बैरिनि बोल बोलैं आये दिवरानी जी के बीर रे ॥ ३ ॥
हाथ मेंहदी, पायँ महाउर, कैसे मनाऊँ अपने बीर का।
छूटौ न छूटौ रचनी मेंहदी, लपकि मिलौं अपने बीर का ॥ ४ ॥
आवो न भैया मेरे, बैठो जँघिया चढ़ि छिन एकु धूप निवारिये।
धूप नेवारयों बहिनी बाग बगीचा और बहिन जी के देसमां ॥ ५ ॥
धूप नेवारयों बहिनी माया की कोखिया, तुम्हारी जिठानी बोलैं
बोल रे।
छूँछे हैं डोलिया छूँछे कहरवा रूठे बहिन जी के बीर रे ॥ ६ ॥
ऊँच चढ़ि चढ़ि माया जो देखैं आवत बेटा हमार रे।
आवौ न बेटा मोरे बैठौ जँघिया चढ़ि कहौ बहिनिया के हाल रे ॥ ७ ॥
काह कहौ माता बहिनी के हलवा कहत सुनत दुख होइ है।
अरे अरे पूता भयो सपूता रोवत बहिनि कैसे छोड़िये ॥ ८ ॥

करहु न माया मोरी सौ साठ पुरिया बहिनि चालन हम जाब रे।
साँझ सकारे भैया घोड़वा पै लादिनि, आधी राति भये असवार रे ॥ ६ ॥
भोरु होत भैया बहिनी के पहुँचे लोग कहैं बंजार रे।
बीर आये, सब कुछ लाये, सासू ननद हँसि बोलिये ॥ १० ॥
जेठानी बैरिनि हालु पूछै, आये देवरानी जी के बीर रे।
सारे, बहनोइया दून्हों जेवन बैठे, सुनु बहनोइया मेरी बात रे ॥ ११ ॥
सावन बहिनी का झूलना झुलैबे, भादों गौरी सेराइबे।
कुँवार बहिनी का पासा खेलाइबे, कातिक गंगा नहवाइबे।
अगहन बहिनी का बिदा करिबे आवैं बहनोइया जी के देस माँ ॥ १२ ॥

हरे-हरे गोबर और पीली मिट्टी मिलाकर रानी ने महल लिपवाया है। महल के ऊपर कौआ बोल रहा है और रानी कौए के वचन सुन रही हैं ॥१॥

हे कौए तुम उड़ जाओ तुम्हें मैं धागा दूंगी और चोंच मोने से मंढ़वा दूंगी। और चोंच के ऊपर कलमा, (?) फिरवा दूंगी यदि मेरे भाई आ जायगे ॥ २ ॥

भाई आये परन्तु कुछ भी नहीं लाये, सासु-ससुर रूठ गये, जेठानी शत्रु की भाँति व्यंग्य वाण छोड़ रही हैं कि देवरानी जी के भाई आये हैं ॥ ३ ॥

हाथों में मेंहदी लगी है पैरों में महावर लगा है अपने भाई को कैसे मनाऊँ? रचने वाली मेंहदी शीघ्र छट जाओ, मैं लपक कर अपने भाई से मिल सकूं ॥ ४ ॥

मेरे भाई आओ जांघ पर चढ़ कर बैठो और मार्ग की तपन मिटाओ। बहिन तपन तो मैंन बाग-बगीचों में मिटा ली। तुम्हारी जिठानी व्यंग्य वाक्य बोलती है ॥ ५ ॥

धूप तो मैंने माँ की कोख में ही निवार ली। पालकी और कहार खाली हैं भाई रूठ गया है। ऊँचे पर चढ़ कर माता देख रही है कि मेरा पुत्र वापिस आ रहा है। आओ बेटे मेरी जांघ पर बैठो और अपनी बहिन के समाचार बताओ ॥ ६-७ ॥

मेरी माँ ! बहिन के क्या समाचार सुनाऊँ, कहने-सुनने में दुख होगा। और पुत्र तुम तो सुपुत्र हो रोती हुई बहिन को कैसे छोड़ आये ।। ८ ।।

मेरी माँ सौ-साठ पूरी बना दो मैं बहिन को विदा कराने जाऊँगा । शाम को ही उन्होंने घोड़ा लादा और आधी रात में ही रवाना हो गये ।। ९ ।।

सबेरा होते ही भैया बहिन के यहाँ पहुँचे । लोग कहने लगे (बहुत सामान देख कर) कि कोई सौदागर है । भाई आया सब कुछ लाया सासु और ननद हँस-हँस कर बातें कर रही हैं ।। १० ।।

बैरिन जिठानी समाचार पूछती है—दिवरानी जी के भाई आये हैं । साले और बहनोई भोजन करने लगे । बहनोई मेरी बात सुनो, "सावन के महीने में बहिन को झूला झुलाऊँगा, भादों में गौरी की पूजा करवाऊँगा, कुआँर के महीने में पाँसा खिलाऊँगा और कार्तिक मास गंगा स्नान करवाऊँगा । और अगहन के महीने में बहिन को विदा कर दूँगा कौर बहनोई जी वे आपके पास आ जायेंगी ।। ११-१२ ।।

(२)

राति सपनु एकु देख्यों रे स्वामी, सपने माँ विरह वियोग रे ।
अस्सी कोस मेरी नन्दी बसति है, उन सुधि लीन्ह हमारि ।। १ ।।
कहाँना पाऊँ धना साँठी के चाउर, कहाँना पाऊँ एक चीरु रे ।
कहाँना पाऊँ धना रोकड़ रुपैया, बहिनी चालन हम जाइये ।। २ ।।
हमरी ओबरिया स्वामी साँठी के चाउर, हमरी पेटरिया एक चीरु रे ।
हमरी दादुलि घर रोकड़ रुपैया, बहिनी चालन तुम जाहु रे ।। ३ ।।
साँझ सकारे भैया घोड़वा पै लादैं, आधी रात भये असवार रे ।
भोरु होत भैया बहिनी के पहुँचे, लोग कहैं बंजारवा ।। ४ ।।
आवो न भैया मोरे बैठो जँघिया, जोरि कहौ माया के हाल रे ।
माया कहै बेटी चालऊँ चालऊँ, भौजी कहै पैयाँ लागिहौं ।
बहिनी कहै बहिनी भेटौं भेटौं, तुम्हरी भउज ने बोलाइये ।। ५ ।।

हे स्वामी रात एक स्वप्न देखा, स्वप्न में विरह वियोग हो गया है । अस्सी कोस पर मेरी ननद रहती है उन्होंने हमें याद किया है ।। १ ।।

मेरी पत्नी मैं साँठी के चावल और चीरा (कपड़े) कहाँ पाऊँ और रोकड़ रुपये कहाँ पाऊँ जो बहिन को विदा कराने जाऊँ ।। २ ।।

हमारी बखारी में स्वामी साँठी के चावल हैं और मेरी पिटारी में वस्त्र हैं। मेरे पिता के पास करोड़ रुपये हैं आप ननद को विदा कराने जाओ ।। ३ ।।

शाम को ही सामान घोड़े पर लादा और आधी रात में ही चल दिये। सुबह होते ही बहिन के पास पहुँच गये। लोगों ने देखकर उन्हें सौदागर समझा ।। ४ ।।

मेरे भाई आओ पास बैठो, माँ के समाचार सुनाओ। "माँ कहती है चलो चलो, तुम्हारी भावज पालागन कहती है, बहिन तुम से भेंट कहती है। तुम्हारी भावज ने तुम्हें विदा कराने के लिये मुझे भेजा है ।। ५ ।।

[इस गीत में भावज के हृदय में ननद के लिये प्रेम का चित्रण किया गया है जो साधारणतया लोकगीतों में दुर्लभ है। यही इस गीत की विशेषता है।]

(३)

हरे-हरे बाँस की बेनिया माया पठै दीन्ह्यो लगत असाढ़ रे।
नौआ हाथे ना पठयो वोहि का नवई करत दिन जाय रे।
बरिया हाथे जनि पठयो वोहि का पतरी खेलत दिन जाय रे।
जेठे भैया हाथे ना पठयो उनकै बीच बसै ससुरारि रे।
छोटे भैया हाथे पठयो उइ तौ रोईधोई लै जाय रे।

हे माता ! आषाढ़ का महीना लग रहा है, हरे-हरे बास की पंखी भेजा देना। परन्तु नाई के हाथों मत भेजना उसका सारा दिन बाल बनाते व्यतीत हो जाता है। बारी के हाथ मत भेजना उसका सारा दिन पत्तल बनाने में व्यतीत हो जाता है। बड़े भाई के हाथ मत भेजना क्योंकि बीच में उनकी ससुराल पड़ती है (जहाँ वे रम जायेंगे)। छोटे भाई के हाथ भेजना वह रो-धोकर (किसी न किसी प्रकार) मुझे विदा अवश्य करा ले जायेंगे।

(४)

आम बौरे नीम्बि बौरी, बौरे हैं सकल जभींरिया।
हमरे दादुलि घर दाख बौरे को हमें आनि देखाइये ॥ १ ॥
आम पाके अमिली पाकीं, पाकी हैं सकल जभींरिया।
हमरे दादुलि घर दाख पाकी को हमें आनि चिखाइये ॥ २ ॥
आम झरिगे, नीम्बि झरिगै झरिगे सकल जभींरिया।
हमरे दादुलि घर दाखि झरिगे को हमें आनि देखाइये ॥ ३ ॥
माया होतीं मोहु करतीं, दादुलि बड़े निर्मोहिया।
सगे बीर होते चालि देते माया का देसु देखाइये ॥ ४ ॥

आम बौरे, नीम बौरी और मीठे नीम्बू भी बौरे हैं। हमारे पिता के घर अँगूर भी बौरे हैं मगर हमको ले जाकर कौन दिखायेगा ? ॥ १ ॥

आम पके, इमली पकी, जम्भीरी नीबू पके। हमारे पिता के घर अँगूर पके परन्तु हमको कौन ले जाकर चखायेगा ? ॥ २ ॥

आम झर गये नीम झर गई जम्भीरी नीम्बू झर गये हमारे पिता के घर के अँगूर झर गये हमको कौन ले जाकर दिखायेगा ? ॥ ३ ॥

माँ होती तो प्यार करके बुला लेती परन्तु पिता तो बड़े निर्मोही हैं। और यदि मेरे सगे भाई होते तो माता का देश दिखा देते।

इस गीत में मातृविहीना तथा सगे भाई से रहित बहिन की वेदना छटपटा रही है। वह अपने पितृगृह तथा उस देश को एक बार फिर से देखना चाहती है जहाँ उसने मधुर बचपन और किशोरावस्था बिताई है। ऋतुएँ एक के बाद दूसरी आती हैं चली जाती हैं वृक्ष पुष्पित होते हैं फलते हैं और झड़ जाते हैं परन्तु उसकी अभिलाषा कोई पूरी नहीं करता।

(५)

पाँच पेड़ निम्बिया लगाय कै मोरे भइयौ चले परदेश रे।
बरहीं बरस भैया बाहुरे, सासु काह बैठन का देऊँ रे ॥ १ ॥

मचिया पिढ़इया बहुआ भीतर धरौ बहुआ ईटिया बैठन का देओ रे।
सासू हो मोरी सासू, सासू कहा रचौं जेवनार रे ॥ २ ॥

अँखवा जवन की रोटिया बहुआ, काली नगनिया का माँसु रे।
देखौ न सखियाँ सहेलरी मोरे भइयैं खवावैं काला नागु रे ॥ ३ ॥
परदेसियै खवावैं काला नागु रे।

देखौ न टोला परोसिनी मेरी बहुआ लिवाये लीन्हे जाय रे।
ससुरा हो मोरे ससुरा भइया मिलन कब जाँव री ॥ ४ ॥

मैं का जानौं री बउहा, बउहा पूँछि लेओ जेठ बोलाय कै।
जेठा हो मोरे जेठा, जेठा भइया मिलन कब जाँव री ॥ ५ ॥

मैं का जानौं री बउहा, बउहा पूछि लेओ स्वामी बोलाय कै।
राजा हो मोरे राजा, राजा भैया मिलन कब जाँव री ॥ ६ ॥

जायो तो री धना जाइयो, कुछ कइहौ तौ काटब मूड़ुरी।
मनु पिसना मनु कुटना भैया, मन ही की खैंचौं रसोइया ॥ ७ ॥

येहु दुख बाँधौ भैया, गाठरी भैया, छोड़ो नैहरवा के बीच रे।
मायन आगे जनि छोरयो, उई तो छतिया फाटि मरि जायँ रे ॥ ८ ॥

चाचिन आगे जानि छोरयो, उई तौ घर घर करिहैं बेबादु रे।
बहिनिन आगे जनि छोरयो, उई तौ सुनिकै ससुरै नहिं जाइहैं ॥ ९ ॥

भउजिनि आगे जनि छोरयो, उई तौ माया का बोलिहैं बोल रे।
चाचन आगे छोरयौ भैया, जिनि मोरा रचा है बिआहु रे ॥ १० ॥

"नीम के पाँच पेड़ लगा कर मेरे भैया तुम परदेश चले गये।" बारह वर्ष बाद भैया वापिस आये हैं सासु, जी में उन्हें बैठने के लिये क्या दूँ?" ॥ १ ॥

"मचिया, पीढ़ा (पाटा) बहू, सब उठाकर भीतर रख दो और उनके बैठने के लिये एक ईट रख दो। "मेरी सासु क्या भोजन बनाऊँ" ॥ २ ॥

"सड़े हुए जौ की रोटियाँ बनाओ और काली नागिन का मांस बनाओ" सखियो, देखो मेरे भाई को काले नाग का मांस खिला रही हैं। परदेशी को काला नाग खिला रही हैं" ॥ ३ ॥

टोले-पड़ोस के लोग देखो मेरी बहू को भगाये लिये जा रहा है। "मेरे ससुर भैया से मिलने कब जाऊँ" ॥ ४ ॥

"मैं क्या जानूँ मेरी बहू अपने जेठ को बुलाकर पूछ लो।" "मेरे जेठ मैं अपने भाई से कब मिलने जाऊँ" ।। ५ ।।

"मैं क्या जनूँ मेरी बहू अपने स्वामी को बुलाकर पूछ लो।" "मेरे स्वामी मैं भैया से मिलने कब जाऊँ ।। ६ ।।

"रानी जाना तब जाना परन्तु यदि कुछ कहोगी तो तुम्हारा सिर काट लूँगा।"

"भैया मनो पीसना, मनो कूटना, और मनो भोजन बनाना मेरा नित्य का काम है। मेरे भैया इस दुख को बाँध लो और नैहर लेकर जाओ। परन्तु माँ को नहीं बताना नहीं तो छाती फाड़ कर मर जायेंगी ।। ७-८ ।।

"चाची के सामने भी उस दुख को मत प्रकट करना नहीं तो वे घर-घर में प्रपंच करती फिरेंगी। और बहिन से भी मत बताना नहीं तो वे सुसराल नहीं जायेंगी" ।। ९ ।।

"भावज से मत कहना नहीं तो वे माँ पर व्यंग्य वाक्य कहेंगी। हाँ, चाचा से कहना क्योंकि उन्होंने ही मेरा विवाह (ऐसे घर में) किया है" ।।१०।।

इस गीत में पितृविहीन कन्या का विवाह चाचा बिना समझे-बूझे तथा बिना अधिक ध्यान दिये कर देता है जिसका स्वाभाविक परिणाम यह होता है कि कन्या को अपनी ससुराल में अनेक प्रकार के कष्ट भोगने पड़ते हैं। हमारे समाज में लड़की की योंही अच्छी स्थिति नहीं है और यदि कहीं वह अनाथ हुई तो उसके दुख की कोई सीमा नहीं।

(६)

गड़िगे हिंड़ोला जनकपुर जहाँ झूलैं लछिमन राम।
काहे केरा हिंडोलना रे काहे की लागी डोरि ।। गड़िगे। टेक।

गया जी में झूलहिं गजोधर, कासी बिसेसुरनाथ।
सोने केरा हिंडोलना रे रेसम लागी है डोरि ।। १ ।।

मथुरा माँ झूलहिं कन्हैया, शिव झूलैं कैलास ।। २ ।।

कागा हमारे सँदेसी हो हरि जी से कह्यो समुझाय।
सब सखी झूलहिं हिंडोलना तोरी धना ठाढ़े पछिताय ।। ३ ।।

कागा हमारे सँदेसी हो धना जी से कह्यो समुझाय।
पहिरै कुसुम रंग सारी हो झूलौ सखियन साथ ।। ४ ।।

दाढ़ी मैं जरतिऊँ पंडित केरी जिन मेरी लगन धराई।
रहतिऊँ मैं बारी कुँआरी, झुलतिऊँ सखियन साथ ॥ ५ ॥

जनकपुर में हिंडोले गड़ गये हैं जिन पर राम और लक्ष्मण झूल रहे हैं। किस चीज का हिंडोला बना हुआ है और काहे की डोर लगी है ? सोने का हिंडोला बना हुआ है और रेशम की डोर लगी है ॥ १ ॥

गया में गजाधर झूलते हैं, बनारस में बाबा विश्वनाथ, मथुरा में श्री कृष्ण और कैलाश में शिवजी झूलते हैं ॥ २ ॥

हे कौए ? तुम हमारे संदेशवाहक हो मेरे पति से समझा कर कहना कि सब सखियाँ झूला झूल रही हैं और तुम्हारी पत्नी खड़ी पछता रही है ॥ ३ ॥

हे कौए तुम ! हमारे संदेशवाहक हो मेरी पत्नी से समझाकर कहना कि कुसुम रंग की साड़ी पहिन कर सखियों के साथ झूलना ॥ ४ ॥

मैं पंडित की दाढ़ी जला देती जिसने हमारा विवाह कराया। मैं कुमारी ही रहती और हमेशा सखियों के साथ झूला करती।

इस गीत में सावन के महीने में पितृगृह रह कर अपनी सखियों के साथ केलि-क्रीड़ा करते हुए स्वच्छंद जीवन व्यतीत करने की तीव्र आकांक्षा प्रकट की गई है। यहाँ तक कि वह अपना विवाह भी नहीं करना चाहती।

(७)

निम्बुला तरे डोला धरि दे बटोहिया आई सावन की बहार रे।
निम्बिया की डरिया माँ परे री हिंडोला सैंया के आये कहार रे।
एरी सखी मैं तो झुलिहिउ न पाइयूँ डोला तो देखौ तैयार रे ॥ १ ॥
अपने महल माँ मैं जेवना जेंवत ती सैंया के आये कहार रे।
एरी सखी मैं तो जेंवहिउ न पाइयूँ डोला तो देखौ तैयार रे ॥ २ ॥
अपने महल माँ मैं पनिया पियत ती सैंया के आये कहार रे।
एरी सखी मैं तो पीयहू न पाइयूँ डोला तो देखौ तैयार रे ॥ ३ ॥
अपने महल माँ मैं बिरिया रचति ती सैंया के आये कहार रे।
एरी सखी मैं तो रचिहिऊ न पाइयूँ डोला तो देखौ तैयार रे ॥ ४ ॥
अपने महल माँ मैं सेजा सुवत ती सैंया के आये कहार रे।
एरी सखी मैं तो सोवहिऊ न पाइयूँ डोला तो देखौ तैयार रे ॥ ५ ॥

चैत महीने में चिन्ता बहुत बढ़ गई क्योंकि प्रियतम प्राण लेकर चले गये। बिना मनमोहन को देखे मन में धीरज नहीं प्राप्त होता ।। १ ।।

बैसाख महीने में कदम की छाया में घनश्याम आया करते थे। छड़ी मार-मार कर सखियों से श्रीकृष्ण का नाम लिवाते थे ।। २ ।।

जेठ के महीने में बट पूजा (सावित्री-सत्यवान) का त्योहार आया और राजदुलारी बरगद की पूजा करने निकलीं। इधर-उधर देखती हैं और सखियों से पूछती हैं कि कुंजबिहारी कहाँ चले गये है ।। ३ ।।

आषाढ़ के महीने में काले बादल चारों ओर से घेर कर आ गये हैं। बिजली चमकती है, कोई भी नहीं सनकता आषाढ़ की बूँदें गिर रही हैं ।। ४ ।।

सावन के महीने में झड़ी लग गई है, परन्तु ब्रजनारी श्रीकृष्ण के बिना खुश नहीं हो पातीं। नन्द की ओर सारा संसार देख रहा है, उनके बिना सब खड़ी हैं।। ५ ।।

भादों का महीना सखी बहुत ही बेढब है बहुत पानी बढ़ गया है। पत्ते तोड़ कर कदम्ब पर रख दिये हैं और सिर पर मोर बोल रहे हैं ।। ६ ।।

कुआँर महीने की चाँदनी छिटकी हुई है और कमलिनी खूब खिली हुई है। दसमी के रोज दशहरा हुआ परन्तु श्रीकृष्ण नहीं आये ।। ७ ।।

कातिक महीना धर्म का महीना है। हमने कौन सा पाप किया है कि हमारी जैसी अनोखी (रूपवती) स्त्री को छोड़कर कुबड़ी को सुख दिया ।। ८ ।।

अगहन महीना बड़ा दुखी है इस दुख को कौन भुलावे। या तो दुख इस शरीर के साथ भूलेगा या श्रीकृष्ण के आने पर ।। ९ ।।

पूस के महीने में बहुत चूड़ियाँ आईं परन्तु तड़फ तड़फ कर दुबली हो गई (हाथ में चूड़ियाँ बहुत ढीली होती हैं) हमारे प्रियतम को कुबड़ी ने फँसा लिया है ।। १० ।।

माघ के महीने में ऊधो वहाँ जाओ जहाँ श्रीकृष्ण रहते हैं और कुबड़ी के रंगों में मस्त हैं। हम उनके बिना कैसे रहेंगी ।। ११ ।।

फागुन के महीने में ठंडी हवा तेजी से चलती है और सब सखियाँ होली खेलती हैं। जगन्नाथ की बारहमासी नन्दकिशोरी गाती हैं ।। १२ ।।

(२)

हमका तौ छाँड़ि चले बेनीमाधौ राधा सोचु करै मन में रे। टेक हमका०।
कातिक किलोलि करैं सब सखियाँ राधा सोचु करै मन माँ रे।
माधौ पिया का आनि मिलावौ नाहीं तौ प्राण तजौं छिन में रे ॥ १ ॥
अगहन गेंद बनाय साँवरे जायँ खेलै तट जमुना के रे।
खेलत गेंद गिरो जमुना माँ काली नाथ नाथ्यो छिन माँ रे ॥ २ ॥
पूस मास हमसे छल कीन्ह्यो आप चले सैंया मधुवन का रे।
तुम नन्दलाल जन्म के कपटी हमसों कपट कियो मन माँ रे ॥ ३ ॥
माघ मास पिया जाड़ा लगत है नींद न आवे नयन माँ रे।
हमका जोगिनि करि माधव जी घर घर अलख जगावत के रे ॥ ४ ॥
फागुन रंग बनाय साँवरे जाय खेलै संग कुबजा के रे।
फेंट गुलाल हाथ पिचकारी मारत तकि तकि घूँघट माँ रे ॥ ५ ॥
चैत मास फूले बन टेसू ऊधो आये समझावन के रे।
हाथ सुमरिनी गले मृगछाला अँग भभूति लगावन को रे ॥ ६ ॥
मास बैसाख बैस मेरी बा.ी, आपुन आये सैंया मधुबन माँ रे।
रितु ग्रीसम अरु बिरह सतावै बिरह की हूक लगी तन माँ रे ॥ ७ ॥
जेठ माँ ज्वाला फूँकै तन मेरा ऊधौ कहियो घर आवन को रे।
यक तो अकेली दूजे बिरह सतावत आय गई रितु बरखा की रे ॥ ८ ।
लागे असाढ़ घुमड़ि आये बदरा, बिजली चमकै आँगन माँ रे।
चौंकि चौंकि चहुँ ओर निहारौं जैसे मीन फिरै जल माँ रे ॥ ९ ॥
सावन स्वामी हमसे छल कीन्ह्यो प्रीति करी जाय कुब्जा से रे।
कैसे का धीर धरौं मन में अब हूक उठै सगरे तन माँ रे ॥ १० ॥
भादों भवन नींद नहिं आवति मोरवा बोलत मधुवन माँ रे।
कोइलिहू मैं बन बन ढूँढ़यूँ सूखे ताल ब्रन्दाबन के रे ॥ ११ ॥
कुआँर मास निर्मल भये चन्दा गोरी सोवै अपने आँगन माँ रे।
सूरदास तब जानि मिले हरि सुखी भई राधा मन माँ रे ॥ १२ ॥

हमको तो वेनीमाधव (श्रीकृष्ण) छोड़ गये हैं राधा मन में सोच-विचार कर रही है। कातिक महीने में सब सखियां खेल रही हैं राधा मन में विचार कर रही है। माधव प्रियतम को लाकर शीघ्र मिलाओ नहीं तो प्राण नहीं बचेंगे ॥ १ ॥

अगहन के महीने म कृष्ण गेंद बना कर जमुना के किनारे खेलते हैं। खेलते-खेलते गेंद जमुना में गिर जाती है और कृष्ण ने क्षण भर में काले नाग को नाथ दिया ।। २ ।।

पूस महीने में सैंया ने छल किया हमको छोड़कर मधुबन चले गये। नन्द-लाल तुम जन्म से ही कपटी हो हमसे भी कपट किया ।। ३ ।।

माघ के महीने में प्रियतम जाड़ा लगता है और आँखों में नींद नहीं आती। हमको माधव जी तुमने जोगिन बना दिया और तुम स्वयं घर-घर अलख जगाते फिर रहे हो ।। ४ ।।

फागुन के महीने में श्रीकृष्ण रंग बना कर कुब्जा से होली खेलते हैं। गुलाल और पिचकारी से रंग ताक-ताक कर घूँघट में मारते हैं ।। ५ ।।

चैत के महीने में वन में टेसू (पलाश) फूले और ऊधो समझाने के लिये आये हुए हैं। हाथ में सुमिरनी, गले में मृगछाला और अंग में वि भूति लगाने का संदेश लेकर आये हैं ।। ६ ।।

बैसाख का महीना लगा मेरी आयु कम है—सैंया स्वयं मधुवन में आये। एक तो ग्रीष्म ऋतु, उस पर विरह सताता है और विरह की आग सारे तन में लग गई है ।। ७ ।।

जेठ में ज्वाला फूँके दे रही है—हे ऊधो उनसे घर आने के लिये कहना। एक तो अकेली हूँ ऊपर से बिरह जला रहा है और अब बरसात की ऋतु भी आने वाली है ।। ८ ।।

आषाढ़ का महीना लग गया है बादल घुमड़ आये हैं और आँगन में बिजली चमक रही है। और में चौंक-चौंक कर चारों ओर देख रही हूँ जैसे मछली जल में घमती फिरती है ।। ९ ।।

सावन में स्वामी ने हमसे छल किया और कुब्जा से प्रीति की। अब में कैसे धैर्य धारण कर सकती हूँ अब तो हूक सारे शरीर में व्याप्त हो गई है ।। १० ।।

भादों के महीने में घर में नींद नहीं आती, मोर मधुवन में बोल रहे हैं। कोयल मैंने वन-वन ढूँढ़ी और तालाब सूखने लगे हैं ।। ११ ।।

क्वांर के महीने में चन्द्रमा निर्मल हो गया है और गोरी अपने आँगन में सो रही है। सूरदास कहते हैं कि तब श्रीकृष्ण राधा से जाकर मिले और राधा मन में बड़ी खुश हुई ।। १२ ।।